हिन्दी साहित्य के स्रोतों के आधार पर अट्ठारहवीं शताब्दी
का
समाज - चित्रण

(इलाहाबाद विश्वविद्यालय की डो० फिल्० उपाधि हेतु प्रस्तुत)

शोध-प्रबन्ध

शोधकर्त्री

मधु बाला

निर्देशक

डॉ० हेरम्ब चतुर्वेदी

मध्यकालीन एवं आधुनिक इतिहास विभाग
इलाहाबाद विश्वविद्यालय
इलाहाबाद

१९९२

विषय- सूची

पृष्ठ संख्या

प्राक्कथन

प्राक्कथन

1707 में औरंगजेब की मृत्यु हुयी और पुनः सिंहासन के लिए दौड़ शुरू हुयी । औरंगजेब की मृत्यु के पश्चात् अट्ठारहवीं शताब्दी का इतिहास राजनैतिक अव्यवस्था एवं अराजकता का इतिहास है । राजनैतिक रूप से इस संक्रामक युग की तत्कालीन समाज पर प्रतिक्रिया अवश्यम्भावी थी किन्तु इस परिस्थिति में अट्ठारहवीं शताब्दी के भारत की सामाजिक दशा के विचार पर यह प्रश्न स्वभाविक रूप से मस्तिष्क में आते हैं कि तत्कालीन समाज पर विभिन्न आंतरिक विद्रोहों, सम्राट की दुर्बलता अमीरों के षड्यंत्र तथा वाह्य आक्रमणों का किस सीमा तक प्रभाव पड़ा ? क्या अट्ठारहवीं शताब्दी में मुगल सभ्यता और संस्कृति का उसी गति से ह्रास हुआ जैसा कि राजनैतिक विघटन का । अतः इन प्रश्नों के उत्तर जानने के लिए तत्कालीन समाज का सूक्ष्म अध्ययन आवश्यक है किन्तु, इस उद्देश्य की पूर्ति मात्र राजनैतिक ऐतिहासिक ग्रन्थों द्वारा करना असंभव है, क्योंकि इस प्रकार के स्रोत केवल राजनैतिक विवरण तक ही सीमित रहते हैं, यदि विदेशी यात्रियों के विवरण को आधार बनाया जाय तो उनके विवरण मात्र क्षणिक पर्यटन पर आधारित हैं अतः उनके आधार पर विभिन्न सामाजिक प्रवृत्तियों को समझना कठिन है अतः प्रस्तुत शोध प्रबंध में मैंने अत्यन्त महत्वपूर्ण स्रोत हिन्दी साहित्य को अट्ठारहवीं शताब्दी के भारत के समाज के चित्रण हेतु मुख्य आधार बनाया है ।

साहित्य में जीवन का स्थान, जीवन एवं साहित्य में अविच्छेद्य संबंध समीक्षा के क्षेत्र में अब विवाद के विषय नहीं रहे । काव्य की भाव वस्तु ही नहीं उसके रूप एवं उपकरण भी युगानुशासित होते हैं । ऐसा न होने पर

युग - विशेष का पाठक उसे ग्रहण नहीं कर पायेगा । अभिव्यक्ति के माध्यम से ही अभिव्यक्त वस्तु युग की आत्मा को संवेद्य होती है ।

इतिहास तथ्य के निकट होता है और साहित्य के संबंध में यह कहा जाता है कि उसमें सत्य का निदर्शन होता है । इतिहासकार राजघराने को ही अपना अध्ययन-क्षेत्र मानता रहा है लोक जीवन उसे अपने अनुसंधान की गरिमा के अनुरूप नहीं प्रतीत हुआ । इतिहासकार राजदरबार की अनर्गल एवं महत्वहीन घटनाओं के अनुसंधान में ही अपने कर्त्तव्य, कर्म की इति श्री समझता रहा है । साहित्य भी अब तक सामान्य की उपेक्षा और विशिष्ट का आलिंगन करता रहा । साहित्य एवं साहित्य समीक्षा के वर्तमान युग का देय यह है कि वे हर क्षेत्र में " मामूली आदमी" की भी प्रतिष्ठा करते हैं ।

अवलोकित काल हिन्दी कवितामें कारीगरी का युग है । कवियों के काव्य के आधार पर तत्कालीन समाज का अध्ययन इतिहासवेत्ता , समाज-शास्त्री और काव्य समीक्षक तीनों के लिए समानरूप से उपयोगी है ।

तत्कालीन समाज के कवि की सीमा यही नहीं कि वह समाज या युग-जीवन के प्रति निरपेक्ष था या उसके काव्य में तत्कालीन सामाजिक रचना के बहुमुखी नहीं मिलते वास्तव में काव्य का अभाव यह भी है कि उसके काव्य में स्पंदन गति, क्रियाशीलता सजगता एवं वैविध्य नहीं है, सारतः उसमें जीवन का भी अभाव है । मुगल बादशाहों का वैभव प्रदर्शन उसकी विलासलीला और राजकर्तव्यों की उपेक्षा सभी कुछ इस साहित्य में सच्चाई के साथ व्यक्त हुआ है जिसे देखने के लिए अपेक्षा की सकारात्मक नकारात्मक साक्ष्यों का समान रूप

से आधार लेना चाहिए । वैविध्य एवं अनेकता जीवन जगत की मूलभूत विशेषता है। वह सदैव पूर्णता की ओर विकासमान है । तत्कालीन काव्य में एकरसता है, विश्रांति है, पौरूष का धरातल छोड़कर नारी के आंचल की छाया में सो जाने की पुरूष को प्यास है और इस प्यास में भी तीव्रता नहीं, आकुलता है । काव्यमें स्त्री-जीवन की संपूर्ण विविधता को रमणीरूप में सीमित कर दिया गया है, उसे निहारने और आह भरने में ही पुरूष के पौरूष की इतिश्री हो गयी है । कवि जहाँ कहीं सामाजिक आदर्श, नैतिक उदात्तता धर्म और भक्ति की चर्चा करने बैठता है, उसका साहित्य निर्जीव हो जाता है रागबेसुरा और खण्डित हो जाता है, कारण स्पष्ट है । उसके पीछे अनुभूति नहीं है, केवल दृष्टि और और बुद्धि काम कर रही है यह क्रिया चेष्टित है, साहित्यकार स्वयं उसमें तन्मय नही है । उसकी रागमय अनुभूतियों का नैसर्गिक प्रवाह यहाँ नहीं है इस लिए वह साहित्यक प्रवंचना सी लगती है ।

वह युग सामाजिक आदर्शों से हीन नहीं था, उसकी अपनी नैतिक मान्यताएं और उदात्त जीवन-संबंधी धारणाएं थी । इतिहास इसका साक्षी है किन्तु साहित्यकार दूसरे जीवन का अंग था वह संभ्रांत व्यक्ति था और लोक जीवन से अछूता था । वहाँ वैभव था तो अपरिमेय और पतन था तो अकथनीय ।

यद्यपि ~~फिर भी~~, हिन्दी साहित्य में समाज के चित्रण के क्षेत्र श्रृंगार काल होने के कारण व्यापक नहीं था, फिर भी इनमें नायक नायिका के

क्रियाकलाप का वर्णन, अध्यात्म का दृष्टिकोण आदि हिन्दी- साहित्य का अंधानुकरण ही नहीं वरन् अट्ठारहवीं शताब्दी में सामंतवादी समाज का पूर्ण प्रतिबिम्ब है विभिन्न काव्यों से प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रूप से सामाजिक जीवन के अनेक पक्षों पर प्रकाश पड़ता है । कविता के क्षेत्र में यद्यपि अतिशयोक्तिपूर्ण प्रशंसात्मक विवरण लिखने के लिए कवियों की आलोचना की जाती है किन्तु आलोचक यह भूल जाते हैं कि जब सम्राट की दुर्बलताएं समाज के विभिन्न वर्गों पर कुप्रभाव डालने लगे तो इन्हीं कवियों ने विभिन्न काव्यों में इतनी निर्भीकता एवं स्पष्टवादिता से काम लिया कि उनके साहस पर युग आश्चर्य करता है ।

हिन्दी कविता के इस रूप से समाज का सर्वाधिक स्पष्ट चित्रण प्राप्त होता है । नायक-नायिकाओं के प्रेम कहानियों पर अधिकतर आधारित इन कविताओं में सांस्कृतिक जीवन उभरकर सामने आ जाता है उसके अध्ययन से ऐसा प्रतीत होता है मानो उस युग का एक विशेष वर्ग अपने पूरे जीवन के साथ हमारे समक्ष आ गया इसके द्वारा सामाजिक जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में अनेकानेक दुर्लभ सूचनाएं प्राप्त होती हैं ।

यद्यपि यह सत्य है कि इस शताब्दी के कवि केवल अपने युग को प्रतिबिम्बित कर सके सामाजिक अव्यवस्था के निवारण का कोई उपाय न सोच सके वह परिस्थितियों की गम्भीरता पर मातम करते रहे किन्तु अपनी प्रतिक्रिया के साथ कोई ऐसा दृष्टिकोण न प्रस्तुत कर सके जिससे समाज का उद्धार हो सकता किन्तु इसके लिए वे स्वयं व्यक्तिगत रूप से उत्तरदायी नहीं है वरन् सामंतवादी

कवि भाव लोक का प्राणी होता है युग जीवन उसके सृजन में प्रतिबिम्बित अवश्य होता है किन्तु उसके चित्र को सम्यक् एवं पूर्णरूप से देखने के लिए काव्येतर स्त्रोतों में विवेच्य काल की सामाजिक परिस्थितयों का ज्ञान अपेक्षित है । इस दृष्टिकोण को ध्यान में रखते हुए काव्येतर स्रोतों से तत्कालीन समाज की प्रतिमा निर्मित करने का प्रयास किया गया है ।

इन स्रोतों के अतिरिक्त विभिन्न ऐतिहासिक साक्ष्यों तथा विदेशी यात्रियों के ग्रन्थ सहायक रहे किन्तु विभिन्न कवियों की कृतियां हिन्दी साहित्य की सामाजिक पृष्ठभूमि पर लिखे गये तथ्यों से मैंने पग-पग पर सहायता ली है । सौभाग्यवश इसी विश्वविद्यालय के पुस्तकालय में विषय वस्तु से संबंधित सामग्री पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध हो गयी । इसके अलावा हिन्दी साहित्य सम्मेलन, पब्लिक लाइब्रेरी हिन्दुस्तानी एकेडमी इलाहाबाद तथा दिल्ली की पब्लिक लाइब्रेरी हिन्दी साहित्य अकादमी आदि से पर्याप्त सामग्री एकत्रित की । अतः अपने चार वर्ष के प्रयत्नों के पश्चात् यत्र तत्र स्त्रोतों को एकत्रित करके ऐतिहासिक तथ्यों के प्रकाश में अट्ठारहवीं शताब्दी के समाज-चित्रण करने में आंशिक रूप से सफलता प्राप्त हो सकी है । यद्यपि इस शोध प्रबंध में विभिन्न कविताओं की संख्या अधिक है किन्तु विभिन्न सामाजिक प्रवृत्तियों के स्पष्टीकरण हेतु उदाहरणों को लाना आवश्यक था ।

शोध कार्य में जो उत्थान-पतन और उच्चावच के दिन आते हैं उनमें शोधकर्ता के जीवन में पर्याप्त महत्वपूर्ण चिन्ह निहित रहते हैं । ऐसे अवसरों

मार्गदर्शन मिला वह अविस्मरणीय है। निराशा के क्षणों में आपने तथा आपकी पत्नी पूज्यनीया श्रीमती आभा चतुर्वेदी जी ने जो उत्साह दिलाया है, अपने ऊपर विश्वास करना मैंनें आपसे ही सीखा है। शोध की गुत्थियों को सुलझाने और इसकी वैज्ञानिक व्यवस्था बनाये रखने में मैंनें जब - जब चाहा मुझे श्रद्धेय गुरूजी का उदारतापूर्ण मार्गदर्शन मिला जिसका बदला कृतज्ञता प्रकाश से क्या हूँ। इस विभाग के माननीय अध्यक्ष प्रोफेसर राधेश्याम की स्नेहिल छाया विभाग के सभी विद्यार्थियों पर रहती है उनके सामान्य स्नेह को पाकर भी हम विशिष्ट हो जाते हैं। सदैव आपने मार्गदर्शन किया तथा सहयोग दिया। साथ ही हमारे पारिवारिक सदस्यों विशेष रूप से बड़े भ्राता श्री गिरीशचन्द्र तथा मित्रों का समान रूप से सहयोग रहा आज जब शोध प्रबंध पूरा हो गया तो लग रहा है कि जैसे कि अज्ञात प्रेरणा ने मेरा हाथ पकड़कर लिखवा लिया हो। मुझे शोध प्रबंध पूरा करने की सर्वाधिक प्रेरणा मेरे पति श्री सुनील कुमार जी से मिली जिन्होंने मेरा साहस और उत्साह बढ़ाया तथा प्रतिक्षण अपना सहयोग दिया। इसके अतिरिक्त मैं उन सभी के प्रति आभार हूँ जिनकी कृतियों और विचारों का जाने अनजाने में मैंने उपयोग किया।

अन्त में मैं राजबहादुर पटेल को धन्यवाद देती हूँ जिन्होंने शोध - टंकण में रूचि दिखाई और इसे पूरा करने में सहयोग दिया।

सितम्बर 1992,

मधु बाला

प्रथम अध्याय

पृष्ठभूमि : अठारहवीं शताब्दी की राजनैतिक दशा

पृष्ठभूमि: अट्ठारहवीं शताब्दी की राजनैतिक दशा

1707 ई0 में औरंगजेब की मृत्यु हुयी ।[1] औरंगजेब की मृत्यु के पश्चात् से मध्यकालीन राजनैतिक जीवन में नवीन अध्याय का प्रारम्भ होता है इसकी मृत्यु के बाद औरंगजेब के पुत्रों ने तलवार निणय पर बल दिया[2] जिसमें शाहजादा मुअज्जम विजयी हुआ जो बहादुरशाह के नाम से सिंहासनासीन हुआ ।[3] किन्तु बहादुरशाह औरंगजेब के समय से उत्पन्न कठिनाइयों को यथा: जागीरदारी संकट, उमरा के आपसी संघर्ष, वजीर मुनीमखाँ तथा मीर बख्शी जुल्फिकारखाँ के मध्य मतभेद के कारण वह इन विद्रोही शक्तियों का सामना नहीं कर सका परिणामस्वरूप बहादुरशाह 27 फरवरी 1712 को परलोक सिधार गया पुनःसंघर्ष की प्रक्रिया[4] राजसिंहासन प्राप्त करने के लिए शुरू हुयी । परस्पर संघर्ष के पश्चात् जहाँदारशाह ने राज्य भार संभाला । जहाँदार के शासन काल में संकट पहले से ही विद्यमान था । इस समय तक जाटों ने मथुरा एवं दिल्ली के मध्य का क्षेत्र विनष्ट कर डाला था । पंजाब में सिख बंगाल बिहार में अलीवर्दी खाँ तथा दक्षिण में मराठों ने अपनी शक्तियाँ बढ़ा ली थी । इतनी समस्याओं का समाधान करने के लिए जहाँ उसे

1- इरविन : द लेटर मुगल्स, 1, पृ0 18

2- अब्दुल्ला यूसुफ अली: मेकिंग आफ इंडिया, पृ0 168

3- इलियट एण्ड डाउसन: भाग 7, पृ0 398-99

4- विस्तृत विवरण: खाफी खाँ, मुन्तखब उल- लुबाब ,इरविन:

दूरदर्शिता से काम लेना चाहिए था वह एक निम्न श्रेणी की स्त्री लालकुँवर के इशारों पर नाचने लगा ।[1] एक प्रकार से जहाँदार के अल्पशासन काल में विलास और हिंसा का दौर दौरा रहा । यह गवैयों, भाँडों और नर्तकों तथा तवायफों का युग था । ऐसा मालूम होता था कि अब काजी तो नशाबाजी करेंगे और मुफ्ती शराब पीयेंगे । लालकुँवर के निकट और दूरसंबंधियों को चार पाँच हजार के मनसब और हाथी, नक्कारे और अलंकार तथा ऊँचे-ऊँचे पद प्राप्त हुए । योग्य बुद्धिमान और विद्वान पुरुषों को अलग कर दिया गया । यद्यपि इसका वजीर जुल्फिकारखाँ योग्य था किन्तु वह लालकुँवर और सम्राट के भाई व के गुट में मतभेद होने के कारण समस्याओं के समाधान के लिए कोई कदम नहीं उठा सका ।[2]

इस बिगड़ी परिस्थिति का लाभ बहादुरशाह के पौत्र ने उठाया वह बहादुरशाह का द्वितीय पुत्र अजीमउश्शान का पुत्र था जिसका नाम फर्रुखसियर था उसने सैय्यद बंधुओं की सहायता से (सैय्यद अब्दुल्ला खाँ तथा हुसैन अली) दिल्ली का सिंहासन प्राप्त करना चाहा अतः उसने आगरा के निकट जहाँदरशाह को पराजित किया फर्रुखसियर ने गद्दी पर बैठते ही सम्राट जहाँदारशाह तथा उसके वजीर जुल्फिकारखाँ का वध करवा दिया ।[3]

1- जहाँदारशाह और लालकुँवर के व्यसन तथा मूर्खताओं का विस्तृत विवरण, इरविन: द लेटर मुगल्स, पृ० 192-97

2- वही,

3- जुल्फिकारखाँ के वध और जहाँदार की हत्या के विस्तृत विवरण खाफी खाँ मुन्तखब उल-लुबाब, पृ० 443-45; इरविन द लेटर मुगल्स, पृ० 248-58

चूँकि फर्रुखसियर ने सैय्यद बंधुओं को सहायता से सिंहासन प्राप्त किया था फलतः उसने हुसैन अलीखाँ को मीरबख्शी नियुक्त किया और बिहार का गवर्नर बनाया , अब्दुल्ला खाँ को 7000 का मनसब दिया और मालवा का गवर्नर नियुक्त किया एक प्रकार से इस काल की सम्पूर्ण राजनीति सैय्यद बंधुओं के हाथ में केन्द्रित हो गयी जिसका परिचालन वे अपने ढंग से करते थे । फर्रुखसियर महात्वाकांक्षी सम्राट था अतः उसने पद की गरिमा बढ़ाने और साम्राज्य की समस्याओं का निवारण करने का प्रयत्न किया। सिख उस समय बहुत विद्रोही प्रवृत्ति के हो रहे थे अतः उसने गुरु बन्दा बहादुर तथा अन्य सिखों को बंदी बना लिया जाटों को दबाने के लिए राजा जयसिंह की अध्यक्षता में एक विशाल सेना भेजी तथा जाट सरदार चूणामन को बंदी बना लिया । किन्तु सैय्यद अब्दुल्ला ने जाटों से 20 लाख रू० रिश्वत प्राप्त करके जयसिंह को घेरा उठाने पर विवश कर दिया। फर्रुखसियर सैय्यद बंधुओं की इस बढ़ती हुयी को और अधिक नहीं स्वीकार करना चाहता था अतः उसने अमीरों के साथ उनके विरुद्ध षड्यंत्र रचना शुरू किया। दरबार की इस प्रक्रिया से विरोधी शक्तियों ने फायदा उठाया और वह देश के विभिन्न भागों को प्रभावित करती रही परिणामतः फर्रुखसियर और सैय्यद बंधुओं का पारस्परिक द्वेष बढ़ता गया। अत्यन्त इस द्वेष का परिणाम अत्यन्त भयानक तथा दर्दनाक हुआ । सैय्यद बंधुओं ने शाही महल में घुसकर फर्रुखसियर को पकड़ लिया और उसे दीवाने-खास में ले आये जहां उसकी आँखों पर सलाइयाँ फेर कर उसे अंधा कर दिया और बंदी गृह में डाल दिया। इस घटना के पश्चात् सैय्यद बंधु सर्वाधिकसम्पन्न हो बैठे ।

एक प्रकार से सैयद बंधु इतने प्रभावशाली हो गये कि वह सम्राटों को गद्दी पर बिठाने और उतारने लगे । फर्रुखसियर को सिंहासन से उतारे जाने (28 फरवरी 1719) से लेकर मुहम्मदशाह के सिंहासनारूढ़ (24 सितम्बर सन् 1719) होने तक तीन शहजादों को सिंहासन पर बैठाया गया जो पानी के बुलबुलों की भाँति उठे और अल्पकाल में ही अपने अस्तित्व को समाप्त कर बैठे । सैयद बंधुओं ने रफीउद्दौला और रफीउरदरजात को क्रमशः कठपुतली सदृश सम्राट बनाया ।[1] ये नाममात्र के सम्राट थे क्योंकि कोई भी कार्य सैयद बंधुओं की आज्ञा के बिना करने में असमर्थ थे । रफी-उरदरजात बहादुरशाह का पौत्र और रफीउरशान का छोटा पुत्र था । भाग्य ने भी इनका साथ न दिया और कुछ ही महीनों में इनकी मृत्यु हो गयी ।

इसके पश्चात् शाहजादा रोशन अख्तर को मुहम्मद शाह के नाम से सिंहासन पर बैठाया गया । मुहम्मदशाह जहाँदारशाह का पुत्र था जिस समय वह सिंहासन पर बैठा उनकी आयु 18 वर्ष की थी । सैयद बंधुओं के अधिकार अभी तक पूर्ववत् बने रहे । उन्होंने मुहम्मदशाह को सिंहासन पर बिठाया और राज्य संचालन के सभी कार्यों में अपना हस्तक्षेप बनाये रखा ।[2] उनका दीवान रतनचन्द भी अपने इच्छानुसार लोगों पर अत्याचार करता रहा । सैयद बंधुओं की इस बढ़ती हुयी शक्ति से अमीरों का तूरानी गुट सशंकित हो गया और यह गुट सैयद बंधुओं की शक्ति को कम करने का उपाय सोचने लगा। तूरानी अमीरों में हैदर बेग तथा अमीन खाँ ने एक षड्यंत्र रचकर हुसैन अलीखाँ को छुरा भोंककर

1- खाफी खाँ: पृ0 818

2- इलियट एण्ड डाउसन, भाग7, पृ0 485-86

हत्या कर दी और उसका सामान लूट लिया गया । इधर अब्दुल्लाखाँ सैय्यद राजधानी से दूर एक षड्यंत्र रच रहा था । वह मुहम्मदशाह को हटाकर दूसरा मुगल सम्राट बनाना चाहता था इस ध्येय से उसने रफीउश्शान के पुत्र इब्राहीम को सम्राट बनाया तथा स्वयं सैन्य प्रबन्ध में लग गया। यह समाचार पाते ही मुहम्मदशाह अब्दुल्लाखाँ का सामना करने के लिए निकला अब्दुल्लाखाँ को बंदी बनाया गया और 1723 ई0 में उसकी मृत्यु हो गयी । इस प्रकार मुगल राजनीति से सैय्यद बंधुओं के प्रभावपूर्ण युग का अन्त हुआ । मुहम्मद अमीन खाँ वजीर बना किन्तु दो माह में ही उसकी मृत्यु हो गयी उसके पश्चात् निजामुलमुल्क को वजीर नियुक्त किया गया । निरपराध सुल्तान इब्राहीमखाँ के जंगल की शरण ली लेकिन उसको पकड़कर बंदी बना लिया गया और उसे बादशाह के सामने लाया गया। जिस रात को वह दरबार में आया तो मुहम्मदशाह ने उसका आलिंगन किया और पूछा "तुम कैसे आये ? शाहजादे ने कहा जिस रास्ते आप हैं । सम्राट ने पूछा तुमको कौन लाया ? उत्तर मिला, वही व्यक्ति जो आपको लाया है ।[1] सम्राट ने इसके प्रति उदारता दिखाई उसने जो कुछ किया वह विवश होकर किया था इसलिए उसको शाही क्षमा प्रदान कर दी गयी । इब्राहीम को निर्वाह के लिए 40 रू0 प्रतिदिन मंजूर किये गये और उसको शाहजहाँनाबाद के किले में कैद कर दिया गया जहाँ 30 जनवरी 1746 को लगभग 50 वर्ष की आयु में उसकी मृत्यु हो गयी ।[2]

इधर दरबार में भी गड़बड़ी चलती रही यद्यपि निजामुल्मुल्क योग्य एवं अनुभवी था किन्तु बुद्धिमत्ता होते हुए भी वह कुछ न कर सका क्योंकि सम्राट के कृपापात्र सम्सामुद्दौला खानेदौरा, कोकीजिउ, अब्दुल गफूर खिदमतगार खाँ, ख्वाजासरा एवं रोशनुद्दौला, जफरखाँ आदि समय-समय पर निजामुल्मुल्क के कार्यों में बाधा उत्पन्न करते रहे अतः विवश होकर निजामुल्मुल्क ने विजारत छोड़कर दक्षिण में स्वतंत्र राज्य की स्थापना का संकल्प किया।[1] और मुरादाबाद की जागीर को देखने के बहाने से हैदराबाद चला गया जहाँ उसने 1723 में स्वतंत्र राज्य की स्थापना कर ली।

तत्पश्चात् मुहम्मद अमीनखाँ के पुत्र कमरूद्दीन खाँ को वजीर बनाया गया किन्तु कमरूद्दीन खाँ भी स्वार्थसिद्धि को महत्ता देता रहा तथा उसने राजनैतिक जटिलताओं की ओर ध्यान देने की चेष्टा नहीं की। दूसरी ओर सम्राट रंगरेलियों में व्यस्त था तथा अन्य उमरा परस्पर संघर्षरत रहे। परिणामस्वरूप मराठों ने मालवा तथा गुजरात के प्रान्तों पर अधिकार कर लिया। इससे उसके उत्साह में वृद्धि हुयी तथा वे आगरा तथा दिल्ली पर अधिकार जमाने के लिए सक्रिय हो गये। यद्यपि जनवरी 1738 मे मुगल सेना ने आगरे के समीप मराठों को पराजित किया किन्तु यह समाचार पाकर मराठा पेशवा बाजीराव ने दिल्ली के निकटवर्ती क्षेत्रों में लूटमार प्रारम्भ कर दिया। अब इनसे निपटने के लिए मुहम्मदशाह ने निजामुल्मुल्क को दक्षिण से बुलवाया। निजामुल्मुल्क की सेना तथा पेशवा की सेनायें संघर्ष हुआ किन्तु निजामुल्मुल्क मराठों का कुछ न बिगाड़ सके और मराठों को पुनः मालवा

1- इलियट एण्ड डाउसन, भाग 7, पृ0 488-89

तथा 50 लाख रूपये देने का वायदा किया गया । इस समय तक बंगाल, बिहार, उड़ीसा केन्द्र से पृथक् हो गये थे, रूहेलखंड का क्षेत्र रूहेलों ने दबा लिया, जाट अत्यधिक शक्तिशाली हो गये भरतपुर के क्षेत्र पर सैयदों ने अपना अधिकार जमा लिया, फर्रूखाबाद में बंगशखां स्वतंत्र होने की चेष्टा में लगा था ।

इस परिस्थिति में जबकि विशाल साम्राज्य का द्रुतगति से विघटन हो रहा था, आंतरिक समस्याएं पराकाष्ठा पर पहुँच गयी थी, विद्रोही शक्तियाँ अपने प्रभाव क्षेत्र विस्तृत कर रही थी, अकस्मात वाह्य आक्रमण के प्रकोप ने जर्जर मुगल साम्राज्य की खोखली जड़ो को भीतर से हिलाकर रख दिया । इस प्रकार समाज की नियति पर दो दुर्भाग्यपूर्ण आक्रमणकारियों ने अन्तिम मुहर लगा दी । पहले नादिरशाह ने और फिर अहमदशाह अब्दाली ने इस लड़खड़ाते हुए साम्राज्य पर ऐसे प्रहार किये जिनको सहन करने के लिए इसमें सामर्थ्य नहीं थी । मुहम्मदशाह {1719-1748} के शासन काल में तो असंतोष अपनी चरम सीमा पर को पहुँच चुका था । इस काल में निजाम, सिख मराठे तथा नादिरशाह ने बड़ा उपद्रव मचाया ।[1]

नादिरशाह का भारत पर आक्रमण मुगल साम्राज्य के घातक सिद्ध हुआ नादिरशाह के दिल्ली में आने से पहले तक उसके विरूद्ध मुगल सम्राट ने कोई पग नहीं उठाया । अन्त में विवश होकर मुहम्मदशाह ने शाही सेना के साथ कर्नाल

1- आनन्दराम मुखलिस: तजकिरा, सं० सैय्यद अजहर अली, रामपुर, पृ० 88

के मैदान में नादिरशाह का सामना किया किन्तु मुगल सेना को हथियार डालने पड़े । संधिवार्ता प्रारम्भ हुयी जिसके द्वारा निश्चित हुयी कि नादिरशाह पचास लाख रू० हजनि के रूप में लेकर वापस चला जाएगा किन्तु इसी समय वजीर सादत खाँ ने लालचदी कि यदि वह राजधानी चला जाये तो उसे करोड़ो रूपये हाथ आ सकते हैं अतः नादिरशाह ने निजामुल्मुल्क कोबुलाकर 20 करोड़ रूपये की माँग की और स्वयं दिल्ली पहुँचा, उसी दिन कुछ नादिरी सिपाहियों का दिल्ली निवासियों ने वध करवा दिया । जब नादिरशाह को यह समाचार मिला तो उसने कत्लेआम का आदेश दिया परिणामतः ईरानियों ने इतना नरसंहार किया कि दिल्ली के इतिहास में इस प्रकार के नरसंहार का और कोई उदाहरण नहीं प्राप्त होता । इस नरसंहार में 20 हजार से अधिक लोगों का वध हो गया महलों में आग लगा दी गयी तथा घनी बस्तियों में लाशो के ढेर दिखाई पड़ने लगे । प्रातः 9 से 2 बजे तक यही क्रम चलता रहा इसके पश्चात् निजामुल्मुल्क और कमरूद्दीन खाँ की याचना पर नादिरशाह ने कत्लेआम रोकने की आज्ञा दी तथा नगर निवासियों पर 2 करोड़ रू० जुर्माना लगाया। सम्पूर्ण नगर को घेरकर अत्यअधिक कठोरतापूर्वक धनराशि एकत्रित की गयी । साधारण जनता केअतिरिक्त नगरवासियों तथा गर्वनरो को शीघ्रातिशीघ्र बड़ी-बड़ी रकमें अदा करने की आज्ञा दी गयी ।

इसके अतिरिक्त अपने पुत्र का विवाह मुहम्मद शाह की पुत्री से करवाया हरम की 16 स्त्रियाँ को भी अपने हरम में सम्मिलत किया कुछ बड़े बड़े अमीर जो कर्नाल के युद्ध में मारे गये थे उनकी संपत्ति पर अधिकार कर लिया ।

एक सप्ताह बाद धनराशि वसूल कर लेने पर नादिरशाह ने दरबार किया तथा मुहम्मदशाह को मुगल सम्राट बनाया । मुगल सम्राट के सिन्धु नदी के निकटवर्ती क्षेत्र एवं अफगानिस्तान नादिरशाह को समर्पित कर दिए तथा संधि पत्र पर हस्ताक्षर किए जिसके अनुसार पेशावर काबुल, गजनी, हजारा, भक्कर पट्टा आदि भी उसे प्रदान किये गये । इन सूबो के कोष में संचित धनराशि पर भी मुगलों का कोई अधिकार न रह गया । इसके अतिरिक्त जुर्माने के रूप मे दिल्ली से पन्द्रह करोड रूपये नगद तख्ते ताउस, जवाहरात, शाही भंडार घर के साजो-सामान पर नादिरशाह का अधिकार हो गया ।

नादिरशाह के आक्रमण का मुगल राज्य पर अत्यअधिक घातक प्रभाव पड़ा इससे साम्राज्य की वास्तविक दुर्बलताएं खुले रूप में सामने आ गईं, उत्तरी-पश्चिमी सीमांत प्रदेश पूर्ण रूप से निकल गये , साम्राज्य के आर्थिक स्रोत विनष्ट हो जाने से व्यापार तथा वाणिज्य की स्थिति गम्भीर हो गयी ।[1] दिल्ली की गलियों और हवेलियों में इतना विनाश हो चुका था कि वर्षों के परिश्रम से भी इसका विगत वैभव वापसनहीं लौट सकता था ।[2] और इस प्रकार मुहम्मद-शाह नादिरशाह का सामना नहीं कर सका दिल्ली कटे हुए कुत्ते बिल्ली की तरह भयानक लगने लगी तथा बाबर हुमायूं जैसे बहादुरो द्वारा चलाया हुआ राजवंश गर्हित अवस्था को प्राप्त हुआ ।

1- आनन्दराम मुखलिसः सफरनामा, [illegible] लखनऊ 1954, पृ0 88

2- घनानंद ग्रंथावली: पृ0 61 भूमिका से उद्धृत

दिल्ली भई बिल्ली कटैला कुत्ता देखि डरी,
भूल्यौ मुहम्मदशाह पहिले अब कह टोकिये ।
बाबर हमायु को चलायो अब बंस,
ताकौ यह फैलो सोक परजा करम ठोकिये

यह घातक युद्ध 13 फरवरी सन् 1739 को हुआ था ।

नादिरशाह के आक्रमण का घाव पूरा होता तभी दिसम्बर 1747 में अहमदशाह अब्दाली ने लाहौर जीत लिया । वजीर कमरूद्दीन तथा शहजादा अहमदशाह उसके विरूद्ध युद्ध केलिए निकले, अब्दाली के तोपखाने में आग लग जाने के कारण वह पराजित होकर वापस चला गया इसी मध्य 1748 में मुहम्मदशाह की मृत्यु हो गयी ।

मुहम्मदशाह की मृत्यु के पश्चात् शहजादा अहमदशाह शासक बना। अहमदशाह तो औरभी विलासी शासक निकला । वह हरम की चाहरदीवारी में बन्द रहेने के कारण प्रशासनिक गुणों एवं राजनैतिक दूरदर्शिता से परे था । अतः उसके शासनकाल में साम्राज्य की गतिविधियो पर उसकी माता ऊधम बाई तथा उसके कृपापात्र जावेदखाँ का अत्यधिक प्रभाव बढ़ गया वजीर सफदरजंग अपनी नीतियों को कार्यान्वित करने में असफल रहा तथा अन्य दरबारी उमरा भी अपने व्यक्तिगत हितों की पूर्ति में लगे रहे ।

राजनैतिक विघटन की इस प्रक्रिया में पुनः अहमदशाह अब्दाली ने सहयोग दिया । उसने 1752 में पुनः लाहौर जीत लिया अतः सम्राट ने वजीर

सफदरजंग ने मराठों की सहायता से अहमदशाह पर आक्रमण करने के लिए और दूसरी ओर अपने कृपापात्र जाविदखाँ से परामर्श कर अहमदशाह अब्दाली की माँग के अनुसार उसे मुल्तान और थट्टा उसे सौंप दिया । वजीर सफदरजंग जब मराठों की सेना लेकर दिल्ली पहुँचा और उसने संधि की बात सुनी तो उसने नगर में घुसने से इन्कार कर दिया किन्तु मराठों को इससे उनकी तय की हुयी धनराशि नही मिली परिणामतः उन्होंने दिल्ली के आसपास के प्रदेशों को लूटना प्रारम्भ किया। अंततः दक्कन की सूबेदारी लेने के बदले में मराठों को दिल्ली से हटाया गया।

सफदरजंग को उसके पद से हटा दिया गया उसके विरुद्ध विजय प्राप्त करने वाला इमाद-उल-मुल्क था जो निजाम-उल-मुल्क का पौत्र था । ऐतमादुद्दौला को वजीर तथा इमादुर उल-मुल्क को मीर बख्शी नियुक्त किया गया किन्तु ये लोग भी विश्वासपात्र न निकले । इमादु-उल-मुल्क मराठों के साथ दिल्ली की ओर बढ़ा और शाही शिविर पर आक्रमण कर दिया अहमदशाह जान बचाकर भागा किन्तु शाही बेगमो पर बहुत अत्याचार किये गये । अतः में विवश होकर सम्राट ने होल्कर की माँगो को स्वीकार इमादु-उल-मुल्क को वजीर बना दिया। अब इमादु-उल-मुल्क ने बादशाह और वजीर दोनों को कोने में बिठा दिया तथा जहाँदार के पुत्र अजीजुद्दीन को आलमगीर द्वितीय के नाम से गद्दी पर बिठाया । अहमदशाह और उसकी माता को बंदी बनाकर अंधा कर दिया गया।

आलमगीर द्वितीय केवल नामपात्र शासक था वास्तविक सत्ता

धमका और आस पास के क्षेत्रों को लूटना प्रारम्भ कर दिया एमादु-उल-मुल्क युद्ध के लिए तैयार न था अतः उसने अब्दाली से दयाकी प्रार्थना की और पेशकश देने की प्रतिज्ञा की अब्दाली ने उसकी विजारत बनी रहने दी। उसने अवध से रूपया वसूल किया । इसी बीच अब्दाली से आलमगीर द्वितीय ने नजीबुद्दौला रूहेला को वजीर बना दिया तथा वापस लौट गया। अब इमादु-उल-मुल्क ने होल्कर से दिल्ली पर आक्रमण करके सम्राट तथा नजीबुद्दौला को बंदी बना लिया । होल्कर ने नजीबुद्दौला से लाख रिश्वत लेकर संधि करवाई और उसे उसके क्षेत्र भेज दिया यहयुद्ध 45 दिन तक चला था । इधर इमादु-उल-मुल्क ने आलमगीर द्वितीय की छलपूर्वक हत्या करवा दी।

अब इमादु-उल-मुल्क ने औरंगजेब के प्रपौत्र को शाहजहाँ द्वितीय के नाम से सिंहासन पर बिठाया । अहमदशाह अब्दाली ने फिर एक बार दिल्ली की ओर रूख किया लेकिन इस बार एमादु-उल-मुल्क दिल्ली छोड़कर सूरजमल जाट के पास चला गया। वहा से वह काल्पी चला गया जहाँ एकातवास करना प्रारम्भ किया इस प्रकार मुगल राजनीति पटल से उसका प्रभाव समाप्त हो गया ।

अहमदशाह अब्दाली ने हर बार की तरह लूटमार मचाई और 1759 में उसने शाहजहाँ द्वितीय को पदच्युत करके शाहजादा अलीगोहर को शाहआलम द्वितीय के नाम से गद्दी पर बिठाया । एक ओर तो दरबार में गुटबन्दी चल रही थी और दूसरी ओर मराठों ने अब्दाली की अनुपस्थिति का लाभ उठाकर मराठों ने दिल्ली में लूटमार प्रारम्भ की । 1761 में पानीपत के

मैदान में अब्दाली तथा मराठा पेशवा बाला जी बाजीराव की सेना में भयंकर युद्ध हुआ । तोपखाने का सही नियंत्रण न होने के कारण मराठा सेनापति सदाशिव राव भाउ की रणक्षेत्र में मृत्यु होने के कारण मराठों की पराजय हुयी और पराकाष्ठा पर पहुंचे हुए इस शक्ति का अन्त हो गया । यद्यपि उस समय शाह आलम बंगाल में था किन्तु अहमदशाह अब्दाली ने उसे ही सम्राट स्वीकार किया और अवध के सूबेदार शुजाउद्दौला को उसका वजीर नियुक्त करके वापस लौट गया ।[1]

1764 में बंगाल में नवाब मीर कासिम के पक्ष से लड़ा किन्तु पराजित हुआ । उसने कड़ा तथा इलाहाबाद एवं 26 लाख वार्षिक पेंशन के बदले में अंग्रेजों को बंगाल बिहार की दीवानी प्रदान की । इलाहाबाद में वह 1771 तक रहा । इसके पश्चात् मराठों की सहायता वह इलाहाबाद से दिल्ली आया । इन वर्षों में सम्राट की अनुपस्थिति में उसका पुत्र जवांबख्त जहांदारशाह दिल्ली में मराठों के प्रभाव में शासन चलाता रहा ।

इसी मध्य सिखों ने सहारनपुर तथा दिल्ली के आसपास के क्षेत्रों को लूटना प्रारम्भ कर दिया। नजीबुद्दौला ने उनको दबाने का प्रयत्न किया किन्तु स्वास्थ्य ने उसका साथ न दिया और वह अपने पुत्र जाब्ता खां पर दिल्ली का प्रबंध छोड़कर स्वयं नजीबाबाद आ गया जहाँ 1770 में उसकी मृत्यु हो गयी । शाहआलम की अनुपस्थिति में उसने सदैव दिल्ली को बचाने का प्रयत्न किया।

1- कामदार और शाहः ए हिस्ट्री ऑफ द मुगल रूल इन इंडिया, पृ0266, ओन, द फाल आफ मुगल इम्पायर, पृ0 208-209

नजीबुद्दौला के पुत्र जाब्ता खाँ ने मराठों के साथ मिलकर दिल्ली पर हमला किया शाही फौज पराजित हुयी । यद्यपि शाह आलम ने उसे वजीर स्वीकार कर लिया । किन्तु 1785 में उसकी मृत्यु हो गयी और अब गुलाम कादिरखाँ वजीर बना उसने शाही परिवार के साथ अत्यअधिक दुर्व्यवहार किया और मुगल सम्राट शाहआलम की आँखे निकाल ली । इस अपमान जनक घटना से सिंधिया फौज ने गुलामकादिर पर आक्रमण कर दिया गुलामकादिर जब वजीर बना था तब शाह आलम सिंधिया की शरण मे चला गया था । यद्यपि गुलाम कादिर भाग गया था लेकिन उसे पकड़कर सिंधिया के समक्ष लाया गया और अत्यअधिक कष्ट देकर वध कर दिया गया । इस समय मुगल सम्राट ने राज्य कार्यों से हाथ उठा लिया था और लाचार मराठों के पंजों में बंदी था सिंधिया सर्वशक्तिमान था । अन्त में 1803 में लार्डलिक ने दिल्ली विजित करके सम्राट के पद पर तो उसे रहने दिया और 1 लाख 25 हजार पेंशन निश्चित करके उसके समस्त अधिकार छीन लिये । अब मुगल सम्राट अंग्रेजों की कृपा पर आश्रित रह गया । 1806 में सम्राट शाह आलम की मृत्यु हुई और अकबर द्वितीय नाममात्र का शासक बना ।

इस प्रकार तत्कालीन समाज की राजनैतिक अवस्था का चित्र कवि की एक पंक्ति से ही खिंच जाता है :

साहिब अंध मुसाहिब मूक, सभा बहिरी, रंग रीझ को माच्यो ।

राजनैतिक अव्यवस्था तथा विलासिता इन बिगड़ी हुयी परिस्थितियों के भँवर

1- देव ग्रंथावली: वैराग्यशतक, संपादक पुष्पारानी जायसवाल, 33, छं0 25

में पड़कर तत्कालीन कवि वर्ग एक विशेष विचारधारा का अनुगामी हो गया । अब कवियों ने हिन्दी साहित्य को आध्यात्मिक स्तर से उतार कर लौकिक स्तर पर ला खड़ा किया और उनकी लेखनी श्रृंगार से ओत-प्रोत कामनियों का चित्रण करने का माध्यम बनी ।

द्वितीय अध्याय

सामाजिक-विभाजन (हिन्दू-मुस्लिम)

सामाजिक - विभाजन

हिन्दू समाज की महत्वपूर्ण वर्ण व्यवस्था चार भागों में विभाजित थी ।[1] वर्ण व्यवस्था हिन्दू समाज की एक ऐसी विशेषता है जो संसार के किसी भी भाग में नहीं पाई जाती ।[2] भारत के यूरोपीय लेखकों तथा उनका अनुसरण करने वाले देशी लेखकों ने वर्ण शब्द का अर्थ चर्म रंग ही बताया है और तदुपरान्त जाति ।[3] अंग्रेजी भाषा मे जाति शब्द के लिए "कास्ट" का व्यवहार किया जाता है जो पुर्तगाली शब्द "कास्टा" से बना है जिसका अर्थ है नस्ल, प्रजाति या जन्म ।[4] प्राचीन पुस्तकें समाज का ऐसा चित्र प्रस्तुत करती है जिससे ज्ञात होता है कि समाज सर्वथा जाति के आधार पर व्यवस्थित था ।[5] यह जाति प्रथा अथवा वर्ण-व्यवस्था काफी पहले से भारत में प्रचलित था ।[6] समाज के ये चार

1- डुबाइस - हिन्दू मैनर्स, कस्टम्स एण्ड सेरिमनीज - पृ0 14, 22, 32
ट्रेवरनियर- ट्रेवल्स इन इण्डिया - पृ0 142-144,

2- योगेन्द्र नाथ भट्टाचार्य - हिन्दू कास्ट्स एण्ड सेक्ट्स- पृ0- 2 ।

3- इण्डियन एन्टीक्वेरी भाग- 60, 1931 पृ0 - 49 ।

4- वही

5- इण्डियन एन्टिक्वेरी भाग 49, [1920] में प्रकाशित लेख "ऑन द हिस्ट्री ऑफ इण्डियन कास्ट सिस्टम" में एच0 पी0 चकलादर द्वारा उद्धृत - पृ0 206 ।

6- पुराणों के रचनाकाल में ही भारतीय समाज चार वर्णों में के आधार पर निश्चित रूप से संगठित था। वे थे- ब्राह्मण अर्थात् पुरोहित, क्षत्रिय अर्थात् योद्धा, वैश्य अर्थात् व्यापारी, ... सी. डी. एम. चोड, दि हिस्ट्री ऑफ इण्डियन सिविलाइजेशन- पृ0 4 .

वर्ण ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र में विभाजित था ।

ब्राह्मण छत्री वैस्य सूद्र पुनि ।[1]

ये ब्राह्मण , छत्रिय, वैश्य और शूद्र क्रमशः जन्म के आधार पर स्थित थे, जिनमें अन्तिम तीन एक दूसरे से निम्न होते थे ।[2] ब्राह्मण को पंडित[3] , द्विज[4], विप्र[5] और पुरोहित[6] भी कहा गया है । ब्राह्मण जाति अपनी

1- सोमनाथ ग्रंथावली: ब्रजेंदविनोद, पृ0 708 छं024, पृ0 699 छं020, भूषण ग्रंथावली, पृ0 83छं0 293; आलम ग्रंथावली पृ0 150, 73/198; निकोलाई मनूची: स्टोरिया द मोगोर, भाग 3, पृ0 36, डुबाएस: हिन्दू मैनर्स, कस्टमस एंड सेरेमनीज, पृ0 124, ट्रवेर्नियर, पृ0 142-144

2- धुर्ये : कास्ट, क्लास एंड आकुपेशन, पृ0 2-26

3- मतिराम: काव्यनिर्णय, पृ0 185, ललितललाम, पृ0 303 छं032; भूषण ग्रंथावली शिवराजभूषण , पृ0 56 छं0 348, सोमनाथ ग्रंथावली, पृ0 7 छं0 24; आलम ग्रंथावली पृ0 128छं0 108 कालीकिंकर दत्त, सर्वे ऑफ इंडियाज सोशल लाइफ एंड ऐकोनॉमिक कंडीशन इन दऐट्टीन्थ सेंचुरी , [1707-1813] पृ 37, 63

4- "द्विज" सोमनाथ ग्रंथावली: ब्रजेंदविनोद, पृ0 699 छं0 20, रसपीयूषनिधि, पृ0 165 छं0 27, दीर्घन्गार वर्णनूपृ 820 छं0 17; सुजानविलास पृ0 711 छं0 19,' 804 छं0 18 पृ0 639 छं0 56; पृ0 639 छं0 57,' पृ0 639 छं0 59,' माधवविनोद, पृ0 335 छं0 8, डुबाएस , हिन्दू मैनर्स, कस्टम्स एंड सेरेमनीज, पृ0 98, 169

5. "विप्र" देव ग्रंथावली: पृ0 183 छं0 94, सोमनाथ ग्रंथावली सुजानविलास पृ0 625 छं0 26; पृ0 628 छं0 46; पृ0 628 छं0 62, पृ0 821 छं0 19,' 835 छं0 29;' 774 छं0 43, पृ0 774 छं0 44;' 752 छं0 44,' पृ0 752 छं0 42, पृ0 762 छं0 30, वही पृ0 216

6- "पुरोहित" सोमनाथ ग्रंथावली : रामचरित- रत्नाकर पृ0 1013 छं0 47,' पृ0 364 छं0 55, वही पृ0 268 दत्त, ओरिजन एंड ग्रोथ आव इन इंडिया, पृ0 31 ।

श्रेष्ठता के कारण, अपनी उत्पत्ति को विशिष्टता के कारण, प्रतिबन्धित नियमों के पालन के कारण तथा अपने विशिष्ट संस्कार के कारण ब्राह्मण सभी वर्णों का प्रभु है ।[1] इस प्रकार पुरातन मान्यताओं के आधार पर सामाजिक, धार्मिक स्तर पर ब्राह्मण को श्रेष्ठतम माना गया है ।[2]

सांस्कृतिक और आध्यात्मिक, सैनिक और राजनैतिक आर्थिक और अकुशल श्रमिक – ये वर्ण– व्यवस्था के जो चार स्तम्भ माने गये, इनके विभिन्न कर्त्तव्य और कर्म स्पष्टतः पृथक कर दिये गये तथा उनके विशिष्ट एवं पूरक स्वरूप को मान्यता दी गयी ।[3]

पढ़ना – पढ़ाना, ध्यान अराधना आदि ब्राह्मण वर्ग के सम्मानित मान्य कार्य थे {विशेषकर वेदाध्यन– अध्यापन}

वेद पुरानन की चर्चा अरचा कुल देवन की फिरिफैली[4] ब्राह्मण

1– दि लॉज ऑफ मनु, अध्याय 10वाँ श्लोक 3, सेक्रेड बुक्स आफ दि ईस्ट में उद्धत भाग 25, पृ0 402 एफ मैक्समूलर द्वारा संपादित; जे0 बी0 ट्रेवेर्नियर; ट्रैवेल्स इन इंडिया, भाग 2 पृ0 413

2– पंडित, पंडित सौं सुख मंडित, सायर सायर के मन मानि ।
संत, संत मैंना मलो, गुनवंतन कौं गुनवंत बखानैं ।।
मतिराम–काव्यनिर्णय पृ0 185
देव–देवसुधा, पृ0 5 छं0 9, सोमनाथ ग्रंथावली द्वि. ख., पृ0 350 छं0 15
वही, अध्याय 1, श्लोक 98–100 पृ0 25–26 ।

3– राधाकृष्णन् – द हिन्दू व्यू आफ लाइफ, पृ0 76–77

4– भूषण ग्रंथावली; पृ0 83 छं0 293, देव–देवसुधा, पृ0 59, छं0 9; मतिरामग्रंथावली: काव्यनिर्णय, पृ0 185; सोमनाथ ग्रंथावली, द्वितीय खंड, पृ0 319 छं0 3, पृ0 348 छं0 2 सुजानविलास पृ0 639 छं0 59; रसपीयूषनिधि पृ0 7 छं0 24, आलमगीरनामा, पृ0 34–35 गोपीनाथ शर्मा राजस्थान का इतिहास द्वितीय संस्करण, पृ0 480, ऋग्वेद 7, 103.8

ब्राह्मण वर्ग विवाह आदि उत्सवों में धार्मिक कृत्य संपन्न कराने में भाग लेते थे ।

> या मालति के ब्याह कौं प्रगटौ मंगलचार ।
> विप्र वेद मंजनि पढ़ौ नेकु न करौ अबार ।[1]

ब्राह्मणों का जीवन प्रारम्भ से ही चार आश्रमों में बँटा था –

> आश्रम ब्रु चारि । निजधर्म धारि ।[2]

प्रथम आश्रम में ब्राह्मण निम्न प्रकार से जीवन व्यतीत करता था –

" ब्राह्मणों के जीवन की यह अवधि पच्चीस वर्ष की आयु तक रहती है । उसे एक संयमित जीवन व्यतीत करना पड़ता है वह वेद का अध्ययन और उसकी व्याख्या करताहै जिस गुरू से यह विद्याओं का ज्ञान प्राप्त करता है उसकी वह दिन रात सेवा करता है, दिन में तीन बार स्नान करना है तथा को अग्नि में होमकरता है ।[3] प्राचीन काल से ही राजा का अभिषेक ब्राह्मणों

1– सोमनाथ ग्रंथावली ,माधव विनोद, पृ0413 छं0 6; सुजानविलास पृ620 छं0 15; देव:देवचरित्र , पृ0 5 छं0 12, पृ0 5 छं0 14, डुबाय्स; हिन्दू मैनर्स, कस्टम्स एंड सेरेमनीज पृ0 151, 223, 226,

2– सोमनाथ ग्रंथावली : दोर्घनगर वर्णन, पृ0 820 छं0 20, ब्रजेंदविनोद, पृ0 746 छं0 48, पृ0 745 छं0 41, पृ0 746 छं0 49, अलबेरूनीज, इण्डिया 2, [सचाऊ] , पृ0 130

3– सूदन ग्रंथावली: पृ0 83, छं0 293 ; देव-देवचरित्र, पृ0 5 छं0 9, सोमनाथ ग्रंथावली रसपीयूषनिधि "करत अग्नि में होम उताले" पृ0 165 छं0 2[illegible]; ब्रजेंदविनोद पृ0 652 छं0 40, पृ0 654 छं0 58 सुजानविलास पृ0 804 छं0 18; आलमगीरनामा मुहम्मद काजिम, इलियट एंड डाउसन, भाग 7, पृ0 179; अलबेरूनीज इंडिया 2, सचाऊ पृ0 130, ऋग्वेद 7, 103.8

के हाथों से संपन्न होता रहा है ।

मुनि राजनि अभिषेक राजमुकुट धरि सीस,

तिलक दियो समाज पडु, कहि-कहि जै जगदीस ।[1]

राजा के वेद विरुद्ध कार्य करने पर ब्राह्म्मण पहले के राजा को हटाकर दूसरे राजा का अभिषेक कर सकता था ।[2]

ब्राह्म्मणों के जीवन का द्वितीय आश्रम गृहस्थ आश्रम माना गया है जिसमें वह परिवार के साथ रहता है[3] तथा विवाह करके अपनी गृहस्थी बसाता है ।[4]

1- देव ग्रंथावली: देवमायाप्रपंच, पृ0 247 छं0 2
सोमनाथ ग्रंथावली: रामचरित्र-रत्नाकर पृ0 397 छं0 2, 131 छं0 26; रामकलाधर पृ0 450 छं0 35; विष्णु पुराण: 4, 20. 28-29; कृत्यकल्पतरु राजधर्मकांड, पृ0 9-18, [राज्याभिषेक में ब्राह्म्मण प्रमुख रूपसे भाग लेता था] : कल्हण राजतरंगिणी 1-70; यजुर्वेद [शुक्ला] 20.1-4,

2- सोमनाथ ग्रंथावली: भाग 2, रामचरित्र-रत्नाकर पृ0 397 छं0 2, में लंकाधिपति रावण के अत्याचारी होने पर विभीषण का अगले राजा के रूप में अभिषेक किये जाने का उल्लेख है; विष्णु पुराण: 4, 20. 28-29, इसमें राजा देवापि के वेद विरुद्ध आचरण करने पर ब्राह्मणों ने शान्तनु को राजा बनाया ।

3- नंदन विप्र प्रधान को बहनि कंनिका बाल ।
- सोमनाथ ग्रंथावली, माधवविनोद
पृ0 382 छं0 143, पृ0 624 छं0 47;
अलबेरूनीज इण्डिया 2, [सचाऊ] पृ0 131-132

4- बर सालंकृत पंडित निदान -
- सोमनाथ ग्रंथावली, पृ0 319 छं0 9; मनूची स्टोरिया द मोगोर, भाग 3 पृ0 72 ।

तीसरे आश्रम में वह परिव्राजक (संयासी) हो जाता है और प्रथम आश्रम की भाँति जीवन व्यतीत करता है :

पुनि करत कर्म अनुसार वेद ।[1]

आश्रम की चौथी अवधि जीवन की समाप्ति तक रहती है फलत: इस आयु में सारा समय परमार्थ और धार्मिक कृत्यों में बीत जाता है । और माया-मोह का परित्याग करके आध्यात्मक की ओर बढ़ने काअधिक प्रयास किया जाता है । [2]

1- सोमनाथ ग्रंथावली: पृ0 627 छं0 47, ब्रजेंदविनोद : पृ0 746 छं049 अलबेरूनीज इंडिया 2, (सचाऊ) पृ0 132-133 ।

2- बाग्यो बन्यो जरतारकै तामहि ओस को हार तन्योमकरी ने, पानी में पाहन- पोतचल्यो चढ़ि, कागद की छतुरी सिर दीने । काँच में बाँधके पाँव पतंग के देव सुसंग पतंग को लीने, मोम के मंदिर, ाखन को मुनि बैठ्यो हुतासन आसनकीने ।
प्रस्तुत पंक्तियों में माया मोह का परित्याग का वर्णन है अर्थात् इस आयु में ब्राह्मण सांसारिक वस्तुओं की असारता में विश्वास करने लगता है । - देव :- देवसुधा, पृ0 9 छं0 19;
• मतिराम ग्रंथावली:रसराज, पृ0 101 छं0 1; सोमनाथ ग्रंथावली: ब्रजेंदविनोद, पृ0 654 छं0 57; सुजानविलास पृ0 736 छं0 36, श्रृंगारविलास प्रथमोल्लास, पृ0271 छं0 20, अलबेरूनीज इंडिया (सचाऊ) पृ0 133 :आलमगीर नामा; मुहम्मदकाजिम इलियट एंड डाउसन, भाग7, पृ0 179

ब्राह्मणों को ज्योतिषशास्त्र का अच्छा ज्ञान था फलतः सामान्य जनता के अलावा राजा लोग भी कोई कार्य करने से पहले पुरोहित को बुलाकर मुहूर्त निकलवाते थे ।[1] प्राचीन काल से ही राजन्य वर्ग ब्राह्मणों का आदर सम्मान करते थे तथा ब्राह्मणों की रक्षा करते थे :

" जो रक्षै गो विप्र की छिति पति पुर पुरहूत " [2]

राजा लोग ब्राह्मणों को बहुत अधिक दान-दक्षिणा भी देते थे ।[3]

जातिवाद की भावना बढ़ जाने के कारण ब्राह्मण ऊँचनीच का भेद बहुत ज्यादा मानने लगे परिणामतः वे न तो किसी का छुआ खाते थे और न ही किसी को अपनी रसोई में प्रवेश करने की अनुमति देते थे । उनके घर में वही व्यक्ति प्रवेश कर सकता था जिसको वे स्वयं अनुमति देते थे ।[4]

इस प्रकार ब्राह्मण वेद के अनुसार कार्य करते हुए अपने धर्म का पालन बड़ी कठोरता से करते रहे ।[5]

तहाँ नृप नें तब विप्र बुलाई। कह्यो कि मुहूरत देहु बताई,

1- सोमनाथ ग्रंथावली : सुजानविलास, पृ0 625 छं0 26, 805 छं0 6 आलम श्रृंगार संग्रह पृ0 54 छं0 11, डॉ0 मोहन अवस्थी हिन्दी रीतिकविता और समकालीन उर्दू काव्य, पृ0 113 , मुहम्मद यासीन, ए सोशल हिस्ट्री ऑफ इस्लामिक इण्डिया, पृ0 93, मनूची स्टोरिया द मोगोर, I पृ0 213, डुबाएस हिन्दू मैनर्स कस्टम्स एंड सेरेमनीज पृ0219

2- देव ग्रंथावली : पृ0 185 छं0 94, सोमनाथ ग्रंथावली। 491 छं0 39; सुजानविलास पृ0 639 छं0 55, पृ0 639 छं0 56; माधवविनोद , पृ0 491 छं0 39, गौतम् धर्म सूत्र: 12.5.11.5-9

3- सोमनाथ ग्रंथावली : पृ0 762 छं0 30, सुजानविलास, पृ0 721 छं0 19, पृ0 735 छं0 29, भूषण ग्रंथावली: शिवाबावनी, पृ0 50 छं0 40, डुबाएस हिन्दू मैनर्स , कस्टम्स एंड सेरेमनीज, पृ0 223

4- "सापर ऊँच और नीच विचार वृथा बकि वाद बढ़ावत पाहि"
   -देव: देवसुधा पृ0 5 छं0 9,

मतिराम ललितललाम पृ0 303 छं0 32, काव्यनिर्णय पृ0 185 ट्रे वेर्नियर ट्रेवेल्स इन इंडिया, भाग 2, पृ0 142 डुबाएस , हिन्दू मैनर्स कस्टम्स एंड

ब्राह्मण प्रकृति से संतोषी होते थे। [1] ब्राह्मण वर्ग अपनी पवित्रता बनाए रखने के लिए गले में तुलसि माला और उपवीत (जनेऊ) भी धारण करता था। [2]

वर्ण व्यवस्था का क्रमिक आधार पुरातन मान्यताओं के आधार पर चलता रहा तात्पर्य यह है कि चार वर्णों के विभाजन क्रम में छत्रिय का स्थान ब्राह्मण के बाद रहा किन्तु उनका मान सम्मान ब्राह्म्मणों से कम नहीं था। [3] अपने युद्ध कौशल और प्रशासन से वे समाज को रक्षितऔर पोषित करते करते थे। [4]

1- सत्य शील संतोष निधि विप्र वपु सविवेक।
न्हुन ज्ञान जप तप नियम पूजन यजन अनेक
—देव ग्रंथावली: पृ0184 छं0 89
सोमनाथ ग्रंथावली: ब्रजेंदविनोद पृ0492 छं0 46

2- जहं बसत विप्र सदस त्रिकाल, गावत प्रसन्नचित गुनगुपाल, गहगहे जगमगत तिलक भाल, उपवीत कंठ में तुलसि माल।
— सोमनाथ ग्रंथावली, सुजानविलास पृ0627 छं0 42;
पृ0 552 छं0 40, भूषण ग्रंथावली, शिवाबावनी, पृ0 127, छं0 51
केरी, पृ0 259- 260

3- "ब्राह्मण छत्री वैश्य सद पुनि,
— सोमनाथ ग्रंथावली, ब्रजेंदविनोद, पृ0 699 छं0 20,
पृ0 708 छं0 24, ऋग्वेद, 8.35.16-18 1:157.2 घुर्ये: कास्ट क्लास ऐंड आकुपेशन, पृ0 2-27; बर्नियर पृ0 39, ट्रेवेर्नियर ट्रेवेल्स इन इंडिया, पृ0 143, अलबेरूनीज इंडिया(सचाऊ) भाग 2 पृ0 134

4- ऋग्वेद: 8.35.16-18, 1.157.2; गौतम धर्म सूत्र: 8.1

भारत में निरन्तर विदेशी आक्रमणों के परिणाम स्वरूप मध्यकालीन समाज में क्षत्रिय- जाति का पुरुष निश्चित रूप से महत्वपूर्ण व्यक्ति माना जाता था ।[1]

यद्यपि मुस्लिम शासन की स्थापना से पूर्व देश में क्षत्रिय का जो महत्व था वह अवलोकित काल में नहीं रह गया था, क्योंकि भारतीय जनता ने पराभव की मनोवृत्ति स्वीकार कर लिया था ।[2] फिर भी क्षत्रिय जाति अपने कर्तव्य से पूर्णतयाच्युत नहीं हुयी थी । प्राचीन समय से चले आ रहे क्षत्रियों के कर्तव्यों से कुछ कर्तव्यों का उल्लेख कवियों ने किया जो निम्न प्रकार से हैं -

प्रजा की रक्षा करना[3] दान देना [4] वेद पढ़ना [5] तथा अपने पराये

1- डॉ0 शकुन्तला अरोरा, रीतिकालीन श्रृंगार कवियों की ~~मौलिक~~ नैतिक दृष्टि , पृ0 174,' वर्नियर , पृ0 39

2- डॉ0 शकुन्तला अरोरा- वही, पृ0 174-175

3- ताहो सों छत्री कहै हरे सदा पर पोर ।
देव ग्रंथावली : पृ0 185 छं0 94;
सोमनाथ ग्रंथावली : सुजानविलास पृ0 627 छं0 47, ब्रजेंदविनोद पृ0 685 छं0 56; मतिराम; मतिराम रत्नावली, पृ0 22 छं0 20, मनुस्मृति 1.89 जयशंकर मिश्र ग्यारहवीं सदी का भारत पृ0 113; गौतम धर्मसूत्र: 2.2-9 ट्रेवेर्नियर ; पृ0143 डुबाएस हिन्दू मैनर्स, कस्टम्स एंड सेरेमनीज पृ0 668

4- भूषण ग्रंथावली; शिवाबावनी, पृ0 50, छं0 40, मतिराम रत्नावली; पृ0 22 छं0 20, सोमनाथ ग्रंथावली सुजानविलास पृ0 721 छं0 19; 735 छं0 29,' पृ0 762 छं0 30, 720/ 15 गोपीनाथ शर्मा : राजस्थान का इतिहास, पृ0 480

5- .... पढ़त उमंग सौं धनुर्वेद
- सोमनाथ ग्रंथावली : पृ0 627 छं0 47;
अलबेरूनीज इण्डिया 2, [सचाऊ] पृ0 136 ; मनुस्मृति 2.135

की भावना का परित्याग करके धर्म के निमित्त युद्ध करना ।[1] अपने धर्म का दृढ़ता से पालन करते हुए प्राण जाने पर भी अपमान न सहन करना आदि क्षत्रियों के प्रमुख कर्त्तव्य बताये गये ।[2] क्षत्रिय जाति का विशेष गुण यह था कि यह जाति बहुत बहादुर होती थी ।[3] फलतः इनकी शौर्यवीरगाथाएँ बहुत प्रचलित थीं ।

1- सोमनाथ ग्रंथावली: ब्रजेंद्रविनोद, पृ0 520 छं0 55, भूषण ग्रंथावली: शिव राजभूषण छं0 377; महाभारत 6.122. 37, (जय शंकर मिश्र) खाफी खाँ मुन्तखब उल- लुबाब (इलियट एंड डाउसन) भाग 7 पृ0 300 डुबाइस हिन्दू मैनर्स, कस्टम्स एंड सेरेमनीज, पृ0 668 ट्रेवर्नियर पृ0 143

2- अरु छत्री वैश्यहु तिहो रीति । निज धर्म तज्जिहैं ताहि अनीति
- सोमनाथ ग्रंथावली रामकलाधर पृ0 442 छं0 14
आखिर क्षत्रिय सेहु मानभंग नहि सहि सक्यो ।
- सोमनाथ ग्रंथावली ध्रुवविनोद, पृ0 553, छं0 41
ब्रजेंद्रविनोद 737 छं0 27, देव ग्रंथावली पृ0 185 छं0 94 जयशंकर मिश्र ग्यारहवी सदी का भारत पृ0 112

3- " सब छत्री गुन -मंडित उदंड, अरु महाविक्रमी बल अखंड ।
- सोमनाथ ग्रंथावली: रामचरित्र रत्नाकर पृ0 410 छं0 40; ब्रजेंद्रविनोद पृ0 570 छं0 56,
मतिराम ललितललाम, पृ0 305 छं0 41; पृ0 307 छं0 54 पृ0 26, छं0 28 भूषण ग्रंथावली; शिवराजभूषण पृ0 34 छं0 202; खाफी खाँ मुन्तखब -उल लुबाब (इलियट एंड डाउसन) भाग 7, पृ0 300, हेमिल्टन भाग 8, पृ0 311 ट्रेवर्नियर भाग 2 पृ0 145; टाड एनल्स एण्ड एन्टीक्विटीज ऑफ राजस्थान, पृ0 724

छत्रिय वर्ग प्रारम्भ से ही राजकुल से संबंधित रहा है जो अट्ठारहवीं शती तक पूर्ववत् बना रहा ।[1] कवि ने ब्राह्मणों की भाँति छत्रियों को भी वेदानुसार कार्य किये जाने का उल्लेख किया है ।[2]

छत्रिय वर्ग को राजपूत कहकर पुकारा गया है [3] जिसके कारण राजपूत विशेष और छत्रियों के बीच अंतर करना कभी-कभी कठिन हो जाता है । राजपूतों की अनेक शाखाएं प्रशाखाएं होती थी ।[4] इन शाखाओं के लोगों को चंद्रावत[5]

1- मतिराम ललितललाम पृ0 307 छं0 54, सोमनाथ ग्रंथावली: माधव विनोद पृ0 317 छं0 4, रसपीयूषनिधि पृ0 165 छं0 27, रामचरितरत्नाकर पृ0 1140 छं0 6 , अथर्ववेद: 7, 103, बृहदारण्यक उपनिषद् 3.1 क्षत्रिय-विदेह शासक जनक का उल्लेख, छान्दोग्यउपनिषद, क्षत्रिय केकय नरेश का उल्लेख 5.11.5: मनूची, स्टोरिया द मोगोर -भाग 2, पृ0 407

2- सोमनाथ ग्रंथावली: सुजानविलास, पृ0 627 छं0 47 रामकलाधर पृ0 442 छं0 14

3- "राजपूत" भूषण ग्रंथावली: शिवराजभूषण पृ0 34 छं0 43, छं0 377 ; मतिराम ग्रंथावली: ललितललाम, पृ0 345 छं0 272, पृ0 307 छं0 54, पृ0 305 छं0 41, खाफी खाँ मुन्तखब उल-लुबाब इलियट एंड डाउसन भाग 7, पृ0 300 , 302; मुहम्मदयासीन ए सोशल हिस्ट्री आफ इस्लामिक इंडिया, पृ0 12, 14, 19, 32, 39, ट्रेवेर्नियर पृ0 143, कालीकिंकरदत्त सर्वेआफ इंडियाज सोशल लाइफ एंड एकोनॉमिक कंडीशन इन दऐटीन्थ सेंचुरी पृ0 27, 53, 65, 67, 68

4- खाफी खाँ: मुन्तखब उल-लुबाब, इलियट एंड डाउसन, भाग 7 पृ0 229-300 , गोपीनाथ शर्मा- राजस्थान का इतिहास पृ0 48

5- भूषण ग्रंथावली: शिवराजभूषण , पृ0 45 छं0 277, पृ0 34, छं0 204 ।

कुंभावत [1] धड़ावंश [2] महेवा वंश [3] और कछवाहा [4] आदि कहा गया । राजपूतों की श्रेणी में राठौर [5] और मराठों [6] का भी उल्लेख मिलता है । राजपूतों के लिए रजपूत [7] शब्द का भी उल्लेख मिलता है । राजपूतों के बारे में यह कहा गया कि जो वीर हो और रणभूमि में इज्जत रखे दान करे वही वास्तव में राजपूत कहलाता है ।

1- "कुंभावत" वही पृ0 45 छं0 277

2- "हाड़ा" मतिराम: ललितललाम, पृ0 304 छं0 34, मतिराम रत्नावली पृ0 22 छं0 20, भूषण ग्रंथावली: छत्रसालदशक, बोधा: विरह वारीश 182/38 पृ0 1 ~~छं0 1~~, मनूची स्टोरिया द मोगोर, अनुवादक विलियम इरविन भाग 2, पृ0 408 ।

3- "महेवा" भूषण ग्रंथावली, वही

4- "कछवाहा" मतिराम: मतिराम रत्नावली, पृ0 26 छं0 29; भूषण ग्रंथावली: शिवराजभूषण, पृ0 34 छं0 204; मनूची स्टोरिया द मोगोर भाग 2 पृ0 407

5- राठौर भूषण ग्रंथावली: शिवराजभूषण पृ0 45 छं0 272 भूषणसंग्रह, पृ0 59 छं0 67 ~~खाफी खाँ~~ बोधा विरह वारीश पृ0 182 छं0 38; खाफीखाँ: मुन्तखब-उल-लुबाब, इलियट एंड डाउसन भाग 7, पृ0 300, मनूची स्टोरिया द मोगोर, भाग 2, पृ0 407 भाग 3, 242

6- "मराठा" सोमनाथ ग्रंथावली: दीर्घनगर वर्णन पृ0 825 छं0 12, रसपीयूषनिधि पृ0 4, छं0 14, भूषण ग्रंथावली शिवाबावनी पृ0 28, छं0 22, मनूची स्टोरिया द मोगोर भाग 2 पृ0 403

7- "रजपूत", देवग्रंथावली पृ0 185 छं0 94, भूषण: भूषण संग्रह पृ0 34, छं0 272 शिवराजभूषण, छं0 377 भूषणग्रंथावली पृ0 103 403 मतिराम, ~~छं0 364~~ ललितललाम, पृ0 345 छं0 272; पृ0 307 छं0 54; पृ0 305 छं0 41; मतिराम रत्नावली, पृ0 26 छं0 28

रज राखे इन दान भट सो कहिये रजपूत ।[1]

तत्कालीन समय में राजपूतों मुगल साम्राज्य को बहुत सेवा की और युद्ध के समय अपने प्राण गँवाने से भी नहीं डरते थे ।[2]

भारतीय समाज का एक वैशिष्ट्य यह है कि यहाँ जन्म के आधार पर सामाजिक वर्गों का वर्गीकरण किया गया फलतः जो जहाँ और जिस स्थिति में उत्पन्न होता है वह उसी स्थिति में रहना चाहता है प्रगति की कामना नहीं होती । बुनकर अपने बेटे को बुनकर ही बनाता है, स्वर्णकार का पुत्र स्वर्णकार ही होता है। इस प्रकार हिन्दू जाति की ओर यूरोपीय लोगों की अपेक्षा कहीं अधिक आकृष्ट थे ।[3]

जाति व्यवस्था के श्रेणी क्रम के अन्तर्गत तीसरा स्थान वैश्य[4] का है ।

1- देवग्रंथावली: पृ0 185 छं0 94; सोमनाथ ग्रंथावली; ब्रजेंदविनोद, पृ0 737 छं0 27; पृ0 520 छं0 55

2- भूषण ग्रंथावली; शिवराजभूषण पृ0 34 छं0 204; पृ0 45 छं0 277; छं0377; मतिराम: मतिराम रत्नावली, पृ0 26 छं0 29, ट्रेवेर्नियर ट्रेवेल्स इन इंडिया पृ0 143; रोज; ग्लासरी आफ ट्राइब्स एंड कास्टेस, पंजाब, भाग 2, पृ0 501

3- बर्नियर, पृ0 259; डुबाएस हिन्दू मैनर्स, कस्टम्स एंड सेरेमनीज पृ0 41

4- "द्विज छत्री वैश्य शूद्र और
- सोमनाथ ग्रंथावली / ब्रजेंदविनोद, पृ0 699, छं0 20; पृ0 708 छं0 24; सुजान विलास पृ0 627 छं0 48; पृ0 807 छं0 7; दोपमणर वर्णन, पृ0 820 18; आलम; माधवानल कामकंदला पृ0 150; पुर्ये; कास्ट क्लास एंड आकुपेशन पृ0 5-6; मनूची स्टोरिया द मोगोर, भाग 3 पृ0 36; ट्रेवेर्नियर ट्रेवेल्स इन इंडिया पृ0 143; खाफी खाँ मुन्तखब-उल-लुबाब, [इलियट एंड डाउसन] भाग 7 पृ0 264, मनुस्मृति में भी वैश्य शब्द मिलता है; मनुस्मृति 1.10 डुबाएस हिन्दू मैनर्स पृ0 14-22

वैश्य को बनिया[1] भी कहा गया है । वैश्य वर्ण के कर्म के अन्तर्गत व्यापार का संयोजन किया गया ।[2] जन्म के आधार पर जाति निर्धारण के अतिरिक्त पारम्परिक व्यवसाय करने का इस जाति पर बहुत अधिक प्रभाव रहा । पारम्परिक व्यवसाय कि विशेषता यह थी कि सामान्य रूप से जो व्यापार पिता करता था, वही व्यवसाय पुत्र इस प्रकार पीढ़ी दर पीढ़ी एक ही व्यवसाय चलता रहता था ।[3]

अन्य जातियों की ही भाँति "वैश्य" जाति भी अपने धर्म का पालन पूर्ण रूप से करती थी । धर्मपालन का तात्पर्य है कि जिसे जो कार्य सौंपा गयाहै वह वही कार्य करता था अपने से नीचे वाला व्यवसाय अपनाना अपनी शान

1- बनिया " बोधा विरह-वागीश, पृ0 पृ0 67 छं0 3, देव; डॉ0 भगीरथ मिश्र, रीतिकाव्य नवनीत , पृ0 67; सोमनाथ ग्रंथावली; सुजानविलास पृ0 627 छं0 48; 807 छं0 7; 806 छं0 11 ब्रजेंदविनोद , पृ0 699 छं0 20, 708 छं0 24, मनूची; स्टोरिया द मोगोर, भाग 3, पृ0 36, 293 ; घुर्ये; कास्ट क्लास ऐंड आकुपेशन पृ0 5-6,' मुहम्मदयासीन, ए सोशल हिस्ट्री ऑफ इस्लामिक इंडिया पृ0 85 कालीकिंकर दत्त सर्वे ऑफ इंडियाज सोशल लाइफ एंड एकोनामिक कंडीशन इन द ऐय्टीन्थ सेन्चुरी पृ0 43, 83

2- बर बनिकघर आचारवंत , व्योपार विविध सज्जत अनंत" ।
— सोमनाथ ग्रंथावली सुजानविलास पृ0 627 छं0 48 ; 807 छं0 7; दीर्घनगर वर्णन, पृ0 820 छं0 18; मुहम्मदयासीन वही; ट्रैवेर्नियर; ट्रैवेल्स इन इंडिया पृ0 144 ; कालीकिंकरदत्त, वही पृ0 43 फायर 1, 281 प्राचीन काल से ही वैश्य व्यापार में रत थे, मनुस्मृति 1.10 जहांगीर नामा, पृ0 313 -14, गोपीनाथ शर्मा; पृ0 480

3- सोमनाथ ग्रंथावली पृ0 807, छं0 6, एडवर्ड हलित, व्यारज; व्यारज्या पृ0 26

के खिलाफ समझता था, क्योंकि वह अपने से नीचे वाले से अपने को उच्च कुल का समझता था ।[1] व्यवसाय परिवर्तन संभवतः विशेष परिस्थितियों पर निर्भर करता रहा होगा । बनिया जाति के लोग अत्यन्त लोभी और स्वार्थी होते थे । स्वार्थ के हेतु वे परहित पर ध्यान नहीं देते थे । कृपणता की इस निंदनीय व्यवहार के सामाजिक शोषण में बनिये का योगदान अपने आप में स्पष्ट है । कवि ने संसार की नश्वरता एवं क्षणभंगुरता को देखते हुए बनिये की वृत्तियाँ निश्चित रूप से निंदनीय माना है ।

> आवत आयु को द्यौस उद्यौत, गए रविधौं अँधियारिए ऐहे ।
> दाम खेर दै खरीदु गुरू, मौह की गौनी न फेरिबके हैं ।
> "देव" छितीस को छाप बिना जमराज जगातीमहादुख दे है ।
> जात उठो पुर देह को पैंठ, अरे बनिये बनिये नहि रे है ।[2]

1- अरू बनिक जाति । निस द्यौस राति ।
जुत धर्मख्याल । उर मैं दयाल
- सोमनाथ ग्रंथवाली: दीर्घनगर वर्णन पृ0 820 छं0 18: राम कलाधर पृ0 442 छं0 14, कालीकिंकर दत्त सर्वे ऑफ इंडियाज सोशल लाइफ एण्ड एकोनामिक कंडीशन इन द ऐट्टीन्थ सेंचुरी 1707-1813 पृ0 53 घुर्ये: कास्ट क्लास एंड आकुपेशन पृ0 2, 27

2- देव: डॉ0 भगीरथ मिश्र, रीतिकाव्य- नवनीत ,पृ0 67
द्रूबेर्नियर पृ0 145

वर्ण - व्यवस्था के अन्तर्गत शूद्र को प्रारम्भ से ही अन्तिम स्थान दिया गया जो अवलोकित काल में यथावत विद्यमान रहा ।[1]

शूद्र वर्ण के लोग ऊपर के तीन वर्णों अर्थात् ब्राह्मण छत्रिय, तथा वैश्य के सेवक माने गये ।

ऊपर शूद्र सजै सेवा विधान ....।[2]

ऊपर के तीन वर्ण ब्राह्म्मण छत्रिय तथा वैश्य की भाँति शूद्र भी अपने सेवा धर्म या निर्धारित आचरण का पालन करते थे :- "ऊपर लोग सब बसै सुकर्मी / ब्राह्मण क्षत्री, वैस सुधर्मी ।[3] उपर्युक्त विवरण के आधार पर यह कहा जा सकता

1- देव ग्रंथावली; पृ0 5 छं0 9; सोमनाथ ग्रंथावली : ध्रुवेंद्रविनोद, पृ0 708 छं0 24; 699 छं0 20; 483 छं0 6; रामकलाधर, पृ0 442 छं0 14; - मनुस्मृति (चतुर्थ एकजातिस्तु शूद्रो नास्ति तु पंचमः) 10.4 आपस्तम्ब-धर्मसूत्र, चत्वारो वर्णा ब्राह्मण छत्रिय वैश्यशूद्राः 1.1.1.5, घुर्ये; कास्ट क्लास ऐंड आकुपेशन पृ0 5-6, ट्रेवेनियर ट्रेवेल्स इन इंडिया पृ0 144, जहाँगीरनामा: पृ0 314 शूद्रों पर विस्तृत विवरण के लिए देखिए आर0एस0 शर्मा शूद्राज इन ऐंशियंट इंडिया, द्वितीय संस्करण, 1980; काली किंकर दत्त: सर्वे आफ इंडियाज सोशल लाइफ ऐंड एकोनामिक कंडीशन इन द ऐट्टीन्थ सेंचुरी पृ0 62

2- सोमनाथ ग्रंथावली: सुजानविलास पृ0 627 छं0 49, ध्रुवेंद्रविनोद पृ0 8483 छं0 6, घुर्ये कास्ट, क्लास ऐंड आकुपेशन पृ0 80 जहाँगीरनामा पृ0 314, अलबेरूनीज इंडिया 24 (सचाऊ) पृ0 136

3- आलम: माधवानल: कामकंदला पृ0 150, सोमनाथ ग्रंथावली: रामकलाधर पृ0 442 छं0 14, सुजानविलास पृ0 627 छं0 49

है कि भारतीय वर्ण- विन्यास किसी विधि वहित संहिता का अधिनियम नहीं है यद्यपि यह उसका दूरगत प्रभाव हो सकता है, यह भारतीय जन की अपनी सृष्टि है जिसमें निम्नतम वर्ण का व्यक्ति भी अपनी स्थिति से लज्जित नहीं अपितु गौरवान्वित है। निम्नतम वर्ण का व्यक्ति वर्ण- व्यवस्था से बाहर नहीं है समाज में उसका मान्यता विहित स्थान है वह एक वर्ण का सदस्य है और स्वयं ही अपने लोगों से अलग अपनी सत्ता बनाए रखना चाहता है।[1]

इन चारों वर्णों ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य तथा शूद्र के अलावा अवलोकित काल में कुछ अन्यजातियाँ भी अस्तित्व में थी यथाः कायस्थ जाति,[2] बनजारा[3] आदि कुछ जातियाँ व्यवसायिक आधार पर जानी जाती थी जैसे लुहार :

स्यौ लोहे के काम सौ है लुहार को नाम।[4]

---

1. जे. मिल. हिस्ट्री ऑफ ब्रिटिश इंडिया, पहली जिल्द फुटनोट, पृ० 140

2- 'कायस्थ' अरु धर्मसील। कायस्थ झील
बहु जाति और। लहिबसी ठौर
- सोमनाथ ग्रंथावली : दीर्घनगर वर्णन पृ० 820 छं० 19 देव ग्रंथावली भाग 1, सुखसागर तरंग [illegible]285 मुहम्मदयासीन एसोशल हिस्ट्री आफ इस्लामिक इंडिया, पृ० 48, मनूची सौ रिया द मोगोर भाग 2 पृ० 422, काली किंकरदत्त, सर्वे ऑफ इंडिया सोशल लाइफ एंड इकोनॉमिक कंडीशन इन द ऐटीन्थ सेंचुरी पृ० 39, 47,

3- 'बनजारा' देव ग्रंथावली: भाग 1, सुखसागरतरंग पृ० 99 छं० 304, भूषण ग्रंथावली: शिवाबावनी पृ० 29, छं० 22 मुहम्मदयासीन ए सोशल हिस्ट्री ऑफ इस्लामिक इंडिया पृ० 27; कालीकिंकरदत्त; वही पृ० 70; टैवर्नियर ट्रैवल्स इन इंडिया, भाग 2, पृ० 34

4- 'लुहार', सोमनाथ ग्रंथावली : रसपीयूषनिधि पृ० 165 छं० 27, देवग्रंथावली सुखसागर तरंग, पृ० 94 छं० 278 आईने-ए-अकबरी इलियट एंड डाउसन भाग-7 पृ० 187, गौरीनाथ शर्मा, राजस्थान का इतिहास, पृ० 482, मआसीर आलमगीरी अकबरी भाग 2, पृ० 191-92

लुहार के अतिरिक्त सुनार[1] तेली-तमोली[2] अहीर[3] चमार[4], धोबी[5] चारवा[6] आदि का उल्लेख मिलता है ।

मुस्लिम समाज : मुस्लिम समाज में सुल्तान प्रजा का नेता और समाज का प्रधान था[7] वह राज्य का सबसे महत्वपूर्ण व्यक्ति होता था तथा समाज के नेता की हैसियत से वह सामाजिक और सांस्कृतिक आचरण निर्धारित करता था ।[8] सामान्यतः सम्राट विलासी जीवन व्यतीत करते थे ।[9] सुल्तान प्रायः निरंकुश शक्ति का

1- "सुनार" घनानंद, जगदीश गुप्त, रीतिकाव्य संग्रह, पृ0 66 छं0 11; बोधा: विरह-वारीश, पृ0 107 छं0 14; सोमनाथ ग्रंथावली; सुजान-विलास, 670 छं0 52; पृ0 670 छं0 53; देव ग्रंथावली: सुखसागरतरंग पृ0 91 छं0 263; गोपीनाथ शर्मा, राजस्थान का इतिहास पृ0 482, कालीकिंकर दत्त सोशल लाइफ एंड एकोनामिक कंडीशन पृ0 47

2- "तेली-तमोली" बोधा: विरह-वारीश, पृ0 198 छं0 52; पृ0 67 छं0 3; देव ग्रंथावली; सुखसागरतरंग पृ0 92 छं0 268, पृ0 92 छं0 269

3- "अहीर" आलम ग्रंथावली, पृ0 13 पृ0 4; आलम; अक्षर-मलिका, प0 139, छं0 303; घनानंद, जगदीशगुप्त, रीतिकाव्य संग्रह पृ0 66 छं0 11, 66 छं0 12; सोमनाथ ग्रंथावली; रामचरित्र रत्नाकर पृ0 407, छं0 23, देवचरित्र, पृ0 5छं0 14; सुखसागरतरंग, 97 छं0 291; कुमारमणि, रसिक-रसाल पृ010 छं0 20 बोधा; विरह वारीश पृ0 28 छं0 5

4- "चमार" भिखारीदास ग्रंथावली : काव्यनिर्णय पृ0 135 छं0 19, कालीकिंकर दत्त;....सोशल लाइफ एंड एकोनॉमिक कंडीशन पृ0 27

5- "धोबी" देव ग्रंथावली : 1 देवचरित्र, पृ0 24 छं0 125 कालीकिंकरदत्त-सर्वे आफ इंडियाज सोशल लाइफ एंड एकोनामिक कंडीशन इन द ऐट्टीन्थ सेंचुरी पृ0 48 ।

6- चारवा, सोमनाथ ग्रं0 ध्रुवविनोद पृ0110 छं0 70; वही, गोपीनाथ शर्मा राजस्थान का इतिहास, पृ0 483

7- तारीखे मुबारकशाही, ई0 डेनिसन रॉस द्वारा संपादित 1927 पृ0 483

8- वही

उपभोग करते थे ।[1] किन्तु, धीरे-धीरे अट्ठारवी शताब्दी के पूर्वार्द्ध से ही परम्परागत शाही वैभव एवं प्रतिष्ठा में विघटन प्रारम्भ हो गया था जिससे मुगल साम्राज्य जर्जरित होता गया।[2] मुस्लिम सम्राट के पश्चात् दो स्थूल सामाजिक विभाजन थे " अहल-ए-सैफ " (तलवारधारी) जिसमें उमरा खान[3] आदि की गणना की जाती थी तथा "अहल-ए-कुलम" (लेखनीधारी) जिसमें वजीर[4] आदि आते थे । अवलोकित काल में उमरा याखान तथा वजीर उमरा का उल्लेख मिलता

1- औरंग उठाना साह सूर को है माने आनि,
जब्बर जोराना भयो जालिम जमाना को ।
देवल ढिगाने रावराने मुरझाने अरु,
धरम ढहाना पन मेट्यो है पुराना को ।
-(भूषणः) राजकमल बोरा- पृ0 21
भूषणः भूषण संग्रह पृ0 127 छं0 127 शिवाबावनी पृ0 57 छं0 47

2- इरविन लेटर मुगल्स भाग 1, पृ0 192, विलियम होए मेमोर्स ऑफ डेल्ही पृ0 176-82

3- ए.बी. एम. हबीबुल्लाह; दि फाउन्डेशन आफ मुस्लिम रूल इन इंडिया पृ0 274·

4- वही

5- 'उमरा याखान्' मतिराम : मतिराम -रत्नावली, पृ0 23 छं0 22; पृ027 छं0 30,' भूषण ग्रंथावली; छत्रसालदशक पृ0 178, छं0 5;' पृ0 179 छं0 8,' शिवराजभूषण, पृ0 37, छं0 224; पृ0 42, छं0 254;' पृ0 45 छं0 277,' छं0 266, पृ0 50 छं0 314 ', भूषण संग्रह, पृ0 120 छं0 121, पृ0 107 छं0 110;'खान' भूषण ग्रंथावली; छत्रसाल दशक, पृ0 178 छं05 , मनूची स्टोरिया द मोगोर, भाग2, पृ0 350 "वजीर" भूषण संग्रह पृ0 33 छं043 , शिवराजभूषण पृ0 44 छं0 265; पृ0 39 छं0 238; शिवाबावनी पृ0 37छं0 40; खाफी खाँ; मुन्तखब-उल-लुबाब[इलियट एण्ड डाउसन] भाग 7, पृ0 264-265; मनूची; स्टोरिया द मुगोर भाग 2, पृ0 330 तथा 393 भाग 3 पृ0 469 मुहम्मद यासीन; एसोशल हिस्ट्री ऑफ इस्लामिक इंडिया, पृ0 43

कुलीन वर्ग में विलासिता से पूर्ण जीवन बिताने वाले सामंतो[1] का उल्लेख मिलता है ।

सामंतो के अलावा मुस्लिम समाज में प्रशासनिक अधिकारियों का अपना विशिष्ट महत्व होता था इन प्रशासनिक अधिकारियों में मंसबदार[2] बख्शी[3] तथा सूबेदार[4] आदि का उल्लेख मिलता है । मुस्लिम समाज में

1- सोमनाथ ग्रंथावली: सुजानविलास, पृ0 626 छं0 30, भूषण ग्रंथावली पृ0 102 छं0 361, डॉ0 भगीरथ मिश्र, पृ0 16

2- "मंसबदार" मतिराम ललितलाम, पृ0 320 छं0 122, शिवराजभूषण: पृ0 51 छं0 322, भूषण संग्रह : पृ0 35 छं0 45 , मनूची स्टोरिया द मोगोर, भाग 2, पृ0 352, 397-398

3- "बख्शी" या सिंहासन थित्त हो सो विक्रम अविकार।
मंजो बकसी आदि सब ठाढ़े हैं सिरदार ।
सोमनाथ ग्रंथावली: सुजानविलास, पृ0 677 छं0 3, यहा बख्शी को कवि ने बकसी कहाहै, खाफी खा मुन्तखब उल-लुबाब (इलियटऐंड डाउसन) भाग 7, पृ0 314 -315; मुहम्मद यासनी ए सोशल हिस्ट्री ऑफ इस्लामिक इंडिया, पृ0 31,151 मनूची: स्टोरिया द मोगोर भाग2 पृ0 353 तथा 394

4- "सूबेदार" जोई सूबेदार जात सिवाजी सो हारि-हारि -
- शिवराजभूषण ,पृ0 51 छं0 321
पृ0 54, छं0 332 ;पृ0 48, छं0 298; पृ0 50 छं0 316; भूषण संग्रह : पृ0 70 छं0 79 ,पृ0 89 छं0 95 शिवाबावनी: पृ0 34 छं0 27 (प्रस्तुत छंदो में कही कही सूबेदार को सूबन, सूबा आदिभी कहा गया है।) । खाफी खाँ: मुन्तखब उल-लुबाब(इलियट ऐंड डाउसन) भाग 7, पृ0 265 मुहम्मदयासीन: ए सोशल हिस्ट्री ऑफ इस्लामिक इंडिया पृ047

विभिन्न जाति के लोग अफगानी[1] पठान[2] तुर्क[3] तथा मुगल[4] तथा सैयद[5] आदि होते थे, जिन्होंने समय क्रम के अनुसार अपने को भारतीय वातावरण के अनुकूल बना लिया।

1- "अफगान" भूषण ग्रंथावली : छत्रसालदशक, प0 178छं 7; भूषण ग्रंथावली, पृ0 79 छं0 56, मुहम्मद यासीन ए सोशल हिस्ट्री ऑफ इस्लामिक इंडिया, पृ0 11, 13 मनूची स्टोरिया द मोगोर, भाग 2, पृ0 453-454: युसुफ हुसैन: ग्लिम्प्सेस ऑफ मेडीइवल इण्डियन कल्चर, पृ0 129

2- "पठान" भूषण संग्रह : पृ0 32 छं0 43, पृ0 57, छं0 66, शिवराजभूषण: पृ0 34 छं0 204: पृ0 45 छं0 277, पृ0 48, छं0 292, पृ0 316, 24, मनूची वही, पृ0 453 मुहम्मदयासीन, वही पृ0 4, 12

3- "तुर्क" तिमिर तुलित तुरकान प्रबल दिसि विदिसि प्रगट्ट
मतिराम: मतिराम-रत्नावली पृ0 21 छं0 19; भूषणग्रंथावली; छत्रसालदशक, पृ0 10 छं0 9; पृ0 178छं07; शिवराजभूषण पृ0 52 छं0 11; पृ0 330, 536, सोमनाथ ग्रंथावली: रसपीयूषनिधि, पृ0 460, 14, दीर्घनगर वर्णन, पृ0 825 छं0 12, पृ0 825 छं0 13, मुहम्मद यासीन, वही पृ0 1, 20

4- "मुगल" भूषण ग्रंथावली: शिवाबावनी, पृ0 31 छं0 24, शिवराजभूषण पृ0 34छं0 204, मुहम्मद यासीन, वही पृ0 10, 12, युसुफ हुसैन: ग्लिम्प्सेस ऑफ मेडाइवल इण्डियन कल्चर पृ0 129।

5- "सैयद": सोमनाथ ग्रंथावली: ब्रजेंद्रविनोद, पृ0 471 छं0 103 भूषणग्रंथावली शिवराजभूषण: पृ0 45 छं0 277 शिवाबावनी पृ031 छं0 24 छत्रसाल दशक, पृ0 178 छं0 7, खाफी खाँ: मुन्तखबउल-लुबाब [इलियट ऐंड डाउसन] भाग7, पृ0 514, सरकार: हिस्ट्री ऑफ औरंगजेब भाग 5, पृ0 266, मुहम्मदयासीन; वही, पृ0 16-17

समाज में एक वर्ग दास व दासियों का भी मिलता है। [1]

" हिन्दू वर्ण-व्यवस्था हिन्दुत्व पर बाहर से पड़ने वाले प्रभावों और तज्जन्य समस्याओं का समाधान सिद्ध हुयी जिसके द्वारा हिन्दुत्व ने विभिन्न जनजातियों को अपने भीतर लेकर उन्हें सभ्य और सामाजिक बनाया [2] जिसमें हर वर्ण का अपना सामाजिक प्रयोजन है उसकी अपनी आचरणसंहिता और परम्परायें है....। हर समूह अबंधित रूप से अपनी लक्ष्य की प्राप्ति के लिए प्रयत्नशील होने की स्वतंत्रता रखता है। विभिन्न वर्णों के कार्य समग्र समाज केलिए समान महत्व के समझे गये हैं। सभी सामाजिक समृद्धि में समान रूप से योग देते हैं प्रत्येक की अपनी पूर्णता है :

विप्रनि को व्रत नेम तपो मख, राजनि रक्षनि दान दिवाए।
वैसनि बानिजु बानिज्यादो, मधु सूदनि सेवन सद सिखाए ।। [3]

किन्तु आलोच्य काल तक आते-आते वर्ण में जन्म के स्थान पर कर्म को महत्ता दी और कर्म के अनुसार जाति जानी जाने लगी [4]। फलतः जाति-

---

1- बोधाः विरह वारीश, पृ0 37 छं0 8, सोमनाथ ग्रंथावली; ब्रजेंदविनोद, पृ0 775 छं0 56, 649 छं0 20; माधवविनोद;, पृ0 347 छं0110; पृ0 351 छं0 1; पृ0 351 छं0 2; पृ0 351 छं08; भूषण ग्रंथावली; शिवराजभूषण पृ0 41 छं0 247; डुबाएस हिन्दू मैनर्स, कस्टम्स एंड सेरेमनीज, पृ0 56, मनूची; स्टोरिया द मोगोर, भाग 3, पृ0 197

2- राधाकृष्णनन् द हिन्दू व्यू ऑफ लाइफ, पृ0 75

3- देवग्रंथावली: देवचरित्र, पृ0 11 छं0 44, वही, 76-77

4- राधाकृष्णन् द हिन्दू व्यू ऑफ लाइफ पृ0 76-77

पाँति में जन्म के आधार पर अपनी श्रेष्ठता सिद्ध करने वालों का विरोध होना स्वभाविक था । यद्यपि जाति-पाँति का खंडन आलोच्यकाल से पूर्व सूरदास तथा कबीरदास जैसे मानवतावादी समय-समय पर करते रहे । फलत: इस काल में समाज की जर्जर मान्यताओं थोथे विश्वासों और अंधाश्रित पाखण्डो के साथ ही वर्ण-व्यवस्था पर निर्मम और कठोर आघात हुआ,

" सभी की उत्पत्ति रज-वीर्य्य से हुयी है, सभी कुम्हार के एक आँवा के बर्तनों जैसे हैं उस पर यह ऊँच-नीच का विचार करना और निराधार विवाद को बढ़ाना व्यर्थ है । वेद छोड़ देने के बाद ब्राह्मण और शूद्र एक ही जाते है, एक की पावनता और दूसरे की अपावनता का प्रश्न ही नहीं रह जाता अतः वेदों कोबंद करो जिन्होंने ये द्वंद मचाया है कि वेद जानने के कारण ब्राह्मण पवित्र और शूद्र अपवित्र है :

है उपजे रजबीजहिं ते बिनसैं हू सबै छिति धाई के छांडे ।
एक से देखु कहूँ न बिसेखु ज्यो एकै उन्हार कुम्हार के भाडे ।
तापर ऊँच और नीच बिचार वृथा बकवाद बढ़ावत चाँडे ।
वेदनि मूंद, कियो इन दुंद कि सुद अपावन पावन पांडे ।[1]

1-देव ग्रंथावली। देवसुधा, पृ0 4 छं0 9

तृतीय अध्याय

नारी की स्थिति

नारी की स्थिति

आरम्भ से ही भारतीय चिंतन में नारी के प्रति दो परस्पर नितान्त विरोधी और दूरवर्ती विचार धारायें देखने को मिलती रही हैं। एक ओर यदि यह समझा गया है कि जहाँ नारी की पूजा होती है वहाँ देवता वास करते हैं[1] या यह समझा गया कि नारी अपने विविध रूपों के द्वारा लोक समाज एवं राष्ट्र को जीवन देती है, विकास के पथ पर निरन्तर अग्रसर रखती है और मानव जीवन को पूर्णता के साध्य शिखर तक पहुँचाने की परिस्थितियों का सृजन करती है जीवन का सारा रूखापन और संघर्ष उसकी छाया में पड़ते ही सरस और सह्य हो जाता है, तो दूसरी ओर उतने ही विश्वास और दृढ़ता के साथ नारी को नरक का द्वार बताया गया है।[2]

<u>आदर्श नारी की धारणा</u> – भारतीय चिंतन धारा में स्त्री के लिए लज्जा और मर्यादा आदि गुण अत्यन्त महत्वपूर्ण हैं। घर की शोभा कन्या से होती है, संपत्ति की शोभा पंडितों से होती है, पुरुष का भूषण सत्बुद्धि है और स्त्री का भूषण लज्जा।[3]

1– नारी के बिन घर ऐसा होता है जैसे प्राण के बिना शरीर
नारी बिन गेह, जैसे प्राण बिन देह।
– देव, ग्रंथावली वैराग्यशतक पृ0 36 छं0 19

2– योगशास्त्र, 2–87

3– ब्रह्मपुराण
[अखिल भारतीय पुस्तकालय सेवा [illegible]]

"पर्दा"- समाज में विशेषकर उच्चवर्गीय लोगों में पर्दा बड़ी कठोरता से लागू था।[1]

समाज का हिन्दू वर्ग ने भी पर्दा प्रथा का पालन सामाजिक मर्यादा और सम्मान के रूप में बनाए रखा।[2] मर्यादा को इस हद तक बांध दिया कि देहरी के बाहर भी नायिका नहीं जा सकती, ऐसा करने से उसके कुल की लाज चली जायेगी फलतः नायिका भीतर ही खड़ी है :

> भीतर भौन के द्वारा खरा सुकुमारि तिया तन कंप बिसेषै।
> घूँघट को पट ओट दिये पट ओट किये पिय को मुख देखै।[3]

1- मैन्डल्सो, पृ० 51, डेला वेलो: पृ० 461, बर्नियर पृ० 413

2- कापर, एलिज़ाबेथ, हरम एण्ड द पर्दा, पृ० 65: द स्प्रिट ऑफ इंडियन सिविलाइजेशन, पृ० 163-164

3- मतिराम: रसराज, पृ० 251 छं० 217; पृ० 242 छं० 181 ; पृ 213 छं० 61; मतिराम रत्नावली; पृ० 74 छं० 134; मतिराम सतसई: पृ० 269 · छं० 8; ललितललाम; पृ० 323 छं० 141; मतिराम ग्रंथावली; पृ० 318 पृ० 342, सोमनाथ ग्रंथावली; रसपीयूषनिधि, पृ० 218 पृ० 294; पृ० 210 छं० 226, पृ० 183 छं० 12, सुजानविलास: पृ० 643 छं० 110, देवरसविलास[अष्टम् विलास] पृ० 233 छं० 6, पृ० 234 छं० 10, पृ० 238 छं० 34, पृ० 234 छं० 7, पृ0236 छं० 21; देव ग्रंथावली: पृ० 398 ; 142 तोष-सुधानिधि पृ० 105; मनूची: स्टोरिया द मोगोर, पृ० भाग 2 पृ० 175, डी लेट, द इम्पायर ऑफ द ग्रेट मुगल, हौलैण्ड एण्ड बनर्जी, पृ० 80[पी० एन० ओझा से उद्धृत]

तत्कालीन समय में पर्दा-प्रथा इतनी कठोरता से लागू थी कि स्त्रियाँ अपने रिश्तेदारों के यहाँ भी जल्दी नहीं जाती थीं [1] और यदि उन्हें अनुमति भी दी जाती थी जाने को तो वह पालकी में बैठकर (जो चारों ओर से ढकी रहती थी) तब जाती थीं । [2] मुस्लिम स्त्रियाँ बुर्का पहनती थीं कवि ने इसका उल्लेख अप्रत्यक्ष रूप से किया है ।[3]

तत्कालीन समाज में पर्दा की कठोरता का संकेत इस संदर्भ से भी मिलता है कि जब ये उच्चवर्गीय स्त्रियाँ बीमार पड़ती थीं तो कोई पुरुष डाक्टर उन्हें देख नही सकता था उपचार के लिए एक रूमाल को भिगोकर उसे पानी में डाल

1- मनूची; स्टोरिया द मोगोर पृ० 352; बर्नियर पृ० 89; बिना किसी आदमी (पुरुष) की उपस्थिति में स्त्रियाँ अपने रिश्तेदारों से बात नहीं कर सकती थीं डोला वैली, पृ० 430

2- सोमनाथ ग्रंथावली; रसपीयूषनिधि, पृ० 146 छं० 9; मैन्डल्सो ,पृ० 51; बर्नियर, पृ० 413

3- अंदर ते निकसी न मंदर को देख्यो द्वार
बिन रथ पथ ते उघारे पाँव जाती हैं ।
" भूषन" भनत सिवराज तेरी धाक सुनि
हयादारी चीर फारि मन झुंझलाती हैं ।

\- भूषन ग्रंथावली, शिवाबावनी, पृ० 13-14 छं० 9, आईन-ए-अकबरी अनुवादक ब्लाकमन, पृ० 96, अबुल फजल ने बुरके को अकबर द्वारा चित्रगोपिता नाम दिये जाने का उल्लेख किया है इसी पृष्ठ में (हेमिल्टन ; 1, पृ० 164; डी लेट; पृ० 80-81; मैन्डल्सो, पृ० 50,

दिया जाता था और उसमें से आने वाली गंध के अनुरूप डॉ0 इलाज करता था ।[1]

सम्पन्न श्रेणी की स्त्रियों में एक साधारण और संयतमार्गी परदे का चलन था जिसे "घूँघट"[2] कहा जाता था । घूँघट दुपट्टा या साड़ी माध्यम से निकालते थे ।

घूँघट निकालने की प्रथा हिन्दू समाज में कब से हुआ और किन परिस्थितियों के कारण हुआ यह तो अनुसंधेय है, परन्तु इतना निश्चित है कि

1- ए.के.जफ़ार जॉन मार्शल इनइंडिया, पृ0 338, लंदन, 1927

2- रँग लाल धरी पर घूँघट ओर लसै मुक्तालर को लरकयो।
प्रभात प्रभाकर मंडल मैं विधु मंडल बिंब सुधाधर को ।
— देव ग्रंथावली, रसविलास, (अष्टम भाग)

पृ0 234 छं0 10, (पट का तात्पर्य पटुका व चादर या दुपट्टा वस्त्र से है) पृ0 233 छं0 6, पृ0238, छं0 34, पृ0 234 छं07, पृ0 236, छं0 21, मतिराम; रसराज; पृ0 251 छं0 217; पृ0 242 छं0 181; पृ0 213 छं0 61; मतिराम रत्नावली, पृ0 79 छं0 134; मतिराम सतसई, पृ0 369 छं0 8; ललितललाम; पृ0 323 छं0 141, सोमनाथ ग्रंथावली; रसपीयूषनिधि, पृ0 41, छं0 8; पृ0 50 छं0 53; पृ0 210 छं0 227; पृ0 218 छं0294; पृ0 ~~210 छं0 227~~; पृ0 183 छं0 12(शेष) डॉ0 मोहन अवस्थी, हिन्दी रीति कविता और समकालीन उर्दू - काव्य, पृ0 106

भारत में पर्दे का प्रचलन ईसा से काफी पूर्व भी था ।[1]

निम्नवर्गीय स्त्रियों में चूँकि अपने घरवालों के साथ बाहर काम पर जाती थीं इसलिए निम्नवर्ग में पर्दा प्रथा की कठोरता लागू नहीं थी । ये स्त्रियाँ घूँघट हटाकर स्वतंत्र रूप से बाहर आ जा सकती थीं:

तन मन ओट पर घूँघट कपट खोलि ....।[2]

सामान्य रूप में रानी को सभा में लेकर बैठना उचित नहीं समझा जाता था :

रानी को लै बैठिबो उचित न सभा मझार ।[3]

किन्तु उत्सव आदि के अवसर पर स्त्रियाँ सम्पूर्ण अलंकरण के साथ-साथ उपस्थित होती थी तथा जब वे राजा के साथ बाहर जाती थी तो घूँघट के बिना भी जा

1- रामायण में रावण की मृत्यु पर मंदोदरी घूँघटरहित ही विलाप करती आती है, भास चारुदत्तम् वसंत सेना किया जब अपने प्रेमी को पति रूप में स्वीकार करती है तब उसकी अवस्था बदल जाती है उसकी माँ कहती है कि वह घूँघट निकालकर आये और गाड़ी में बैठ जाये डा० अवस्थी पृ० 104- 105, कालिदास- अभिज्ञान शाकुन्तलम् में शकुंतला को अव चित्रित किया ।

2- देव ग्रंथावली; रसविलास, पृ० 238 छं० 34; सोमनाथ ग्रंथावली: रसपीयूषनिधि, पृ० 41 छं० 8, पृ० 50 छं० 53; पृ० 210 छं० 227; पृ० 183 छं० 12; ललितललाम, पृ० 323 छं० 141; कुमुदनी: स्टडीज इन मुगल पेन्टिंग शोध प्रबन्ध, [अंसारी पृ० 81]

3- सोमनाथ ग्रंथावली: सुजानविलास पृ० 643 छं० 110

सकती थीं ।[1]

<u>पारिवारिक परिवेश में स्त्री-</u> 'माता' प्राचीन काल से ही परिवारिक परिवेश मे माता[2] का विशेष स्थान है । दुराचारी पिता के त्याग देने की अनुमति दी गयी है किन्तु माता दुराचारिणी हो तो भी परित्याग नहीं ।[3]

<u>कन्या :</u> प्राचीन नारी हमारे समक्ष प्रधानता पारिवारिक सीमाओं मे प्रस्तुत होती है। भारतीय समाज की रचना कुछ ऐसी है कि पुरुष का भी अधिकांश जीवन पारिवारिक परिवेश में बीतता है किन्तु स्त्रियों का सम्पूर्ण जीवन घर की चाहरदीवारी में सिमटा हुआ है। कन्या परिवार में रहकर घर के कार्यों में हाथ बँटाती है तथा ससुराल जाकर भी वह अपने मायके को नहीं भूलपाती घर के कार्यों को सूर्यास्त होने से पहले समाप्त कर लेने की अनुमति कन्या माँ सेमाँगती है ,

अबे फिर मोहि कहाहिगो, कियो न तूं गृह-काज ।
कहे तु करि आऊँ अबै, मुंदयो जात दिनराज ।[4]

1- राधाकृष्णन्- रिलीजन एण्ड सोसाइटी, पृ0 143, मैन्डल्सी पृ051

2- द स्प्रिट ऑफ इंडियन सिविलाइजेशन, पृ0 158, आपस्तम्ब, 2, 5 - 11 - 7

3- बौधायन धर्मसूत्र 13-47, रामचरित मानस, राम की माँ कौशिल्या ने विमाता को भी विशेष स्थान दिया (गुटका) पृ0 233

4- भिखारीदास ग्रंथावली, पृ02 807, मतिराम ग्रंथावली, पृ0 316

अवलोकित काल में कन्या के जन्म पर ख़ुशी नहीं मानते थे राजपूतों में विशेषरूप से कन्या जन्म को अच्छा नहीं मानते थे,[1] किन्तु कुछ परिस्थितियों में कन्या के जन्म पर उत्सव आदि करके ख़ुशी मनाते थे।[2]

<u>पत्नी के रूप में</u> - भारत जैसे धर्मप्राण देश में विवाह एक अविच्छेद्य संबंध , जो जीवन में नहीं, मृत्यु के उपरान्त भी नहीं टूटता है। जिस स्त्री का विवाह जिस पुरुष से हो जाता है उसे जीवन भर उसका निर्वाह करना चाहिए।[3]

पत्नी के रूप में स्त्री के सारे सपने इस बात को साबित करने के लिए है कि वह पति के लिए पूर्णरूप से समर्पित है।[4] अनुराग और समर्पण की भावना इस हद तक होती है कि पत्नी अपने पति के सारे दोषों को छिपा जातीहै और उसे कलंकित होने से बचा लेती है;

1- टाड राजस्थान का इतिहास, पृ० 739-40 अथर्ववेद भाग 6, 2-3

2- मनूची, स्टोरिया द मोगोर, भाग 2 पृ० 343 , पी० एम० ओझा गिलम्प्सेज ऑफ सोशल लाइफ इन मुगल इंडिया, पृ०62

3- - याज्ञवल्क्यस्मृतिः व्याख्याकार डा० उमेश चन्द्र पाण्डेय, 180/ 75 डा० शकुन्तला अरोरा, रीतिकालीन श्रृंगार कवियों की नैतिक दृष्टि पृ० 100

4- के० एम० आरफ; लाइफ एंड कंडीशन आफ पीपुल आफ हिन्दुस्तान, पृ० 135

गुरुजन दूजे ब्याह को, प्रति दिन कहत रिसाइ।
पति को पत राखै बहू, आपुन बाँझ कहाइ।[1]

इस संदर्भ में नारी के पास किसी अधिकार का अभाव नहीं है किन्तु उसके नैतिक संस्कारों की मर्यादा यह है कि वह एक बार वरण किये गये पति को किसी भी स्थिति में त्याग नहीं सकती चाहे वह पुरुषत्व हीन ही क्यों न हो अथवा क्रूर, कलंकी, या कोढ़ी ही क्यों न हो।[2] ऐसी स्थिति में अपने संस्कारों के अनुसार वह इस स्थिति को दैवी घटना मानकर पति को निर्दोष समझती है तथा प्रत्येक स्थिति में उसका निर्वाह करना अपना नैतिक कर्तव्य समझती है। वस्तुतः कवियों की इस प्रकार की दृष्टि का आधार प्राचीन

1- मतिराम रत्नावली, पृ० 108 छं० 5; मतिराम ग्रंथावली [सतसई] सं० कृष्ण बिहारी मिश्र, छं० 9, ~~[शकुन्तला अरोरा] पृ० 101~~ तथा मतिराम सतसई छं० 7; [शकुन्तला अरोरा, पृ० 100] सोमनाथ ग्रंथावली, रसपीयूषनिधि, पृ० 83 छं० 20; पृ० 112 छं० 4; देव: भाव विलास, पृ० 103, वही।

2- देव पतिव्रत पौरिया है उर,
कीरति को सिर चादरि ओढ़ी।
अन्तर अन्त रमै भरमै नहिं,
कायर क्रूर कलंकी कि कोढ़ी।
या बिन ढौरनि तकै कुल लाज तैं
आँखिन में सिखु लाज की ड्योढ़ी।
—देव: रीति, शृंगार, कवि मोहन, पृ० 106।

सोमनाथ ग्रंथावली, रसपीयूषनिधि, पृ० 112 छं० 4; मतिराम, ग्रंथावली: [सतसई] सं० कृष्ण बिहारी मिश्र, छं० 7; शकुन्तला अरोरा पृ० 100] आईने अकबरी, मूल अनुवादक सरयूप्रसाद सरकार, पृ० 336; कर्नल जेम्स टाड

मानदण्ड है जिनके अनुसार यह कहा जाताहै कि सदाचार से हीन, परस्त्री में अनुरक्त, विद्या आदि गुणो से हीन भी पति पतिव्रता के लिए देवता के समान पूज्य होता है ।[1]

तत्कालीन समाज में पत्नी के रूप में नारी का एक और आदर्श यह भी मिलता है कि वह केवल पति के दोषों को छिपाये ही नहीं बल्कि पति के गुणों का ही वर्णन करे उसे सब प्रकार से प्रसन्न रखे तथापति के भोजन करने के उपरान्त ही भोजन करे :

पान औ खान में पो सुखी लखे आपु लखे कछु पीवति खाति है ।[2]

इसकी पत्नी के रूप में नारी को परिवार के प्रति नैतिक कर्तव्यों का पालन [3]भी

1- - मनुस्मृति, गोपाल शास्त्री 5 छं0 154 पृ0 1, 104 श्रृंगार निर्णय पृ0 64

2- भिखारीदास ग्रंथावली, पृ0 छं. 104 शकुन्तला अरोरा पृ0 108 देव- देवसुधा मिश्रबंधु छं0 35, देव-भवानी विलास, पृ0 14छं02 ; भिखारीदास ग्रंथावली श्रृंगारनिर्णय पृ0 छं0 छं 160;देवशब्दरसायन पृ0 63 पृ0 126 मनूची:, स्टोरिया द मोगोर भाग3, पृ0 155, प्राचीन काल से पति को प्रसन्न रखने का उपदेश दिया जाता है अथर्ववेद, प्रथम खण्ड, संपादक, श्रीराम शर्मा 3 छं0 30, 12

3- गार्हस्थिक कर्त्तव्यों में संतान सेवा, घर के सम्पूर्ण कामकाज घर को तथा परिवा वालो की देखभाल करना आदि आताहै।

ब्याही कुल आचार सों। सुद्ध सुकीया बाम।
सुख सेवा संतानहित बल रस निर्मल नाम ।।

-देव ग्रंथावली सुमिलविनोद सं0 लक्ष्मीधर मालवीय, पृ0 2 छं0 12, देवभावविलास, पृ0 8; देवऔर उनकी कविता, डॉ0 नगेन्द्र पृ0 51; बोधा:विरह वारीश, पृ0 35; भिखारीदास ग्रंथावली काव्यनिर्णय द्वितीय खंड पृ0 62 छं0 5; ए0 एस0 अल्तेकर, द पोजीशन ऑफ वोमेन इन हिन्दू सिविलाइजेशन पृ0 396

करना पड़ता था । साथ ही पारिवारिक सदस्यों के प्रति नारी का व्यवहार मधुर तथा मर्यादापूर्ण होना चाहिए इसका उल्लेख भी कवियों ने किया है ।[1]

<u>भाभी के रूप में</u> - पारिवारिक परिवेश में नारी का एक रूप भाभी के रूप में है । जिसमें पति के भाई को देवर और बहन को नन्द कहा गया । परिवार में नन्द और भाभी के कथन का महत्वपूर्ण स्थान है । ननद और भाभी का संबंध हमें दो रूपों में मिलता है : 1-ईर्ष्यामूलक 2-प्रेममूलक

1- नित सासु को सासन मानि हिए हित सौं अति सीलता को लहिये।

× × ×

ससिनाथ सुजान पे जानति मैं उन सो न रूखाई रती चहिये ।
जिय भावती बात सदाँ कहिये पन सौं मन हाथ लिये रहिये ।

- सोमनाथ ग्रंथावली रसपीयूषनिधि पृ0 106 छं0 12; रसपीयूषनिधि पृ0 110 छं0 22; शृंगार विलास पृ0 287छं09; सोमनाथ रसपीयूषनिधि, पृ0 75 छं0 10; पृ0 95 छं0 42; पृ0 96 छं0 45; पृ0 12 छं0 12; पृ0 133 छं0 12; देव ग्रंथावली; देवमायाप्रपंच, पृ0 219, छं0 5; देव; सुखसागर. तरंग: प0 179 छं0 784 ; भिखारीदास ग्रंथावली; शृंगारनिर्णय, छं0 260 मतिराम ग्रंथावली, [सतसई] छं0 156, कवि तोष और उनका सुधानिधि, सं0 सुरेन्द्रमाथुर छं0 19; प्राचीन भारतीय परम्पराओं में पत्नी को परिवार के सदस्यों के प्रति यथाशक्ति अच्छा व्यवहार करना चाहिए तथा मधुर भाषी होना चाहिए कामसूत्र, द्वितीय भाग, टीकाकार, गंगा विष्णु, श्रीकृष्ण, पृ0 696; मनूची, स्टोरिया द मोगोर भाग1, पृ0 62

कभी-कभी तो हम उम्र की ननँद होने से भाभी को प्यार मिल जाताहै किन्तु स्नेह के साथ-साथ ही नायिका को कभी-कभी अपनी नँनद की फटकार भी सुननी पड़ती है। ऐसी नँनदे जो उम्र में नायिका से बड़ी होती हैं, वे अपनी छोटी भाभी को नाना प्रकार की ताड़ना देने के साथ ही उसे पारिवारिक जीवन से सम्बद्ध अच्छी बातों की शिक्षा भी दिया करती हैं। कवि ने एक छन्द में नववधू के प्रथम पुत्र के होने पर नँनद उसकी रात दिन निन्दा करती है और सास क्षण-क्षण अपना रोष प्रकट करती है, किन्तु नायिका प्रथम पुत्र को गोद में लेकर खिलाने में लज्जा का अनुभव करती है। प्रसंग की दृष्टि से ऐसे छन्द पूर्ववर्ती श्रृंगार साहित्य में मिलना मुश्किल है। यह कवि की मौलिक भावना कही जा सकती है :

> निस दिन निंदति नंद है, छिन-छिन सासुरिसाति
> प्रथम भयेसुत को बहू अंकहि लेति लजाति ।।[1]

तात्पर्य यह हैकि पुत्र होने पर बहू घर का काम काज नहीं कर पाती और इसीलिए उसे ताने सुनने को मिलते है परन्तु आदर्श और लज्जाशील नारी के गुण होने के कारण वह न तो किसी बात का जबाब देती है और पुत्र कोगोद में लेने से भी हिचकिचाती है कि कहीं कोई ये न कह दे कि क्या सिर्फ तुम्हारा ही पुत्र है। कुल की मर्यादा रखने वाली ऐसी ही नारी का चित्र एक अन्य कवि ने प्रस्तुत कियाहै जिसमें देवर भाभीके साथ धृष्टता करता है वह भाभी के इतने पीछे पड़ गया कि दरबान की भाँति दरवाजे पर बैठा रहता है और

1- मतिराम: मतिराम सतसई, छं0।56

भाभी की समस्त गतिविधियों की जाँच करता है ।[1] किन्तु भाभी इस डर से कुछ नहीं कहती कि कहीं इन बातों से परिवार में कलह न हो जाये, अथवा परिवार की लाज न चली जाय निस्सन्देह पारिवारिक परिवेश में इस रूप में स्त्री का आदर्श रूप था । इन सब कर्त्तव्यों के अलावा नारी का एक महत्वपूर्ण आचरण यह स्वीकार किया गया कि वह गृह की श्रृंगार बनी रहे । कृपण जैसे धन को बाहर की हवा नहीं लगने देता, स्त्री का आचरण भी ऐसा ही होना चाहिए । यहाँ तक कि उसे देहरी लाँघने की चेष्टा भी नहीं करनी चाहिए :

पति से न करै तन बाहर औ जिमि जाहिर सूम करै न धनै ।

× × ×

कवि तोष काऊ न कबौ धरते मुनि द्वार की देहरी ना गमनै,

इस प्रकार तत्कालीन समाज में पर्दा भी नारी का एक आदर्श[2] बन चुका था । अट्ठारहवीं शताब्दी का सामाजिक परिवेश ही ऐसा था कि पर्दे की आवश्यकता अनुभव की जाने लगी थी । शासकों तथा सामंतों का कामिनी-रूप की ओर

1- देवर गाढ़ो गह्यो रहै द्वारहि जेठो बरी बिरको मैं अरो है ।

— तोष सुधानिधि, पृ0 57 छं0 83

2- कवि तोष और उनका सुधानिधि, डॉ0 सुरेन्द्र माथुर पृ0 7 छं0 19; मतिराम; रसराज, पृ0 251 छं0 217; देव ग्रंथावली; सुमिलविनोद, पृ0 2 छं0 16; मनूची; स्टोरिया द मोगोर, भाग 2, पृ0 352 बर्नियर, 89

आकर्षित होना और स्त्री-संग्रह की मनोवृत्ति[1] है जिसके लिए इन्होंने एक अलग स्थान बना रखा था, जिसे हरम कहा गया है जैसे दूषित सामाजिक वातावरण में स्त्री सुरक्षा के अभाव के कारण ही यह आवश्यक हो गया कि नारी घर में रहकर ही काम करे ।

संभव है कि राजनैतिक और सामाजिक अव्यवस्था वाले इस काल में पुरुष ने ही स्त्री-विषयक धारणाओं में परिवर्तन नहीं किया अपितु स्वतः स्त्री ने ही सुरक्षा के अभाव में बाह्य-समाज के समस्त कार्यों को त्यागकर घर के सीमित अधिकारों को अपना लिया है । इसके अतिरिक्त हमारे समाज में प्रचलित स्वातंत्र्य की विरोधी विचारधाराओं ने भी निश्चित रूप से इन कवियों की नैतिक दृष्टि को प्रभावित किया होगा । कवियों का विचार है कि स्त्री-स्वातं

2- स्त्री संग्रह की संख्या सहस्त्रों तक पहुँच जाती थी

सोरह सहस्र पटरानी • बोली ।

– सोमनाथ ग्रंथावली, ब्रजेंदविनोद, पृ0 775 छं0 56, रसपीयूषनिधिः पृ0 204, छं0 165, मतिराम ग्रंथावली पृ0 403 – 404 । पृ0 326 छं0 210, घनानंद पृ0 585 छं0 450 बोधाः वि. वा. पृ0 177/78 स्त्री संग्रह का इतना शौक था कि हर प्रकार से नारी को वश में किया जाता था :

राखी कैद नारीन की भय दिखाय समुझाय

– बोधा विरह वारीश,पृ0 39;

मीर हसन अली: ऑब्जरवेशन्स आन द मुसलमान्स, पृ0 215;
मुहम्मदयासीनः ए सोशल हिस्ट्री आफ इस्लामिक,इंडिया, पृ0 127,
मनूची: स्टोरिया द मोगोर, भाग 2, पृ0 352

उसके पातिव्रत की रक्षा नहीं कर सकता :

बाल-रूप जोबँनवती, मध्य-तरुन को संग ।
दोनों दई सुतंत्रता, सती होई किहि ढंग ।।[1]

परिणामतः स्त्री की रक्षा कौमार्य में पिता, यौवन में पति एवं वृद्धावस्था में पुत्र करता है ।[2]

नारी के इस प्रकार असुरक्षित होने के कारण बाल-विवाह जैसे कुप्रथा ने जन्म लिया । बाल-विवाह किस आयु में होता था इस संदर्भ में मतभेद है। कोई बाल-विवाह के लिए चार पाँच वर्ष की आयु निर्धारित करता है, कोई सात-आठ तथा दस वर्ष, तो कोई यह विवरण देता है कि हिन्दुओं में बालक के बोलने से पूर्व ही विवाह कर दिया जाता था ।[3]

चूँकि अट्ठारहवीं शताब्दी का समाज काम प्रधान था और काम की प्रधानता केवल उच्च वर्गों तक सीमित नहीं थी, निम्न वर्गों के जीवन

1- भिखारीदास ग्रंथावली, काव्यनिर्णय, सं0 जवाहर लाल चतुर्वेदी, पृ0 469 छं0 322, देव ग्रंथावली सुमिल विनोद, पृ0 2 छं0 16 ।

2- - बोधायन धर्म-सूत्र, चिन्न स्वामी शास्त्री, 3 /2/45 - 3/2/46, के0 एम0 अशरफ : द लाइफ एण्ड कंडीशन ऑफ पीपुल ऑफ हिन्दुस्तान पृ0 134 ।

3- पेलसर्ट पृ0 84 , 4-5 वर्ष की आयु, ट्रैवेर्नियर, XXIV, पृ0 181 सात-आठ, पी0 एन0 ओझा, ग्लिम्पसेज आफ सोशल लाइफ इन मुगल इंडिया 10, वर्ष, मनूची , स्टोरिया द मोगोर, भाग 3, पृ0 54

को भी संचालिका शक्ति काम में ही संनिहित थी, फलत: इस युग के सभी लोग नारी के वश में हो जाते हैं ।[1] नारी अभिकामन्धता में पर पुरुष गामी हो जाती है इसका भी उल्लेख मिलता है [2], किन्तु ऐसी स्थिति में भी पातिव्रताओं की संभावना तो मानी जा सकती है परन्तु एक पत्नीव्रत पति इस युग में अप्राप्य हो गये थे :

नारी पतिव्रत है बहुती पतिनि व्रत नायक औ र न कोऊ ।[3]

काम की बुभुक्षा बढ़ने के कारण नारी के कोमल मनोभावों का विचार न करते हुए बहुविवाह का प्रचलन हो गया । तत्कालीन समाज में बहुविवाह तो जैसे आम बात हो गयी थी । पुरुष अपनी पत्नियों को प्रसन्न रखने में चेष्टारत है :

1- वेंकट रमण राव: रीतिकालीन काव्य की सांस्कृतिक पृष्ठभूमि, पृ0 226, पृ0 227

2- कंत चौक सीमंत की, बैठी गाठि जुराइ ।
पेखि परौसो कौं पिया, घूंघट में मुसिक्याइ ।।
मतिराम ग्रंथावली, सतसई, पृ0 285 छं0 8;
मतिराम: रसराज, छं0 60, छं0 129: सोमनाथ ग्रंथावली; रसपीयूषनिधि, पृ0 1 छं0 48; देव- प्रेमतरंग, पृ0 2 छं0 42 ।

4- भिखारीदास ग्रंथावली, पृ0 40 छं0 78, देव- रागरत्नाकर, पृ0 68 छं0 36; पृ0 34 छं0 53

प्रेम जनायो मुरारि चहै बहु नारिनि में लखि प्यारी नवीनी ।

खेल रच्यौ अँखिमूदने को कहि तोष कियो नैंदलाल प्रवीनी ।[1]

बहु विवाह के बाद भी नारी को अपनी काम-तुष्टि का साधन बनाने के लिए अनैतिक- संबंधो को भी बनाया तथा प्रेम का उच्चादर्श समाप्त हो गया और नारी पुरुष के लिए भो क्या को वस्तु, या मनोरंजन का साधन बन गयी ।[2]

अनैतिक संबंधो को बढ़ोत्तरी से गणिका को जन्म दिया । गणिका नारी के उस वर्ग को कहा गया जो धन लेकर किसी के भी साथ अनैतिक संबंध

1- कवितोष और उनका सुधानिधि सं० सुरेन्द्र माथुर छं० 61; वही, छं० 47; मतिराम ग्रंथावली: रत्नावली पृ० 108 छं० 3; तथा सतसई पृ०2छं० 8; मतिराम ग्रंथावली : पृ० 48, पृ० 326; देव-देवसुधा, छं० 209; देव-शब्दरसायन, सं० जानकी सिंह मनोज पृ० 117, भिखारीदास ग्रंथावली: [श्रृंगार निर्णय] प्रथम खण्ड, छं० 63, पृ० 31; हेज: डिक्शनरी ऑफ इस्लाम, पृ० 314; द होली कुरान, अनुवादक मुहम्मद अली, चैप्टर 4, पृ० 199, कालीकिंकर, दत्त; सोशल लाइफ एण्ड एकोनॉमिक कंडीशन, पृ० 60-61-65, दुबाएस, हिन्दू मैनर्स, कस्टम एण्ड सेरेमनीज, पृ० 207-8 ।

2- प्रेम बरषा है, अरषा है, कुछ नेमन रषा है चित और अरषा है चित्तधारी को। छोड़ यो परलोक नरलोक बरलोक कहा हरख न सोख न अलीक नरनारी को

— देव प्रेमतरंग, पृ० 2 छं० 4,

मतिराम ग्रंथावली: रसराज, छं० 60, छं० 129; के० एम० अशरफ, लाइफ एण्ड कंडीशन ऑफ पीपुल ऑफ, हिन्दुस्तान ।

बना लेती है :

गणिका गनै न सत असत चाहै धनी उदार ।[1]

इस प्रकार समाज में स्त्री का (गणिका) यह रूप अत्यधिक प्रबल हो गया था । यद्यपि वेश्यावृत्ति की निंदा की गयी है उसे विश्वास पात्र न बनाने का परामर्श दिया गया है[2] और पुरुष को वश में करके धन हरण करने वाला तथा समाज में सौत के सदृश बताया गया पुरुष की सामाजिक प्रतिष्ठा करने वाला कहा गया इतना सब कुछ होते हुए भी उसके हानि पर ध्यान न देते हुए पुरुष प्राचीन काल से ही गणिका को सर्वसाधारण उपयोग की वस्तु समझता रहा तथा बाजारू वस्तुओं के सदृश उन्हें भी जो चाहे धन दे कर खरीद

1- देव ग्रंथावली: रसविलास, पृ0 2 छं0 2, देव-प्रेमतरंग, पृ0 2 छं0 42,
धन के रूपमें गहने भी लेती थी –गणिका आवति प्रीतमहि मन मन मरित
लेहो कंकन कनक के बस करि भौंह बिलास ।।
छं.297;
– सोमनाथ: सुजिततरंगिनी, रसपीयूषनिधि पृ0 115 छं0
17; छं0 287, तोष, सुधानिधि पृ0 63; मतिराम पृ0 142-143;
(गहने न गढ़ाने पर रूठ जाती है), मतिराम ग्रंथावली पृ0 291;
के0 एम0 अशरफ लाइफ एण्ड कंडीशन ऑफ पीपुल ऑफ हिन्दुस्तान,
पृ0 227

2- बिस्या को प्रीति बलीत को मेवा।
–बोधा (ग्रंथावली) बिरही-सुभान दंपति-विलास)
सं0 विश्वनाथ प्रसाद मिश्र, छं0 94, शकुन्तला अरोरा
(रीतिकालीन ...श्रृंगार .... पृ0 138)

सकता था ।[1]

सामान्यतः गणिका की जो परिभाषा कवियों ने दी है, उसमें धन की इच्छा को ही उसकी मूल प्रेरणा कहा है।[2] उस युग के परिवेश पर दृष्टिपात करते हुए यह कारण स्वतः स्पष्ट है। निस्संदेह, मुगल काल भारतीय इतिहास में वैभव का युग था तथापि आंतरिक रूप से वह पर्याप्त जर्जर हो चुका था। वेश्यावृत्ति का शिकार सामान्य और निम्न वर्ग का स्त्री समाज ही होता था । इस प्रकार धन और संरक्षण का अभाव इस व्यवसाय को अपनाने के लिए विवश करता होगा क्योंकि तत्कालीन समाज-व्यवस्था में समाज का एक बहुत बड़ा वर्ग आर्थिक अभाव से पीड़ित था । जिस आर्थिक विषमता के कारण गणिका जीवन का सूत्रपात होता था, वहीं आर्थिक व्यवस्था की विषमता को इससे बढ़ावा भी मिलता था। इस प्रकार यह कह सकते हैं कि गणिकाएं आर्थिक व्यवस्था का परिणाम थीं और कारण भी ।[3]

1- देव ग्रंथावली; रसविलास, पृ0 2 छं0 19 ; पृ0 4 छं0 17; पृ02 छं0 2, प्रेम-तरंग , पृ0 2 छं0 45; सोमनाथ ग्रंथावली; शृंगारविलास पृ0 6 छं0 8, महाकवि शूद्रक, मृच्छकटिकम् , डा0 रमाशंकर त्रिपाठी, पृ0 5 श्लो0 9, चाणक्य, कौटलीयं अर्थशास्त्रम् ,सं0 रामतेजशास्त्री, 2 पृ026

2- धन दै जाके संग में रमै पुरुष सब कोइ ।
ग्रंथन को मत देखि कै गणिका जानहु सोई ।।
मतिराम-रसराज, पृ0 221 छं0 94; पृ0 291 छं0 94

3- डॉ0 शकुन्तला अरोरा रीति कालीन शृंगार कवियों की नैतिक दृष्टि , पृ0 132-133

दासी - नारी का सबसे निकृष्ट रूप दासी के रूप में दिखाई पड़ता है।

दासी सेवक होती थी जिसे अपने स्वामी का सब दुर्व्यवहार सहन करना पड़ता था।

> बनिता को बस कहा पुरुष अपलोक लगावै।
> सेवक को बस कहा गुसा साहिब फुरमावै।[1]

स्त्री के अन्य रूप : नारी के गार्हस्थिक रूप का चित्रण तो मिलता है जैसा ऊपर किया जा चुका है, परन्तु समाज में नारी का क्या स्थान है इस विषय पर कवि मौन हैं।[2] सामान्यतः घर से बाहर निकलने का अधिकार ही उसे नहीं दिया गया ऐसी स्थिति में कुछ निम्नवर्गीय नारी पात्र हैं जो जीविकोपार्जन में सक्रिय थीं :

तमोलिन - ज्यौं दुकान पै बेंचत पान, तमोलिन प्रानन एंचति बैठी।[2]

हलवाइनि - भ्राड़ के ऊपर हाटक बेलि सो, बेंचति है हलुआ हलवाइनि।[3]

1- बोधा, विरह-वारीश पृ० 77 छं० 8; सोमनाथ ग्रंथावली : ब्रजेंद्रविनोद पृ० 775, छं० 56; पृ० 649 छं० 20; माधवविनोद पृ० 347 छं० 110; पृ० 351 छं० 1; पृ० 351 छं० 2; पृ० 351 छं02; पृ० 351 छं० 8; भूषण ग्रंथावली : शिवराजभूषण, पृ० 41 छं० 247 ; डुबायस, हिन्दू मैनर्स, कस्टम्स एण्ड सेरेमनीज, पृ० 56।

2- देव ग्रंथावली : सुखसागर तरंग पृ० 92 छं० 269, एडवर्ड एण्ड गैरेट, मुगल रूल इन इंडिया, पृ० 249

3- देव ग्रंथावली : सुखसागर तरंग, पृ० 93 छं० 270, वही

<u>बनीनी</u> - चूनरि सुरंग, अंग ईंगुर के रंग देव, बैठी परचूनी की दुकान
पर चूनी सी ।[1]

<u>नाइन</u> - औरन के पाइन दियो नायनि आवक लाल [2]।

इसके अतिरिक्त स्त्री के जौहरिनि, छीपनि, पटइनि, सुनारिन, गंधिनि तेलिनि, कुम्हारिन, दरजिन, जुलाहिन, मोचिनि, बढ़इनि, लुहारिनि, ब्राह्मणी, कजानि अहीरी, मोलनी, आदि विभिन्न रूपों का उल्लेख मिलता है ।[3]

<u>प्राचीन युग की आदर्श स्त्रियों का अनुकरण -</u>

हिन्दू समाज सदैव से सीता और पार्वती सती-सावित्री आदि का अनुकरण करने वाली पतिव्रताओं की चरणरज से पवित्र होता रहा है। पतिव्रता नारी के आदर्श के लिए इस काल में भी प्रायः सीता पारवती तथा सती के उदाहरण दिये गये है :

1- देव ग्रंथावली: सुखसागर तरंग, पृ0 93, छं0 271, वही

2- मतिराम, रसराज, पृ0 223 छं0 103, भिखारीदास ग्रंथावली, रससारांश पृ0 29 छं0 203 वही ।

3- विस्तृत विवरण भिखारीदास ग्रंथावली, रससारांश, पृ0 30, 32, देव ग्रंथावली: सुखसागर तरंग, पृ0 91- 94, भूषण ग्रंथावली, पृ0 55 छं0 169, स्पियर ट्वाइ लाइट, मुगल रूल इन इंडिया, पृ0 249,

भाग को भूमि सोहाग को भूषण राजसिरी निधि लाजनिवासु ।
आइये मेरी बहू कुल दीपक धन्य पतिव्रत प्रेम प्रकासु ।
लंक ते आई निसंक लिये सुख सुर्यहु वारति कौशिलासासु ।
पाइनि पै ते उठाई सिमै हिय लाइ बलाइ लै पोंछति आँसु ।।[1]

बहुविवाह की एक सबसे बड़ी हानि यह थी कि एक पति की मृत्यु हो जाने से एक साथ उसकी कई पत्नियों को विधवा होना पड़ता था और तत्कालीन समाज में सुरक्षा की स्थिति का अभाव था परिणामतः सती[2] (जौहर) जैसी कुप्रथा ने जन्म लिया ।

1- देव भवानी विलास- देव, पृ0 8 छं0 46,
मनसा बाचा कर्मना करि कान्हर सौ प्रीति।
पारबती सीता सती रीति लई सु जीति ।

– भिखारीदास ग्रंथावली रससारांश प्रथम खंड
छं0 22

2- देव- सुखसागर तरंग छं0 320 , कालीकिंकरदत्त, सोशल एण्ड एकोनॉमिक कंडीशन इन द ऐटीन्थ सेन्चुरी , पृ0 64-66, मनूची: स्टोरिया द मोगोर , भाग 3, पृ0 57

नारी की दिनचर्या तथा रहन - सहन -

भारतीय समाज में नारी का कार्यस्थल और लीलाभूमि प्रायः घर ही रहा है चाहे वह पिता का हो या पति का । कवियों ने स्त्रियों की दिनचर्या में नारी को घर के सारे काम रसोई करती हुयी किसी को आँख में अंजन लगाते दिखाया है तो दूसरी को पाँव में महावर देते । कोई उत्साह पूर्वक स्नान करने के लिए गयी है और उसके वस्त्र से पानी टपक रहा है किसी ने हाथ में पान का बीड़ा ले रखा है । कोई हाथ में मथानी लिए रह जाती है तो कोई सनी हुयी मिट्टी छोड़कर चल देती है । एक हाथ में लोई लिए चली आती है दूसरी के हाथ गोबर से भीगे हुए हैं ।[1]

1- दृग एक अंजन आँजि कै एकै महावर देत बिसरै ।
एकै लिये कर मैं बीरी तेहू बने नहि खात ।
एकै कर मैंलिये मथानी एकै छोड़ि माटी सानी
एकै लोई कर मैं लीने एकन के कर गोबर भीने ।

- बोधा - विरह वारीश, पृ0 35

देव-भावविलास, पृ089, मतिराम ग्रंथावली पृ0 184, छं0 138;
ए0 एस0 अल्तेकर द पोजीशन आफ वीमेन, पृ0 396 ।

नारी के वस्त्र :

तत्कालीन समाज में रंग बिरंगी तथा विभिन्न प्रकार की साड़ियों का प्रयोग नारी परिधान के रूप में करती थीं।

1- देव भावविलास, पृ0 69 छं0 111,' देव-प्रेम चन्द्रिका, पृ0 35 छं0 23; देव- राग रत्नाकर, हरी सारी जरतारी की पृ0 15छं0 62; पृ0 3 छं0 10; पृ0 4 छं0 12,' पृ0 4 छं0 13-14,' पृ05 छं0 18,' पृ0 5 छं0 19,' पृ0 6 छं0 21, 22,' पृ0 8 छं0 29,' 31,' पृ0 9 छं0 33,' पृ0 9 छं034,' पृ0 14, छं0 46,' पृ0 12 छं0 49,' पृ0 20 छं0 95,' पृ0 20 छं0 91,' पृ0 20 छं0 92,' पृ0 20 छं0 93,' पृ0 16 छं0 68,' पृ0 16 छं0 65,' अष्टयाम: पृ0 16 छं0 6,' पृ0 16 छं0 5,' पृ0 8 छं0 9,' देव-सुजान विनोद, पृ0 34 छं0 18,' पृ0 47 छं0 5,' पृ0 52 छं0 26,' पृ0 52 छं0 27,' केसरि को रंग सारी पृ0 63 छं0 6,' पृ0 64 छं0 10,' देव: सुखसागर, तरंग पृ0 22छं0 67, सूही साडी [लाल रंग] पृ0 91, छं0 263, पृ0 76, 283, सारी छपाउ पृ0 99 छं0 286, शाल की सारी पृ0 105 छं0 303 मतिराम सतसई, पृ0 511 छं0 592, केसरि रंग की सारी, पृ0 346 छं0 280 मतिराम: रत्नावली: सारी सूही, पृ0 96 छं0 168 रसराज पृ0113 छं0 271; आलम-आलमकेलि: पृ0 9 छं0 20; पृ0 26 छं0 61,' सारी सेत पृ0 31 छं0 71; कुसुंभी सारी पृ03 5 छं0 81; पृ0 38 छं0 90,' झीनी सारी पृ0 38छं0 9; पृ0 93 छं0 91,' भिखारीदास ग्रंथावली, लालसारी, पृ015 छं0 83; पृ0 18छं0 115; पृ0 20 छं0 134; पृ0 21 छं0 135; पृ0 356, 240,' सारी महीन पृ0 100 छं0 50; 145 छं0 253; सेत सारी पृ0 105 छं0 70,' केसरिया सारी पृ0 119, छं0 139,' भिखारी दास ग्रंथावली खण्ड 2, बंधवरी सारी पृ0 125 छं0 14,' पृ0 106 छं08; पृ0 131 छं0 48,' पृ0 139 छं0 40,' पृ0 143 छं0 17,' सोमनाथ ग्रंथावली रसपीयूषनिधि पृ0 172 छं0 15; श्रीमती जमीला ब्रजभूषण: कास्ट्यूम्स, एण्ड टेक्सटाइल्स आफइंडिया पृ0 39,' इस्लामिक कल्चर क्वाटरली, पृ0 19, 59, पृ0 64, 13,' गिलम्पसेज आफ सोशल लाइफ इन मुगल इंडिया पृ0 13; ट्रेवेनियर, ट्रेवेल्स इन इंडिया भाग 2, पृ0 125,' मनूची: स्टोरिया द मोगोर, भाग 2, पृ0 34।

-स्त्रियाँ साड़ी के एक छोर को कमर में खोंस लेती थी तथा दूसरे छोर को कंधे से ले जाती हुयी सिर को ढकं ढँक लेती थी जो घूंघट निकालने में सहायक होता था :

जरतारी सारी हुकै नैन लसति मतिराम ।

मनो कनक पंजर परे खजरीट मतिराम ।[1]

तत्कालीन समाज में साड़ियों के विभिन्न प्रकार के साथ किनारीदार साड़ी का बहुत प्रचलन था, जिसके किनारे कढ़ाई से युक्त होते थे या सजे हुए होते थे (लेस आदि लगाकर) और कोरो पर मोती झुग्गे तथा झालरि आदि लटकते रहते थे :

कंचन किनारी वारी सारी सासकी में, आस पास झूमी

मोतिन की झालरि झकहरी । [2]

स्त्रियाँ अधिकांशतः चमकीले तथा गाढ़े रंगो का प्रयोग अधिक करती थीं जैसे लाल रंग ।[3]

1- मतिराम -सतसई पृ0 408 छं0 480 देवग्रंथावली : शब्दरसायन, पृ0 78छं070 चैपमॉट, चैप्टर , X X, पृ0 39,

2- देवग्रंथावली :सुखसागर तरंग पृ071 छं0 146; रसविलास:पृ0 197 छं034; भाव विलास, पृ0 123; देव ग्रंथावली, पृ0 96 छं0 52; शब्दरसायन, पृ0 7, छं0 70; मतिराम: ललितललाम, पृ0 346 छं0 280; सोमनाथ ग्रंथावली, रसपीयूषनिधि, पृ0 172, छं0 15; इस्लामिक कल्चर, क्वाटरली, जनवरी 1960, पृ0 113,

3- मनूची, स्टोरिया द मोगोर, भाग2, पृ0 341, श्रीमती जमीला बृजभूषण कास्ट्यूम्स एण्ड टैक्सटाइल्स आफ इंडिया पृ0 39

कटि से ऊपरी भाग को ढँकने के लिए नारी अनेक प्रकार की कंचुकी, अंगिया तथा चोली का प्रयोग करती थी ।[1] इन वस्त्रों का प्रयोग अमीर तथा गरीब दोनों वर्गों में समान रूप से होता था[2] अंतर सिर्फ वस्त्रों की बहुमूल्यता का होता था

1- आलम- आलमकेलि संग्रह, कंचुकी पृ0 123 छं0 298; कंचुकी, नील पृ0 124 छं0 305; कंचुकी, कुमारमणि; रसिक -रसाल पृ0 77 छं0 49; पृ0 92 छं0 104; सोमनाथ ग्रंथावली: शशिनाथ विनोद पृ0 505 छं0 33; रसपीयूष-निधि, एकादशतरंग, पृ0 97 छं0 52; पृ0 103 छं0 72 ; पृ0 96 छं0 48; कंचुकी लाल पृ0 215 छं0 270; देव: रागरत्नाकर सित कंचुकी पृ0 9 छं0 35, नील कंचुकी पृ0 6 छं0 21; कपूर सी कंचुकी पृ0 9 छं0 34; कंचुकी लाल पृ0 12 छं0 47; कंचुकी पीत पृ0 15 छं0 60; पृ0 18 छं0 75; पृ0 20 छं0 91; सुखसागर तरंग, लाल कंचुकी पृ0 77 छं0 223; कंचुकी बंद पृ0 79 छं0 230 , पृ0 86 छं0 249; पृ0 96 छं0 278; पृ0 97 छं0 283 ; भिखारीदास ग्रंथावली खण्ड-1 देव सुधा 141 / 122 , 154/90 , 100/107; कंचुकी बंद पृ0 64 छं0 451 ; भिखारीदास ग्रंथावली खण्ड2, कंचुकी, बाफ्ते पृ0215 छं0 91; कंचुकी नीली पृ0 248 छं0 21; मतिराम रसराज, पृ0 41 छं0 30; पृ0 70 छं0 112; पृ0 109 छं0 258; तोष-सुधानिधि, कंचुकी लाल पृ0 98 छं0 286; जरतारी की कंचुकी पृ0 103 छं0 303 ; "अंगिया"-देव प्रेम चन्द्रिका जारीदार अंगिया पृ0 35 छं0 23; राग-रत्नाकर, आँगी लाल पृ0 11 छं0 46; आँगी सुरंगित पृ0 12 छं0 49, पृ0 16 छं0 74 पृ0 20 छं0 95, सुखसागर तरंग, छोर की आँगी पृ0 99 छं0 286; अंगिया नीली पृ0104, छं0 301; आलम-आलमकेलि, सेत आँगी; पृ0 35 छं0 81; झीनी आँगी पृ0 37 छं0 86; अंगिया सित झीनी, पृ0 125 छं0 306; तोष-सुधानिधि पृ0 103 छं0 302; "चोली" भिखारीदास ग्रंथावली: खण्ड1, पृ0 145 छं0 255; देव; सुखसागर तरंग, चोली की गाँठ, पृ0 92 छं0 268; "वेस्टर्न इंडियन ट्रैवेल्स पृ0 53, (कमर तक पहने जाने वाले चुस्त वस्त्र थे जो ब्लाउज का काम करते थे, अमीना कुमार काल्टम्यूम्स टेक्सटाइल्स ऑफ इंडिया, पृ0 37, कमरतक कंचुकी का वर्णन आईन एअकबरी भाग 3, अनुवादक जैरेट, में भी मिलता है पृ0 343 स्टैवोरीन भाग 1, प0 415 गैहृ भाग 1, पृ0 142-143

2- मनूची स्टोरिया द मोगोर पृ0 341, बर्नियर, पृ0 272 , आईनए अकबरी, भाग3, अनुवादक, जैरेट पृ0 311-12

कटि से नीचे पहने जाने वाले वस्त्रों में स्त्रियाँ पायजामा (शलवार) लहंगा तथा घांघरा पहनती थीं । [1]

1- लसति गुजरी अजरी बिलसति लाल इजार ।
हिये इजारनि के हरे, बैठी बाल बजार ।
- मतिराम, सतसई पृ0 389 छं0 253

(यहाँ इजार का तात्पर्य तंग मुहरी के पायजामे से है), रसराज पृ0 221 छं0 96, भूषण ग्रंथावली शिवाबावनी पृ0 8 छं0 5, पृ0 9 छं0 6 (अधिकांशतः ये मुस्लिम औरतें पहनती थीं), मुहम्मयासीनः ए सोशल हिस्ट्री आफ इस्लामिक इंडिया, पृ0 40, डेला वेली पृ0 414, मैन्डल्सो पृ0 50 पृ0 63, टैरी पृ 202-203 आईन, अनु0 एच0एस0 जैरेटजिल्द 3, पृ0 312 ।

लंहगा - लंहगा मुक्त धनवाँ को
- तोष-सुधानिधि पृ0 98 छं0 286, पृ0 103 छं0 303 देव सुखसागर तरंग, लाल लंहगा, पृ0 101 छं0 294 आलम-आलमकेलि, पृ0 21,

घाघरा : एड़िन अमर घूमत घाघरो
- देवः सुखसागर तरंग पृ0 103 छं0 303, पृ0 104 छं0 301; पृ0 74 छं0 215; रसविलास, पृ0 226 छं052; भिखारीदास ग्रंथावली: खण्ड1, पृ0 119 छं0 138; पृ0 144 छं0 252; पृ0 145 छं0 253; तोष सुधानिधि, पृ0 21छं0 67; पृ0 103, छं0 302; पृ0 141 छं0 418; सोमनाथ ग्रंथावली: सुजानविलास पृ0 642 छं0 100; ए. इ. आई. कुच: आठरहवीं शती के अंत में बना चित्रजिसमें स्त्री को घाघरा पहने दिखाया गया है। चित्र नं0 670; श्रीमती जमीला बृजभूषण कास्ट्यूम्स एण्ड टेक्सटाइल्स आफ इंडिया, पृ0 27; मनूची; स्टोरिया द मोगोर भाग2, पृ0 314; आईन भाग 3, जैरेट, पृ0 314, (भारत कला भवन काशी हिन्दू विश्वविद्यालयमें राधा-कृष्ण गुलेक, लगभग 1760 ई0 राधा का लंहगा पहने दिखाया गया है । (लल्लनराय के प्रबन्ध में चित्रफलक 12 पर) अंसारी: द हरम आफ द ग्रेटमुगल, 1960 पृ0 112-113,

उत्तरीय वस्त्रों को विभिन्न नामों यथा ओढ़नी चादर निचोल अंचल चूनर आदि से अभिहित किया गया जो विभिन्न प्रकार की तथा विभिन्न रंगों की होती थी[1]। उत्तरी वस्त्रों से सिर भी ढका जाता था तथा साड़ी की भाँति इन वस्त्रों से घूंघट भी निकाला जाता था।[2]

1- "ओढ़नी", सोमनाथ ग्रंथावली, शशिनाथ विनोद, (प्रथमोल्लास) पृ0 502 छं0 8; रसपीयूषनिधि पृ0 152 छं0 5; देवः सुखसागरतरंग, पृ092 छं0 278; नीली ओढ़नी पृ0 101 छं0 294; लाल ओढ़नी पृ0 104 छं0 301; देवसुधा पृ0 164; भिखारीदास, ग्रंथावली, खंड 1, चाँचरि चारु आसपरि ओढ़नी पृ0 54, छं0 380; कपूर धूर की ओढ़नी पृ0 99 छं0 46; देव-सुजान विनोद, रेसमी सतूल साल, (साल का तात्पर्य एक विशेष प्रकार की मोटी चादर से बताया है), देव-सुजान विनोद असन निचोल पृ0 55, छं0 37; मतिराम: ललितललाम, पृ0 91; तोषः सुधानिधि, अंचल, पृ0 31 छं0 93, पृ0 59 छं0 171; पृ0 123 छं0 362; भिखारीदास ग्रंथावली, खण्ड 1, अंचल पृ0 47, छं 0324; देव: राग रत्नाकर चूनरी सुरंग पृ0 7छं0 27; चूनरी राती पृ0 15 छं0 60; सुजानविनोद, चुनि चूनरी, लाल पृ0 35, छं0 22; चूनरी चुनि पृ0 51छं0 124; पृ0 50 छं0 55; चूनरि सुरंग पृ0 78, छं0 24; सुखसागरतरंग, चूनरि सुरंग, पृ0 93 छं0 270; चटकीली चूनरि पृ0 96 छं0 278; मतिराम, रसराज, पृ0 75 छं0 141; तोष-सुधानिधि, नील निचोल की चूनरी पृ0 11 छं0 26; चूनरि बासे की पृ0 119 छं0 350; आलम-आलमकेलि, पृ0 117 छं0 277; निकोलाई-मनूची: स्टोरिया द मोगोर भाग2, पृ0 341 बर्नियर पृ0 272, श्रीमती जमीला बृजभूषण: कास्ट्यूम्स एण्ड टेक्सटाइल्स ऑफ इंडिया पृ0 46, भारत कला भवन काशी हिन्दू विश्वविद्यालय से प्राप्त राधा-कृष्ण गुलेर लगभग 1760 ई0 में राधा को चादर ओढ़े दिखाया गया है। (लल्लनराय के प्रबन्धकाव्य, रीतिकालीन---, चित्रफलक 12 से उद्धृत), आईन ओढ़नी चैरट, पृ0 342
2- पृ0 342, ~~डा0~~ हजारी प्रसाद द्विवेदी, प्राचीनभारत के कलात्मक विनोद पृ0 92, (इसमें घूंघट प्राचीन समय से ही था, कालिदास द्वारा रचित शाकुन्तलम् में शकुन्तला को चादर से ढकी हुयी घूंघट निकाले हुए दिखाया गया है। चूनर से घूंघट, श्रीमती जमील बृजभूषण कास्ट्यूम्स एण्ड टेक्सटाइल्स आफ इंडियापृ0 38, सिर पर ओढ़नी चूनरआदि से घूंघट, भारत भवन से प्राप्त चित्र स्याम, कृष्ण मुगल शैली, का 1750ई0 सौन्दर्य की ली शाह आलमकालीन चित्र 1725 ई0चित्रफलक 9-1। राधा किशनगढ़ शैली का चित्र 1700-1850

स्त्रिया जूती[1] पहनती थी ये जूतियाँ सजी हुयीभी होती थी :

हाथ हरी हरी छाजे छरी अरु

जूती चढ़ी पग फूँद-फुँदारी ।[2]

स्त्रियाँ मोजे नही पहनती थीं ।[3]

स्त्रियों के आभूषण –

शारीरिक सौन्दर्य की वृद्धि अथवा शरीर को सुसज्जित करने की दृष्टि से आभूषण[4] को स्त्रियाँ बहुत महत्वपूर्ण वस्तु मानती थीं । आभूषण के आकर्षण केलिए यह कहा गया कि स्त्री आभूषण के प्रति इतना आकर्षित रहती थी कि सुनार सदैव आभूषण बनाने में व्यस्त रहते थे किन्तु अधिकांशतः बहुमूल्य गहने राजकुमारियों आदि के लिए बनता था ।[5]

1– "जूती" भूषण ग्रंथावली पृ0 8 छं0 5; पृ0 5 छं0 63; देव ग्रंथावली: सुखसागर तरंग, पृ0 105 छं0 303; पृ0 96 छं0 278; रसविलास, पृ048 छं0 15; भाव विलास, पृ0123 , भिखारीदास ग्रंथावली; खण्ड 1, पृ0 54, छं0 380; पृ0 145 छं0 252; थेवनॉट पृ0 52; मनूची: स्टोरिया द मोगोर भाग 1, पृ0 193; पी0एन0 ओझा: ग्लिम्पसेज आफ सोशल लाइफ इन मुगल इंडिया , पृ0 14, जूती को गुबरी तथा पापरी भी कहा गया है।

2– देव ग्रंथावली: सुखसागर तरंग, पृ0 105 छं0 303; भिखारी दास ग्रंथावली; पृ0 145 छं0 252 , भिखारीदास ग्रंथावली; खण्ड 1, पृ0 54 छं0 380, वही ।

3– मिसेज मीर हसन अली–" ऑब्जरवेशन्स ऑन द मुसलमान्स पृ0 80

4– मुहम्मद यासीन ए सोशल हिस्ट्री ऑफ इस्लामिक इंडिया, पृ0 41

5– मनूची स्टोरिया द मोगोर , भाग 2, पृ0 339–40

आभूषण का क्रम सिर सेशुरू होकर पाँव तक चलता है । शिरोभूषण के अन्तर्गत नारियाँ सीसफूल, सिरफूल, टीका, माँगमोती आदि धारण करती थी । [1]

"सीसफूल"
1- सोमनाथ ग्रंथावली: कृष्णदविनोद, पृ0 503 छं0 50; देव ग्रंथावली: राग रत्नाकर पृ0 7 छं0 27; सुजान विनोद पृ0 47 छं0 5; शब्द-रसायन, पृ0 7 छं0 70; आलम आलमकेलि, पृ0 31 छं0 22; मनूची: स्टोरिया द मोगोर भाग 2, पृ0 317, आईन भाग 3, जदुनाथ सरकार पृ0 343 'सिरफूल, तोष सुधानिधि, पृ0 97 छं0 273; देव:सु. तरंग, पृ 0 83 छं0 243; पृ0 84-छं0 243; मनूची:, स्टोरिया, द मोगोर भाग 2 पृ0 317; 'टीका- सोमनाथ ग्रंथावली, पृ0 503 छं0 49; जमीला बृजभूषण: कास्ट्यूम्स एण्ड टेक्सटाइल्स ऑफ इंडिया, फीमेल कास्ट्यूम्स इन द ऐट्टीन्थ सेन्चुरी पहाड़ी पेन्टिंग्स का चित्र सं0 47; आईन. जैरेट, जिल्द 3, पृ0 312 "माँगमोती" भिखारीदास ग्रंथावली, माँग भरी मोती, पृ0 145 छं0 255; देव:सुखसागरतरंग पृ0 83 छं0 241, सुजानविनोद पृ0 52 छं0 27; जमीला बृजभूषण: कास्ट्यूम्स एण्ड टेक्सटाइल्स .... राजस्थानी फीमेल कास्ट्यूम्स इन द ऐट्टीन्थ सेन्चुरी चित्रफलक । तथा 4,

माथे के आभूषण में थिंदुली (बिंदी) तथा बेंदा का उल्लेख मिलता है। [1]

नारी के आभूषण इतने प्रिय थे कि वह शरीर के प्रत्येक अंग में इसे धारण करती थी फलतः वह केशों को भी आभूषण से सुसज्जित रखती थी :

केसनि में छाई छवि फूलन के बुन्दकी । [2]

कर्णभूषण-कर्णाभूषणों में विभिन्न प्रकार के कुण्डल विशेष प्रिय होने के साथ-साथ

1- आलम आलमकेलि - "जराऊको बिन्दु" पृ0 146 छं0 ; देव;शब्द-रसायन, पृ0 70 छं0 42, सुखसागर तरंग पृ0 83 छं0 241
"बेंदा ललित लाल बेंदा लसै बाल भाल सुखदानि ।
दरपन रवि-प्रतिबिंब लों दहै सौति अखियानि ।

- भिखारीदास ग्रंथावली : रस सारांश पृ0 76 छं0 518," छंदार्णव पृ0223 छं0 9," देव-सुजानविनोद पृ0 47, छं5," वही, पृ0 51, चित्र सं0 3,4 पृ0 58 चित्र सं0 1; निकोलाई मनूची : स्टोरिया द मोगोर भाग 2 पृ0 317

2- मतिराम: रसराज, पृ0 64 छं0 103; ललितललाम, पृ0 89 छं0 100; देव ग्रंथावली: पृ0 110 छं0 92; गोरा, भाग 1, पृ0 143; मुबारक हिन्द मैनर्स, कस्टम्स एण्ड सेरेमनीज, पृ0 342 ।

लुरकी कर्णफूल , झुमका , सरयौना तथा और नामकआभूषणभीकानों में पहने जाते थे ।[1]

1- कनक मेखला पहिरे नारी, कनिन सोहत कुंडल भारी ।

सोमनाथ ग्रंथावली, कृष्णविनोद पृ0 708 छं0 24, संतोष सुधानिधि , पृ0 60 छं0 173; पृ0 112 छं0 331; कुण्डल मकर पृ0 260 छं0; मतिराम; रसराज पृ0 120 छं0 297; पृ0 123 छं0306; ललितललाम, पृ0 62 छं0 76 भिखारीदास ग्रंथावली: रससारांश, कुण्डल मकराकारे पृ0 38 छं0 256 ; पृ0 85 छं0 581; पृ0 90 छं09; हेमिल्टन , भाग 1, पृ0 163; थेवनाट भाग 3, पृ0 37; अंसारी भाग 34, हरम ऑफ द ग्रेट मुगल पृ0 114; लुरकी मोतिन की लुरकोन ; देव; सुखसागरतरंग, पृ0 83 छं0 243; निकोलाई मनूची; स्टोरिया द मोगोर भाग2, पृ0 317; कर्णफूल आलम आलमकेलि, स्तुतिखण्ड पृ0 9 छं0 20, भूषण ग्रंथावली पृ0 252 ; सोमनाथ ग्रंथावली; रसपीयूषनिधि, पृ0 126 छं0 12; मनूची; स्टोरिया द मोगोर भाग 2, पृ0 317; जमीला बृजभूषण; कास्ट्यूम्स एण्ड टेक्सटाइल्स आफ इंडिया मेल एण्ड फीमेल कास्ट्यूम्स इन द ऐट्टीन्थ सेन्चुरी पहाड़ी पेन्टिंग्स पृ0 60, चित्र सं0 4; थेवनॉट भाग 3, पृ0 37; अंसारी भाग 34, हरम ऑफ द ग्रेट मुगल पृ0 114; 'झुमका' सोमनाथ ग्रंथावली :शशिनाथ विनोद, पृ0 502 छं0 9; मआसीर -ए- आलमगीरी, अनुवादक, जदुनाथ सरकार पृ0 93; बर्नियर पृ0 223-224 ; मनूची; स्टोरिया द मोगोर भाग2; पृ0 339 -340; सरयौना देव-शब्दरसायन पृ0 67 छं0 70; सुजानविनोद पृ0 10 छं0 19; मतिराम; रसराज, पृ0 13 छं0 31; सोमनाथ ग्रंथावली; श्रृंगार विलास, पृ0 305 छं0 44; सुजानविलास प00808 छं0 17; मनूची; स्टोरिया द मोगोर भाग 2 पृ0 317; बीर आलम-आलमकेलि, पृ031, छं0 73; देव; रागरत्नाकर पृ0 6 छं0 23; सुखसागर तरंग पृ0 83 छं0 239; सुजान विनोद, पृ0 47, छं0 5; मनूची; स्टोरिया द मोगोर , भाग2, पृ0 339-340; मआसीर ए आलमगीरी, अनुवादक, जदुनाथ सरकार , पृ0 93, बर्नियर पृ0 223-224

नासिका भूषण में नारी के प्रिय आभूषण बेसर नथ, नथुनी, बेसर बुलनीलटकी तथा लटकनआदि थे। जिसमें विभिन्न प्रकार के रत्न मोती लगे होते थे :

अधर सुरंग भूमि नृपति अनंग आगे
नृत्य करै बेसर को मोती नृत्यकारी है।[1]

1-'बेसर'आलम-आलमकेलि, पृ0 24 छं0 55, पृ0 12 छं0 26; पृ0 35 छं0 31; सोमनाथ ग्रंथावली; रसपीयूषनिधि, पृ0 126 छं0 12; शशिनाथ विनोद, पृ0 504 छं0 12; कुमारमणि: रसिक रसाल, पृ0 22 छं0 28; मतिराम: ललितललाम, पृ0 349 छं0 288; देवग्रंथावली; सुखसागरतरंग पृ0 61; छं085 पृ0 87; छं0 237; बेसरि को मुक्ता 81/236; भावविलास पृ0 84 छं0 26; डोलैट अंसारी पृ0 81; अंसारी भाग34, हरम आफ द ग्रेट मुगल पृ0 114, आईन ए अकबरी, जैरेट, जिल्द 3 पृ0 313; थेवनॉट पृ0 37; 'नथ'देव-ग्रंथावली; प्रेमचन्द्रिका, मोती नथ, पृ0 35 छं0 23, शब्दरसायन, पृ07छं070; रसविलास पृ0 273 छं0 26, भिखारीदास ग्रंथावली: खंड 2, पृ0 248छं0 21, भारत कला भवन, काशी विश्वविद्यालय से प्राप्त चित्र राधा किशनगढ़ शैली, 1700 -1850 ई0 में मध्य [लालनराय के प्रबन्ध काव्य से], डोलैट पृ0 81; थेवनॉट पृ0 37; अंसारी भाग34, हरम ऑफ द ग्रेट मुगल पृ0 114; 'नथुनी' - तोष-सुधानिधि, मुक्ता नथुनी में, पृ098, छं0 286; मतिराम: रसराज, पृ0 282 छं0 358; ललितललाम, पृ0 346 छं0 280; पृ0 314 छं0 86; सतसई, पृ0 395 छं0 326; पृ0 373 छं0 50; रत्नावली, पृ0 42 छं081; सोमनाथ ग्रंथावली पृ0502 छं0 9; निकोलाई मनूची: स्टोरिया द मोगोर भाग 2 पृ0 317; 'बुलनी' तोष-सुधानिधि, पृ0 61 छं0 178, 'सुरकी' देव सुखसागर तरंग पृ0 81 छं0 226 लटकन देव सुजानविनोद पृ0 57 छं0 42,

कंठ के आभूषण में विभिन्न प्रकार के हार, मालाएं आदि पहनी जाती थीं जिसमें पुष्पाहार मोती के हार तथा रत्नजटित हार मुख्य थे :

कंचन पंचलरा कुज मोती हरा ।[1]

1— भिखारीदास ग्रंथावली: पृ0 98 छं0 43; 105 छं0 65; गुलोक हार पृ0 47, छं0 335; मुक्ताहार पृ0 112 छं0 104; छं0 144 छं0 252; भिखारीदास ग्रंथावली: 2, मुक्ताहल केहार पृ0 77 छं0 53; मोतिम हार पृ0 186 छं0 68; मतिराम: रसराज, पृ0 60 छं0 93; सतसई, गुज के हार, पृ0 72 छं02; चन्द्रहार पृ0 364 छं0 134; तोष सुधानिधि पृ0 16 छं0 53; पृ0 31 छं0 99; मोतिन को हार 51 छं0 152; हीरन को हार पृ0 103 छं0 302; घनानंद: पृ0 13 छं0 36; आलमकेलि, पृ0 7 छं0 16; पृ0 15 छं0 33; देव— रागरत्नाकर पृ0 8 छं0 29; सुजानविनोद, मोती नग हीरन हार पृ0 34 छं0 18; पृ0 52 छं0 27; पृ079 छं0 25; अष्टयाम पृ0 1 छं04; पृ0 18 छं0 10; सुखसागर तरंग, चंद्रहार पृ0 77 छं0 223; पृ078 छं0 226; हरा घुघचीन के पृ0 105 छं0 303; पुष्पाहार, सोमनाथ ग्रंथावली; रसपीयूषनिधि, पृ0 95 छं0 42; पृ0 85 छं0 9; मतिराम: ललितललाम, पृ0 351 छं0 313; रत्नावली, पृ0 82 छं0 140; पृ0 54 छं0 84; 75 छं0 127; देव ग्रंथावली: रस विलास, पृ0 202 छं0 24; मआसीर ए आलमगीरी अनुवादक जदुनाथ सरकार पृ0 93; मनूची: स्टोरिया दमोगोर पृ0 317, 339—340; डुबायस: हिन्दू मैनर्स, कास्टम्यूम्स एण्ड सेरेमनीज पृ0 343, अंसारी, हरम आफ द ग्रेट मुगल भाग34, पृ0114; आईन भाग3, 313; बर्नियर: पृ0268; पेलसर्ट: पृ0 25 (पुष्पाहार) डौलेट पृ081; बर्नियर पृ0 223; माला देव सुजानविनोद, मनिमाल पृ0606; 54 तोष—सुधानिधि, माला मुक्ताकी पृ0 896 छं0259; मुक्तानि पृ0 63, छं0 182; भिखारीदास ग्रंथावली: 2, मोतीमाल पृ0 102 छं0 36; भिखारी ग्रंथावली: 1, मुकुतमाल पृ0 15 छं080, सोमनाथ ग्रंथावली; पंचलड़ी पृ0505 छं0 33; आलम पंचलड़ी पृ0 306, 70; कंठमाल भिखारी ग्रंथावली: पृ0 145 छं0 252; सोमनाथ ग्रंथावली: श्रृंगारविलास, कंठमाल, पृ0 612 छं0 123; मनूची: वही, मल्लनराय की प्रबन्ध रीतिकालीन हिन्दी साहित्य में उल्लिखित वस्त्राभरणों का अध्ययन चित्रफलक 17, विभिन्न प्रकार के हार मालाएं है, जमीला ब्रजभूषण: कास्ट्यूम्स एण्ड टेक्सटाइल्स आफ इंडिया, पृ0 60 चित्र 1 तथा 4,

हाथ को बाजूबंद पहुँची कंगन चूड़ी तथा विभिन्न प्रकार की अंगूठी से सुसज्जित करती थीं।

1- सोमनाथ ग्रंथावली: माधव विनोद, पृ0 329 छं0 75; शशिनाथविनोद (प्रथमोल्लास) 505 छं0 33; देव:सुखसागर तरंग पृ0 97 छं0 283; तोष: सुधानिधि, पृ0 102 छं0 300; 'पहुँची' भिखारीदास ग्रंथावली; पृ0 85 छं0 581; 1/85 तोष सुधानिधि हीरन की पहुँची पृ0 51 छं0152; पृ0 63 छं0 182; घनानंद (प्रेमपत्रिका) पन्नन की पहुँची छं0 37 छं0 17; 'कंगन' भिखारीदास ग्रंथावली; श्रृंगारनिर्णय, पृ0 149 छं0 273; काव्यनिर्णय पृ0 130 छं0 42; सोमनाथ ग्रंथावली; ब्रजेंद्रविनोद पृ0 502 छं0 44; माधवविनोद 469 छं0 104; पृ0 329 छं0 76; सुजानविलास, पृ0 642 छं0 92; देव: देवचरित्र पृ0 17 छं0 83; रसविलास, पृ0 237 छं0 28; राग रत्नाकर पृ0 3 छं0 10; भाव, विलास, पृ069; भिखारीदास ग्रंथावली, 2, पृ0 130 छं0 42; 'चूड़ी' देव; सुखसागर तरंग, काँच कंचन रतन चुरी पृ0 79 छं0 228; सुजान विनोद, पृ0 1 छं0 2; पृ0 52 छं0 27; पृ0 60 छं0 59; अष्टयाम 24/16; तोष; सुधानिधि पृ023 छं0 70, पृ0 58 छं0 170, 'अँगूठी' कुमारमणि, रसिकरसाल पृ0 85 छं0 75; सोमनाथ ग्रंथावली, ब्रजेंद्रविनोद पृ0 510 छं0 110; माधवविनोद पृ0 329 छं0 77; देव: सुखसागर तरंग, दर्पन की मुँदरी पृ0 छं0 13 छलनि (मणिकुंदन) पृ0 79 छं0 228; पृ0 79 छं0 229; मतिराम; सतसई, कला 152 छं0 120; भिखारीदास ग्रंथावली; 1, कला पृ0 26 छं0 175; मआसीर-ए-आलमगीरी: अनुवादक सरकार, पृ0 93; बर्नियर पृ0 223-224, टेरी भाग 3, पृ0 252 डीलेट पृ0 81 मैन्डलसो, पृ0 50; मनूची; स्टोरिया द मोगोर, भाग2, पृ0 239-340; मुहम्मदयासीन; ए सोशल हिस्ट्री ऑफ इस्लामिक इंडिया, अंसारी; पेज 34, हरम आफ द ग्रेट मुगल, पृ0114 हरफन हबीब; पृ0 89; पैवमांट 53; पी0एन0 ओझा; ग्लिम्पसेस ऑफ सोशल लाइफ इन मुगल इंडिया पृ0 15

कटि के आभूषण प्रायः रचन प्रधान होते थे।

स्त्रियाँ कटि के आभूषणो में किंकिणी रसना, मेखला धारण करती थीं।[1]

1- देवः सुजान विनोद, पृ0 61 छं0 59; "किंकिणी," सोमनाथ ग्रंथावली: रसपीयूषनिधि, पृ068 छं0 43; पृ0 67 छं0 38; श्रृंगार विलास, पृ0 282 छं0 38; 283 छं0 42 ; माधव विनोद 415 छं0 33; रामचरित्र रत्नाकर, 173 छं0 18; ब्रजेंद्र विनोद, किंकिणी, 501 छं0 40; देवः देवचरित्र, पृ0 7 छं0 21; भाव विलास, पृ0 91 छं0 63; पृ0 43, छं0 18; चतुर्थ भाव विलास, पृ0 110 छं0 4; सुखसागरतरंग, पृ0 83 छं0 218; पृ0 79 छं0 194; पृ0 74 छं0 163; देव ग्रंथावली, 115 छं0 6; भिखारीदास ग्रं0: रस सारांश, पृ021छं0 134 ; श्रृंगारनिर्णय, 149 छं0 273; मतिरामः रत्नावली, 56 छं0 89; 91 छं0 158; 94 छं0 165; 94 छं0 164; रसराज, 274 छं0 319; सतसई, 413 छं0 537 ; रसछना , लोभ-सुधानिधि पृ0 58 छं0 170; 102 छं0 300; भिखारीदास ग्रंथावली, 1 पृ0 132 छं0 199; देव, प्रेमचन्द्रिका, 41, छं0 43; राग-रत्नाकर 61 छं0 59; सुखसागरतरंग, 75 छं0 218; आलम-आलमकेलि, पृ0 38, 90; "मेखला, देवः रागरत्नाकर मैंजी मंजु मेखला पृ0 5 छं0 14; अंसारी, भाग 34, हरम आफ द ग्रेट मुगल, पृ0 114; मुहम्मद यासीन, ए सोशल हिस्ट्री ऑफ इस्लामिक इंडिया, पृ041; आईन-ए अकबरी, भाग-3, जे0 एस0 पृ0 343-345

आभूषण के क्रम में अन्तिम चरण चरणाभूषणों का होता है। चरणाभूषणों में नूपुर, पायल, पैंजनी अनवट, बिछिया तथा बिछुआ आदि स्त्रियाँ धारण करती थीं। इनमें भी कटि मेखला की भाँति अधिकांश आभूषणों से ध्वनि निकलती थी जो स्त्रियों को बहुत प्रिय होती थी :

बजनी पाइल [1]

1- आलम: आलमकेलि, पृ0 24 छं0 55; 31 छं0 71; 117 छं0 277; मतिराम: रसराज 54 छं0 71; 113 छं0 271; देव: शब्दरसायन, पृ0 67 छं0 — ; अष्टयाम, पृ0 18 छं0 10; भिखारीदास ग्रंथावली: 1, पृ0 45 छं0 304; "पायल" भिखारीदास ग्रंथावली: पृ0 9 छं0 24; 125 छं0 167; भिखारीदास ग्रंथावली: 2, पृ0 139 छं0 43; "पैंजनी," तोष: सुधानिधि, पृ0 13 छं0 42; पृ0 27 छं0 83; 63 छं0 185; भिखारीदास ग्रंथावली: 2, पृ0 248, छं0 21; "अनवट" मतिराम: रसराज, पृ0 217 छं0 80; रत्नावली 64 छं0 104; तोष: सुधानिधि पृ0 102 छं0 300; सोमनाथ ग्रंथावली; कंचन मनि मंडित अनवट, शशिनाथविनोद, 503 छं0 22; भिखारीदास ग्रंथावली: 1, 105 छं0 69; "बिछिया," देव-भावविलास 68 छं0 109; अष्टयाम, 18 छं0 10; सुखसागर तरंग 79 छं0 194; मतिराम: रसराज, 239 छं0 170; 269, छं0 296; 546 छं0 71; "बिछुवा" देवभावविलास पृ0 103; मतिराम: रसराज कंचन के बिछुआ, पृ0 92 छं0 195; अंसारी: भाग 24, हरम ऑफ द ग्रेट मुगल पृ0 114; हेमिल्टन: पायल 1, 163, मनूची, स्टोरिया द मोगोर भाग 2, पृ0 340; ओविंगटन पृ0 320; औरंगजेबनामा, अनुवादक मुंशिर्क, तृतीय भाग पृ0 39, आईन, भाग3, जे एण्ड एस, 343-345

प्रसाधन – अलंकरण के साथ-साथ नारी विभिन्न प्रकार की सौन्दर्य वर्धक वस्तुएं प्रसाधन के रूप में इस्तेमाल करती थीं । शरीर पर विभिन्न प्रकार के सुगंधित लेप (अंगराग) या उबटन लगाती थी यथा चंदन, चोवा, कस्तूरी कुंकुम, केसर आदि :

घोरि घनो घनसार सो केसर चंदन गारि के अंग सम्हारे ।[1]

1– देव; भावविलास, पृ0 39 छं0 128; देव रागरत्नाकर 13छं0 52; 13छं0 53; देव– सुजानविनोद 58 छं0 44; मतिराम; रसराज, 67 छं0 114; भिखारीदास-ग्रंथावली; 1 पृ0 51 छं0 357; पृ0 53 छं0 370; पृ0 147 छं0 263; पृ0 159 छं0 318; भिखारीदास "चंदन लेप" 51 / 357 ; "चोवा" घन आनन्द कवित्त, पृ045 छं0 72; देव रागरत्नाकर पृ0 9 छं0 34; सुजानविनोद पृ0 43 छं0 49; 58छं0 44; अष्टयाम, पृ0 16 छं0 6; 17 छं0 8; सुखसागरतरंग, पृ0 22 छं0 66; "कस्तूरी" आलम; आलमकेलि, मृगमद पीति पृ0 39 छं0 91 ; 82 छं0 242; मतिराम: रसराज, पृ0 61 छं0 97; सतसई, छं0 278 देव– सुजानविनोद," कुरंगसार", 58 छं0 44; मृगमद पृ0 60, छं0 54; पृ0 83 छं0 39 ; देव–सुखसागर तरंग, पृ0 83 छं0 240 ; "कुंकुम केसर" भिखारीदास-ग्रंथावली; 1 , कुंकुम पृ0 39 छं0 260; 122 छं0 154 ; कुंकुम लेप 39छं 262; केसरि कुंकुम , 156 छं0 26 ; तोष सुधानिधि केसरि, 28छं0 6; केसरि-कुंकुम पृ0 102 छं0 300; घन आनंद ग्रंथावली; केसिर 125 छं0 407; देव; अष्टयाम केसिर उबटि 16 छं0 6; सुखसागर तरंग, : उबटने 19 छं0 58; देवसुधा 132 छं0 131; 271 छं0 95; पृ0 222 छं0 168; के0 एम0 अशरफ, लाइफ एण्ड कंडीशन आफ पीपुल ऑफ हिन्दुस्तान, पृ0 180, 181, आईन-ए-अकबरी; भाग3, पृ0 312; रेखा मिश्रा पोजीशन ऑफ वोमेन इन मुगल इंडिया पृ0 125; पी0 एन0 ओझा, ग्लिम्पसेज ऑफ सोशललाइफ इन मुगल इंडिया, पृ0 15; जे0 ए0 एस0 बी0, 1, 1935, पृ0 280; जनरल ऑफ वेंकटेश्वरा, ओरियंटल इंस्टीट्यूट, भाग 8, 1964, पृ0 25–26 ।

नेत्रों को सुन्दरता बढ़ाने के लिए स्त्रियाँ अंजन या काजल नामक प्रसाधन का प्रयोग करती थीं ।

निज नैननि अंजन देति ।[1]

पान खाने के अन्य कारणों के अतिरिक्त संभवतः होठों को लाल रंग देने के उद्देश्य से संभवतः स्त्रियाँ पान भी खाती थीं ।[2]

1- "अंजन" – सोमनाथ ग्रंथावली : रसपीयूषनिधि, पृ0 87 छं0 16, 97, छं0 52, 121 छं0 47; 176 छं0 32, श्रृंगारविलास, 295 छं0 4; कृष्णविनोद 502 छं0 47; 788 छं0 75; देव: सुखसागर तरंग, पृ0 68 छं0 126; भाव विलास, पृ0 72 छं0 2; अष्टयाम, 10 छं0 18; मतिराम: रत्नावली पृ0 64 छं0 104; 123 छं0 142; 92 छं0 160, काजल पृ0 113 छं0 53, रसराज, 285 छं0 376; काजर, सतसई, छं0 769; तोष: सुधानिधि काजल, पृ0 102 छं0 300; 60 छं0 175; मनूची: स्टोरिया द मोगोर भाग 2, पृ0 340, के0 एम0 अशरफ, लाइफ एण्ड कंडीशन आफ पीपुल ऑफ हिन्दुस्तान; ओझा ग्लिम्पसेज हिस्ट्री आफ सोशल लाइफ इन मुगल इंडिया पृ0 15,

2- 'पान'– मतिराम; रसराज 114 छं0 272; 285 छं0 376; 67 छं0 114; भिखारीदास ग्रंथावली; 1, 51 छं0 335; 122 छं0 154; 146 छं0 258, भाग 2, 15, छं0 60, सोमनाथ ग्रंथावली, रसपीयूषनिधि, पृ0 132 छं0 10 116 छं0 21; 111 छं0 24; 107 छं0 11; 121 छं0 47; 34 छं0 16; देव अष्टयाम 7 छं0 7; भावविलास, 126 छं0 2; जनरल ऑफ वैंकटेश्वर ओरियंटल इंस्टीट्यूट, भाग 8, पृ0 28, मुहम्मद यासीन: ए सोशल हिस्ट्री ऑफ इस्लामिक इंडिया पृ0 65; ट्रेवर्नियर ट्रेवल्स भाग 1, पृ0 294,

माथे पर लगाने के लिए विभिन्न प्रकार की बिन्दियाँ तथा तिलक का प्रयोग प्रसाधन के रूप में स्त्रियाँ द्वारा किया जाता :

तिलक भाल कुंकुम ।[1]

तत्कालीन समाज में स्त्रियाँ हाथों तथा पैरो में मेंहदी [2] प्रसाधन के रूप में इस्तेमाल करती थी तथा मेंहदी के अलावा पैरो को ~~रचने कर मेंहदी~~ महावर लगाकर - सजाती थी।[3]

1- भिखारीदास ग्रंथावली; बंदन {बिंदी} । छं0 2, पृ07 छं0 32; भिखारी ग्रंथावली; 2, 40 छं0 12; 177 छं0 17; तोष-सुधानिधि, बंदन 61छं0 438 ;89 छं0 259; 123 छं0 362; देव-सुखसागर तरंग, बंदन 83 छं0 240; रोरी की बिंदी, [बंदन का तात्पर्य सिंदूर, ईंगुर गारोचना की बिंदी से है] तोष सुधानिधि: 103 छं0 303; भिखारी-ग्रंथावली; 2, 40 छं0 13; देव; राग रत्नाकर, चंदन तिलक, 146-45; केसरि को तिलक 18छं0 13; सुखसागर तरंग, मृगम्मदकेसरि बंदन लीक, 84छं0 242; तोषसुधानिधि बंदन त्रिपुड 89; छं0 259; मैन्कल्लो पृ0 51, के0एम0 अशरफ, लाइफ एण्ड कंडीशन आफ पोपुल ऑफ हिन्दुस्तान 181

2- मेंहदी - देव ग्रंथावली- सुखसागरतरंग पृ0 104 छं0 301; 79, छं0 228 ; 79/22 छं0 104 छं0 301; सुजानविनोद पृ0 43 छं0 49; घनआनंद , जगदीश गुप्त, रीतिकाव्य संग्रह पृ0 217 छं0 49; 28, 87; सोमनाथ ग्रंथावली; सुजानविलास, पृ0 642, छं0 95; वृंदविनोद, पृ0 502, छं0 42; माधवविनोद, पृ0 329 छं0 77; मतिराम; रसराज 114 छं0 272; मनूची, स्टोरिया द मोगोर भाग 2, पृ0 340; जनरल ऑफ वेंकटेस्वरा ओरियंटल इन्स्टीट्यूट भाग 8, 1946 पृ0 28; मुहम्मदयासीन ए सोशल हिस्ट्री आफ इस्लामिक इंडिया, पृ0 65,

महावर[1] [जावक] लगाकर भी सजाती थीं ।

"महावर"
1- सोमनाथ ग्रंथावली; रसपीयूषनिधि, पृ0 208 छं0 203; माधवविनोद, 379 छं0 107; शशिनाथ विनोद [प्रथमोल्लास] पृ0 505 छं0 34; मतिराम रत्नावली, 87 छं0 151; 63 छं0 103; रसराज, 267 छं0 290; घनानंद ग्रंथावली : [सुजानहित] पृ0 14 छं0 14; घनानंद ग्रंथावली पृ0 209; भिखारीदास ग्रंथावली; रस सारांश, खण्ड 1, 29 छं0 203; पृ0 53; पृ0 123 छं0 157; देव ग्रंथावली; शब्दरसायन, पृ0 22; सुजानविनोद, 20 छं06; पृ0 43 छं0 49; पृ0 59 छं0 51; सुखसागर तरंग, 140 छं0 301;
"जावक"- मतिराम - रसराज पृ0 40 छं0 27; पृ0 67 छं0 114; पृ0 90 छं0 189; 267 छं0 290; रत्नावली, 92 छं0 160; 87छं0 151; ललितललाम, 331 छं0 188; छं0 56; कुमार मणि: रसिक-रसाल, पृ0 93 छं0 106; तोष सुधानिधि, पृ0102 छं0 300; भिखारीदास ग्रंथावली: रससारांश, 1, 19 छं0 122; 23 छं0 149; शृंगार निर्णय, पृ0 150; काव्यनिर्णय, 130छं0142; देव ग्रंथावली; सुखसागर तरंग, पृ0 79 छं0 194; भाव विलास, पृ0 123 छं04; चतुर्थ भाव विलास, 110 छं0 5; अष्टयाम: 18 छं0 10; आलम-आलमकेलि, पृ0 37 छं0 86; पृ0 99, छं0 287; मनूची; भाग 2 स्टोरिया द मोगोर, पृ0 340 [महावर या जावक को आलता कहा]

स्त्रियाँ अपने बालों में सुगंधित चीजे तैल आदि लगाती थीं तथा उन्हे विभिन्न प्रकार से यथा - वेणी ,जूड़ा खुले बाल आदि बनाकर संवारती थीं :

गुहि बार सुगंधि सबै चपि कै, ...।[1]

स्त्रियों के केश काले चीकने लम्बे होते थे ।[2]

1- देव -सुजान विनोद प० 35 छं० 22; तिलोछति, सुकेस(तिललो केश) पृ043 छं० 49; अष्टयाम; चोवा सो चुपरि केस ।6छं० 6; सुखसागर तरंग, गुलाब फुलेल, चोवा(बालों के लिए) पृ0 86छं0 248;
'वेणी' - भिखारीदास ग्रंथावली: । टोली बेनी, पृ0 131 छं0194; बेनी 147छं0 262; बेनी पृ0 16 छं0 92; तोष-सुधानिधि :बेनी 31 छं093; 98छं0 386 ; 102 छं0 300; आलम-आलमकेलि, पृ0 7 छं0 16; पृ010 छं0 22; देव सुजानविनोद चोटी पृ0 78 छं0 24; सुखसागरतरंग, बेनी 79 छं0 230; 83, छं0 441; कबरी(अर्थबेनी) 84 छं0 43; बेनी 99छं0 287; 'जूड़ा' भिखारीदास ग्रंथावली:। जूरा, पृ0 29 छं0 196 ; तोष सुधानिधि, जटाजूट जूरो, पृ0 89 छं0 259; 'खुले या छूटे हुए बाल' आलम-आलमकेलि, कुंतल (बाल) चारू छूटे 123 छं0 300; कुंतल छोरे पृ0 124 छं0 305; तोष सुधानिधि छूटे केस 103, छं0 303; देवभाव विलास:छूटति बारनि पृ0 43छं0 69; मनूची; स्टोरिया द मोगोर भाग3, पृ0 40; मनूची स्टोरिया द मोगोर, भाग2, पृ0 341; के0एम0अशरफ लाइफ एण्ड कंडीशन आफ पीपुल ऑफ हिन्दुस्तान पृ0 181 मनूची स्टोरिया द मोगोर भाग3, पृ0 40, रेखा मिश्रा द पोजीशन आफ वीमेन इन मुगल ऐज पृ0 124"

2- आलम-आलमकेलि कारे-कारे केस पृ0 24 छं0 55; देव रागरत्नाकर चीकने केस पृ0 3 छं0 10; देव; शब्दरसायन, बड़े बड़े बार पृ0 96 ; तोष सुधानिधि, 93छं0 273; मैण्डल्सो पृ0 50; मनूची; स्टोरिया द मोगोर भाग3, पृ040

नारियों को सबसे प्रिय वस्तु इत्र[1] की विभिन्न प्रकार से सुगंधित द्रव्यों के प्रयोग करने के कारण यह कहा जा सकता है कि खुशबू या महक से स्त्रियों को विशेष लगाव था ।

स्त्रियों के मनोरंजन के साधन -

चूँकि अवलोकित काल में पर्दा प्रथा बहुत कठोरता से निभायी जाती थी परिणामतः स्त्रियाँ घर के अंदर खेले जाने वाले खेल ही ज्यादा खेलती थीं यथा चौपड़, संगीत, नृत्य, हिंडोला आदि ।[2] इन सबके अलावा

1- 'इत्र' - आछो अतर लगायो तैसो ।
-सुजान विनोद , 14, छं0 18; 52छं0 27;
अष्टयाम 16 छं0 6; पृ0 17 छं0 8; पृ0 18 छं0 10; सुधासागरतरंग, 22 छं0 67; सोमनाथ ग्रंथावली; ब्रजेंद्रविनोद , पृ0 670 छं0 30; माधवविनोद, 328 छं0 68; रसपीयूषनिधि, पृ0 104 छं0 75; मआसीर-ए-आलमगीरी, अनु0 सरकार पृ0 100; सियार-उल-औलिया पृ0 10; मनूची; स्टोरिया द मोगोर भाग1, प0 163-164 आईन; ब्लाखमन, 78-93 पी. एन. ओझा ग्लिम्पसेज आफ, पृ0 16

2- संग प्यारे के चौपड़ खेलो, हतो , सकुचो न कहूँ सखियोंन सो-
-कुमारमणि रसिक -रसाल पृ0 77छं0 48,
पृ0 23 छं0 30, सोमनाथ ग्रंथावली ब्रजेंदविनोद, 535 छं0 7रामचरित रत्नाकर पृ0 80 छं0 5, सुजानविलास, 716 छं0 31, श्रीमती मीरहसन अली; ऑब्जर वेशन्स ऑन द मुसलमान्स पृ0 250, सरकार स्टडीज इन मुगल इंडिया, पृ0 82, अंसारी पृ0 177, संगीत, नृत्य-
सांगीतक नाचत त्रिया गावत गीत रसाल -
बोधा विरह वारीश 99 21;
102, 96छं0 116 ; 96 छं0 117; मतिराम : रसराज 267 छं0 285; रत्नावली, पृ0 55छं0 87; रसराज, 267 छं0 285, बोधाविरह वारीश, पृ085 छं0 2; 104 छं0 43; सोमनाथ ग्रंथावली; माधव विनोद, पृ0 351 छं0 1; अस्समीरनाम-मआसीर-ए-आलमगीरी, (उर्दू) अनु0 मु. फिदा अली पृ0 806; आईन 2, पृ0 211 , भाग 3, पृ0 378; मनूची; स्टोरिया द मोगोर भाग 2, पृ0 9 देवमाँट 3 चैप्टर , XXX।। पृ055 हिंडोला
"हिंडोला" सु गावै हिडोरा सबै देत टेरे ।
-बोधा. वि. वि. पृ0 202 छं0 32, 120छं0 11;

बोधा० वि० वा० पृ० 202 छं० 32, 120 छं० 21, 207 छं० 60
देव-सुखसागर तरंग पृ० 55 छं० 162, तोष ब्रजभाषा साहित्य का
ऋतु सौन्दर्य पृ० 119, पृ० 120 ।

उच्चवर्गीय उत्सव आदि में भाग लेती थी । एक मेला मीना बाजार के नाम से प्रसिद्ध था स्त्रियाँ सिर्फ कुलीन भाग ले सकती थी ।[1]

शिक्षा : शिक्षा का पूर्व प्रारूप लगभग- लगभग अवलोकित काल में प्रचलित रहा मुगल काल में यद्यपि स्त्री शिक्षा पर ध्यान दिया जाता था किन्तु शिक्षा केवल राजकुमारियों तथा उच्च स्तर की महिलाओं तक ही सीमित रहा । समाज में शिक्षित महिलाओं को उच्च स्थान प्रदान किया जाता रहा तथा कुछ शासक के सलाहकार तथा मंत्रिपरिषद जैसे उच्चस्थ स्थानों पर भी अपनी योग्यता के आधार पर विद्यमान रहीं।ऐसी स्त्रियों मे रानी दुर्गावती[2]

1- बैठती दुकान लैके रानी रजवारन की

– कृष्ण ग्रंथावली पृ0 89

मीना बाजार लगता था जिसमें उच्चवर्गीय स्त्रियां सामती आदि की स्त्रियाँ दुकान लगाती थी और सामंत राजा लोग इनसे खरीददारी करने जाते थे । मेले में सिर्फ यही लोग जा सकते थे निम्न वर्ग के लोग इस बाजार में शामिल नही हो सकते थे ।

2- इलियट एण्ड डाउसन भाग 5, पृ0 169, आइन-ए- अकबरी, भाग2, पृ0 324-25

3- बेनी प्रसाद, हिस्ट्री ऑफ जहाँगीर पृ0पृ0 182-185

जहाँन आरा[1] अमीर खाँ पत्नी साहिबजी[2] तथा ताराबाई [3] आदि का भारतीय इतिहास में विशेष योगदान रहा है। ये समस्त स्त्रियाँ शिक्षित थीं ।

साहित्य के क्षेत्र में भी प्रारम्भ सेही स्त्रियों ने अपना अलग स्थान बनाया ऐसी शिक्षित स्त्रियों मे गुलबदन बेगम[4] सलीमा सुल्ताना[5] रूपमती[6] जेबुन्निसा[7] तथा प्रमुख थीं ।

1– ओरियंटल कालेज मैगजीन, लाहौर, भाग {13} पृ0 4 अगस्त 1937

2– जे0 एन0 सरकार: स्टडीज इन मुगल इंडिया, पृ0 111–18

3– खाफी खा, मुन्तखब - उल– लुबाब, इलियट एण्ड डाउसन, भाग 7, पृ0 469–– 516; जे0 एन0 सरकार: हिस्ट्री ऑफ औरंगजेब भाग 5, पृ0 119–201

4– गुलबदन बेगम: हुमायूँनामा में विस्तृत विवरण ।

5– अब्दुल कादिर बदायूँनी मुन्तखब–उत– तवारीख, भाग2, अनुवादक, डब्ल्यू एच0 लोई, पृ0 389 ।

6– • रूपमती अकबर के समकालीन मालवा के शासक बाज बहादुर

7– जेबुन्निसा औरंगजेब की पुत्री थी । जे0 एन0 सरकार, स्टडीज इन मुगल इण्डिया, पृ0 70–90

स्त्रियों केलिए कोई पृथक से विद्यालय नहीं था जिसके माध्यम से स्त्रियाँ शिक्षा ग्रहण कर सकें।[1] अतः सामान्यतया स्त्रियाँ प्रारम्भ में अपने माता-पिता से शिक्षा ग्रहण करती थी। यद्यपि बाल्यावस्था में लड़कियाँ लड़कों के साथ कुरान (यदि वे मुसलमान हैं तो) के अध्ययन के लिए विद्यालयों में जाती थीं तथा कुरान का एक दो पाठ कंठस्थ करती थीं।[2]

किन्तु धीरे-धीरे पर्दा प्रथा बढ़ता गया परिणामतः आलोच्यकाल में लोग विद्यालयों में अपनी लड़कियाँ भेजना पसन्द नहीं करते थे। अतः निश्चय ही शिक्षा का महत्व कम होना था। फिर भी संभवतः उच्चवर्गीय स्त्रियाँ घर पर थोड़ी बहुत शिक्षा प्राप्त कर लेती थीं और कभी पत्राचार भी अपने नाते-रिश्तेदारों से कर लेती थी। कवि ने पत्र पढ़ते हुए एक बालिका का चित्रण किया है :

चिट्ठी माधव विप्र की छिप्र बाँचिकै बाल।
प्रगट सुनायौ सखिन कौं द्विज के हिय कोहाल।।[3]

1- जे0 सी0 पावेल प्राइस, ए हिस्ट्री ऑफ इण्डिया, प्लेट 41, पृ0 281

2- कानून-ए- इस्लाम, अनुवादक कुक्स, पृ0 51

3- बोधाः विरह वागीश, पृ0129 छं0 87; पृ0 127 छं0 61; पृ0 141 छं0 31; भूषण ग्रंथावलीः शिवाबावनी, पृ0 58छं0 10; मतिराम ग्रंथावलीः पृ0 233; विस्तृत विवरण केलिए ए0 एस0 अल्तेकर द पोजीशन ऑफ वोमेन, इन हिन्दू सिविलाइजेशन चैप्टर 3 में।

इस प्रकार भले ही पर्दा प्रथा के कारण शिक्षा ग्रहण करने वाली स्त्रियों की संख्या घट गयी हो किन्तु शिक्षा की निरन्तरता यथावत बनी रही ।

स्त्रियों की आर्थिक स्थिति :

अवलोकित काल में सामान्य रूप से स्त्रियों की आर्थिक अच्छी नहीं मानी जा सकती है क्योंकि विलासिता प्रधान युग होने के कारण लोग स्त्री पर कम ध्यान देते थे तथा वैभव विलास में अधिक धन व्यय करते थे । इस प्रकार स्त्री को प्राप्त गहने ही उसकी अपनी व्यक्तिगत संपत्ति होती थी :

कंचन के परकंजनि पै सुनिसंक है आसव संगपियो मैं ।
दौलति जाको जवाहिर के गहने सजि अंग प्रकास कियो मैं ।।[1]

1- सोमनाथ ग्रंथावली : शृंगार विलास, पृ0 299, छं0 20; पृ0 300 छं0 26; ए0 एस0 अल्तेकर: द पोजीशन ऑफ वीमेन इन हिन्दू सिविलाइजेशन पृ0 259, [इस प्रकार के धन को स्त्री धन कहा गया] ।

चतुर्थ अध्याय

खण्ड (क) वस्त्र

खण्ड (ख) आभूषण

(खंड क) वस्त्र

जिस प्रकार सामूहिक जीवन के चित्रण में मानवीय संबंधों के वैयक्तिक और सामाजिक रूपों के सामंजस्य और संघर्ष का विवेचन किया जाता है, उसी प्रकार किसी युग की संस्कृति के निरूपण के लिए तत्कालीन उपयोगितावादी सौन्दर्यवादी और कलात्मक व्यवहारों का अध्ययन होता है । ये काव्य कला परम्परा, प्रभाव और युग की रूचि को प्रतिबिम्बित करते हैं । ऐतिहासिक परिस्थितयां परम्परा के स्वरूप को बहुत कुछ बदलती हैं ।[1]

कालक्रम से ही भारतवासियों को अपने वेश-भूषा की ओर विशेष आकर्षण है ।[2] चूंकि भारत सदियों से विभिन्न वर्गों, धर्मों एवं संस्कृतियों का देश रहाहै । इसलिए उसके पहनावे में भी अन्तर पाया जाता है क्योंकि हर एक वर्ग या समुदाय के लोगों का वस्त्र उनकी आर्थिक स्थिति के अनुसार होता है ।[3]

भारत में वस्त्रों की विभिन्नता की दृष्टि से (सत्रहवीं से उन्नीसवीं शती तक) विशेष महत्व रखता है क्योंकि इस काल तक आते-आते भारतीयों ने सारे वाह्य प्रभावों को आत्मसात करके या तो अपना बना लिया था या फिर विदेशी समझकर अग्राह्य मान लिया था ।[4]

1- डॉ0 वेंकट रमण राव पृ0 242

2- डॉ0 इन्द्र बहादुर सिंह, रीतिकालीन साहित्यः परिवेश और मूल्य पृ052
श्रीमती जमीला ब्रजभूषण, कास्ट्यूम्स एण्ड टेक्सटाइल्स आफ इंडिया, पृ0 85

3- वही,

4- सत्यनरायः रीतिकालीन हिन्दी-साहित्य में उल्लिखित वस्त्राभरणों का अध्ययन, पृ0 77

वस्त्र उपयोगिता और प्रदर्शन दोनों ही उद्देश्यों कोलेकर प्रचलित होते हैं ।[1] चूँकि मध्ययुगीन समाज विलासिता तथा सम्पन्नता का युग था फलतः अवलोकित काल में अधिकांशतः वस्त्रों का ग्रहण उपयोगिता की अपेक्षा वैभव-प्रदर्शन तथा ऐन्द्रिक उद्दीपन की दृष्टि से अधिक किया गया है ।[2]

जैसे-जैसे देश में सामाजिक परिवर्तन होता जा रहा था वैसे-वैसे लोगों के विचारों, रहन-सहन तथा परिधानों में अन्तर आता जा रहा था ।[3] अब लोगों का ध्यान सादगी से हटकर तड़क-भड़क सुनहले तारों से बने रेशम के कपड़ों की ओर आकर्षित हुआ । आर्थिक संपन्नता के अनुरूप लोगों ने इस प्रकार के आकर्षक वस्त्रों का प्रयोग शुरू किया ।[4] आलोच्य काल में प्रचलित वेश-भूषा ही धारण की जाती थी ।[5]

आलोच्यकाल में सामान्य तौर पर निम्न प्रकार के वस्त्र प्रचलित थे :

साड़ी — शरीर के मध्यभाग में लपेटकर पहना जाने वाला साड़ी नामक परिधान स्त्रियों को विशेष प्रिय था ।[6]

1- वेंकट रमण राव, पृ० 243

2- डॉ० इन्द्र बहादुर सिंह: रीतिकालीन साहित्यः परिवेश और मूल्य, पृ० 53

3- श्रीमती चमेली कुलभूषण: कास्ट्यूम्स एण्ड टेक्सटाइल्स, पृ० 73

4- वही,

5- वही, पृ० 37-40

6- ट्रेवर्नियर भाग 2, पृ० 125, एस०पी० सेंगम, लाइफ आफदि मुगल प्रिन्सेज, पृ० 16, मनूची, स्टोरिया द मोगोर, भाग 2, पृ० 341, बर्नियर, पृ० 27

साड़ी को कवियों ने पट [1], दुकूल [2],

1- "पट" कंचन मंडित रूप भरो पहिरे पट लाल प्रकास बिलासनि ।

- देव ग्रंथावली: रसविलास विलास, पृ0 205 छं0 41; पृ06छं0 2 ; भाव विलास: पृ0 46 छं0 21; देवसुधा, पृ0 14 छं0 28; देव राग-रत्नाकर, 8 छं0 29; पृ0 8 छं0 31; पृ0 20 छं0 92; पृ0 20 छं0 93; अष्टयाम, पृ0 8 छं09; मतिराम ग्रंथावली: मतिराम सतसई, पृ0 511, 592, ललितललाम, 2/9, तोष-सुधानिधि, पृ0 102 छं0 300; आलम: आलमकेलि, पृ0 38, छं0 90; भिखारीदास ग्रंथावली: 1, पृ035 छं0 240; भिखारीदास ग्रंथावली; खण्ड 2, पृ0 125 छं0 14; पृ0131 छं0 14; पृ0 131 छं0 48; रससारांश, पृ0 35 छं0 240,

2- "दुकूल" अरू फिरत नारि अंगनि । रँगित दुकूल, उर भरे फूल

- सोमनाथ ग्रंथावली: सुजान विलास, पृ0 746 छं0 20; श्रृंगार विलास, पृ0 295 छं0 5; पृ0 304 छं0 42; पृ0 309 छं0 61; पृ0 910 छं0 ॥; पृ0 311 छं0 69; सखीभूषण मिश्र, पृ0 63; छं0 17; पृ0 18; पृ0 158 छं0 10; पृ0 111 छं0 23; पृ0 127 छं0 18; पृ0 63 छं0 18; पृ0 63 छं017; पृ0 99 छं0 56 ; पृ0 96 छं0 47; पृ0 112 छं0 2, पृ0 104 छं0 75; पृ0 129 छं0 29; पृ0 128 छं0 25; पृ0 103 छं0 72; पृ0 78छं076; मतिराम: रसराज, पृ0 247 छं0 203 ; 64/ 103; मतिराम रत्नावली, पृ0 39 छं0 55; देवग्रंथावली: भाव विलास, पृ0 69 छं0118; राग -रत्नाव पृ04 छं012; पृ0 1 6 छं0 65 ; पृ0 16 छं0 66; तोष-सुधानिधि: पृ0 93 छं0 273 ,

वसन[1], अंबर[2] , फ़ंचतोरिया [3] चोर[4] लहरिया[5] आदि अनेक नामों से अभिहित किया है ।

"वसन"
1- घर-घर डोलति सुधर नर मोहिबे को ऊधरी फिरति सनमुख सुख दैनिया ।
अरून बसन वय तरून चुवत रस झुमटा कुटिल जुवतिन जैनिया ।।
– देव ग्रंथावली: पृ0 186;
राग -रत्नाकर पृ05 छं0 19; पृ0 6छं0 21,' पृ0 6 छं022,' पृ0 14 छं0 46; पृ0 12, छं0 50; पृ0 20 छं0 95; पृ0 16 छं0 68,' पृ0 19 छं0 77; पृ0 20, छं0 91,' सुजान विनोद पृ0 64 छं0 10; मतिराम, मतिराम सतसई, पृ0 258 ,' भिखारीदास ग्रंथावली; पृ090 छं0 9 ।

2- "अंबर" गनिका हरषित चित्त सजै अंबर बहुरंगनि ।
जगमग जगमग होत कनक मनि भूषण अंगनि ।
– सोमनाथ ग्रंथावली: पृ0 629 छं0 68;
आलम: आलमेलि, पृ0 39 छं0 91; देव: राग रत्नाकर पृ0 12 छं0 57

"पंचतोरिया"
3- सेत जरतारी की उज्यारी कंचुकी कोकसि,
अनियारी दीठि प्यारी उठि पैन्हो पंचतोरिया।
–देव ग्रंथावली: सुखसागरतरंग छं0 120; 243छं0 122,' 243 , 726; किशोरी लाल , रीति कवियों को मौलिक देन पृ0 331; 67/ 120; देव सुजानविनोद, पृ0 68 छं0 25; सोमनाथ ग्रंथावली; श्रृंगारविलास , पृ 603 छं0 80,

4- "चोर" सौने सो सरीर तामे आसमानी रंग चोर
औरे ओप कीनो रवि रतनतरौना है
– सोमनाथ ग्रंथावली: रसपीयूषनिधि, पृ0 223 छं0 334; पृ0 96 छं0 46; श्रृंगारविलास, पृ0 603 छं0 80; तोष-सुधानिधि, पृ0 16 छं0 53; पृ0 32छं0 95 ; पृ0 141 छं0 418', देव ग्रंथावली सुजानविनोद

पृ0 34 छं0 18, पृ0 52 छं0 27, अष्टयाम ,पृ0 16छं0 5,सुखसागर तरंग, पृ0 22 छ067 भिखारीदास ग्रंथावली:खण्ड 1, पृ0 21छं0 135

5- "लहरिया-

लहर-लहर सौंधो सीतल समीर डोलै घहर घहर घनघोरि कैधहरिया

× × ×

फहर फहर होत प्रीतम को पट लहर लहर होत प्यारी कौलहरिया

- देव ग्रंथावली: रसविलास पृ0 220 छं0 12, सुजानविनोद, पृ0 33 छं0 8

साड़ी भारत में प्रचलित वस्त्रों सर्वाधिक प्राचीन वस्त्र है । [1]

तत्कालीन समय में विभिन्न रंगों की साड़िया प्रचलित थी । [2]

1- रामायण 5/19/3, कुमार स्वामी , मुगल पेंटिंग जिल्द6 चि0 प0 3-4 ।

2- सारी सुही "मतिराम "लैसै,
मुख संग किनारी की यौ छवि छाजै
पूरन चन्द पियूष मयूष,
मनौ पट पेख की रेख बिराजै ।

— मतिराम : मतिराम रत्नावली ,पृ0 96 छं0 108; यहाँ पर सुही रंग की साड़ी से तात्पर्य कासनी रंग की साड़ी सेहै। सारी छोम फेन की सी, पृ050 छं0 76; साड़ी केसर के रंग की, पृ0 54 छं084; रसराज,सेत सारी पृ0 55 छं0 77 ;240, 176;स्याम रंग सारी,पृ0 61 छं0 97 ; छीरफेन सी सारी, पृ0 63 छं0 101; सुही सारी , पृ0 113 छं0 271 ;ललितललाम,केसिर रंगसारी,पृ0 346 छं0 280; मतिराम सतसई,सित रंग पट,छं0 511, 512; सेत वसन , पृ0 298; नील दुकूल ,पृ0 289 ; आलमः आलमकेलिः कुसुंमी सारी, पृ0 35छं0 81 ;पृ0 26 छं0 61; सारी सेत, पृ0 31 छं0 71; नीली रंग की साड़ी पृ0 39 छं0 91; देव ग्रंथावली : सुखसागर तरंग, केसरि रंग साड़ी, पृ0 61 छं0 81 ; पृ027;देव प्रेमचंद्रिका, केसर रंग छिरकौ, सेत सारी, पृ0 35 छं0 23; राग-रत्नाकर ,पीत रंग दुकूल,पृ0 4 छं0 12 ; 16/65; पृ0 8 छं029;16/66; पृ08 छं0 31; स्याम चीर, पृ0 9 छं0 33;हरे बसन, पृ0 11 छं0 46 ; 20/95;सेत बसन, 16 छं0 68; अंबर लाल, पृ0 12, छं0 57;पृ0 20 छं0 92 ;सुजान विनोद केसरि को रंग सारी प0 63 छं0 6;बसन बसंती पृ0 64 छं0 10; अष्टयामः पट सेत, पृ0 8 छं0 9; पीरी चीर पृ0 16 छं0 5; पृ0 16छं06

क्रमशः

तोष सुधानिधि, सारी सुपेत, पृ0 60 छं0 174; सारी कारी पृ060 छं0 175; सुरंग सारी, पृ0 89 छं0 269; भिखारीदास ग्रंथावली : खण्ड 1, लाल सारी पृ0 15 छं0 83; छं0 पटस्याम पृ0 20 छं0 134; 35/240; नीलचीर पृ0 21 छं0 135; सेतसारी पृ0 150 छं0 70; सारी सुही, पृ0 145 छं0 253; भिखारीदास ग्रंथावली; केसरिया पट, पृ0 132 छं0 48; सारी सुरंग, श्रृंगार निर्णय, लाल सारी 54/30; रस सारांश, 15/83; पृ0 143 छं0 17; सोमनाथ ग्रंथावली; कुसुंभी सारी पृ0 61 छं0 11; श्रृंगार विलास, कुसुंभी सारी पृ0 276 छं0 6; थेवनॉट चैप्टर XX, पृ0 37; श्रीमती जमीला बृजभूषण, कास्ट्यूम्स एण्ड टेक्सटाइल्स ऑफ इंडिया, पृ0 62; मनूची स्टोरिया द मोगोर, भाग2, पृ0341

किनारीदार साड़ी भी तत्कालीन समाज में फैशन में थी ।[1] समृद्ध परिवारों की स्त्रियां बहुमूल्य सोने चांदी के तारों से बनी कढ़ाई वाली साड़ी पहनती थी जिसके कोरों पर विभिन्न प्रकार के मोती आदि लगे रहते थे :

1- कुंदन के अंग-मांग मोतिन संवारी सारी
सोहत किनारीवारी केसरि के रंग की ।
— मतिराम, ललितललाम पृ0 346 छं0 280;

मतिराम रत्नावली: पृ0 96 छं0 168 ; पृ0 54 छं0 84; छं081; सोमनाथ ग्रंथावली: रसपीयूषनिधि पृ0 175 छं0 15; सोम-सुधानिधि, पृ0 21 छं 0 67; देव ग्रंथावली: सुजानविनोद, पृ0 47 छं0 5; रसविलास, पृ0 197 छं0 33; पृ0 197 छं0 34; सुखसागर तरंग, पृ0 71 छं0 146; पृ0 89 छं0 249; शब्द रसायन, पृ0 7 छं0 70; पृ0 96 ; भाव-विलास पृ0 123; भिखारीदास ग्रंथावली: श्रृंगारनिर्णय, पृ0 149, छं0 273 ; देव- सुखसागरतरंग, [illegible] पृ0 99 छं0 286; प्रेम - चन्द्रिका , पृ0 35 छं0 23; आलम-आलमकेलि, 30पृ0 70; इस्लामिक कल्चर क्वार्टरली, जनवरी 1980, पृ0 113; चमोला कुछ्रूम कास्ट्यूम्स एण्ड टेक्सटाइल्स ऑफ इंडिया 113,

बादले को सारी दरदावन किनारी जग

मग जरतारी झीनी झालरि के साज पर ।

मोती गुहे कोरन चमक चहुँ ओरन त्यों

तोरन तरैयन की तानी कुजराज पर ।।

इस प्रकार के मँहगे दामों की सजी हुई (कढाई इत्यादि वाले) साड़ी का प्रयोग उच्चवर्गीय और सम्पन्न परिवार की स्त्रियाँ ही करती रही होंगी इनके विपरीत निम्न वर्ग की स्त्रियाँ तो बस नाम मात्र के लिए साड़ी पहनती थी या साड़ी के स्थान पर एक मोटी चादर ओढ़ लेती थी ।[2]

1- रस विलास पृ0 97 छं0 34, पृ0 197 छं0 33; शब्द रसायन पृ0 96 पृ0 71; भावविलास पृ0 123,34 (बादला रेशम तथा चाँदी के तारो से बनाया जाता था । ~~भावविलास 127 छं0 34;~~ 123; (सोने का चिपटा तार होता था, सल्लनराय, रीतिकालीन हिन्दी साहित्य में उल्लिखित वस्त्राभरणों का अध्ययन, पृ0 108) सुखसागर तरंग, पृ0 89 छं0 249 ; पृ0 71 छं0 146; भिखारीदास ग्रंथावली: श्रृंगार निर्णय, पृ0 149 छं0 273; मनूची: स्टोरिया द मोगोर, भाग पृ0341; बर्नियर, पृ0 272; इस्लामिक कल्चर, क्वाटरली, जनवरी, 1980, पृ0 113

2- देव: देवसुधा पृ0 90 छं0 34; देव ग्रंथावली: सुखसागर तरंग, पृ0105 छं0 303; इस छंदमें देवनेसास को साड़ी का उल्लेख किया है और सालू का तात्पर्य एक विशेष प्रकार की मोटी चादर है, वही

निम्नवर्गीय स्त्रियाँ एक प्रकार की महीन (झीनी) साड़ी भी पहनती थी उसका कपड़ा इतना हल्का होता था कि वह उनके शरीर के भार को संभालने का सामर्थ्य नहीं रख पाता था तात्पर्य यह है कि उठने-बैठने मात्र से ही साड़ी के तंतु खिंच जाते थे ।[1]

साड़ी विभिन्न प्रकार के वस्त्रों निर्मित होती थी, कवियों ने कुछ वस्त्रों का उल्लेख किया है यथाः जरतारी की साड़ी[2], जरतारी वह कपड़ा है, जिस पर सुनहले तार टके हो या जरी से बेल-बूटे बनाए गये हों, विशेष तौर पर सलमें सितारे से युक्त वस्त्र को जरतारी कहा गया । सालू की साड़ी [3] तथा असावरी की साड़ी आदि [4]।

साड़ी कमर में लपेटकर इस प्रकार पहनी जाती थी कि उसका एक सिरा पर होता था जिससे स्त्रियों को आवश्यकता पड़ने पर घूंघटनिकालने मेंआसा

1- भिखारीदास ग्रंथावलीः श्रृंगार निर्णय, पृ0 14 छं0253, भिखारीदास ग्रंथावली खण्ड 2, पृ0 106 छं0 8 काव्यनिर्णय पृ0 87 छं0 9 भिखारीदास ग्रंथावली खण्ड1, पृ0 100 छं0 50, आलम-आलमकेलि पृ0 38 छं0 90 रस विलास, पृ0 197 छं0 34 । ट्रेमियर भाग 2, पृ0 125

2- जरतारी सारी मैं ....
सोमनाथ ग्रंथावली माधव विनोद पृ0 328 छं0 68, 389 छं0 47, 389, छं0 48, देव ग्रंथावली राग रत्नाकर पृ0 11 छं0 47, मतिराम ग्रंथावली, मतिराम सतसई, पृ0 408 छं0 480, रसराज 246 छं0 201 ललितललाम पृ0 356 छं0 344, ललन राय रीतिकालीन हिन्दी साहित्य में उल्लिखित वस्त्राभरणों का अध्ययनपृ0 107

3- एड्डिन ऊपर घूमत घांघरो सैतिबै सोहति साल की सारी,
—देव ग्रंथावलीः सुजानागरतरंग पृ0 105 छं0 300

4- सारी असावरी की झलकै झलकै छबि घूम घुमारे ।
— देव ग्रंथावलीः रस विलास, पृ0 202 छं0 223
भिखारीदास ग्रंथावली पृ0 106 छं0 8 ।

होती थी :

> जरतारी सारी ढके नैन लसति मतिराम ।[1]
>
> मनो कनक पंजर परे खंजरीट अभिराम ।

कभी-कभी सौन्दर्य की दृष्टि से साड़ी को बाईं ओर से घुमाकर कंधे पर डाल लिया जाता था ।[2]

<u>कंचुकी</u> –

प्राचीन भारतीय वस्त्रों में परिधेय वस्त्र तीन प्रकार के माने गये हैं निबन्धीय (बाँधकर पहने जाने वाला) यथा साड़ी शलवार आदि, प्रेक्ष्य (कंचुकी चोली) और उत्तरीय जिनमें दुपट्टा, चादर ओढ़नी आदि आते हैं ।[3]

कंचुकी गणना प्रेक्ष्य वस्त्र के अन्तर्गत की गयी है । कंचुकी का प्रारम्भ कब से हुआ इस संबंध में मतभेद है । कुछ लोगों का कहना है कि कंचुकी का सामान्य चलन गुप्त काल से प्रारम्भ हुआ [4] तो कुछ इसका आम चलन राजपूतों के काल से मानते हैं । ग्यारहवी बारहवी शती के पालवंशीय चित्रों, तथा उस काल के अपभ्रंश शैली के चित्रों में भी कंचुक जैसे वस्त्र ही अधिक अंकित हुए हैं ।[5]

1– मतिराम सतसई पृ० 408, छं० 480, आलम आलमकेलि, पृ० 38छं० 90, भिखारीदास ग्रंथावली खण्ड1, पृ० 100 छं० 50, 145 छं० 253, भिखारीग्रंथावली खण्ड2, पृ० 106छं० 8

2– गोस्, भोग, 1, पृ० 143

3– किशोरी लाल, रीतिकवियों की मौलिक देन, पृ० 327

4– कालिदास शाकुन्तलम् पृ० 1 छं० 19, दि पोजीशन आँफ वोमेन इन हिन्दू सिविलाइजेशन पृ० 353, ए. एस. अलतेकर ।

5– ए. एस. अलतेकर, दि पोजीशन आँफ वोमेन इन हिन्दू सिविलाइजेशन पृ० 353 .

वक्षोदेश को ढकने केलिए कटि से ऊपर के वस्त्रो के वस्त्रों में कंचुकी का नाम विशेष रूप से कवियों ने लिया है :

लसैबाल वक्षोज यों हरित कंचुकी संग ।[1]

1– 'कंचुकी'– भिखारीदास ग्रंथावली: काव्यनिर्णय, पृ0 86 छं0 6; भिखारीदास ग्रंथावली; खण्ड 1, पृ0 145 छं0 252; पृ0 64 छं0 451 ; पृ0 124 छं0 163; पृ0 144 छं0 252; भिखारीदास ग्रंथावली; खण्ड 2, पृ0 178 छं0 22; पृ0 215 छं0 91; पृ0 248 छं0 21; आलम–आलमकेलि पृ0 124 छं0 205; पृ0 123 छं0298; पृ0 124 छं0 305; देव ग्रंथावली; राग-रत्नाकर, पृ0 11 छं0 47; प0 6 छं0 21; पृ03 छं0 10; पृ0 8 छं0 29; पृ0 9 छं0 33; पृ0 9 छं0 34; पृ0 12 छं0 47; पृ0 15छं060; पृ0 18 छं0 75; छं0 20, छं0 91; रसविलास, पृ0 236 छं0 22; पृ0 236छं0 ~~67~~, 23; सुखसागर तरंग, पृ0 84 छं0 224; पृ0 79, छं0194; पृ0 96 छं0 231; पृ0 77 छं0 223; पृ0 78 छं0 227; पृ0 79 छं0 230; पृ086 छं0 249; पृ0 96 छं0 278; पृ0 97 छं0 283; अष्टयाम, पृ0 18 छं0 10; सुजानविनोद, पृ0 55छं0 37; पृ0 68 छं0 25; सोमनाथ ग्रंथावली; ~~141/122~~ रसपीयूषनिधि, पृ0 134 छं0 20; पृ0 215 छं0 270; पृ0 103 छं0 72; पृ0 96 छं0 48; पृ0 97 छं0 52; शृंगारविलास, पृ0 304 छं0 43; पृ0603 छं0 80; पृ0 611 छं0 118; पृ0 642 छं0 96; माधव विनोद, पृ0 355, छं0 43; शशिनाथ विनोद, पृ0 505 छं0 33; मतिराम ग्रंथावली; पृ0229 छं0 128; पृ0 41, छं0 30; पृ0 70, छं0 122; प0 109 छं0 258; मतिराम सतसई, पृ0 73 145; छं0 84; तोष सुधानिधि, पृ0 51, छं093; पृ0 39 छं0 116; पृ0 94 छं0 274; पृ0 98 छं0 286; पृ0 103 छं0303; थेवनॉट, इंडियन ट्रेवेल्स, पृ0 53, आईन, भाग 3, पृ0 311, 332;

कंचुकी के अलावा अंगिया[1], चोली[2], कसनि-तनी[3] आदि वस्त्रों का उल्लेख मिलता है ।

1- अंगिया- अति अवदात महा मिहो कसो उरोज उतंग ।
केसरि रंग रंगो लसै अंगिया अंगनि संग ।
मतिराम ग्रंथावली: मतिरामसतसई पृ0416 छं0 584; मतिराम रत्नावली, पृ0 67 छं0111; रसराज, पृ0 125 छं0 224; पृ0 228 छं0 123; पृ0 229, छं0 127 ;129/128; कुमारमणि, रसिक रसाल, पृ0 77 छं0 50; सोमनाथ ग्रंथावली: माधव विनोद [चतुर्थ अंक] पृ0 389 छं0 47; भिखारीदास ग्रंथावली: खण्ड 1, पृ0 6 छं0 57; पृ0 143 छं0 245; पृ0 149 छं0 273; श्रृंगारनिर्णय, पृ0 149 छं0 273; पृ0 214 छं0 243; देव ग्रंथावली: रसविलास, पृ0 211 छं0 19; सुखसागर तरंग, पृ0 99 छं0 286; पृ0 104 छं0 301; सुजानविनोद पृ0 35 छं0 23; पृ0 64 छं0 10; पृ0 72 छं0 40; राग-रत्नाकर, पृ011 छं0 46; पृ0 12छं0 49; पृ0 16 छं0 74 ; पृ0 20 छं0 95; प्रेम चन्द्रिका, पृ0 35 छं0 23; तोष-सुधानिधि, पृ0 103 छं0 302 ; आलम- आलमकेलि पृ0 9 छं0 20; पृ0 26 छं0 51; पृ0 31 छं0 71; पृ0 35 छं0 81; पृ0 37 छं0 86; पृ0 125 छं0 306; स्टैवोरीनियस, भाग 1, पृ0 415; ग्रोस, भाग 1, पृ0पृ0 142 -43; आईन, भाग 3, पृ0 311, 12; बर्नियर, पृ0 272; मनूची: स्टोरिया द मोगोर, भाग 2, पृ0 341 ।

2- "चोली" रंगित चोली ते डोरो खरी चुनि चाय सो गाँठि उधेरि अयेटो।
देव ग्रंथावली: पृ0 92 छं0 268;
सुजानविनोद 65/ 22; भिखारीदास ग्रंथावली, खण्ड 1, पृ0 145 छं0 255 ; श्रीमती जमीला बृजभूषण कास्ट्यूम्स एण्ड टेक्सटाइल्स ऑफ इंडिया, पृ0 37, [चोली कमर तक का चुस्त वस्त्र बताया है]

क्रमशः

3– .... तनो खुलि जाति घनो तुबनो फिरि बांधति है कसि कै।
–देव ग्रंथावली: रसविलास पृ0 211 छं0 19;
सुखसागर तरंग, पृ0 84 छं0 224; पृ0 77 छं0 223 ;पृ0 78 छं0 224;
भिखारीदास ग्रंथावली: 1, कसनि, पृ0 16 छं0 92; पृ0 120, छं0144;
तनीन, पृ0 140, छं0 235 ; सोमनाथ ग्रंथावली; रसपीयूषनिधि पृ0
976 , 52; मतिराम ग्रंथावली, रसराज, पृ0229, छं0 127; कुमारमणि,
रसिक रसाल, पृ0 77छं0 50; भूषण ग्रंथावली: शिवराजभूषण, पृ0 56
छं0 26; तनी या कसनि संभवतः अंगिया या कंचुकी मे लगे बंधन को कहते
है जिससे उपर्युक्त वस्त्रो को आवश्यकतानुसार ढीला या कसा करते
होगें । हैवलौक एलिस, स्टडीज इन द साइकलोजी ऑफ सेक्स, भाग3,
पृ0 172

कंचुकी याचोली को शरीर विज्ञान की दृष्टि से अधिक महत्वपूर्ण बताया है ।[1]

साड़ी की भाँति उपर्युक्त वस्त्र भी विभिन्न प्रकार के रंगों तथा विभिन्न प्रकार के वस्त्रों से निर्मित होती थी ।[1]

1– हैवलॉक एलिस, स्टडीज इन द साइकालॉजी ऑफ सेक्स, भाग 3, पृ0 172

2– सोमनाथ ग्रंथावली: सु. वि. अरुन कंचुकी, पृ0 642 छं0 96; शृंगारविलास जरकसी कंचुकी पृ0 603 छं0 80; जरतारी कंचुकी पृ0 611 छं0 118; रसपीयूषनिधि, कंचुकी लाल पृ0 215 छं0 270; जरतारी कंचुकी, पृ0 134 छं0 20; देव ग्रंथावली; सुजान विनोद, पीरी जरतारी की कंचुकी पृ068 छं0 25; सुखसागर तरंग, लाल कंचुकी, पृ0 77 छं0 223; पृ0 84 छं0 224; राग रत्नाकर, सित कंचुकी, पृ0 3 छं0 10; नील कंचुकी, पृ06 छं0 21; सित कंचुकी, पृ0 9 छं0 33; कंचुकी लाल, पृ011 छं0 47; कंचुकी पीत, पृ0 15 छं0 60; पृ0 18 छं0 75; पृ0 20 छं0 91; कपूर की कंचुकी, पृ0 9 छं0 34; भिखारीदास ग्रंथावली: खण्ड 2, कंचुकी नीली, पृ0 248 छं0 21; कंचुकी बाफ्ते पृ0 215 छं0 91; तोष-सुधानिधि, कंचुकी लाल, पृ098 छं0 286, जरतारी की कंचुकी, पृ0 103 छं0 303; आलम-आलमकेलि, कंचुकी नील, पृ0 124 छं0 305; "तनी" देव ग्रंथावली: सुखसागर तरंग, जरतारी की तनीनि, पृ0 77 छं0 223; अँगिया, आलम आलमकेलि, सेत आँगी, पृ0 35 छं0 81; झीनी आँगी, पृ0 37 छं0 86; अँगिया सित झीनी, पृ0 125 छं0 306; कुसुम रंग की अँगिया, 103/307; की अँगी-- सुखसागरतरंग, अँगिया नीली, पृ0 104, छं0 301; 104/301 हरिकी आँगी पृ0 98 छं0 286; राग रत्नाकर, आँगी लाल, पृ0 11 छं0 46; आँगी सुरंगित, पृ0 16 छं0 74; पृ0 20 छं0 95 ।

कंचुकी अंगिया जैसे वस्त्र साड़ी के साथ पहने जाते थे ।

सेत जरतारी की उज्यारी कंचुकी की कसि अनियारी डोकि प्यारी पैन्हो ।

<u>चुनरी</u> - संभवतः चुन्नर डालकर पहने जाने के कारण ही से पंचतोरिया[1] चुनरी कहा गया :

पहिरो उजरी चुनरी चुनि मेरी ।[2]

1- देव ग्रंथावली : सुखसागरतरंग पृ0 67 छं0 120, रागरत्नाकर पृ0 11 छं0 47, "आँगी सुरंगित सारी पै पृ0 12 छं0 49, सोमनाथ ग्रंथावली माधव विनोद पृ0 349, छं0 47, बोधा विरह वागीश,

2- देव ग्रंथावली : देवसुधा पृ0 51 छं0 24 , चुनि चुनरी लाल सुजान- विनोद पृ0 35 छं0 22, चुनरी चुनि, पृ0 52 छं0 26 तोष सुधानिधि, पृ0 119, छं0 350, चुनि चुनरी पहिरे याक बाते की ।

कवियो ने चूनरी[1] नामक वस्त्र जिसे स्त्रियाँ धारण करती थीं का उल्लेख किया है ।

चूनरी विवाह के अवसर परविशेष रूप से धारण किया जाता रहा अतः इसे माँगलिक वस्त्र माना गया। कवि ने गौने की चूनरी का विशेष महत्व स्वीकार किया है ।गौने की चूनरी वैसिये है दुलही अबहो ते दिठाई बयारो[2] एक अँग्रेज यात्री जिसने दिल्ली तथा अन्य कई स्थानो की स्त्रियों के परिधानो का अवलोकन किया विवाह के अवसर पर कीमती चूनरी पहनने का वर्णन किया है । उसने बतायक कि विवाह के अवसर पर दुल्हन न केवल भारी गहने पहनती थी बल्कि सोने-चाँदी से युक्त तारो की कढ़ाई वाले भारी कपड़े भी पहनती थी । उसने इस प्रकार की कढ़ाई वाले एक भारी चुनरी का उल्लेख करते हुए कहा कि मैंने भारी कढ़ाई वाले एक ऐसी चुनरी को देखा जिसे चार आदमी मिलकर तह

1- "चूनरी"- आलम आलमकेलि, पृ0 117 छं0 277;मतिराम ग्रंथावली: रसराज, पृ0 284-285;छं0 372;पृ0 230 छं0 234;पृ0 256 छं0 241; ललितललाम, पृ0 336 छं0 223; रत्नावली: पृ0 82 छं0 140; देव ग्रंथावली: सुखसागर तरंग, पृ0 93 छं0 270; पृ0 96 छं0 278;पृ0 74 छं0 164; पृ0 94 छं0 279;पृ0 72 छं0 153; पृ0 68 छं0 129;देवसुधाविनोद, पृ0 35 छं0 22; पृ0 51 छं0 24; सु. वि. 35/22;52/26;सोमनाथ ग्रंथावली; रसपीयूषनिधि,[ज्योतिसतरंग]पृ0 113 छं0 5; पृ0 60 छं0 7; पंचदश तरंग, पृ0 134 छं0 20; पृ0 175 छं0 30; चितंतिमतरंग, पृ0 166 छं0 32; तोष सुधानिधि, पृ0 11 छं0 26;पृ0 119 छं0 350; श्रीमती जमीला बृजभूषण, कास्ट्यूम्स एण्ड टेक्सटाइल्स आफ इंडिया पृ0 46,

2- मतिराम रसराज पृ0 42 छं0 36 ;256, पृ0 छं0 241; किशोरीलाल, रीतिकालीन कवियो की मौलिक देन, पृ0 333;पृ0 230 छं0 234; रत्नावली, पृ0 82 छं0 140; वही पृ0 38-46

करते थे यह इतनी भारी चुनरी थी ।[1]

वस्त्रों के संदर्भ में भारतीय स्त्रियों की सदैव से विशेषता रही कि वे समय तथा मौसम के अनुसार वस्त्रों के रंगों का चुनाव करती हैं । फलतः स्त्रियों की इस विशेषता को दृष्टिकोण में रखकर ही संभवतः कवि ने समयानुसार चुनर के रंगों का वर्णन किया है । लाल रंग की चुनर का वर्णन प्रायः कवियों ने वर्षा ऋतु के संदर्भ में किया गया है ।

> लाला ! मेरी सुरंग चुनरी भीजै । लेहु बचाय आप प्रिय मोको, बूंद परे रंगछीजै ।[2]

लाल रंग के अलावा चुनरी के अन्य विभिन्न घटकीले वर्णों का उल्लेख हुआ है ।

> सोहति चुनरी स्याम किनारी की .... ।[3]

1- श्रीमती जमीला ब्रजभूषणः कास्ट्यूम्स एण्ड टैक्सटाइल्स ऑफ इंडिया पृ0 46 से उद्धृत ।

2- तोषः ब्रजभाषा साहित्य का ऋतु सौन्दर्य सं0 प्रभुदयाल मीतल पृ0 89, छं0 ग्रं0 25; देव ग्रंथावली रसविलास, पृ0 211 छं0 19; देव ग्रंथावली, पृ0 144 छं0 268; पृ0 149; राग-रत्नाकर, पृ0 7 छं0 27; सुजान विनोद, पृ0 35 छं0 22; पृ0 78 छं0 24; सुखसागर-तरंग, पृ0 93 छं0 270; देवसुधा पृ0 33 छं0 22; सोमनाथ ग्रंथावली; पृ0 113 छं0 5; पृ0 134 छं0 20; कुमारमणि: रसिक रसाल, पृ0 77 छं0 49; श्रीमती जमीला ब्रजभूषण; कास्ट्यूम्स एण्ड टैक्सटाइल्स आफ इंडिया पृ0 47

3- - देव ग्रंथावली पृ0 144, छं0 268;
पंचरंग चुनरी सोमनाथ ग्रंथावली: रसपीयूषनिधि पृ0 175 छं0 30; पं0 60 छं0 7; नीली चुनरी, तोष सुधानिधि पृ0 11 छं0 26; चटकीली चुनरी, कुमारमणि, रसिक रसाल पृ0 77 छं0 49; देव ग्रंथावली, सुखसागर तरंग पृ0 94; छं0 279 पृ0 96 छं0 291; झीबर. देव सुधा पृ0 143 छं0 22।

ओढ़नी – ओढ़नी को उपरैनी[1] अंचल[2] निचोल[3] घूघट[4] आदि अनेक नामों से अभिहित किया गया।

चूनरी साड़ी और उत्तरीय दोनों का का करती थी। [5] राजस्थान में जहाँ घाँघरे का प्रचलन है, नीवी बंध के साथ आगे खोलकर पहना जाने वाला लाल छपाई का वस्त्र का वस्त्र चूनरी कहलाता है। लेकिन वहाँ की मारवाड़ी स्त्रियों द्वारा पहनी जाने वाली एक विशेष प्रकार की छपाई वाले साड़ी को भी चूनरी कहते हैं, जिसके ऊपर प्रायः चादर भी ली जाती है। बिहार में रंगीन किनारे की ओढ़नी या चादर चूनरी कहलाती है। [6]

1– उपरैनी, भिखारीदास ग्रंथावली, पृ093 छं0 25; पृ0 126 छं0 168.
लो०ब्रजभाषा का ऋतु सौन्दर्य, सं. प्रभुदयाल मीतल, छं0 117, लक्ष्मराय पृ0 ६

2– "अंचल" तोष सुधानिधि पृ0 31 छं0 93; पृ0 59, छं0171, पृ0 123 छं0 362; भिखारीदास ग्रंथावली, पृ047 छं0 324; मतिराम, ललितलाम, पृ0 91; देव ग्रंथावली, भावविलास, पृ0 24; सुजानविनोद, पृ0 20 छं0 6; पृ0 79 छं0 26

3– निचोल: मतिराम / ललितललाम पृ0 10 छं0 68, पृ0 10 छं084 पृ0 91 देव ग्रंथावली: सुजानविलास पृ0 55छं0 37

4– घूघट" तोष सुधानिधि, पृ0 8 छं0 26, मतिराम ललितललाम, पृ010, छं0 84

5– कुमारस्वामी, राजपूत पेंटिंग, जिल्द 5पृ0 30,

6– ग्रियर्सन, बिहार पीजेण्ट लाइफ, पृ0 149,

तत्कालीन समय में औरते कमर तक के जो वस्त्र यथा चोली अंगिया [ब्लाउज] कंचुकी आदि पहनती थी उसके साथ दुपट्टा या चुनरी का प्रयोग करती थी :

कंचुकी सँधि तनी सुबनी पहिरी चुनरी चटकीली सुरंग सौं ।[1]

इस प्रकार के वस्त्रों के साथ चुनरी धारण करने की प्रथा उन्होंने राजस्थानी औरतों से लिया। लखनऊ दरबार से संबंधित चित्रों में औरतो को सरारा[ओं] तथा दुपट्टा पहने दिखाया गयाहै ।[2]

इस प्रकार का फैशन किसी न किसी रूपमें चलता रहा ।[3] ओढ़नी , घूँघट निचोल आदिका प्रयोग साड़ी के साथ नहीं होता है क्योंकि साड़ी के ऊपर वाला हिस्सा स्वयं ओढ़नी और घूँघट का काम करता

1- - कुमारमणि रसिक रसाल , पृ066 छं0 49; देव ग्रंथावली: सुखसागर तरंग, पृ0 104 छं0 301; रसविलास, पृ0 221 छं0 19;'सोमनाथ ग्रंथावली , रसपीयूषनिधि, [पंचदशतरंग] पृ0134 छं0 20,' श्रीमती जमीला ब्रजभूषण, कास्ट्यूम्स एण्ड टेक्सटाइल्स ऑफ इंडिया, पृ0 38 ।

2- वही, पृ0 27

3- वही, पृ0 44

है । कवियों ने विभिन्न रंगो तथा विभिन्न वस्त्रों से बनी ओढ़नी का उल्लेख किया है ।[1]

ओढ़नी प्रायः अंगिया और लहंगा आदि के साथ ओढ़ी जाती थी :

लाल लहँगा पै नीली ओढ़नी बहार की ।[2]

घाघरा या लहंगा – लँहगा एक कटि वस्त्र है, जिसके दोनों सिरे मिलाकर ऐसे सिले रहते हैं कि उनके भीतर से होकर सूत्र उस वस्त्र को बाँध सके ।[3] किन्तु घाघरे या लँहगे का प्रचलन कब से हुआ, इस संबंध में

1– 'ओढ़नी' – देव ग्रंथावली : सुखसागर तरंग नीली ओढ़नी पृ० 101 छं० 294; लाल ओढ़नी, पृ० 104 छं० 301; देव सुधा, 164/265 सोमनाथ ग्रंथावली: माधवविनोद, पृ० 414; शशिनाथ विनोद(प्रथमोल्लास) सुरंग ओढ़नी, पृ० 502 छं० 8; रसपीयूषनिधि, ओढ़नी सुही, पृ० 152 छं० 5; भिखारीदास ग्रंथावली : नीली ओढ़नी, पृ० 92 छं० 24; चाँचरि ओढ़नी पृ० 54 छं० 380; कपूर धूर की ओढ़नी, पृ० 99 छं० 46; असावरि ओढ़नी पृ० 54 छं० 380; "मनूची, स्टोरिया द मोगोर, भाग2, 341 बर्नियर, पृ० 272 देव-सुधा ~~झिलमिली ओढ़नी पृ० 164~~

2– – देव ग्रंथावली :सुखसागर तरंग , पृ० 101 छं० 294; पृ० 104 छं० 301; सोमनाथ ग्रंथावली: शशिनाथ विनोद, प्रथमोल्लास पृ० 502 छं० 8

3– आईन-ए-अकबरी, भाग3, अनुवादक जैरेट, पृ० 312, ओढ़नी के लिए गुज़्वर शब्द इस्तेमाल किया है।

मतभेद है। कुछ लोगों के अनुसार घाघरे या लँहगे का प्रवेश भारत में कुषाण एवं गुप्तकाल में ही हो गया था।[1] इसका प्रचार और प्रसार पाँचवी छठी शती में भारत आने वाली मध्येशिया की विभिन्न जातियों से हुआ। लगभग उसी समय ससानी ईरान के साथ भारत के सांस्कृतिक संबंधों से भी लँहगे के प्रसार में सहायता मिली।

कुछ अन्य विद्वानों का विचार है कि मुस्लिम शासन की कुछ शताब्दियों के बाद यह सर्वसाधारण में पूर्ण प्रचलित हो चुका था।[2]

कोशाकारों ने घाघरा को संस्कृत घर्घर का विकृत रूप माना है।[3] जो समीचीन नहीं प्रतीत होता है क्योंकि हिन्दू काल में घाघरा का प्रचलन बिल्कुल नहीं था तथा तत्कालीन चित्रों स्थापत्य कलाओं और साहित्य कृतियों में इसका उल्लेख नहीं मिलता।[4]

1- डॉ० मोतीचन्द्रः प्राचीन भारतीय वेशभूषा, पृ० 219

2- ए० एस० अल्तेकरः द पोजीशन आफ वोमेन इनहिन्दू सिविलाइजेशन पृ० 365

3- आचार्य रामचन्द्र वर्मा, संक्षिप्त हिन्दी शब्द सागर डॉ० किशोरी लाल रीतिकालीन कवियों की मौलिक देन, पृ० 337

4- ए० एस० अल्तेकर द पोजीशन ऑफ वोमेन इन हिन्दू सिविलाइजेशन, पृ 235 कमीला [illegible] पृ० 92

उपर्युक्त कथनों से पर्याप्त स्पष्ट है कि घाघरा या लहँगा भारतीय वेश भूषा के अन्तर्गत नहीं आता किन्तु सम्प्रति इसे हिन्दू घरों में सांस्कृतिक महत्व प्राप्त है और विवाह आदि मांगलिक अवसरों पर पुत्रवधू को अन्यान्य वस्त्रों के साथ चुनरी और लहँगा दिये जाने का प्रचलन है विशेषकर राजपूताना, उत्तरी भारत और किसी सीमा तक मध्य प्रदेश में लहँगे का प्रचलन है ।[1]

कवियों ने निबन्धनीय परिधान के अन्तर्गत विभिन्न प्रकार के लहँगा और और घाघरे का उल्लेख किया है:

पुनि ललित पार अंबर की लहँगा कटि तट मे लटकायौ ।

अरु पद पंकजनि लगायौ जावक मनो रजो गुन छायौ ।[2]

1- डॉ0 किशोरी लाल रीतिकालीन कवियों की मौलिक देन, पृ0336

2 - सोमनाथ ग्रंथावली शशिनाथ विनोद प्रथमो. पृ0 50छं0 34;

3- तोष सुधानिधि, लहँगो हरित, पृ0 103 छं0 303; पृ0 98 छं0 286; देव ग्रंथावली; सुखसागर तरंग, लाल लंहगा पृ0 101 छं0 254; 294; आलम-आलमकेलि, पृ0 21 छं0 8; घाघरा; भिखारीदास ग्रंथावली; श्रृंगार-निर्णय, पृ0 145 छं0 253; पृ0 144 छं0 252 ; 119/138; काव्यनिर्णय, पृ0 106 छं0 8; देव ग्रंथावली, सुखसागर तरंग, पृ0 104 छं0 371; पृ0 83 छं0 216; पृ0 105 छं0 303; पृ0 74 छं0 215; शब्दरसायन, पृ0 22; देवसुधा 123/259; 90/167; पृ0 22, पृ024; रसविलास, पृ0 202 छं0 23; मतिराम ग्रंथावली: सतसई, पृ0 695; तोष: सुधानिधि, पृ0 21 छं0 67, पृ061, छं0 438, पृ0 103 छं0302; पृ0 141 छं0 418; ~~देवसुधा पृ0 123 छं0 259; पृ0 90, छं0167,~~ ए0 डी0 आई0 अठारहवीं शती के अन्त का चित्र, चित्र नं0 670, स्त्री को घाघरा पहने दिखाया गया है श्रीमती अमोला

घाघरा और लँहगे में यह अन्तर दिखाई पड़ता है कि घाघरा अधिक घेर का होता था और लँहगा कम घेर का । यद्यपि लहँगे केलिए कवि ने लहँगा "मुसक धनवी" का उल्लेख कियाहै किन्तु यह स्पष्ट नहीं किया कि मुश्रु नामक वस्त्र से बने लहँगे में पूरे थान कपड़ा लग गया ।[1] संभवतः चलते समय आगे की ओर झोक लेते रहने के कारण ही कदाचित उसे लहँगा कहने लगे । और उसकी आगे कीओर लहक पर ही कवि का मनलुढ़क जाता है :

लाँक की लचक लसे लहँगा की ढिग ढुरे ।[2]

लहँगे के विपरीत घाघरा बहुत अधिक घेरकाहोता है। इसका आयतन अथवा घेर स्कट की भाँति दो भागों में विभाजित किया जाता है ।[3] अधिकांशतः घाघरा मुस्लिम औरतों द्वारा पहना जाता था जिसकी प्रेरणा वास्तव में उन्हें राजस्थानी औरतों सेमिली । यद्यपि इस परिधान को बनाना काफी जटिल याकठिन था [4] फिर भी स्त्रियाँ घाघरे नामक परिधान का काफी इस्तेमाल करती थीं ।

1- तोष सुधानिधि पृ098 छं0 83

2- आलम- आलमकेलि, पृ0 218छं0 8

3- श्रीमती जमीला ब्रजभूषण, कास्ट्यूम्स एण्ड टेक्सटाइल्स ऑफ इंडिया, पृ0 37

4- वही,

घाघरे के लिए अधिकांशतः कवियों ने "घूम घुमारे घाँघरे, "घाघरे घनेरे" घाघरे की "घूम" घेरदार घाघरो का उल्लेख किया है जो स्वतः यह प्रमाणित करते हैं कि लहँगे की अपेक्षा घाघरे में अधिक घेर होता था। पचीस गज या इससे भी अधिक कपड़े के बने घाघरे राजस्थान और बीकानेर के संग्रहालयों में सुरक्षित हैं।[1]

लहँगा प्रायः तिकोनी पट्टियों को सिलकर बनाया जाता है और घाँघरा कटि के पास घनी चुनन देकर सिला जाता है। इसलिए घाघरे के लिए प्रायः महीन कपड़े की जरूरत पड़ती है जबकि लहँगा मोटे, जरीदार सभी वस्त्रों के बन सकते हैं। मुगल चित्रों में पेशवाज के रूप में अंकित लहँगे बारीक वस्त्र के ही हैं पर पहाड़ी चित्रों में ये काफी मोटे जरी के काम से युक्त छपाई के कपड़ों द्वारा बनाये गये।[2] इस प्रकार के अन्तर का मुख्य कारण

1- भिखारीदास ग्रंथावली: खण्ड 1, घाँघरे की घेर, पृ० 145 छं० 25; घाँघरो घनेरो, पृ० 119, छं० 138; तोषःसुधानिधि, घेरदार, घाघरा पृ० 21 छं० 67; मतिराम: सतसई, घने घोर को घाँघरो, पृ० 695; देव ग्रंथावली: सुखसागर तरंग, घाँघरे घनेरो, पृ० 74 छं० 215; एडिन ऊपर घमत घाँघरो, पृ० 105 छं० 303; शब्दरसायन, घूम घुमारे घाघरे पृ० 24; देखें- घाँघरे को घूम मति घूमति घनेरिनि को, पृ० 104 छं० 301; घाँघरे घनेरे पृ० 83 छं० 216; रसविलास, घाघरे घूम घुमारे, पृ० 202 छं० 23; श्रीमती जमीला बृजभूषण: कास्ट्यूम्स एण्ड टेक्सटाइल्स ऑफ इंडिया, पृ० 92

2- भारत कला भवन, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय से प्राप्त, शाह आलम-कालीन चित्र, 1725 ई० सौन्दर्य की लौ; बिलासपुर 1780 ई० सुखाभिसारिका, चित्र फलक 11-12, चित्र संख्या 1, 2

जलवायु प्रतीत होता है । कहीं-कहीं लहँगा और घाघरा दोनों ही महीन वस्त्र द्वारा निर्मित दिखाये गये है ।[1] घाघरे या लँहगे के प्रचलन से साड़ी की महत्ता कम नही हो पायी बल्कि विभिन्न वस्त्रों से निर्मित साड़ी इन इन वस्त्रों (घाघरा लहँगा) के साथ पहनी जाती रही ।[2] साड़ी पहनने का ढंग इस प्रकार था कि लहँगा या घाघरा साड़ी पहनने के बाद भी नीचे की ओर से दिखायी दे :

1- तोष: सुधानिधि लहरै लहँगा सुतरू थनवाँ के पृ0 99, छं0 286; घेरदार, घाँघरो ललित मतरू को, पृ0 103 छं0 302; पृ0 81, छं0 67; घाघरो सिरिफ मसरू को, पृ0 141, छं0 418; भिखारीदास ग्रंथावली, काव्य निर्णय, (पंचम भाग) घाँघरो-झीन) पृ0 106 छं0 8; श्रृंगार निर्णय, पृ0 145 छं0 253; आईन-ए-अकबरी 32, अनुवादक कलकमन, पृ0 100 अबुलफजल में सुलू महीन वस्त्र को कहा है।

2- देव ग्रंथावली : रस विलास पृ0 202 छं0 223; सुखसागर तरंग, एडिशन भिखारीदास ग्रंथावली : काव्यनिर्णय, पंचम भाग, पृ0 106 छं0 8; श्रृंगार निर्णय पृ0 145 छं0 253; सोमनाथ ग्रंथावली : शशिनाथ विनोद, पृ0 505 छं0 34

सारी असावरी की झलकै झलकै छवि घाघर घूमारे ।[1]

<u>पायजामा</u> -

इजार, सुथन आदि विभिन्न प्रकार के पायजामे हैं और इन पायजामें का प्रचार कुषाण काल से माना गया परन्तु मुगल काल से ही इसे मुसलमानों की देन समझा जाता है ।[2]

कुछ प्रारम्भिक मुगल चित्रों में चागताई महिलाओं के अंकन में इस अधोवस्त्र का उल्लेख हुआ है यथा जहाँगीर के जन्मोत्सव (1580ई0) संबंधी दो चित्र में जिनमें फतेहपुर सीकरी का दृश्य अंकित है, उस काल की वेशभूषा का यथार्थ अंकन है ।[3] उत्सव में गाने-बजाने वाली हिन्दू स्त्रियाँ आधुनिक ढंग से साड़ी पहने हुयी है । साड़ी के ऊपर पटके भी दिख रहे हैं । साड़ी के नीचे तंग मुहरी का पायजामा है । सभी हिन्दू स्त्रियों के सिर पर साड़ी का पल्लू है । राजमाता और कुछ मुस्लिम स्त्रियाँ विशुद्ध चगताई वेश में है । बच्चे की माँ का वेश मुसलमान स्त्रियों से बिल्कुल भिन्न, हिन्दू स्त्रियों से मिलता है। धाय का वेश भी हिन्दू है । कहने का तात्पर्य यह है कि

1- देव ग्रंथावली: रसविलास पृ0 202 छं0 235, भिखारीदास ग्रंथावली, श्रृंगार निर्णय पृ0 145 छं0 253, काव्यनिर्णय पृ0 106 छं08, तोष सुधानिधि, कहै कवि तोष चोखी चौगुनी हरित यह
छवि फबि आई दरदामन उजारे की ।
-पृ0 103 छं0303

2- राजपूत पेंटिंग, जिल्द 5, पृ0 28

3- कुमार स्वामी, मुगल पेंटिंग जिल्द 6, चित्रफलक 3-4

संस्कृति का मिला जुला रूप यहाँ उपस्थित है हिन्दू और मुसलमान दोनों एक दूसरे के वस्त्र को अपनाये हुए है इसलिए संभव है कि मुसलमानो से ही हिन्दू को पायजामा का प्रचलन हुआ हो ।

पायजामा स्त्री तथा पुरूष दोनो ही प्रयोग करते थे ।[1]

कवियों ने इजार, सुथन का उल्लेख किया है :

ललत गूजरी इजरी बिलसत लाल इजार ।

हिये इजारनि के हरे बैठो बाल बाजार ।।[2]

इजार को तंग मुहरी का या कसा हुआ पायजामा बताया गया है जिसे स्त्री नीचे के वस्त्र के रूप के रूप में इस्तेमाल किया करती थीं ।[3]

1- डेलाविले पृ० 411 ,

2- मतिराम: ग्रंथावली: रसराज ,पृ० 221 छं० 96; मतिराम मकरन्द, छं० 94; मतिराम सतसई, पृ० 389 छं० 253; भूषण ग्रंथावली: शिवाबावनी, पृ० 8 छं० 5; पृ० 9 छं० 6; भूषण ग्रंथावली: शिवराजभूषण पृ० 56 छं० 26; जगदीश गुप्त, रीतिकाव्य संग्रह, भूषण पृ० 24; अंसारी, भाग 34, द हरम ऑफ द ग्रेट मुगल, पृ० 112-113; मनूची, स्टोरिया द मोगोर, भाग 2, पृ० 341; बर्नियर, पृ० 272; मुहम्मदयासीन, ए सोशल हिस्ट्री ऑफ इस्लामिक इंडिया, पृ० 39, आईन, अनुवादक ब्लाकमन पृ० 96 ,

3- जे०यू०पी०(हिस्ट्री) जुलाई 1942 पृ० 68-69; ओझा, पृ० 13; पी० एम० मुहम्मदयासीन, वही ।

कवि ने गणिका के संदर्भ में पायजामें का अंकिन किया है अन्य नायिकाओं के संदर्भ में इन वस्त्रों का कम उल्लेख मिलता है ।[1]

पायजामा के अलावा कुर्ती[2] पहना जाता था ।

नीवी फुफुती- घाघरा, लहँगा, इजार आदि को बांधने के लिए एजिस डोरी का प्रयोग होता उसे नीवी या गाड़ा कहते हैं ।[3] प्राचीन भारतीय पुस्तक में नीवी शब्द कटि वस्त्र के लिए आया है ।[4] अनेक स्थलों पर नीवी के खुलने और कसने का प्रसंग आया है :

नीवी कसै उकसै नहिं देय, हंसै सतराइ ध्रसै तन तोरे ,[5]

1- मतिरामः सतसई, पृ0 329 छं0 253; मतिराम मकरंद, पृ0 94; रसराज, पृ0 221 छं0 96; डॉ0 मोहन अवस्थी, हिन्दी, रीतिकविता, और समकालीन उर्दू काव्य पृ0 56,

2- भूषण ग्रंथावली: शिवराजभूषण पृ056 छं0 26; शिवाबावनी पृ0 8 छं0 5; थेवनॉट, चैप्टर X X, पृ0 37, मनूची, भाग 2, स्टोरिया द मोगोर, पृ0 347; बर्नियर पृ0 272

3- ललनरायः रीतिकालीन हिन्दी साहित्य मे उल्लिखत वस्त्राभरणों का अध्ययन पृ0 93 ।

4- महाभारत सभापर्व [गीता प्रेस] अध्याय 67, श्लोक 18, ललनराय वही]

5- देवग्रंथावली, : रसविलास, पृ0 236 छं0 22; पृ0 236 छं0 23; पृ0 102, छं0 48; सुजानविनोद पृ0 52 छं0 26; भिखारीदास, ग्रंथावली, खण्ड1 पृ0 112 छं0 102; पृ0 116 छं0 127; पृ0 120 छं0 144; पृ0 131 छं0 193; पृ0 140, छं0 225; सोमनाथ ग्रंथावली, श्रृंगार विलास, पृ0 281 छं0 33 ।

नीवी को फुंदो[1] भी कहा गया ।

परदा प्रथा चूँकि उस समय दृढ़ता से होती थी अतः जब मुस्लिम औरते घर से बाहर से बाहर जाती थी तो बुर्का[2] धारण कर लेती थीं । जिसका उल्लेख कवि के अप्रत्यक्ष रूप से किया है :

अंदर ते निकसी न मंदर को देख्यो द्वार
बिन रथ पथ पै उघारे पाँव जाती है ।
भूषन भनत सिवराज तेरी धाक सुनि,
हयादारी चीर फारि मन झुंझलाती हैं ।[3]

1- बाई भुजा फरकै अपकैं तरकैं फुंदी को फदो अतितंग है।
- तोषनाथ ग्रंथावली: रसपीयूषनिधि, पृ0 103 छं0 73, ब्रजेंद विनोद, 773/774/44, देव ग्रंथावली: सुजान विलास फुंदोन को छूटे, पृ0 72 छं0 40, भिखारीदास ग्रंथावली, पृ0 7 छं0 29

2- भूषन ग्रंथावली शिवाबावनी पृ0 9 छं0 13,
आइन ए अकबरी 31, ब्लाकमन पृ0 96 (बुरके को अकबर द्वारा चित्र गोचिका नाम दिया गया था ।

3- भूषन ग्रंथावली: शिवाबावनी पृ0 9 छं0 13,

दुसह ताप के कारण लोग कपड़ो का परिहार करते थे यही कारण है कि मोजे[1] का प्रयोग स्त्रियाँ नहीं करती थी । किन्तु जूतीधारण करती थी :

हाथ हरी हरी छाजे छरी, अरु
जूती चढ़ी पग फूँद फुँदारी ।[2]

उच्चवर्गीय स्त्रियाँ कढ़ाई वाले अथवा सजी हुयी जूतियाँ जिसमे फुँदने आदि लगे रहते धारण करती थी :

जड़ाऊ जगमगात जवाहिर के,
जूती जोती जावक जोती पग पाह हैं ।[3]

1- मिसेज मीर हसन अली-" आब्जरवेशन्स ऑन द मुसलमान्स पृ0 80

2- देव ग्रंथावली: सुखसागर तरंग, पृ0 105 छं0 303 ;पृ0 96 छं0 278,' चतुर्थ भाव विलास, पृ0 123 छं0 5;'रसविलास पृ0 4 छं0 15;' पृ0 176 छं0 46;' भूषण ग्रंथावली ;शिवराजभूषण, पृ0 56 छं0 26; शिवाबावनी, पृ0 8 छं0 5;' भूषण ग्रंथावली 5/63 ;'जगदीश गुप्त रीतिकाव्य संग्रह भूषण, पृ0 24;'सोमनाथ ग्रंथावली: सुजान विलास, पृ0 742 छं0 34; ओविंगटन, पृ0 38;' थेवनॉट पृ0 52;'बर्नियर, पृ0 240;' पी0 एन0 ओझा, ग्लिम्पसेज ऑफ सोशल लाइफ इन मुगल इंडिया, पृ0 42; मनूची: स्टोरिया द मोगोर, भाग 3, पृ0 39;' मैन्डलसो पृ0 51,' शाह आलम कालीन चित्र सौन्दर्य की लौ . 1725 ई0 (ललनलालपुर [illegible] प्रबन्ध से)

3- देव ग्रंथावली: चतुर्थ भाव विलास पृ0 123 छं0 5; सुखसागर तरंग पृ0 105 छं0 303; मनूची; स्टोरिया द मोगोर, भाग 1, पृ0 193;' थेवनॉट पृ0 52;'पी0 एन0 ओझा, ग्लिम्पसेज ऑफ सोशल लाइफ इन मुगल इंडिया, पृ0 14 ।

<u>पुरुषों की वेशभूषा :</u> समाज के विविध वर्गों की वेशभूषा तथा आभूषण आदि उसकी श्रेष्ठ सभ्यता का माप दण्ड होते हैं। समाज के विभिन्न समुदायों की वेशभूषाओं आभूषणों एवं सौन्दर्य प्रसाधनों मे समय के साथ-साथ परिवर्तन होता है तथा उससे यह ज्ञात होता है कि समाज किस दिशा में उन्मुख हो रहा है।

अट्ठारहवी शताब्दी के समाज में सम्राट का सर्वोच्च स्थान था अतः उसकी वेशभूषा का विशेष महत्व होना स्वाभाविक था। सम्राट अपनी वेशभूषा केलिए विभिन्न प्रकार के बहुमूल्य कपड़ो, रत्नों नवीनतम डिजाइनों एवं अलंकरण पर अत्यधिक धन व्यय करते थे परिणामतः वस्त्रों को देखकर ही सम्राट के गौरव एवं प्रतिष्ठा का अनुमान सहज ही लगाया जा सकता है।[1]

औरंगजेब के काल में सम्राट की वेशभूषा में विशेष परिवर्तन आया। उसने 1669 ई0 में फर्मान द्वारा जरबफ्त को कपड़ा पहनना अवैध घोषित कर दिया। यद्यपि इसका प्रयोग बन्द नहीं हुआ। उसने स्वयं सादे वस्त्रों को प्राथमिकता देनी प्रारम्भ की। वह सादी पगड़ी लगाता था जिसमें केवल एक छोटा सरपेंच तथा मध्य में सामने की ओर केवल एक बहुमूल्य पत्थर लगा होता था। अधिक से अधिक कंधे पर साधारण काश्मीरी शाल लेता था तथा उसकी कबा का मूल्य 10 रु0 से अधिक नहीं होता था।[2]

1- के0 एम0 अशरफ लाइफ एण्ड कंडीशन आफ दि पीपुल ऑफ हिन्दुस्तान. पृ0 175

2- मनूची; स्टोरिया द मोगोर, भाग 2, पृ0 319,

जरबाफ – जरबाफ वह कपड़ा था जिस पर जरी या कलाबत्तू (तुर्की कलाबतून) के बेल-बूटे या आकृतियाँ बुनी गयी हों। कलाबत्तू उस रेशमी धागे को कहते हैं, जिस पर सोने का मुलम्मा चढ़ाया गया हो। जरबाफी में सुनहले तार रेशमी कपड़ों के साथ मिलकर बुन दिये जाते हैं।

– आईन० 32 ब्लाखमन पृ० 98

काबा : काबा– सुल्तानों के द्वारा पहने जाने वाला कसा हुआ घाघरा था जो कि ऋतु के अनुसार महीन मलमल अथवा ऊन का बना हुआ होता था। प्रारम्भ से ही सुल्तान काबा का प्रयोग करते थे। सुल्तान मसूद, तारीख-ए-बैहकी पृ० 78, मनूची स्टोरिया द मोगोर भाग 2, पृ० 13, मैण्डलसो, पृ० 28, ओविंगटन पृ० 314, अर्ली ट्रैवेल्स इन इंडिया, अनुवादक फास्टर, पृ० 18, मुहम्मदयासीन ए सोशल हिस्ट्री आफ इस्लामिक इंडिया, पृ०39-40 काबा अधिकांशतः सफेद रंग का होता था। वही मुहम्मद यासीन।

सामान्यतः उच्च वर्ग के लोग तंग पायजामें जामा, कमरबन्द ﴾पटका﴿ चीरा﴾ पगड़ी﴿ आदि का प्रयोग करते थे ।[1]

जाड़ों में शाल के कालर से युक्त नीम आस्तीन अथवा नीमतना भी पहनते थे । सिर पर जारी के काम से अलंकृत खिड़कीदार चीरा होता था जिसके बाँधने केलिए विशेष ध्यान दिया जाता था । कभी-कभी चीरा बाँधने में चार- पाँच घंटे का समय लगता है ।[2]

चूँकि अट्ठारहवीं शताब्दी में विलासिता अपनी चरम सीमा पर थी अतः स्त्री अपने वस्त्र बनाव श्रृंगार स्वयं तो ध्यान देती ही थी पुरुष भी उसके सौन्दर्य को बहुमूल्य वस्त्रों तथा आभूषणों आदि से बढ़ाने में प्रयत्नरत रहता था परिणामतः स्त्री के वस्त्राभूषण की ओर कवियों का ध्यान भी बरबस ही खिंच गया और कवियों ने स्त्रियों के वस्त्राभूषण का भरपूर वर्णन किया । ऐसी स्थिति मे पुरुषों के वस्त्रादि का वर्णन अधिक नही किया गया जो संभवतः स्वाभाविक भी था ।

पुरुष मौसम के अनुसार योग्य तथा साधारण वस्त्र धारण करते थे जो कि अधिकांशतः सिल्क﴾रेशमी﴿ अथवा सूती कपड़े के बने होते थे जिसे लोग अपनी आर्थिक स्थिति के अनुरूप पहनते थे ।[3]

1- डॉ० मो० उमर "मीर का अहद पृ० 197

2- वहीदुद्दीन मलिक- द रेन आफ मुहम्मदशाह पृ० 363 -64

4- श्रीमती कमीला कुजभूषण, कास्ट्यूम्स एण्ड टेक्सटाइल्स ऑफ इंडिया, पृ० 39 ।

पीताम्बर, काछनी या धोती – पीताम्बर जैसा कि इस शब्द से ही स्पष्ट है ऐसा वस्त्र जिसका वर्ण पीत (पीला) हो । पीताम्बर पहनने की परम्परा विष्णु और फिर कृष्ण के लिए निश्चित था । चूँकि अधिकांशतः कवियों ने कृष्ण को कृष्ण को नायक के रूप में माना है अतः पीताम्बर का पुरुष-वेश के लिए उल्लेख स्वभाविक है :

> मुरलीधर गिरिधरन प्रभु पीतांबर घनस्याम ।
> बकी बिदारन कंस अरि चीरहरन अभिराम ।[1]

पीताम्बर का प्रयोग काछनी तथा धोती दोनो के लिए हुआ है ।[2] कवियों ने काछनी[3] तथा धोती[4] का उल्लेख किया है ।

1- मतिराम: सतसई पृ० 425 छं० 699; भिखारीदास, छंदार्णव, पृ० 221 छं० 45

2- ललनराय रीतिकालीन हिन्दी साहित्य में उल्लिखित वस्त्राभरणों का अध्ययन, पृ० 98

3- काछनी, कुंडल, मुकुट, कटि काछनी, तिलक भाल ,
 सोमनाथ कहैं मंद गवन मनोहरा ।
 – सोमनाथ ग्रंथावली रसपीयूषनिधि, पृ० 49 छं० 49;
 शृंगार विलास, पृ० 290 छं० 21 ; पृ० 601 छं० 69; माधव विनोद पृ०321 छं० 3; मनूची: स्टोरिया द मोगोर , भाग 3, पृ० 38; आल्पेक्ट्स आफ बंगाली सोसाइटी, पृ०44

4- धोती " मकुट रँगीन पीतपट धोती । पगन पाँउडी कानन मोती ।
 – बोधा, विरह, वारीश, पृ० 168 छं० 74;
 पृ० 69, छं० 18; उपरोक्त ।

तत्कालीन चित्रों में धोती का स्पष्ट अंकन हुआ है । कृष्ण, वासुदेव, नन्द, श्रीनाथ आदि सम्मानित व्यक्तियों के अंकन में यह घुटने के काफी नीचे तक दिखायी गयी है । गोपों या चरवाहों की अंकन में यह घुटनों के ऊपर तक जांघिए या कच्छे जैसी दिखायी गयी है ।[1] तत्कालीन समय में धोती दो प्रकार से पहनी जाती थी । पहले ढंग में जो प्रायः कृष्ण के अंकन में ही दिखाया गया है धोती को दोनो लाँग [छोर] पीछे खोंस ली जाती थी । फिर धोती घुटनों के काफी नीचे तक रहती थी । दूसरे तरीके मेंएक लांग बांधकर पहनने काप्रचलन था । इस प्रकार से पहनी गयी धोती में उसका छोर घनी चुनन के कारण सामने कलात्मक ढंग से लहराता दृष्टिगत होता है ।[2]

धोती और काछनी में एक विशेष बात यह रही कि धोती-काछनी बचपन का ग्रामीण पहनावा है ।[3] धोती प्रौढ़ावस्था का नागरिक एवं सम्मानित पहनावा का नन्द के लिए सदैव धोती का उल्लेख हुआ है । तथा कृष्ण के मथुरा

1- भारत कला भवन, बनारस में प्रदर्शित चित्र राधाकृष्ण 402, कृष्ण को ले जाते हुए वसुदेव 713, श्री नाथ जी, 540 और 1479, दावाग्नि के लपटे को निगलते हुए गोपों को साथ कृष्ण 602, लल्लनराय, पृ0 98

2- जोधपुर शैली का चित्र, फुलवारी, 1650-1750 ई0के मध्य, राधा-कृष्ण गुलेर लगभग 1760 ई0

- भारत कला भवन काशी हिन्दू विश्वविद्यालय से प्राप्त लल्लन चित्रफलक 11-12

3- सूरसागर पद 307, 1251, 2007 आदि ।

चले जाने पर गोपिया कहती हैं - अब तुनियत हैं धोती पहिरे चढ़े खराऊँ न्हात ।[1]

स्त्रियों की साड़ी नामक वस्त्र की भाँति धोती भी अत्यन्त प्राचीन वस्त्र है ।[2]

<u>उत्तरी या पिछौरी</u> - उत्तरीय या चादर तह करके कंधे पर बिना साफ किये कई दिन तक ली जा सकती थी । जब उसका ऊपरी भाग गन्दा हो जाता था तब उसे नीचे करके साफ भाग ऊपर कर लिया जाता था। और कभी-कभी उत्तरीय बिना तह किये ही कंधों पर डाल लिया जाता था । ऐसा करने पर उसमें एक स्वभाविक चुनन सी बन जाती थी तथा कामदार किनारे बड़े कलात्मक ढंग से अगल-बगल या आगे-पीछे लहराते रहते थे ।[3]

कवि ने पिछौरी को भी पुरुषों के चादर के अर्थ में ही लिया है :

उत हेरी हेरत किते ओढ़े सुबरन कांति ।

पीत पिछौरी रावरी यहै जरकसी भाँति ।।[4]

1- वही, पद 4445, यह कहि नन्द गए जमुना तट । ले धोती झारी विधि कमर । अस्पष्ट पद 1602 ।

2- डॉ0 मोतीचन्द्र: प्राचीन भारतीय वेश भूषा पृ0 38 { पाँच प्रकार से धोती पहनने का उल्लेख किया है } ।

3- आईन-ए- अकबरी ब्लाकमन,पृ0 98, भारत कला भवन काशी हिन्दू विश्व-विद्यालय से प्राप्त चित्र, पुष्करी जोधपुर शैली का चित्र, 1650-1750 ई0 के मध्य, कृष्ण ने शाल की तरह उत्तरीय लियाहै। राधा-कृष्ण ,गुलेर लगभग 1760 ई0 चुनन की उत्तरीय कृष्ण ने धारण किया है ।

4- भिखारीदास ग्रंथावली: खण्ड 1, पृ0 46 छं0 304; इस छंद में पिछौरी नायक है जिसे पहचान के लिए उसने नायिका को दे रखी है{रससारांश, पृ0 46 छं0 316 ;पृ0 53 छं0 374 ;पृ0 26 छं0 175; देव ग्रंथावली: पृ0 60 छं0 16; मतिराम: ललितललाम, पृ0 336 छं0 223; कुमारमणि रसिक रसाल, पृ0 95 छं0 115, सोमनाथ ग्रंथावली, रसपीयूषनिधि प्रयो-

पिछौरी अथवा उत्तरीय को पति पर या पीत-पटी भी कहा गया जिसे कमर में भी बाँधा जाता था :

सौंधत तें सखी जान्यो नहीं, वह तोषत तें घर आयौं हमारे

पीत पटी कटि सौं लिपटी अरु सांवरो सुन्दर रूप सँवारे ।[1]

कमर में बाँधने वाले इस वस्त्र का रंग अधिकांशतः पीला बताया गया है :

मुरली अधर मुकुट सिर दीन्हे है । कटि पट-पीत लकुट करलीन्हे है ।[2]

1- देव ग्रंथावली: द्वितीय भाव विलास: पृ० 46 छं० 21; देव ग्रंथावली: पृ० 41, छं० 3:27; 74/68; भिखारीदास ग्रंथावली: छंदार्णव, पृ० 199, छं० 165; काव्यनिर्णय, पृ० 40 छं० 611; सोमनाथ ग्रंथावली: रसपीयूषनिधि, त्रयोदश तरंग, पृ० 122 छं० 50 ; 121/44; पंचदशतरंग, पृ० 138 छं० 18; पृ० 134 छं० 19; षोडश तरंग, पृ० 139 छं० 10; रासपंचाध्यायी, प्रथमोध्याय पृ० 236 छं० 80; माधवविनोद, पृ० 321 छं० 3; ध्रुव विनोद, पृ० 556 छं० 63; श्रृंगारविलास पृ० 601 छं० 69; कुमारमणि: रसिक रसाल, पृ० 55 छं080 पी० एन० ओझा, ग्लिम्पसेज आफ सोशल लाइफ इन मुगल इंडिया, पृ० 12,

2- भिखारीदास ग्रंथावली: छंदार्णव पृ0199 छं0 165; काव्यनिर्णय, पंचमोल्लास, पृ० 40 छं० 11, देव ग्रंथावली: पृ० 35 छं० 240; भाव विलास, पृ० 46 छं० 21; कुमारमणि: रसिक -रसाल, पृ० 55 छं० 80; सोमनाथ ग्रंथावली, रासपंचाध्यायी, पृ० 236 छं० 80; श्रृंगारविलास, 601 छं० 69; रसपीयूषनिधि पृ० 139 छं० 10; पृ० 134 छं० 19; पृ० 122छं० 50; पृ० 123 छं० 51; 134 छं० 18; 120 छं० 44

पटुका - पटुका जिसे कमरबंद कहा पोत-पटी की भाँति कमरमें बाँधा जाता था :

ऐंठवा पेंटा सजे सिर पै अरु भाल पै चंदन बिंदु बनायो
आगिले बंदन बानै बन्यों रु बड़ो कटि पै पटुका लपटायो ।[1]

वस्तुतः पटुका मूल रूप में सैनिकों केलिए था, जो जामा या अधोवस्त्र को अस्त-व्यस्त होने से बचाने के साथ ही हथियार आदि लटकाने के उद्देश्य से धारण किया जाता था ।[2] बाद में वेशभूषा का अंग हो तथा सामान्य लोगों द्वारा भी बाँधा जाने लगा ।

जामा - भगवान के विग्रह को मान्यता भी शासक के रूप में थी, इसलिए मध्यकाल में आराध्य के किरीटों में तुर्रे का प्रचलन शाही प्रभाव सेही हो गया था । कुछ स्थानो पर राम और कृष्ण को जामा पहनाये हुए दिखलाया गया है ।[3]

1- पटुका - सोमनाथ ग्रंथावली: माधवविनोद ,पृ0 334, छं0 2; ब्रजेंदविनोद ,पृ0 649, छं0 21; भिखारीदास ग्रंथावली: छंदार्णव , पृ0 206 छं0 199; पी0 एन0 ओझा, गिलम्पसेज ऑफ सोशल लाइफ इन मुगल इंडिया, पृ0 12; आईन-ए-अकबरी, ब्लाकमन 32,पृ099

2- आईन; उपरोक्त ।

3- डॉ0 वेंकट रमण राव, रीतिकालीन साहित्य की सांस्कृतिक पृष्ठभूमि, पृ0 243-244

जामा मुगल राजपूत काल का सर्वाधिक सम्मानित वेश था । यह पूरी बाँह का, स्त्रियों के पेशवाज जैसा पहनावा था ।[1]

जामें का मूल स्थान मध्येशिया और चीन बताया गया है और जामें का सर्वप्रथम अंकन मथुरा की कुषाण कला में हुआ है ।[2]

जामा एक प्रकार का कोट माना गया जो सूती तथा रेशमी दोनों प्रकार के वस्त्रों से निर्मित होता था ।[3]

कवि ने जामें का उल्लेख निम्न प्रकार से कियाहै :

पहिरत जामाझीन के चहुँया लगि झुम्यो ।
बंदन बाँधतहु दुहुँ हाथनि मैं घुम्यो ।[4]

प्रस्तुत उद्धरण से यह अवश्य पता चलता है कि जामें में बाँधने केलिए बंधन होता था परन्तु यह बंधन किस ओरबाँधा जाता था यह स्पष्ट नहीं है । तत्कालीन चित्रों से स्पष्ट है कि हिन्दू जामें के बन्द के बाईं ओर तथा मुसलमान दाहिनी

1- आईन 31, ब्लाकमन, पृ0 96;पेशवाज पूरी बाँह की कंचुकी तथा लँहगे को मिलाकर बनी हुयी स्त्रियों की पूरी पोशाक है । राजपूत पेंटिंग, जिल्द 5, पृ0 33

2- राजपूत पेंटिंग जिल्द 5, पृ0 26

3- श्रीमती जमीला बृजभूषण, कास्ट्यूम्स एण्ड टैक्सटाइल्स ऑफ इंडिया, पृ0 31,

4- भिखारीदास ग्रंथावली: छंदार्णव, पृ0 206 छं0 199; आईन,भाग 1, पृ0 88 पृ0 92 ।

और बाँधते थे ।[1]

<u>दुपट्टा :</u> स्त्रियों की भाँति पुरुष भी दुपट्टा धारण करते थे परन्तु उनके पहनने की शैली में अंतर था । पुरुष विभिन्न शैलियों से दुपट्टा धारण करते थे ।[2] इस प्रकार कुछ लोग इसे स्त्रियों की भाँति कंधों पर डाल लेते थे कि उसका एक छोर तो बाएं कंधे से होता हुआ नीचे लटकता था तथा दूसरा छोर दाहिने हाथ से होता हुआ नीचे की ओर लटकता रहता है । अन्य विधि में कमर से लपेटते हुए बाएं कंधे से नीचे की ओर लटकता रहता है । इस प्रकार कमरबंद की भी भाँति दुपट्टा भी वस्त्रों की परम्परा में प्रमुख स्थान रखता था ।

कवि ने कटि में बंधा हुआ दुपट्टा दिखाया है :

पाग सुरंग सुगंध सनो दुपट्टा कटि अंबर ओप जगावत ।[3]

1- मुगल पेंटिंग , जिल्द 6, कुमारस्वामी, चित्रफलक 34, तथा श्रीमती जमीला बृजभूषण तथा पृ० 57 और पृ० 50 का चित्र 2 अट्ठारहवीं शती की पहाड़ी चित्रकला (अट्ठारहवीं शती की राजस्थानी परम्परा) चित्र 4, पृ० 50

2- श्रीमती जमीला बृजभूषण: कास्ट्यूम्स एण्ड टेक्सटाइल्स आफ इंडिया, पृ० 57, चित्र सं० 1, 4, 5 (फीमेल कास्ट्यूम इन एटीन्थ सेन्चुरी पहाड़ी, पेंटिंग ।

3- सोमनाथ माधव विनोद, पृ० 335छं० 9

झगा : भारतीय पोषाक कोट का पर्यायवाची अंगरखा या झगा है। चोनी कोट के अनुरूप भुजाओं की दिशा में हल्की चुनन देकर निर्मित थी।[1] कवियों ने झगा के संदर्भ में जो उल्लेख किया है उन्हें देखने से पता चलता है कि झगा महीन पारदर्शी तथा सफेद कपड़े का बनता था :

झीने झगा बिलोकियत नख-छत छवि धर नाह।
भले विराजत ये नए चंद्रहार हिय माह।[2]

कवियों ने पीत झगा का भी उल्लेख किया है :

पीरो झगा पटुका बिन छोर कर लाल जरी सिरफेंटा।[3]

1- श्रीमती जमीला ब्रजभूषण, कास्ट्यूम्स एण्ड टेक्सटाइल्स आफ इंडिया, पृ० 30 तथा पृ० 38

2- मतिराम: सतसई पृ० 41। छं० 541 छं० 364 भिखारीदास ग्रंथावली: खण्ड 2, पृ० 177 छं० 15 सोमनाथ-रस; प्रे० ए० एस० पी० 78/24 1935, 1, पृ० 275; ट्रेवेनियर पृ० 132

3- देव ग्रंथावली: रसविलास पृ० 176 छं० 46; मतिराम सतसई, पृ० 425 छं० 700; भिखारीदास ग्रंथावली: रससारांश, पृ० 85 छं० 582; सोमनाथ ग्रंथावली: पृ० 156 छं०।

झगा नामक वस्त्र बड़े और बच्चे दोनो पहनते थे :

> चिरकुरारी मनोहर पीत झंगा पहिरे मनि-आँगन में बिहरैं ।[1]

संभवतः बच्चो के झगा से तात्पर्य झबला (झगुलियाँ) से होगा :

> पीत झंगुलिया पहिरि के लाल लकुटिया हाथ ।
> धूरि भरे खेलत रहे ब्रजवासिन ब्रजनाथ ।[2]

<u>पाग या पगड़ी</u> : तत्कालीन समाज में उच्चवर्गीय पुरुषों द्वारा प्रयोग की जाने वाली पगड़ी अत्यन्त सजी हुयी होती थी उस पर जड़ाऊ सिरपेंच या कलंगी खोसी जाती थी :

1- भिखारीदास ग्रंथावली: रससारांश पृ0 85 छं0 582, मतिराम सतसई, पृ0 411 छं0 514; पृ0 425 छं0 700; देवग्रंथावली: रसविलास, पृ0 17% छं0 46; सोमनाथ ग्रंथावली: रसपीयूषनिधि, पृ0 156 छं0 1; माधवविनोद पुरुष झंगा 327/60;

> झगा पागमनि कुंडल हारे ।।
> पहिरे नर सब सोहत भारे ।।
> – सोमनाथ ग्रंथावली ब्रजेंदविनोद, पृ0 708 छं0 23;

पृ0 649 छं0 21; पृ0 650 छं0 21; रसपीयूषनिधि, अयोध्या तरंग 23 पृ0 121

2- मतिराम सतसई, पृ0 425 छं0 700; भिखारीदास ग्रंथावली: रससारांश, पृ0 85 छं0 582; देवग्रंथावली देव चरित्र पृ0 7 छं0 21

पचरंग पाग लटपटी तिसपै कलगी मनिगन बारी है ।

कुंडिल श्रवन कमल से लोचन चन्द्र वदन उजियारी है ।[1]

कवियों ने पाग का वर्णन श्रृंगार के विभिन्न परिवेशों में किया है :

(क) पाग का स्वतन्त्र वर्णन ।

(ख) पाग का खण्डिता नायक के प्रकरण में वर्णन ।

स्वतंत्र पाग के वर्णन में एक ओर कवि की दृष्टि परम्परा को लोक पाटने की अपेक्षा हृदय के उल्लास और उमंग से अधिक अनुप्राणित है संभवतः उल्लास में मग्न नायक ने जल्दी में सिर पर टेढ़ी पाग धारण कर ली है :

जरकसी पाग टेढ़ी बाधनी कहूँ की कहूँ ।[2]

टेढ़ी पाग अप्रत्यक्ष रूप से यह प्रमाणित करती है कि पाग सम्मानित और सम्पूर्ण परिधान का एकांग था । जिसे बाहर जाते समय जरूर लगाते थे । अतः नायक को पाग सिर पर लगाना जरूरी था और वह भली प्रकार से न लगाया गया हो ।

1- सोमनाथ ग्रंथावली: प्रेमपचीसी पृ० 893छं017, शृंगार विनोद,पृ० 708 छं० 23, शृंगार विलास 290/21, बोधा, विरह वारीश,पृ० 68 छं० 14, औरंगजेबनामा: द्वितीय भाग, अनुवादक मुंशिफ पृ० 118, श्रीमती जमीला बृजभूषण: द कास्ट्यूम्स एण्ड टेक्सटाइल्स ऑफ इंडिया,पृ० 40

2- सोमनाथ ग्रंथावली: शृंगार विलास,पृ० 290,छं० 21, श्रीमती जमीला बृजभूषण द कास्ट्यूम्स एण्ड टेक्सटाइल्स ऑफ इंडिया,पृ० 40, मैन्डल्सो, पृ० 53, डोमेट, पृ०पृ० 80-81, वे०ए०पी० हिस्ट्री जुलाई, पृ० 68-69 ।

पाग की चर्चा खण्डिता प्रकरण में इस प्रकार की गयी है :

कतु के उघारत ही पलक पलक मारीं,
पालिका में पौढ़ि श्रम राति को निवारिये ।
लटपटैं पेंचसिर बात न कहत बनै,
लटपटे पेंचसिर पाग के सुधारिये ।।[2]

प्रस्तुत छंद में लटपटैं शब्द का व्यंग्य ध्यातव्य है। पाग को बाल केसाथ बाँधा जाता था अतः नायक के बाल से पगड़ी के साथ बंधे हैं किन्तु पगड़ी अस्त-व्यस्त हो गयी है और सिरपेंच ढीला पड़ गया है सबसे प्रमुख बात यह है कि नायिका के बालों से पगड़ी पटी पड़ी है । यह लटपटे का यह अर्थ है ।

इस उदाहरण में छोटे से वस्त्र पाग के माध्यम से समाज में व्याप्त विलासिता की ओर संकेत है साथ ही यह भी महत्वपूर्ण बात है कि विलासिता में मग्न यह पुरुष उच्च वर्ग से भिन्न है क्योंकि उच्च वर्ग के पास अन्तःपुर हरम आदि होते हैं जिसका इसके पास अभाव है ।

1- मतिरामः श्रृंगार सुधाकर, सं0 मन्नालाल द्विज, पृ0 189, देव देवसुधाः पृ0 138 ।

इस प्रकार पुरुष वर्ग के लिए पाग महत्वपूर्ण सम्मानित वस्त्र था जिसे उच्च निम्न जिसे सभी वर्ग सिर पर लगाते हैं। [1]

पाग बाँधने की विभिन्न शैलियाँ तत्कालीन समय में प्रचलित थी जिसमें एक प्रकार खिड़कीदार पाग बाँधने का भी था :

छूटि गयो मान लगी आपु ही सँवारन कौं,
खिरकी सुकवि "मतिराम" पिय पाग की। [2]

पगड़ी बाँधने की शैली जाति विशेष तथा स्थान को सूचित करती है। [3]

1- प्रेमपयोसी पृ0 892 छं0 17, बोधा: विरह सोमनाथ ग्रंथावली: रसपीयूषनिधि, पृ0 78 छं0 24; पृ0 156 छं0 1; पृ0 60 छं0 7; वही पृ0 121 छं0 45; पृ0 124 छं0 7; ब्रजेंदविनोद, पृ0 649 छं0 21; पृ0 514 छं0 11; पृ0 467 छं0 64; पृ0 708 छं0 23; देवग्रंथावली: सुखसागर तरंग, पृ0 28, पृ0 78; छं0 190; मतिराम: रसराज, पृ0 67 छं0 48; पृ0 280 छं0 351; शृंगारविलास, पृ0 290 छं0 21; माधवविनोद, पृ0 327 छं0 59; बोधा; विरह वागीश, पृ0 68 छं0 14; मैन्डली पृ0 63; ओविंगटन पृ0 314; थैवनॉट, भाग 3, पृ0 36; मुहम्मदयासीन: ए सोशल हिस्ट्री आफ इस्लामिक इंडिया। जेoयूoपीo हिस्ट्री सोसाइटी जुलाई, 1942 पृ0 68-69; श्रीमती जमीला ब्रजभूषण: द कास्ट्यूम्स एण्ड टैक्सटाइल्स आफ इंडिया, पृ0 40; पाग को प्रस्तुत छंदों में कहीं-कहीं पेंचा तथा पगड़ी कहा गया है।

2- मतिराम ग्रंथावली: रसराज, पृ0 130; सटपटैबेंच सोमनाथ ग्रंथावली: रसपीयूष-निधि पृ0 121 छं0 45; मतिराम: रसराज, पृ0 67; जमीला ब्रजभूषण, वही।

3- श्रीमती जमीला ब्रजभूषण कास्ट्यूम्स एण्ड टैक्सटाइल्स आफ इंडिया पृ0 50, पर चित्र 1 में कृष्णगढ़ की छोटी पगड़ी चित्र 3-4 जोधपुर की लम्बी पगड़ी इसी प्रकार पहाड़ी चित्रकला की छोटी पगड़ी चित्र 3-4 जोधपुर की लम्बी पगड़ी इसी प्रकार चित्रकला में चित्र 1, 2, 4, 5 तथा 6 में पुरुषों द्वारा विभिन्न की पगड़ी धारण की गयी है।

टोपी: पगड़ी के अलावा टोपी भी प्रचलित थी :

गुहे, गुभुआरे, घुघरारे बार मोहैं सिर मोतीबीच बनक कनक कनवारी के ।

झीनो पीत झगुली झलक अंगु लोने लसे, झिलमिले टोपी रूप ओपी सी लिलारी के ।[1]

जूता – पुरुष वर्ग पैरों में जूता पहनते थे इसका उल्लेख कवियों में किया है :

लकुट रंगीन पीतपट धोती । पगन पाँउड़ी कानन मोती ।[2]

1– देव ग्रंथावली: देवचरित, पृ07 छं0 21, देवमाया प्रपंच, पृ0 228 छं0 15, मैन्डलसी पृ0 35, जे0ए0पी0 हिस्ट्री सोसा0 1942 पृ0 28, पृ068–69 श्रीमती जमीला बृजभूषण कास्ट्यूम्स एण्ड टेक्सटाइल्स आफ इंडिया पृ028

2– बोधा विरह-वारीश, पृ0 168 छं0 74, सोमनाथ ग्रंथावली सुजान वि0 पृ0 742 छं0 34, भिखारीदास ग्रंथावली खण्ड1, पृ0 84, छं0 380, देव ग्रंथावली रसविलासपृ0 176 छं0 46, (जूते को पाँउड़ी कहा गया है) स्टैवोरीनिस, 1, पृ0 414–15, थेवनॉट, चैप्टरXX, पृ037, ट्रैवेनियर। 291 मुहम्मदयासीन ए सोशल हिस्ट्री ऑफ इस्लामिक इंडिया प0 40, श्रीमती जमीला बृजभूषण कास्ट्यूम्स - - - -, में विभिन्न प्रकार जूते पहने हुए पुरुषों के चित्र मिलते हैं पृ0 50 चित्र 3 पृ0 57 चित्र 6, राजस्थानी परम्परा, पहाड़ी चित्रों में पृ0 52 चित्र 2 आगे को ओर नुकीली तथा ऊपर को ओर उठी हुयी जूती जूते का अंकन है ।

<u>वस्त्रों की रँगाई छपाई</u> वस्त्रों की रँगाई का व्यवसाय पारम्परिक रूप से रंगरेजों द्वारा किया जाता रहा किन्तु रंगरेजों की आर्थिक एवं सामाजिक दशा ठीक न थी । कलाकार की कला के अनुसार उनको कम वेतन मिलता था ।[1]

कपड़ो को अच्छी तरह रँगने के लिए एक कार्बनिक अवयव कुसुम्भ का प्रयोग किया जाता था जो रेशमीवस्त्रों कोरंगने केलिएबहुत ही अच्छा माना गया इसमें चमकीले रंग विशेषकर नारंगी रंग बहुत ही अच्छा माना उभर कर आता था[2] लोधरा वृक्ष की छाल का इस्तेमाल रँगाई केलिए तथा कमीला पाउडर लाल रँग की छपाई के लिए इस्तेमाल होता था ।[3]

कपड़ों की रँगाई के संदर्भ में विशेष बात यह थी कि भली प्रकार रँग चढ़ाने के लिए कपड़े कोतीन बाररंग में डालना पड़ता था :

" त्यौं पट में अति ही चटकीली चढ़ै रँग तीसरी बार के बौरें ।[4]

तत्कालीन समय में प्रयुक्त किये जाने वाले कुछ विशिष्ट वस्त्र -

(1) <u>बादला:</u> यह विशुद्ध सोने का चिपटा तार होता है जिसका प्रयोग

1- श्रीमती जमीला बृजभूषण कास्ट्यूम्स एण्ड टैक्सटाइल्स आफ इंडिया, पृ0 64
2- वही, पृ0 62
3- वही, पृ0 62
4- मतिराम ललितललाम पृ0 छं0 9, तोष-सुधानिधि पृ0 34 छं0 102

विशेष रूप से कामदानी साड़ी के निर्माण के लिए किया जाता है ।[1]

§2§ मुलक या मिश्री : यह शब्द सूती और रेशमी धागों के मेल से बने मलमल जैसे वस्त्र के लिए प्रयुक्त हुआ है । मुल्क का घाँघरा और लँहगा बनाये जाने का उल्लेख है ।[2]

§3§ कपूर धूर : कपूरधूर एक प्रकार का महीन रेशमी कपड़ा है जिससे साड़ी ओढ़नी आदि बनायी जाती थी ।[3]

1- "बादला" - सोमनाथ ग्रंथावली : रसपीयूषनिधि, बादले की साड़ी, पृ0 165 छं0 26; पृ0 642 छं0 100; देव ग्रंथावली : भावविलास, पृ0 123 छं0 5; श्यामलदास, पृ0 71; बाकी खाँ, मुन्तखब-उल-लुबाब इलियट एण्ड डाउसन पृ0 269, भाग 8; मुहम्मदयासीन; ए सोशल हिस्ट्री ऑफ इस्लामिक इंडिया, पृ0 41; आईन-ए-अकबरी, भाग 1, पृ0 50 ।

2- "मुलक"-तोष सुधानिधि- लहँगा मुलक धनवाको, पृ0 98, छं0 286; घाँघरी ललित मुलक्की पृ0 21 छं0 67; घाँघरा सिरिफ मुलक को, पृ0 103, छं0 302; एम0 ए0 शास्त्री, आउटलाइन्स ऑफ इस्लामिक कल्चर, 1954 पृ0 225 जाफर शरीफ : कानून ए इस्लाम अनुवादक जी0ए0 हरक्लार्ट्स तैज इस्लाम इन इंडिया, पृ0 300; मुहम्मद यासीन ए सोशल हिस्ट्री ऑफ इस्लामिक इंडिया, पृ0 39,

3- "कपूर धूर" - भिखारीदास ग्रंथावली : खण्ड 1, कपूरधूर की साड़ी, पृ0 124 छं0 165; कपूरधूर ओढ़नी, पृ0 99 छं0 46; आईन 31, पृ0 97

(4) पंचतोरिया : पंचतोरिया अत्यन्त महीन हलका एवं पारदर्शी सूती कपड़ा है, जिससे साड़ी बनायी जाती थी पाँच तोले के वजन के बराबर होती थी।[1]

(5) अतावरी : अतावरी हल्के श्याम रंग और सफेद रंग के धागों से बनाया जाता था जिससे साड़ी तथा ओढ़नी दोनों बनती थी।[2]

(6) सासा : सासा एक प्रकार का महीन सूती कपड़ा बताया गया जिसका प्रयोग चूनरी तथा धोती के लिए किया जाता था।[3]

(7) तनसुख : मलमल की तरह का अत्यन्त बारीक तथा कीमती कपड़ा साड़ी आदि बनाने के काम में लाया जाता था।[4]

(8) लहरिया :- यह एक प्रकार का सूती कपड़ा है जो काफी पहले से प्रचलित था इसकी छपाई लहर जैसी टेढ़ी-मेढ़ी होने के कारण लहरिया कहा गया है।[5]

(9) बाफ्ता - बाफ्ता को सूती वस्त्रों की श्रेणी में रखा गया जिससे कंचुकी आदि बनती थी।[6]

1- देव ग्रंथावली सुखसागर तरंग, छं0 120, सुजान विनोद पृ068 छं025 सोमनाथ ग्रंथावली, शृंगारविलास पृ0 603 छं0 80, मुहम्मदयासीनः ए सोशल हिस्ट्री आफ इस्लामिक इण्डिया पृ0 41,

2- सारी अतावरी की...
- देव ग्रंथावली, रसविलास, पृ0 202 छं0 223, भिखारीदास ग्रंथावली: शृंगारनिर्णय पृ0 145, छं0253, काव्यनिर्णय, पृ0 106 छं08, ।

3- तोष-सुधानिधि - पुनि चुनरी पहिरी पाक सासे की
- तोष सुधानिधि पृ0 119 छं0 350

4- देव ग्रंथावली: शब्दरसायन, पृ0 7 छं0 67 रसविलास, पृ0 193 आईन 32 बनारसन पृ0 100

5- देव ग्रंथावली: रसविलास, पृ0 220 छं0 12,

(10) तास : तास विशिष्ट कोटि का मखमल होता है जिस पर जरदोजी का काम होता है । मुख्य कार्य क्षेत्र गुजरात था । अंगिया आदि बनायी जाती थी ।[1]

(11) जरतारी या जरकसी : जैसा कि इसके नाम से ही स्पष्ट है ऐसा कपड़ा है जिस पर सुनहलें तार टँके हों या जरी सेबेल-बूटे बनाए गये हों । इस प्रकार से निर्मित साड़ी पाग आदि का उल्लेख मिलता है ।[2]

तत्कालीन वस्त्रों पर प्राचीन प्रभाव और सामाजिक परिस्थितयाँ -

ऊपर शलवार, सूथन साड़ी अंगिया घाघरा, लहँगा आदि का जो विवेचन किया जा चुका है, इनका प्रचलन मुसलमानों के आने के बहुत पहले से था । मौर्य काल की समाप्ति और गुप्तकाल के आरम्भ में बीच पाँच-छः सौ वर्षों का जो अंतराल है उसमें शुंग, कुषाण, शक, सीथियन आदि जातियाँ भारत के अनेक भागों पर शासन करती रही और सिले हुए वस्त्रों का प्रचलन इन्ही शासकों के काल में हुआ क्योंकि ये सभी प्रायः ऐसे देशों से आये थे, जिनके यहाँ सिले वस्त्रों का सामान्य प्रचलन था ।[3] तीसरी से सातवी शती तक उनकी वेशभूषा भारतीयों

1- देव ग्रंथावली: सुजान विनोद, पृ० 47 छं० 5; आईन॰ 32; ब्लाखमन पृ० 98

2- सोमनाथ ग्रंथावली: माधवविनोद, जरतारी सारी पृ० 328 छं० 68; देव-ग्रंथावली: सारी हरी जरतारी पृ० 11 छं० 47; मतिराम: ललितललाम, सारी जरतारी की, पृ० 356 छं० 334; बोधा: विरह वागीश, जरकसी तुर्रा, पृ० 68 छं० 14; सोमनाथ ग्रंथावली: जरकसी पाग, श्रृंगार विलास, पृ० 290 छं० 21; रसपीयूषनिधि, पृ० 121 छं० 45

3- डॉ० मोती चन्द्र: प्राचीन भारतीय वेशभूषा, पृ० 185-186

में इस प्रकार अभिनिविष्ट हो गयी कि इस सम्बन्ध में भारतीय-अभारतीय का भेद ही समाप्त हो गया। यहाँ तक कि विशुद्ध भारतीयता के संरक्षक गुप्त शासक भी सैनिक एवं शासक के रूप में अधिकतर विदेशी परिधानों का प्रयोग करने लगे। किसी सामाजिक उत्सव, धार्मिक पर्व आदि पर ही उन्हें हम धोती उत्तरीय में पाते हैं।[1]

इस सम्बन्ध में एक विशेष बात यह है कि सातवीं शती तक की वेशभूषा से अट्ठारहवीं शती की वेशभूषा में पर्याप्त समानता होते हुए भी वस्त्रों के कटाव, सिलाई, पहनने के ढंग आदि में काफी परिवर्तन आ गया है। सामान्य रूप से तो देखने में प्रतीत होता है कि तत्कालीन समय में बहुलांश रूढ़िगत वेशभूषा ही प्रचलित थी। और ऐसी रूढ़िगत वेशभूषा में अध्ययन की कोई विशेष वस्तु नहीं प्राप्त होगी। इसके उत्तर में किसी विद्वान का यह कथन अत्यन्त महत्वपूर्ण लगता है कि,

" अभी तक विद्वानों ने भारतीय संस्कृति के इस पहलू (वेश-भूषा) पर ध्यान तक नहीं दिया है, क्योंकि उनकी राय में वेशभूषा में विकासक्रम नहीं है। आज जो धोती, चादर और पगड़ी पहनी जाती है, वही दो हजार वर्ष पहले भी पहनी जाती थी। फिर ऐसी रूढ़िगत वेशभूषा का इतिहास ही क्या ? ... यह सही है अब तक भारतीय धोती चादर, दुपट्टे और पगड़ी- पहनते हैं, लेकिन प्राचीन और आधुनिक वेशभूषा की समानताएँ यहीं खत्म हो जाती हैं। कौन कह सकता है कि आज की धोती एक ही तरह से पहनी जाती थी अथवा आज की पगड़ी

1- डॉ० मोती चन्द्र प्राचीन भारतीय वेशभूषा, पृ० 185-86

और तब की पगड़ी एक ही है ।[1]

यही बात सातवीं शती की वेशभूषा और अट्ठारहवीं शती की वेशभूषा के संबंध में कही जा सकती है । तब के घाघरे और लहंगे में घुटने का अधिकांश भाग दिखाई देता था तथा उसमें घेर और चुनन भी कम होती थी ।[2] परन्तु अट्ठारहवीं शती में पूरे पैर को ढँकने लगा :

एड़िन अमर घूमत घाघरो तैसिये सोहति लाल की सारी ।[3]

साथ ही घाघरे में घेर भी बहुत अधिक होने लगा ।[4]

यही बात कंचुक आदि के संदर्भ में दिखाई पड़ती है तब के कंचुक के साथ उत्तरीय अनावश्यक समझी जाती थी जबकि अवलोकित काल मे कंचुकी के साथ उत्तरीय लेने का काफी प्रचलन हो गया :

चूनरी सुरंग दरदावन किनारीवारी
जरतारी कंचुकी अमंद सुखदानी की ।[5]

1- डॉ0 मोतीचन्द्र प्राचीन भारतीय वेशभूषा, पृ02
2- डॉ0 वासुदेवशरण अग्रवाल-हर्षचरित: एक सांस्कृतिक अध्ययन, चित्र 7269 , 65
3- देव ग्रंथावली: सुखसागर तरंग पृ0 105 छं0 303
4- भिखारीदास ग्रंथावली: घाँघरो घनेरो, पृ0 119, पृ0 144, छं0 252, मतिराम: सतसई, घने घेरको घाँघरो छं0 695; तोष:सुधानिधि, घेरदार घाँघरो, पृ0 21 छं0 67; देव ग्रंथावली: सुखसागर तरंग, घाँघरे घनेरे, पृ0 74 छं0215 , पृ0 104 छं0 301, पृ0 105 , 303, शब्दरसायन, पृ0 24
5- सोमनाथ ग्रंथावली: रसपीयूषनिधि, पृ0 134 छं0 20, कुमारमणि रसिक, रसाल, पृ0 77 छं0 49; देव ग्रंथावली पृ0 104 छं0 301

उक्त परिवर्तनों का प्रधान कारण सामाजिक परिस्थितयाँ हैं। मुगल एवं उनके पूर्व में मुसलमान शासकों के यहाँ स्त्रियाँ पर्दे की पुतली मात्र थीं। कभी-कभार्‌ यदि वे बाहर निकलती भी थी तो आपाद मस्तक ढकी हुई। तीसरी से सातवी शती तक शती के भारतीय समाज में स्त्रियों के लिए पर्याप्त उन्मुक्तता थी। उनकी वेशभूषा में शरीर का पर्याप्त अंग खुला पाया जाता है।[1] परन्तु अट्ठारहवी शती में स्त्रियाँ आपादमस्तक ढंकी रहने लगी। बाहर निकलने के लिए तरस जाती थी उनके लिए घर की देहरी लांघना भी उचित नहीं समझा जाता था घूँघट में अपना चेहरा छिपाये रहती थीं।[2] इससे सातवी शती या गुप्त कालीन स्वच्छता एवं आशामय वातावरण और अवलोकित काल में परतंत्रता निराशा एवं अपने-आपको छिपाए रखने का संकेत मिलता है। साथ ही दोनों कालों में स्त्रियों की सामाजिक स्थिति का भी स्पष्ट पता लग जाता है।

इस सम्बन्ध में किसी विद्वान का यह कथन अत्यन्त महत्वपूर्ण माना जा सकता है कि -

किसी सम्पूर्ण समाज की आशा और भय पहनावे के "कट" में प्रतिष्ठापित होते हैं।[3]

1- ए० एस० अल्तेकर, द पोजीशन आफ वोमेन इनहिन्दू सिविलाइजेशन पृ० 206

2- हेमिल्टन भाग 1, पृ० 163, ~~न्यू स्कीतन, एम~~ ओर्विंगटन, पृ० 221

3- श्री एस० घुरिये, इंडियनकास्ट्यूम्स पृ० 9 से उद्धत कार्लाइल का कथन है।

चिरकाल तक पराधीनता के कारण सम्पूर्ण हिन्दू समाज में एक ऐसी जड़ता की मनोवृत्ति ने घर कर लिया था कि उनमें भविष्य के लिए आशा की कोई किरण नहीं दिखाई देती जो साधनहीन थे, हाथ पर हाथ रखकर बैठे हुए थे । जिनके पास साधन एवं सम्पत्ति थी वे उसके वासनामय भोग में लगे हुए थे । स्त्रियाँ घर की चाहरदीवारी के अंदर बन्द, पुरुष की भोग्या मात्र रह रह गयी थीं । यदि उन्हें सन्तोष एवं आत्माभिमान का कहीं कुछ अनुभव होता भी था तो अपने वस्त्र और आभूषणों में । कहने का तात्पर्य यह है कि तत्कालीन समाज में प्रयुक्त होने वाले वस्त्र उस काल की एक विशेष मनोवृत्ति को संकेतित करते हैं ।

(खंड ख) आभूषण

आभूषण स्त्री पुरुष दोनों के द्वारा एक महत्वपूर्ण वस्तु माना गया है ।[1] किन्तु आभूषण का विशेष आकर्षण एवं लगाव स्त्रियों में अधिक देखने को मिलता है ।[2] अवलोकित काल में विभिन्न प्रकार के धातुओं से आभूषणों का निर्माण होता था । यथाः सोने तथा चाँदी से निर्मित आभूषण :

सोने के भूषण अंग रचे .... ।[3]

1- मुहम्मद यासीन, ए सोशल हिस्ट्री आफ इस्लामिक इंडिया पृ० 41

2- चलत पीय परदेश कों बरज सको नहिं तोहि ।
लै ऐहौं आभरन जो जियत पायहौ मोहि ।

– मतिराम: रसराज, पृ० 250 छं० 215;
तथा, मेरे लिए जित हौ उठिके गहनौ सु गढ़ाय कै लावनवोनो ।
प्रस्तुत उद्धरणों के दूसरे उदाहरण में मतिराम रसराज पृ० 232 छं० 142; में नायिका उसी के साथ रहना चाहती है जो उसके लिए नित्य नये गहने गढ़ा कर लाये तथा प्रथम उद्धरण में वह परदेश सेवापस आने पर पति से सिर्फ आभूषण लाने की बात करती है किसी अन्य वस्तु की नहीं अतः आभूषण के प्रति स्त्रियों का अनुराग स्वतः स्पष्ट है ।

3- मतिराम: ललितललाम, पृ० 331 छं० 18; रसराज पृ० 285छं० 376; सोमनाथ ग्रंथावली: प्रेमविनोद, पृ० 503 छं० 49; देव: भावविलास, पृ० 72 छं० 86; तोष: सुधानिधि: पृ० 63 छं० 182; भिखारीदास ग्रंथावली, पृ० 130 छं० 42; "चाँदी के आभूषण" तोष सुधानिधि: पृ० 102 छं० 300; देव ग्रंथावली : अष्टयाम पृ० 18 छं० 10; आलम: आलमकेलि, पृ० 35 छं० 51; भिखारी दास : ग्रंथावली: खण्ड 1, पृ० 105 छं० 69; पृ० 121 छं० 147; खंड 2, पृ० 146 छं० 34; बर्नियर, पृ० 224 आईने अकबरी, पृ० 34, पेलसार्ट, इंडियन ट्रेवल्स, पृ० 52

इसके अतिरिक्त हमें विभिन्न प्रकार के रत्नों या बहुमूल्य पत्थरों यथा जवाहर माणिक्य आदि द्वारा निर्मित आभूषणों का उल्लेख मिलता है :

मनि जटित भूषन अंग ।
उर में गहर तरंग ।।[1]

तथा कुछ आभूषण विभिन्न प्रकार फूलों से निर्मित होते थे :

चौसर चमेली चारु हार नौल कंचुकी पै ।[2]

आभूषणों की क्रम संख्या में सबसे पहले सिर और ललाट के आभूषण आते है जो निम्न प्रकार के थे –

1– सोमनाथ ग्रंथावली : रामचरित्र –रत्नाकर पृ0 1008 छं0 12 , रसिकविनोद मनिजरित टौका पृ0 505 छं0 48, देवग्रंथावली : सुखसागर तरंग माँग गुही हीरन पृ0 83 छं0 241 , सुजानविनोद , मोती मगहीरन धर पृ0 34 छं0 18 मनिमाल पृ0 60 छं0 54 , आलम आलमकेलि, हीरनि के नगनि पृ0 21 छं0 73 बाबी वाँ, मुन्तखब –उत–तवारीख, इलियट एंड डाउसन, पृ0 364 , 365 मानमल राय, तुहफात ए तवारीख हिंदु इलियट एंड डाउसन, पृ0 169

2– देवग्रंथावली: राग–रत्नाकर ,पृ0 6 छं0 21; पृ0 18 छं0 75 ; 18 छं 76; पृ0 19 छं0 77; भाव विलास, पृ0 133 छं0 102 ; आलम;आलमकेलि, पृ0 26 छं0 21; 'पुष्पमाल'मतिराम: रसराज, मालती माल पृ0 55 छं0 77; देव:राग–रत्नाकर, फूल बधा उरमाल, पृ0 4 छं0 14; पृ0 4 छं0 14; पुहुपमाल, पृ0 5 छं0 16, चम्पक फूल गरे, पृ0 10 छं0 37; सुजानविनोद, सरोज माल सुमाल, पृ0 50 छं0 22; फूलनि माल पृ0 79 छं0 26; भिखारी दास ग्रंथावली; खंड 1, सुमन माल, पृ0 95 छं0 32; बनमाल पृ0 74 छं0 508; खंड 2, बनमाल पृ0 125 छं0 14; फूलों का गजरा, भिखारीदास ग्रंथावली; खंड 1, फूले फूल फूलनि के गजरा, पृ0 74 छं0 508; पुष्प के कर्णाभूषण, आलम–आलमकेलि, उतपल औतरकी, ~~पृ0 125~~ पृ0 125 छं0 306 ; मतिराम रसराज , पुष्पनि के अवतंस, पृ0 134 छं0 238; देवग्रंथावली; राग–रत्नाकर अब के बौरनि बौरनि बौरे विराजति, पृ0 6 छं0 23, पुष्पों निर्मित केश के आभूषण: मतिराम: ललितललाम कुसुम कलित केस, छं0 89; रसराज, केसन में

सीसफूल – जैसा कि इस आभूषण के नाम से ही विदित है यह फूल(पुष्प) के आकार का आभूषण था जो सिर पर धारण किया जाता था :

सिर सीसफूल उदार है ।[1]

सिर में इसे माँग के मूल में धारण किये जाने का उल्लेख मिलता है ।

माँग को मूल उतै सिरफूल दब्यो ।[2]

माँग बालों को दो भागों में विभाजित करने पर बीच की बनी रेखा को कहते हैं जिसे मध्ययुग में पाटी भी कहा गया ।[3]

सीसफूल को सिरफूल भी कहा गया है ।[4]

1– "सीसफूल" सोमनाथ ग्रंथावली: पृ0 503 छं0 50; देवग्रंथावली: सुखसागर तरंग, पृ0 83 छं0 242; पृ0 84 छं0 243; शब्दरसायन, पृ0 7 छं0 70; राधा-रत्नाकर पृ0 7 छं0 27; सुजानविनोद, पृ0 47 छं0 5; आलम: आलमकेलि, पृ0 31 छं0 22; छं0 22 33/73; मनूची: स्टोरिया दमोगोर भाग 2, पृ0 318; आईन-ए-अकबरी, भाग 33, अनुवादक सर जदुनाथ सरकार पृ0 343 : आईन-अनुवादक जैरेट, पृ0 312 (आईन में सीसफूल को गेंदे के फूल के आकार का बताया गया है)

2– देवग्रंथावली : सुखसागर तरंग, पृ0 84 छं0 243; पृ0 83 छं0 242; सोमनाथ ग्रंथावली: माधव विनोद, पृ0 328 छं0 69; मनूची, स्टोरिया द मोगोर, भाग 2, पृ0 317

3– पाटी दुहूँ बिच माँग की लागी
– भिखारीदास ग्रंथावली: खंड 1, पृ0 102 छं0 37; पृ0 122 छं0 154 ; देवग्रंथावली: सुखसागर तरंग, पृ0 83 छं0 241; पृ0 83 छं0 242; पृ0 84 छं0 243

4– "सिरफूल" तोष-सुधानिधि, पृ0 97 छं0 273; देवग्रंथावली: सुखसागर तरंग, पृ0 83 छं0 242; पृ0 84 छं0 243; मनूची: स्टोरिया दमोगोर, भाग 2, पृ0 317

माँगफूल नामक आभूषण भी शीशफूल की भाँति सिर पर धारण किये जाने का उल्लेख कवि ने किया है ।[1]

माँगमोती या मोतीसर – यह मोतियों की लड़ी जैसा बनाया जाने वाला माँग का आभूषण है । अवलोकित काल में जहाँ भी मोतियों से माँग भरने या माँग पूरने का उल्लेख हुआ है, वहाँ माँगकर से ही तात्पर्य है ।[2]

टीका या बेंदी – टीका एक पतली जंजीर के सहारे सिर लटकाकर सिर पर धारण किये जाने वाला आभूषण है। इसके किनारे पर नीचे की ओर मोती आदि लगे होते है तथा सोने के इस आभूषण में माणिक्य

1– माँगफूल सोमनाथ ग्रंथावली : रसपीयूषनिधि, पृ0 111 छं0 33, श्रीमती जमीला बृजभूषण, द कास्ट्यूम्स एंड टेक्सटाइल्स ऑफ इंडिया, पृ0 51 पर मेल एंड फीमेल कास्ट्यूम्स इन द सेवेंटीन्थ सेन्चुरी पहाड़ी पेन्टिंग्स चित्रफलक । तथा 2

2– "माँगमोती का–भाँगलंकार देवग्रंथावली : भावविलास, मोतिन माँग पृ0 128; प्रेम–चन्द्रिका, माँग मुक्तारी सवाँरी नीकी (मुक्तारी का तात्पर्य मोती से है) पृ0 34 छं0 24 ; सुजान विनोद, पृ0 52 छं0 27; सुखसागरतरंग, पृ0 83 छं0 241 ; आलम: आलमकेलि पृ0 49, छं0 ; भिखारीदास ग्रंथावली; भाग 1, माँग भरो मोती, पृ0145 छं0 225 ; 'माँगमोती', देवग्रंथावली ; सुखसागर तरंग पृ083 छं0 242 ; वही राजस्थानी फीमेल कास्ट्यूम्स इन द सेवेंटीन्थ सेन्चुरीज चित्रफलक । तथा 4

आदि रत्न जड़े रहते है :

टीको जटित मनि जाल मैं ।[1]

सूर्य के आकार का अन्य माथे का आभूषण प्रचलित था जिसे बेंदा कहा गया ।[2]

शिरोभूषण के अन्तर्गत बिंदुली का भी उल्लेख मिलता है ।[3]

1— 'टीका' सोमनाथ ग्रंथावली , ब्रजेंद्रविनोद, पृ० 503 छं० 49;आलम:आलमकेलि; "बेंदी" 53/73 ; 88/242;देव ग्रंथावली: सुखसागर तरंग, बेंदी जराउ, पृ० 83 छं० 241 ; पृ० 113; 89/249; शब्दरसायन-प्रकाश, पृ० 78 छं० 70; रसविलास, पृ० 193 ; भिखारीदास: श्रृंगारनिर्णय, ~~पृ० 150~~ 150/274; ग्रंथावली; खंड 1, पृ० 149 छं० 273; पृ० 150 छं० 277;मतिराम ग्र 149/273;मतिराम सतसई, छं० 427; छं० 650; सोमनाथ ग्रंथावली : शशिनाथ विनोद, पृ० 505 छं० 32 ; ब्रजेंद्रविनोद, पृ० 549 छं० 54; सुजान विलास, पृ० 640 छं० 73;माधवविनोद, पृ०328 छं० 69;भारत कला भवन से प्राप्त एकमुगल शैली का स्नान दृश्य [लल्लन राय के प्रबन्ध काव्य से उद्धृत] 1750 ई० चित्रफलक 9, जमीला ब्रजभूषण वही, कोमल कास्ट्यूम्स इन द ऐट्टीन्थ सेन्चुरी , पहाड़ी पेन्टिंग्स चित्र सं० 4 आईन-ए- अकबरी अनुवादक एच०एस० जैरेट टीका को आईन में कोट बिनादर कहा गया है ।

2— ललित लाल बेंदा लसै बाल-भाल सुखदानि ।
दरपन रवि- प्रतिबिंब लौ दहै सौति अँखियानि,
— भिखारीदास ग्रंथावली; रससारांश, पृ० 76 छं० 518;
छंदार्णव, पृ० 223 छं० 9; निकोलाई मनूची ; मुगल इंडिया और स्टोरिया द मोगोर, भाग 2, पृ० 317 [शिरोभूषण में सूर्य के आकार का उल्लेख किया है संभवतः वह बेंदा ही है]

14— "बिंदुली" भिखारीदास ग्रंथावली; खंड 1, पृ० 7 छं० 32; पृ० 15 छं० 86; बिंदुलीजड़ाऊ, आलम; आलमकेलि , पृ० 123 छं० 262;आईन-में इसे सोने की मुहर से थोड़ा छोटा आभूषण बताया गया है।

इन सबसे अलावा जड़ाऊ बिन्दी का भी उल्लेख मिलता है जिसे माथे पर लगाया जाता था ।[1]

अवलोकित काल में केशों को आभूषणों से सुसज्जित किया जाता था । जो धातु के आभूषणों के अलावा पुष्प से भी निर्मित होते थे ।[2]

1- आलम-आलमकेलि"जराउ कीबिन्दु, पृ0 146 छं0 378; देव ग्रंथावली : शब्दरसायन, पृ0 70 छं0 42; सुखसागर तरंग पृ0 88 छं0 242; 89 छं0 249; भिखारीदास ग्रंथावली: श्रृंगारनिर्णय, पृ0 149 छं0 273; पृ0 150; सोमनाथ ग्रंथावली: माधव विनोद, पृ0 328 छं0 69 ; सुजानविलास, 640 छं0 73; शशिनाथ विनोद, पृ0 505 छं0 32; कौंदविनोद, पृ0 549 छं0 54; जड़ाऊ बिन्दी [धातु खंडों को काटकर बनायी जाती है जिसे गोंद लगाकर माथे में चिपका दिया जाता है] श्रीमती जमीला बृजभूषण ; कास्ट्यूम्स एंड टेक्सटाइल्स आफ इंडिया, पृ0 51 चित्र सं0 3, 4 तथा वही पृ0 58 चित्र सं0 1

2- "केशाभूषण"देवग्रंथावली: पृ0 110 छं0 92; मतिराम: ललितललाम, पृ0 69 छं0 100 ; रसराज, कुसुम कलित केशनि में छाई छवि फूलन के बूंद की, पृ0 64 छं0 103, रसपीयूषनिधि पृ0 97- ललितललाम, छं0 89; सोमनाथ ग्रं0: श्याम सरकारे चार (कृ 97 छं0 50) फूलनि सौं गूंथि रचे, डुबाइस: हिन्दू मैनर्स, कस्टम्स एंड सेरेमनीज़ पृ0 342; ग्रोस, भाग 1, 143

कान के आभूषण -

कुण्डल - कर्णभूषण में कुण्डल (बाली) सम्पन्न वर्ग की महिलाओं को अत्यन्त प्रिय था।

कनक मेखला पहिरे नारी, कंचन सोहत कुंडल-धारी।[1]

कुण्डल का ऊपरी भाग पतला और नीचे का भाग अपेक्षाकृत चौड़ा होता है। नीचे का भाग भारी होने के कारण शरीर के तनिक भी आन्दोलित होने पर कुण्डल हिलने लगता है।[18] मकराकृत कुंडल के प्रचलित होने का उल्लेख कवियों ने किया है।[19] इस प्रकार विभिन्न प्रकार के सादे व मणिजटित कुण्डल पहना

1- सोमनाथ ग्रंथावली: ब्रजेंदविनोद, पृ0 708 छं0 24; देव: प्रेमचन्द्रिका, स्तन गभारी कीरबासे/25 छं.23; मतिराम: रसराज, 120 छं0 297; पृ0 123 छं0 306; तोष-सुधानिधि पृ0 60 छं0 173; पृ0 112 छं0 331; भिखारीदास ग्रंथावली: खंड 1, पृ0 85 छं0 581; पृ0 90 छं0 9; हेमिल्टन: न्यू अकाउन्ट आफ ईस्ट इंडीज, भाग 1 पृ0 163; थेवनोट: भाग 3, पृ0 37; आईन0, भाग 3 पृ0 343

2- कुंडल ललत मुख मंडल झलमलात झूलत दुकूल झुमझुम महरात हैं

- देव ग्रंथावली: रसविलास पृ0 237 छं0 28, मतिराम ग्रंथावली: ललितललाम, पृ0 334 छं0 268; 365/ 397; रसराज, पृ0 292 छं0 410; पृ0 290 छं0 401; रत्नावली, पृ0 107 छं0 191; वही।

3- तोष: सुधानिधि, कुण्डलमकर पृ0 2 छं0 6; भिखारीदास ग्रंथावली; रससारांश, पृ0 38 छं0 256; कुण्डल मकारे, काव्यनिर्णय, मकराकृत कुंडल, पृ0 98 छं0 19; (मकर से तात्पर्य कवियों को मोर की आकृति से लिया है), अंसारी भाग 34 हरम ऑफ द ग्रेट मुगल पृ0 114 हेमिल्टन, न्यू अकाउन्ट ऑफ ईस्ट इंडीज, भाग 1, पृ0 163; थेवनोट भाग 3, पृ0 37

जाता था ।[1]

लुरकी – कानों के (निचले भाग) लर में पहने जाने के कारण संभवतः इस आभूषण को लुरकी कहा गया। लुरकी नामक आभूषण में मोतियों का गुच्छा सा लटकता रहता है ।[2]

कर्णफूल – जैसा कि इस आभूषण के नाम से स्वतः स्पष्ट है कि पुष्पाकृति के आभूषण को कानों में पहनने के कारण इस आभूषण का नाम कर्णफूल रखा गया । कर्णफूल के बीच में हीरा आदि जैसे नग जड़े रहते थे और उसकी कटिंग किनारे से कुछ इस प्रकार की जाती थी जिससे वह पुष्पाकृति का दिखाई पड़ता था ।[3]

1- मतिराम ग्रंथावली: ललित लल मनि कुण्डल, पृ0 62 छं0 76; पृ0 53; रसराज, पृ0 120 छं0 297; पृ0 123 छं0 306; 293/410; देव ग्रंथावली: भावविलास; पृ0 69; राम-रत्नाकर पृ0 20 छं0 93; रसविलास, 237/28; सोमनाथ ग्रंथावली; कंचन मंडित कुण्डल, पृ0 504 छं0 28; बसंतविनोद, पृ0 77 छं0 44; हैमिल्टन न्यू अकाउन्ट ऑफ ईस्ट इंडीज, भाग 1, पृ0 163; आईन-ए-अकबरी, भाग 3, पृ0 343; थेवनॉट; भाग 3, पृ0 37

2- "लुरकी" देव जगमगात जोतिन की लर मोतिन की लुरकीन,

—देव ग्रंथावली: सुखसागर तरंग पृ0 83 छं0 243;

प्रेमचन्द्रिका पृ0 83 छं0 239; निकोलाई मनूची, स्टोरिया द मोगोर भाग 2, पृ0 317

3- "कर्णफूल" सोमनाथ ग्रंथावली: रसपीयूषनिधि, पृ0 126 छं0 12; आलम: आलमकेलि, तुतिफूल, पृ0 9 छं0 20; (आलम ने कर्णफूल को तुतिफूल कहा है) सूदन ग्रंथावली पृ0 252; हैमिल्टन: न्यू अकाउन्ट आफ ईस्ट इंडीज, भाग 1, पृ0 163; अंसारी; हरम आफ दि ग्रेट मुगल, पृ0 114; जमीला बृजभूषण; कास्ट्यूम्स एंड टैक्सटाइल्स आफ इंडिया, मेन एंड वोमन कास्ट्यूम्स इन द ऐट्टीन्थ सेन्चुरी पहाड़ी पेन्टिंग्स पृ0 60; चित्रसं0 4, बीच में हीरा आदि जड़े रहने का उल्लेख, निकोलाई मनूची: स्टोरिया द मोगोर, भाग 2 पृ0 317

झुमका— यह एक लोकप्रिय आभूषण था। झुमके को कर्णफूल आदि के साथ पहना जाता था यह स्वतंत्र रूप से पहना जाने, कर्णफूल के नीचे यह प्यालीनुमा घंटी के आकार सा होता था जो कानों से थोड़ा नीचे लटकता रहता था। जिसके किनारे पर घुंघरू {छोटे-छोटे} या मोती के गुच्छे लटकते रहते है।[1]

तरयौना — तरयौना को कवियों ने कानो में पहना जाने वाला गोलाकृति आभूषण बताया है :

चक्र तरयौना जुवा भ्रिकुटी मृग नैनन है ससि को रथ संभवि

1— "झुमका" सोमनाथ ग्रंथावली : शशिनाथ विनोद, पृ0 502 छं0 9; मआसीर ए- आलमगीरी: अनुवादक जदुनाथ सरकार, पृ0 93; मुहम्मद यासीन, ए सोशल हिस्ट्री ऑफ इस्लामिक इंडिया, पृ0 41; बर्नियर पृ0 223, झोकेट पृ0 81 मैन्डस्लो, पृ0 50; मनूची, स्टोरिया द मोगोर, भाग 2, पृ0 339 -340; श्रीमती जमीला ब्रजभूषण, कास्ट्यूम्स एंड टेक्सटाइल्स ऑफ इंडिया, पृ0 58; फोमैस कास्ट्यूम्स इन द ऐट्टीन्थ सेन्चुरी, पहाड़ी पेन्टिंग्स चित्र सं0 4।

2— "तरयौना" देवग्रंथावली : सुखसागर तरंग, पृ0 88 छं0242; पृ0 83 छं0 241; सोमनाथ ग्रंथावली: शब्द रसायन, पृ0 67 छं0 70; सुखसागर तरंग, पृ0 83 छं0 41; सुजानविनोद, पृ0 31 छं0 4; पृ0 56 छं0 42; भिखारीदास ग्रंथावली: खंड 1, पृ0 124 छं0 165; पृ0 150 छं0 277; भिखारीदास ग्रंथावली; खंड 2, पृ0 130 छं0 42; पृ0 248 छं0 21; सोमनाथ ग्रंथावली: रसपीयूषनिधि, पृ0 223 छं0 334; 98/55; श्रृंगार विलास, 305 छं0 44; सुजानविलास पृ0 808 छं0 17; मनूची, स्टोरिया द मोगोर, भाग 2, पृ0 317

तरयौना को तत्कालीन कवियों ने तरौना[1] तथा तरविन[2] भी कहा है ।

तरयौना नामक कर्णाभूषण में विभिन्न प्रकार के बहुमूल्य पत्थर या रत्न के नग जड़े रहते थे ।[3]

<u>बीर</u> – कानों में बीर नामक आभूषण भी स्त्रियाँ धारण करती थीं :

इन्दु सो आनन सुन्दर कानन होरनि की निधि बीरनिवारी[4]

अन्य आभूषणों की भाँति बीर नामक कर्णाभूषण भी रत्नजटित होता था ।[5]

1– "तरौना" मतिराम ग्रंथावली : रसराज, पृ0 269 छं0 297, रत्नावली पृ0 54 छं0 84, पृ0 117 छं0 91 ललितललाम, पृ0346 छं0 280, मतिराम सतसई, पृ0 380 छं0 142, मतिराम ग्रंथावली पृ0 419 देवग्रंथावली : पृ0 117, शब्दरसायन, पृ0 10 छं0 19, आलम आलमकेलि, पृ0 13 छं0 29, पृ0 23 छं0 87 पृ0 13, सोमनाथ ग्रंथावली पृ0 277 रसपीयूषनिधि, पृ0 223, छं0 334 ।

2– तरविन, मतिराम ग्रंथावली : सतसई दो 471, देवग्रंथावली शब्दरसायन पृ096

3– जड़ाऊ तरयौना : देवग्रंथावली; सुजान विनोद, पृ0 10 छं0 19,' मतिराम ग्रंथावली : रसराज, पृ0269 छं0 297; रत्नावली, पृ0 117 छं0 91; सतसई, पृ0 320 छं0 142; मनूची; स्टोरिया द मोगोर, भाग 2, पृ0 317

4– "बीर" देवग्रंथावली : सुखसागरतरंग, पृ0 83 छं0239; राग–रत्नाकर, पृ0 6 छं0 23; सुजानविनोद पृ0 47 छं0 5;' आलम; आलमकेलि, पृ0 31 छं0 73; मनूची वही ।

5– आलम; आलमकेलि, बीरनि के नगनि, पृ0 31 छं0 71; देवग्रंथावली : सुखसागर, तरंग, पृ0 83 छं0 239; मनूची वही ।

<u>बुँदिला</u> – बुँदिला को दीपक की लौ के समान कुछ लम्बा आभूषण बताया गया है जो कान के निचले लर में पहना जाता था :

घूंघट जवनिका में कारे-कारे केस निसि,
बुँदिला जराऊ जरे दीपटि उजारो है ।[1]

<u>नाक के आभूषण</u> – भारत के अधिकांश प्रदेशों में नाक के आभूषण मांगलिक एवं सौभाग्यसूचक माने जाते हैं ।[2] नाक का आभूषण कब से प्रचलित हुआ इस संबंध में मतभेद दिखाई पड़ता है । 1932 में बंगाल की रायल एशियाटिक सोसाइटी के जर्नल में इस संबंध में एक लेख प्रकाशित हुआ । इस लेख में संस्कृत साहित्य और संस्कृत कोशों में नाक के किसी आभूषण का उल्लेख नहीं मिलता ।[3] किन्तु 1937 ई० में कलकत्ता रिव्यू से प्रकाशित लेख में इसेहिन्दू काल का जाना-पहचाना आभूषण सिद्ध किया गया ।[4]

1- बुँदिला: आलम-आलमकेलि, पृ० 24 छं० 55; पृ० 31 छं० 73 [यहाँ दीपटि उजारो से जलते हुए दीपक की लौ यह अर्थ लिया गया है] आईन-ए- अकबरी, में इसे गावदुम कहा गया इसकी आकृति भी दीपक की लौ की भाँति बतायी गयी, आईन ए० अकबरी; अनु एच एस जैरेट, जिल्द 3, पृ० 312

2- श्रीमती जमीला बृजभूषण, इंडियन ज्वेलरी आर्नामेन्ट्स एंड डेकोरेटिव डिजाइन्स पृ० 11

3- एम० बी० डिवाटिया: जर्नल ऑफ एशियाटिक सोसाइटी ऑफ बंगाल जिल्द 19 पृ० 67

4- नलिनदास गुप्ता, भारत में प्रचलित नाक के आभूषण जिल्द 63, पृ० 142, 144

किन्तु 1937 में ही प्रकाशित एक अन्य ग्रंथ में नाक के आभूषण को मुसलमानो से लिया बताया गया है ।[1] परन्तु, इस बात पर आश्चर्य होता है कि एक विदेशी उत्पत्ति का आभूषण भारतीय स्त्रियों में सौभाग्य का चिन्ह कैसे बन गया । किन्तु इस बात पर आश्चर्य होता है कि एक विदेशी उत्पत्ति का आभूषण भारतीयों स्त्रियों मेंसौभाग्य का चिन्ह कैसे बन गया।[2] किन्तु निश्चित रूप से इस आभूषण को मुस्लिम उत्पत्ति का मान लेना अधिक संगत नहीं लगता । क्योंकि प्रारम्भिक मुगल एवं ईरानी चित्रों में हमें नाक के आभूषणों का अंकन नहीं मिलता बाद के विशुद्ध मुगल चित्रों में भी नाक के आभूषण कुछ विशेष प्रसंगों में दिखाये गये हैं जैसा कि अकबरकालीन दो चित्रों से पता चलता है ।[3] सन् 1580 ई0 के आसपास बने ये दोनो ही चित्र पूर्णतया प्रामाणिक हैं । इनमें राजकुमार(संभवतः जहाँगीर) के जन्मोत्सव का चित्रांकन हुआ है। जन्मोत्सव में-चगताई वेश की मुगल स्त्रियों के साथ राजपूत स्त्रियों का भी अंकन हुआ है । मुगल स्त्रियाँ विशेष-चगताई वेश में हैं । इनमे कोई भी नाक का आभूषण नही पहने है। गाने बजाने वाली राजपूत स्त्रियों में कई नाक में मोती का लटकन धारण किये हुए हैं ।

1- अल्तेकर दि पोजीशन ऑफ वोमेन इनहिन्दू सिविलाइजेशन (1936) पृ0 364

2- अल्तेकर: द पोजीशन ऑफ वोमेन इनहिन्दू सिविलाइजेशन(1936) पृ0 364

3- देखिए मुगल पेंटिंग (कुमार स्वामी) जिल्द 6 चित्रफलक-4 ।

इससे स्पष्ट होता है कि संभ्रात मुगल स्त्रियों में नाक के आभूषणों का चलन नहीं था ।[1]

संभव है पश्चिमी एशिया और मध्येशियाई देशों से भारत के सांस्कृतिक संबंधों के फलस्वरूप में आभूषण भारत आया हो क्योंकि व्यापारिक लेन-देन के साथ ही भारतीयों के साथ उनका सांस्कृतिक आदान प्रदान भी होता था ।[2] नाक के चार आभूषणों – बेसर, नथ, फूली और लौंग[3] का उल्लेख अवश्य हुआ है, पर इनके हिन्दी नाम इस बात के साक्षी हैं कि ये मुगल उत्पत्ति के नहीं है । वस्तुतः अकबर द्वारा राजपूतों के साथ वैवाहिक संबंधों के कारण इन आभूषणों का प्रवेश रानी एवं दासियों के द्वारा राजमहल तक हो गया । उन्हीं के प्रभाव से मुगल स्त्रियों में इन आभूषणों का प्रचार हुआ होगा ।

अब प्रश्न उठता है कि राजपूतों में इसका प्रचार कब और कैसे हुआ ? इस संबंध में यह संभावना व्यक्त की जा सकती है कि शीया प्रायः व्यापारिक उद्योग धंधे के साथ ही भारत आये । मध्यप्रदेश और राजस्थान में उनके माध्यम से नाक के आभूषणों का ग्रहण संभवहै। आज भी वहां के हिन्दुओं उत्तर प्रदेश,

---

1- प्रारम्भिक मुस्लिम साहित्य में नाक के आभूषणों का कोई उल्लेख नहीं मिलता । हिन्दू काल के सभी चित्र तथा स्थापत्यकला नाम के आभूषण की पूर्णतया उपेक्षा करते हैं । जे०बी०ओ०आर०एस०(बी०एण्ड०)XXIII,1927 पृ० 295-296

2- एम०ए० शास्त्री, आउटलाईंस ऑफ इस्लामिक कल्चर 1954 पृ022 ।

3- आईन ए अकबरी भाग 3 एच०एस० जैरेट पृ० 313

बिहार, बंगाल आदि मे नाक के आभूषणों का पर्याप्त प्रचलन है वहाँ पर नाक के आभूषणो का प्रचलन कब और कैसे हुआ ? नवीं से तेरहवी शती के मध्य सूफी धर्म प्रचारक और शीया वर्ग के व्यापार तथा उद्योग धंधा करने वाले मुसलमान काफी संख्या में बिहार, और बंगाल में आये ।[1] संभवतः पारस्परिक भेद-भाव अधिक न होने के कारण बिहार और बंगाल के हिन्दुओं ने सौहार्दपूर्ण ढंग से मुसलमानो से नाक का आभूषण लिया हो ।

किन्तु संभावनाओं के आधार पर किसी निश्चित निर्णय पर नही पहुंचा जा सकता फिर भी उपर्युक्त तथ्यों को देखते हुए इसी बात का संभावना अधिक है कि नाक के आभूषणों का नवीं दसवी के पूर्व भारत में कोई उल्लेख न मिलना नाक के आभूषणो की भारतीय उत्पत्ति को संदिग्ध करते हैं । और यदि ये भारतीय उत्पत्ति नहीं है तो निश्चय ही अरब, ईरान फारस आदि किसी जाति से भारतीयों ने ग्रहण किया गया होगा ।

कुछ भी हो अट्ठारवीं शती में नाक के आभूषणों का पर्याप्त चलन दिखाई पड़ता है ।

1- पंजाब युनिवर्सिटी चण्डीगढ़ से प्रकाशित हिन्दी पत्रिका में डॉ० कुदप्रकाश का , नकी मत "शीर्षक लेख, पृ० 29 ।

बेसर - नासिकाभूषणों में बेसर[1] का काफी उल्लेख मिलता है । बेसर सोने की बनती थी और उसमें बहुमूल्य रत्नादि लगे होते थे :

कनक मनि मंडित बेसर ।[2]

1- "बेसर" देवग्रंथावली: सुखसागरतरंग ,पृ0 61 छं0 85; पृ0 87 छं0 237 ; 816, 236 पृ0 113; भावविलास ,पृ0 84 छं0 26; सुजानविनोद ,पृ0 47 छं0 5; शब्दरसायन, पृ0 22 छं0 124 ; मतिराम ग्रंथावली: सतसई, पृ0 184 छं0 72; ललितललाम, पृ0 155 , पृ0 348 छं0 288 ; कुमारमणि: रसिक रसाल, पृ0 146 , पृ0 22 छं0 28; तोष:सुधानिधि, पृ0 102 छं0 300 ; सोमनाथ ग्रंथावली ; रसपीयूषनिधि, पृ0 126 छं0 12, शशिनाथविनोद, पृ0 504 छं0 12; आलम: आलमकेलि, पृ0 10 छं012 ; पृ0 31 छं073; पृ0 35 छं0 81 ; पृ0 123 छं0 298 ; पृ0 123 छं0 300; भिखारीदास ग्रंथावली: खंड 2, पृ0 185 छं0 60; बेवनॉट, भाग 1 पृ0 37; डोलिट पृ0 81; अंसारी :भाग 34, हरम ऑफ द ग्रेट मुगल, पृ0 114 आईन ए0 अकबरी; अनुवादक, एच0 एस0 जैरेट, जिल्द 3, पृ0 313

2- सोमनाथ ग्रंथावली: शशिनाथ विनोद, पृ0 504 छं0 24, सुजान-विलास पृ0 641 छं0 82, देव ग्रंथावली: सुखसागर तरंग, पृ0 87 छं0 237, आलम-आलमकेलि पृ0 31, बेवनॉट पृ0 37, डोलिट पृ0 81, आईन ए- अकबरी एच. एस. जैरेट, पृ0 313

बहुमूल्य रत्नों के अलावा बेसर में मोती लगी होती थी जो अधर तक लटकती थी और मुख हिलने पर जब मोती हिलती थी तब वह ऐसी प्रतीत होती थी जैसे कि मोती नृत्य कर रही हो :

अधर सुरंग भूमि नृपति अनंग आगे,

नृत्य करे बेसर को मोती नृत्यकारी है ।[1]

इस नासिकाभूषण को पहनने के लिए नाक में छेद होता था ।[2]

नथ – नासिकाभूषणों में नथ का भी उल्लेख कवियों ने किया है । मातन नासा नथमंडल मों राजे[3] नथ का आकार गोल बताया गया है[4] तथा

1– आलम: आलमकेलि, पृ० 24 छं० 55 ; पृ० 12 छं० 27 ; देव ग्रंथावली: शब्दरसायन, पृ० 127 , वही ।

2– आलम, आलमकेलि, पृ० 14 छं० 32; दुबाएस: हिन्दू मैनर्स, कस्टम्स एंड सेरेमनीज, पृ० 343 ।

3– "नथ" सोमनाथ ग्रंथावली: माधवविनोद पृ० 328 छं० 72, ध्रुवविनोद, पृ० 502 छं० 46; देवग्रंथावली: सुजानविनोद , पृ० 57 छं० 42; शब्दरसायन, पृ० 7 छं० 70; रसविलास, पृ० 273 छं० 26; पृ० 193; प्रेमचन्द्रिका, पृ० 35 छं० 23; भिखारीदास ग्रंथावली , खंड 2 पृ० 248 छं० 21; जमीला बृजभूषण, "इंडियन ज्वैलरी आर्नामेन्ट्स एंड डेकोरेटिव डिजाइन्स, पृ० 11, पेवनाद पृ० 37, हौलैंड, पृ० 81, अंतारी: भाग 34, हरम आफ द ग्रेट मुगल, पृ० 114

4– इमि सोभ नथ अभिराम की ।
मनु कुंडली मद काम की ।।
– सोमनाथ ग्रंथावली: ध्रुवविनोद, पृ० 502 छं० 46 , माधवविनोद पृ० 328 छं० 72 देव ग्रंथावली सुजानविनोद , पृ० 57 छं० 42, पेवनाद पृ० 37, हौलैंड, पृ० 81

रत्नादि के अलावा मोती लगी नथ का उल्लेख हुआ है ।[1]

विवाह के समय नथ का होना आवश्यक माना गया है अतः नाक के इस गहने का विशेष महत्त्व रहा है ।[2]

<u>नथुनी</u> – नथ की ही भाँति नथुनी का भी प्रचलन था[3] इसमें भी मोती [4] रत्नादि[5] लगे रहते थे ।
नथ की अपेक्षा नथुनी छोटी होती थी ।

कहै मतिराम मनि मंजुल तरौना छोटी

नथुनी बिराजै गजमुकतन संग की ।[6]

1- बेंदिया जड़ाऊ बड़े मोतिन सों नीकी नथ,

–देव ग्रंथावली:शब्दरसायन प्रकाश पृ0 8 छं0 70,'

प्रेम चन्द्रिका, पृ0 35 छं0 23,'रसविलास, पृ0 273 छं0 26,'सुजानविनोद, पृ0 57 छं0 42; भारतकला भवन से प्राप्त चित्र[लिखन राय के प्रबन्ध से उद्धृत] राधा किशनगढ़ शैली 1700–1850 ई0 के मध्य

2- श्रीमती जमीला बृजभूषण, इंडियन ज्वेलरी आर्नामेन्टस एंड डेकोरेटिव डिजाइन्स पृ0 11

3- "नथुनी", मतिराम ग्रंथावली :रसराज, पृ0 282छं0 358, ललितललाम, पृ0 346 छं0 280, पृ0 314 छं0 86,'मतिराम सतसई, पृ0 395 छं0326पृ0 373 छं0 50,' रत्नावली, पृ0 42 छं0 81,'सोमनाथ ग्रंथावली: पृ0 502 छं0 9,'मनूची स्टोरिया द मोगोर भाग 2 पृ0 317

4- भिखारीदास ग्रंथावली: भाग2, मोती नथुनी के, पृ0 137 छं0 29सोमनाथ ग्रंथावली शशिनाथ विनोद, पृ0 502 छं0 9,' मतिराम: ललितललाम, पृ0 314/86, मनूची वही

5- तोषः सुधानिधि, पृ0 98 छं0 286,'मतिराम ललितललाम, पृ0 346 छं0280,' सतसई पृ0 395 छं0 326 ; वही ।

6- मतिराम ग्रंथावली: ललितललाम, पृ0 346 छं0 280,'मनूची: स्टोरिया द मोगोर, भाग 2, पृ0 317 डॉ0 ग्रियर्सन, बिहार पीजेन्ट लाइफ [1885] पृ0 155

नकमोती – नासिका भूषणों में कवियों ने नकमोती[1] का वर्णन कियाहै । नकमोती प्रायः एक लम्बोतरी लटकी हुयी मोती को कहते थे जो नासिका के निचले अग्र भाग में भाग में लटकाकर पहनी जाती थी । दो मोती के मध्य एक लम्बोतरे मोती का लटकन भी तत्कालीन चित्र में मिलता है ।[2]

लटकन – लटकन को नथ या बेसर में लगाया जाता था[3] जिससे इन आभूषणों का संतुलन बना रहता था ।

गले तथा वक्ष स्थल के आभूषण –

हार – हार का मूल अर्थ "हरण करने वाला " या पराजय है ।[4]

1– चंचल लोचन चारु विराजत पास लुरी अलकै थहरै।
नाक मनोहर औ नकमोतिन की कुछ बात कही न परै ।
– भिखारीदास ग्रंथावली, काव्यनिर्णय पृ0 87 छं0 8
भिखारीदास ग्रंथावली खंड 1, पृ0 36 छं0 249; पृ0 138 छं0 226 ; भिखारी दास ग्रंथावली; खंड 2, पृ0 23 छं0 48 ; पृ087 छं08; पृ0 170 छं0 19; रसतारांश, पृ036 छं0 249; मतिराम: सतसई, छं0 118; राधा किशनगढ़ शैली का चित्र 1700 –1850 ई0 [लक्ष्मनराय के प्रबन्ध से उद्धृत] चित्र पृ0सं0 11 जमीला बृजभूषण; द कास्ट्यूम्स एंड टेक्सटाइल्स आफ इंडिया, पृ0 58फोमेल कास्ट्यूम्स इन द ऐट्टीन्थ सेन्चुरी पहाड़ी पेन्टिंग्स चित्र सं04 ।

2– वही, राधा–किशनगढ़ शैली का चित्र ।

3– देव ग्रंथावली: सुजानविनोद, पृ057 छं0 42; कुमारस्वामी; हिन्दू मैनर्स, कस्टम्स एंड सेरेमनीज, पृ0 343; नाक के आभूषणों का विस्तृत विवरण अविनाश गुप्त, भारत में प्रचलित नाक के आभूषण कलकत्ता रिव्यू से प्रकाशित ।

4– नामलिंगानुशासन– अमरसिंह, सं. डॉ0 हरदत्त शर्मा, पृ0 156 छं0 105

अवलोकित काल में हार[1] का बहुशः उल्लेख मिलने से ऐसा प्रतीत होता है कि हार तत्कालीन समाज में स्त्रियों का गले में पहना जाने वाला प्रिय आभूषण था।

1- "हार" कंचन कुंडल कान हार उर रहे सोभा नि।

– सोमनाथ ग्रंथावली: माधवविनोद, पृ0 321 छं0 3; ब्रजेंद्र-विनोद, पृ0 788 छं0 76; शशिनाथ विनोद (प्रथमोल्लास) पृ0 505 छं0 33; रसपीयूषनिधि, पृ0 176 छं0 35; पृ0 95 छं0 42; पृ0 85 छं09; पृ0 97 छं0 52; पृ0 123 छं0 51; सुजानविलास, पृ0 642 छं0 91; श्रृंगारविलास, पृ0 298 छं0 14; श्रृंगारविलास (पंचमोल्लास) पृ0 294 छं0 16; (षष्ठउल्लास) पृ0 295 छं0 17; कुमारमणि: रसिक-रसाल, पृ0 86 छं0 82; पृ0 77 छं0 55; पृ0 14; देव ग्रंथावली: रसविलास, पृ0202 छं0 24; (अष्टम भाग) पृ0 202 छं0 28; भावविलास, पृ0 43 छं0 18; पृ0 40 छं0 14; पृ0 49 छं0 25; पृ0 69, 111; तृतीय भावविलास पृ0102; चतुर्थभाव विलास, पृ0 126 छं0 2; पृ0 128; 133; सुखसागर-तरंग, पृ0 77 छं0 223; 78 छं0 226; 105 छं0 303; संपादक बालादत्त मिश्र, पृ0 120; अष्टयाम, पृ0 1 छं0 4; पृ0 18 छं0 10; सुजानविनोद, पृ0 34 छं0 18; पृ0 52 छं0 27; पृ0 79 छं0 25; शब्द-रसायन, पृ0 25, 524; राग रत्नाकर, पृ0 8 छं0 29; मतिराम ग्रंथावली: रत्नावली, पृ0 82 छं0 140; पृ0 54 छं084; पृ0 75 छं0 127; रसराज, पृ0224 छं0 193; 243 छं0 187; पृ0 241 छं0 179; पृ0256 छं0238; पृ0 60 छं0 93; सतसई, छं0 2; 667; छं0182; छं0 199; छं0 364; छं0 429; ललितललाम, पृ0351 छं0 313; भिखारीदास ग्रंथावली: काव्य-निर्णय, पृ0 239 छं0 3; छंदार्णव, पृ0 223 छं09; भिखारीदास ग्रंथावली; द्वितीय खंड, पृ0 77 छं0 52; पृ0 186 छं0 68; पृ0 7 छं0 70; पृ0248 छं0 21; भिखारीदास ग्रंथावली; खंड1, पृ0 22 छं0 143; पृ0 47 छं0 335; पृ0 98 छं0 43; पृ0 105 छं0 65; पृ0112 छं0 104; पृ0 144 छं0 252; भूषण ग्रंथावली: शिवाबावनी, पृ0 15 छं0 10; घनानंद ग्रं0 पृ0 13 छं0 36; आलम, आलमकेलि, पृ0 7 छं016; पृ0 15 छं0 33; मआसीर-ए-आलमगीरी, पृ0 93; डुबायस: हिन्दू मैनर्स, कस्टम्स एंड सेरेमनीज पृ0 343; अंसारी: भाग 34, हरम ऑफ द ग्रेट मुगल, पृ0 114, मनूची: स्टोरिया द मोगोर, पृ0 339-40; डी-लेट, पृ0 81, पेरी, भाग 3, पृ0 252; मैण्डस्लो, पृ0 50; बर्नियर पृ0 268

विभिन्न प्रकार के रत्नजटित[1] तथा कई लड़ियों वाले हार[2] का उल्लेख कवियों ने किया है ।

1- देव ग्रंथावली: सुजानविनोद, मोती नग हीरन हार, पृ० 34 छं० 18; सुखसागर तरंग, चंद्रहार 84/222; पृ० 77 छं० 223; पृ० 78 छं० 226; पृ० 120; [चंद्रहार से तात्पर्य ऐसे हार से है जिसकी आकृति चन्द्रमा के समान होती है और उसमें बहुत अधिक श्वेत नग हीरा आदि का जड़ा रहता है] भिखारीदास ग्रंथावली; खंड 1, हीरन के हार, पृ० 191 छं० 528; मुक्ताहार पृ० 112 छं० 104; पृ० 144 छं० 252; छंदार्णव, पृ० 223 छं० 9; भिखारीदास ग्रंथावली: खंड 2, मुक्ताहल के हार, पृ० 77 छं० 53; मोतिय हार, पृ० 186 छं० 68; मतिराम ग्रंथावली; सतसई, मुक्ताहार, पृ० 67, 429; चंद्रहार, पृ०364 मुक्तामाल, 408/475; रसराज, पृ० 243 छं० 187; सोमनाथ ग्रंथावली; श्रृंगार विलास[षष्ठ उल्लास] मुकतानि के हार, पृ० 295 छं04; पृ० 298 छं० 14; सुजानविलास, पृ०642 छं० 91; रसपीयूषनिधि, मानिन के हार, पृ० 97 छं० 52; शशीनाथविनोद पृ० 505 छं० 33; ब्रजेंदविनोद, 788 छं० 76; तोषःसुधानिधि मोतिन को हार, पृ० 51छं० 152; हीरन को हार, पृ०103छं0302; दुबायस; हिन्दू मैनर्स, कस्टम्स एंड सेरेमनीज, पृ० 343; मनूची; स्टोरिया दमोगोर, भाग2 पृ० 339, -40; आईन-ए-अकबरी भाग3, पृ० 313 ।

2- कंचन पंचलरा नग मोती हरा,
- भिखारीदास ग्रंथावली, खंड 2 पृ० 98 छं० 83
राम-रत्नाकार, देव ग्रंथावली: चौसरू चारु चमेली, पृ० 6 छं021 [चौसरू का तात्पर्य चार लड़ियों वाला हार] सोमनाथ ग्रंथावली; शशिनाथ विनोद, प्रथमोल्लास पृ० 505 छं० 33; मनूची; स्टोरिया दमोगोर, भाग 2, पृ0317 राधा-किशन शैली के चित्र में राधा ने कई लड़ियों का हार पहना है 1700-1850 ई0 [निर्मलराय को प्रबन्ध काव्य रीतिकालीन हिन्दी साहित्य में उल्लिखित वस्त्राभरणों का अध्ययन] चित्रफलक 17 विभिन्न लड़ियों वाले हार के चित्र है ।

काँच की गुरियों के हार का प्रचलन था ।[1] जो संभवतः निम्न वर्ग की स्त्रियाँ पहनती ही होगी । उपर्युक्त हारों के अलावा पुष्पनिर्मित विभिन्न प्रकार के हारों का उल्लेख समकालीन कवियों ने किया है ।[2]

माला- माला और हार वैसे तो देखने में एक से प्रतीत होते हैं किन्तु माला "ग्रथित" अर्थात् गुँथीहुयी [3] और हार"प्रोजित" अर्थात् जोड़ा हुआ होता है प्राचीन समय से ही यह भेद चला आ रहा है ।[4]

1- पोत ही के छरा अपछरा सी लागति ही ।
- आलम- आलमकेलि पृ0 8 छं0 18
यहाँ पोत का तात्पर्य काँच के गुरियों की हार सेहै। तोष-सुधानिधि, पृ0 123 छं0 362; इश्कनामा,पृ0 99

2- आलम:आलमकेलि ,कुसुम के हार, पृ0 26 छं0 61; सोमनाथ ग्रंथावली, रसपीयूषनिधि, पृ0 95 छं0 42;पृ0 85 छं0 9; देवग्रंथावली: राग रत्नाकर, पोतक चमेली पृ0 6 छं0 21; चम्पक हार, पृ0 18छं0 75 ;पुहुपहार, पृ0 18 छं0 76; फूल हरा पृ019 छं0 77; भावविलास,चंपकहार, पृ0 133; रसविलास पृ0 202 छं0 24; मतिराम ग्रंथावली; कुसुम के हार पृ0 81; चमेली काहार पृ0 88; पृ0 351 छं0 313; रत्नावली,पृ0 82छं0 140; पृ0 54 छं0 84 ;पृ0 75छं0 126; पेलसर्ट,इंडिया पृ 0 25

3- अर्थशास्त्र, सं0 पं0 गंगाप्रसाद शास्त्री पृ0 123

4- आईन ए अकबरी:अनुवादक एच0 एस0 जैरेट, जिल्द3, पृ0 313

हार की ही भाँति स्त्रियाँ माला[1] को भी गले में ही धारण करती थी । सोने से बनी मनकों की लम्बी माला को जिसकी लम्बाई उदर तक होती थी मोहनमाला[2] कहा गया ।

1- भिखारीदास ग्रंथावली :भाग 2, पृ0 3 छं0 48 ;पृ0 40 छं0 11; पृ0 87 छं0 9; पृ0 102 छं0 36; पृ0118 छं0 20; पृ0 162 छं0 28; भिखारीदास ग्रंथावली:खंड 1, पृ0 15 छं0 87; पृ017 छं0103; पृ0 29 छं0 202; पृ0 47 छं0 128; पृ0 49, छं0 340 ; पृ0 47, छं0 508; पृ0 85 छं0 581; पृ098 छं0 43;पृ0 121 छं0 49; पृ0 149 छं0 273; छंदार्णव,पृ0 223 छं0 9; काव्यनिर्णय,पृ0 118 छं0 20, पृ0 82 छं0 80; देव ग्रंथावली: राग-रत्नाकर,पृ0 14छं0 57; सुजानविलास, पृ060 छं0 54; सुखसागर तरंग, पृ0 86 छं0 250; पृ0 97 छं0 283; छं0103 छं0 299; भाव विलास; पृ0 77 छं0 88; पृ0 86; द्वितीय भाव विलास,पृ0 55 छं0 30; सोमनाथ ग्रंथावली: रसपीयूषनिधि, पृ0 86 छं0 13; पृ0 136 छं0 26; श्रृंगार-विलास, पृ0 612 छं0 123; मतिराम ग्रंथावली; सतसई, छं0 405; आलम; आलमकेलि, पृ0 124 छं0 305 ;तोषः सुधानिधि,पृ0 89 छं0 259; पृ0 2 छं0 6; पृ063 छं0 182; पृ0 102 छं0 300; पृ0 123 छं0 259, ~~पृ0 2 छं0 6~~, पृ0 63 छं0 182, पृ0 102 ~~छं0 300~~, पृ0 123 छं0 362; मआसिरे -ए आलमगीरी, अनुवादक जदुनाथ सरकार, पृ0 93; मनूची: स्टोरिया द मोगोर, भाग 2, पृ0 317 मैन्डस्लो; पृ0 50, बर्नियर 223-224 डीलेट पृ0 81; बैरी, भाग 3, पृ0 313; डॉ0 मक्खनराय वही; औरंगजेबनामा: द्वितीय भाग, अनुवादक मुंशिफ,पृ0 39

2- देवग्रंथावली; भावविलास,पृ0 72 छं0 89; मनूची; स्टोरिया द मोगोर, भाग 2 पृ0 339-40; आर्विन,भाग 3, पृ0 313

विभिन्न प्रकार के पुष्पों से निर्मित पुष्प की माला पहनने का भी चलन था ।[1] चूंकि तत्कालीन काल वैभव का काल था फलतः उच्चवर्गीय लोग काफी ऊँचे दाम के रत्नादि जटित आभूषण का प्रयोग करते थे। अधिकांश आभूषणों में रत्न मोती आदि लगे रहने का उल्लेख मिलता है माला के संदर्भ में यह बात लागू होती थी ।[2]

1- "पुष्पनिर्मित माला": मतिराम ग्रंथावली: रसराज, मालती पुष्पमाला, पृ0 556छं 77; तोषसुधानिधि : प्रसून की माला, पृ0 60 छं0 174; देवग्रंथावली: रागरत्नाकर, फूल जपा उर, पृ0 4छं0 13; पृ0 4 छं0 14; पुहुप माल, पृ0 5छं0 16; पृ0 5छं0 18; चम्पक फूल माल गरे, पृ0 10 छं037; सुजानविनोद, सरोज मईमृदुमाल, पृ0 50 छं0 22; फूलनि माल, पृ0 79 छं0 26; सुखसागरतरंग, पृ0 98 छं0 288; कुमारमणि: रसिक रसाल, पृ0 14; पेंसर्ट इंडिया , पृ0 25

2- देवग्रंथावली :सुजानविनोद मनिमाल, पृ0 60 छं0 54; सुखसागर-तरंग, मोतीमणिमाल, पृ0 86 छं0 250; लरे मोतिन की, पृ0 97 छं0 283 ; भिखारीदास ग्रंथावली: खंड 1, मुकुतमाल, पृ0 156छं0 87; 29, छं0 202; पृ0 47 छं0 138 पृ0 49; छं0 340; मोतीमाल, पृ0 47 छं0 508; मुकतानि को माल, पृ0 85छं0 581; मनि लाल को माल पृ0 98 छं0 43; मुक्ताहल पृ0 121 छं0 14(यहाँ माला को हल कहा गया है); भिखारीदास ग्रंथावली; खंड 2, लालमाल पृ03 छं0 48 ; मुक्ताहल पृ0 87 छं0 9; मोतीमाल पृ0 102 छं0 36; पृ0 118 छं0 20; आलम; आलमकेलि, मुक्ताहार, पृ0 124 छं0 305; मनूची , स्टोरिया डमोगोर, भाग 2, पृ0 339,-40; लल्लनराय हिन्दी रीतिकालीन---, चित्रफलक 17

कई लड़कियों को भी माला पहनने का चलन था ।[1]

माला के अन्तर्गत कंठमाल [2] का उल्लेख मिलता है :

कंठाभूषण में हुमेल का भी उल्लेख मिलता है ।

दरसत कंठ भूषन अनक मनि जटित हेम के झलमलंत । जगजगति रतन मंडित हमेल, जातें हटानि की छुटत रेल । [3]

1– भिखारीदास ग्रंथावली; प्रथम खंड, तिलरी माला, पृ0223 छं0 9; पंचलरी 90 छं0 9; सोमनाथ ग्रंथावली; शशिनाथविनोद§प्रथमोल्लास§ ष पंचलरी नौलरी पृ0 505 छं0 33; आलम; आलमकेलि, पृ0 30 छं0 70; मनूची; स्टोरिया द मोगोर, भाग 2 पृ0317; लल्लनराय, वही, । राधा किशनगढ़ शैली का चित्र राधा में तिलरी धारण की है। 1700–1850 ई0 के §लल्लनराय की प्रबन्ध से उद्धृत चित्रफलक ।।

2– "कंठमाल" आलम; आलमकेलि, पृ0 30 छं0 70; भिखारीदास ग्रंथावली; पृ0 144छं0 252; पृ0 22 छं0 143; देव ग्रंथावली; सुखसागर तरंग, पृ0 98 छं0 285; सोमनाथ ग्रंथावली; श्रृंगार विलास, पृ0 612 छं0 123; रसपीयूषनिधि, पृ0 136 छं0 24; वही, श्रीमती जमीला बृजभूषण कास्ट्यूम्स........ फोमेल कास्ट्यूम्स इन द ऐट्टीन्थ सेन्चुरी पहाड़ी पन्टिंग्स पृ0 60, चित्र सं । तथा 4

3– "हमेल" सोमनाथ ग्रंथावली; सुजानविलास, पृ0 642 छं0 90; शशिनाथ विनोद, पृ0 505 छं0 33; भिखारीदास ग्रंथावली; खंड 1, 145 छं0 252; खंड 2, पृ0 248 छं0 21; लल्लनराय, वही ।

चौकी, उरबसी, धुकधुकी – ये तीनों प्रायः एक प्रकार के आभूषण हैं । उरबसी का स्थान वक्षस्थल और पेट की संधि का गढ़ा होता है, जिसे धुकधुकी भीकहते हैं । इसीलिए इस आभूषण को भी धुकधुकी कहा जाता है । इसे पदिक या जुगनू भी कहते हैं ।[1]

तावीज – तत्कालीन समाज में रूढ़ियाँ और अंधविश्वास व्याप्त था फलतः स्त्रियाँ तावीज[2] और रक्षा-यंत्र भी धारण करती थी जोगले मे पहना जाता था ।

कहै कवि तोष जिय जानि दुख-काती
तातें ,छाती की तावीज पिय पाती को किये रहै ।।[3]

1- "उरबसी" भिखारीदास ग्रंथावली: भाग 2 , पृ0 77 छं0 53 , धुक-धुकी तोषसुधानिधि, पृ0 89 छं0 298 , देव ग्रंथावली: पृ0छं0 283 ; तथा "चौकी-
(1) कंचन चौकी जराय जरी मणि मानिक मोतिन ज्योतिन ताकी ।
कैधों दुहूधु बीच बसाय प्रिया पिय को प्रतिमूरति राखी ।।
– देव सुखसागर तरंग, पृ0 77 छं0 225
औरंगजेबनामा: द्वितीय भाग, अनुवादक मुंशिफ, पृ0 118, लल्लनराय, रीतिकालीन हिन्दी साहित्य में उल्लिखत वस्त्राभरणों का अध्ययन, चित्रफलक 17, तथा पृ0 157

2- "तावीज" तोष-सुधानिधि, पृ0 64 छं0 184 , भिखारीदास ग्रंथावली, खंड 1, पृ0 85 छं0 283 ; खंड 2, पृ0 102 छं0 36 ; जाफर शरीफ, कानून-ए- इस्लाम, अनुवादक, जो0एस0 हरक्लाट्स, पृ0 247-82

बाहु के आभूषण - बाजूबंद- बाँह में सबसे ऊपर पहने जाने वाला यह आभूषण दो-ढाई इंच की लचीली पट्टी जैसा होता था जिसमें घुंघरू, कुंदना आदि लटकाया जाता था । घुंघरू बजने मधुर आवाज करती थी ।[1] रत्नजटित बाजूबंद प्रचलित था ।[2]

बाजूबंद के अलावा टाड[3] नामक आभूषण भी बाहु में पहना जाता था । इसे बाजू में पहना जाने वाला खोलदा, वृत्ताकार आभूषण बताया गया है ।[4]

1- बाजूबंद : देवग्रंथावली ,सुखसागर तरंग, पृ0 97 छं0 283; सोमनाथ ग्रंथावली, शशिनाथ विनोद,(प्रथमोल्लास)पृ0 505छं033; माधवविनोद,पृ0 329 छं0 75; सोमसुधानिधि,पृ0 102 छं0 300;बाजूबंद घुंघरू बजे झक-झक पृ0 23 छं0 70; मआसीर-ए-आलमगीरी, अनुवादक सरकार,पृ0 93,पीसन ओझा, ग्लिम्पसेज ऑफ सोशल लाइफ इन मुगल इंडिया,पृ0 15;डौलेट पृ0 81; बर्नियर पृ0 223-224; मुहम्मदयासीन,ए सोशल हिस्ट्री ऑफ इस्लामिक इंडिया,पृ0 41

2- सोमनाथ ग्रंथावली: पृ0 505 छं0 33; आलम:ग्रंथावली : अक्षरमालिका,पृ0 127 छं0 64; वही ,

3- "टाड" गोरी गूजरी की दस्य बर्नत विलोकति ही
कहुँ डारी मुरकी अनूप कुच टाडें कहूँ
× ×
-सोमनाथ ग्रंथावली सोमसुधानिधि,पृ0 136छं0 -
सुजानविलास, पृ0 642 छं0 92; शृंगारविलास ,पृ0 612छं0 123; माधव-विनोद पृ0329, छं0 76;आलम:आलमकेलि संग्रह, पृ0 52; आईन-ए-अकबरी, भाग 3,पृ0 343

4- आईन०,भाग 3 जैरेट, पृ0 313

बिजायठ–बिजायठ नामक आभूषण बाजूबन्द के नीचे पहना जाता है । कवि ने इसके बाँधे जाने का उल्लेख किया तथा पहनने पर यह भुजमूल (बयन) से चिपका रहता है और इसमें लगी झबिया हिलने पर झनकार उत्पन्न करती है :

> झुमि रहे बयन बिजायठे जराउ छबा झूमति झमकि झुकि सौति उर सूल है ।
>
> संघार समीर धीर अँधर बिराम काम धाम भुजमूल भामती के भुजमूल है।[1]

कलाई के आभूषण – कंकन (कड़ा) कलाई के आभूषणों में कंकन-उल्लेख मिलता है :

> सखी किह गली कित जाती है। निडर चली ।
>
> करने करि किंकिनी औ कंकन कलाई में ।[2]

कंकन को कँकनी[3], कँगनो[4] तथा ककना[5] भी कहा गया है । कलाई के अन्य आभूषणों

1– देवग्रंथावली: सुखसागरतरंग, पृ0 78 छं0 227 : सुजान विनोद, पृ0 10 छं0 19 भिखारीदास ग्रंथावली, खं1, पृ0 90 छं0 9, डॉ0 ग्रियर्सन, बिहार पीजेन्ट्स लाइफ पृ0 154 ,

2– "कंकन" भिखारीदास ग्रंथावली: शृंगारनिर्णय, पृ0 149 छं0 273; काव्यनिर्णय, पृ0 130 छं0 42; भिखारीदास ग्रंथावली, खं, पृ0 104 छं0 65; पृ0 149छं0 273; पृ0 150 छं0 277; भिखारीदास ग्रंथावली; खं 2, पृ0 130 छं042; सोमनाथ ग्रंथावली / सुजानविनोद, पृ0 502 छं0 44; माधवविनोद, पृ0 469 छं0 104; पृ0 329 छं0 76; सुजानविलास पृ0 642छं092; देव ग्रंथावली: देवचरित्र, पृ017छं0 83; रसविलास, 237छं0 28; रागरत्नाकर, पृ0 3 छं010; भावविलास, पृ0 69, छं0 35; कुमारमणि: रसिक रसाल पृ0 14'छं030; तोष: सुधानिधि पृ0 89 छं0 259; माआसीर-ए-आलमगीरी, अनुवादक सरकार, पृ0 93, मुहम्मदयासीन; ए सोशल हिस्ट्री ऑफ इस्लामिक इंडिया, पृ041 मेन्डस्लो पृ0 50, मनूची; स्टोरिया द मोगोर भाग2, पृ0 339-40डुबाएस हिन्दू मैनर्स, कस्टम्स एंड सेरेमनीज, पृ0 342

3– कँकनी देव-सुखसागर तरंग पृ07 छं0 228

4– कँगनो वही: पृ0 96 छं0278

5– "ककना" तोषसुधानिधि पृ0102छं0300

में चूड़ी [1] का वर्णन कवियों ने किया है। काँच की चुरी को हिन्दू स्त्रियों के लिए सौभाग्य का चिन्ह माना गया।[2] तत्कालीन समाज में स्त्रियाँ अधिक संख्या में चूड़ी पहनती थी जिसके लिए चारिक [अधिक संख्या] शब्द का प्रयोग किया गया:

> चारिक चुरी कर सोहाग माँग मोती इतने ही इतराति साली
> सौतिन करेज हो।[3]

1- "चूड़ी" तोष-सुधानिधि: पृ0 23 छं0 70; पृ0 58 छं0170; भिखारीदास ग्रंथावली: खंड 1, पृ0 30 छं0 209; पृ0 112 छं0 104; पृ0 121 छं0 147; पृ0 121 छं0149; पृ0 131 छं0 195; रससारांश, पृ0 30 छं0 208; काव्य-निर्णय, पृ0 47 छं0 19; देवग्रंथावली, सुजानविनोद, पृ0 1 छं0 2; पृ0 52 छं0 27; पृ0 60 छं0 59; सुखसागरतरंग पृ0 79 छं0248; अष्टयाम, पृ0 24छं0 16; अंसारी: हरम ऑफ ग्रेटमुगल पृ0 114; इरफान हबीब, पृ0 99, दुबाएस: हिन्दू मैनर्स, कस्टम्स एंड सेरेमनीज पृ0342 आईन ए अकबरी, भाग3 जैरेट पृ0 343 सरकार, पृ0 345।

2- देव ग्रंथावली: सुजानविनोद, पृ0 52 छं0 27, इरफान हबीब पृ0 99 सुखरंग-82/213

3- देवग्रंथावली: सुजानविनोद, पृ0 52 छं0 27; पृ0 72 छं0 41; देव, जगदीश गुप्त, रीतिकाव्यसंग्रह पृ0 73 छं0 41; पृ0 73 छं0 40; तोषःसुधानिधि चुरियाँ, पृ0 23 छं0 70; दुबाएस हिन्दू मैनर्स, कस्टम्स एंड सेरेमनीज पृ0342 [चूड़ी] हाथ में आधी या चौथाई दूरी तक पहनी जाती थी।

हाथों को गजरे [1] नामक आभूषण से भी सुसज्जित करती थीं । सोने से निर्मित रत्नजटित पहुँची हाथ में पहना जाने वाला अन्य आभूषण था:

कर कंचन की पहुँची ।[2]

__वलय__ - यह हाथ का पतला कड़ा है जो प्राचीन समय से ही चला आ रहा था ।[3]

__हथेली एवं अंगुलियों के आभूषण :__ __हथफूल__ - हथफूल हथेली के पृष्ठ भाग में पहना जाने वाला आभूषण था ।[4]

1- "गजरा" आलम, आलमकेलि पृ0 123 छं0 298, देवग्रंथावली: अष्टयाम पृ0 18 छं0 10, आईन-ए- अकबरी भाग 3, जे एंड एस0 पृ0 343-345

2- "पहुँची" भिखारीदास ग्रंथावली; खंड 1, पृ0 85 छं0 581; आलम; आलमकेलि, पृ037 धम्मन की पहुँची, तोष-सुधानिधि, हीरन की पहुँची, पृ0 51छं0 152; पृ0 63 छं0 183; मुहम्मदयासीन; ए सोशल हिस्ट्री ऑफ इस्लामिक इंडिया, पृ0 41; मैन्डलसो, पृ0 50; डौमिट, पृ0 81; मआसीर-ए आलमगीरी, अनुवादक सरकार, पृ0 93, मनूची, स्टोरिया द मोगोर, भाग 2, 339-40

3- "वलय" देवग्रंथावली : सुखसागर तरंग, पृ0 79 छं0 229 मतिराम ग्रंथावली सतसई, छं0 375 , भिखारीदास ग्रंथा वली, खंड1, पृ0 20 छं0 134, पृ0 125 छं 167 पृ0 132छं0 199, भिखारीदास ग्रंथावली खंड 2, पृ0 139 छं0 43 आप्टेकृत संस्कृत इंग्लिश डिक्शनरी, जिल्द1, पृ0519 मआसीर आलमगीरी सरकार पृ0 93 डौमिट पृ0 81 मैन्डलसो पृ0 50, कवियों ने चूड़ी के समान कहा है।

4- "हथफूल" सोमनाथ ग्रंथावली; शशिनाथविनोद, पृ0 505 छं0 33; मनूची, स्टोरिया द मोगोर, भाग 2, पृ0 317

आरसी - आरसी नामक आभूषण हाथ की अगुलियों मे से अंगूठे में धारण किया जाता था जिसमें नग के स्थान पर शीशा लगा होता था और उस शीशे में किसी भी छवि स्पष्ट रूप से देखी जा सकती थी :

आरसी ॲंगुरि करी कर की कहि तोष लख्यो छवि भाँति भलो सो[1]।

आरसी के अतिरिक्त विभिन्न अगुलियों में पहनने के लिए विभिन्न प्रकार की अँगूठिया थी :

अरू नव हथफूल आरसी मुँदरी अँगुरिन विविध लसाईं ।[2]

मुँदरी या अँगूठी प्रायः सोने की होती थी जिसमे रत्न जड़े होते थे ।[3]

1- "आरसी" तोषः सुधानिधि, पृ० 38 छं० 21 , देव ग्रंथावली : सुखसागर तरंग दर्पन की मुंदरी प० 9 छं० 13, कुमारमणिः रसिक-रसाल, पृ० 253 भिखारीदास ग्रंथावली खंड 1, पृ० 168 सोमनाथ ग्रंथावली : शशिनाथविनोद प्रथमोल्लास पृ० 505 छं० 33, अंसारी हरम ऑफ द ग्रेट मुगल, भाग 34, पृ० 114 , थेवनॉट , चैप्टर × ×; ~~पृ० 37; छं०~~ 38 मनूची, स्टोरिया द मोगोर, भाग 2 पृ० 340

2- सोमनाथ ग्रंथावली : शशिनाथ विनोद, पृ० 505 छं० 33; माधवविनोद, पृ० 329 छं० 77; सोमनाथ ग्रंथावली : पृ० 510 छं०110; कुमारमणि रसिक-रसाल, पृ० 85 छं075; देव ग्रंथावली; सुखसागर तरंग, पृ० 79 छं० 228; पृ० 79 छं० 229; मतिराम; रसराज, 252/224; रत्नावली, 81/138; मजालीस- ए - आलमेगीरी; अनुवादक सरकार, पृ093; अंसारी, हरम आफ द ग्रेट मुगल, पृ0114 मुहम्मदयासीन; ए सोशल हिस्ट्री आफ इस्लामिक इंडिया, पृ० 41; इलियट पृ0 81; मनूची; स्टोरिया द मोगोर, भाग 2, पृ0 339-40; आईन; जे रेड सेंड, पृ0 343, 345; औरंगजेब नामा, हिमाम, अनु• मुंसिफ , पृ0 39

3- देव ग्रंथावली; सुखसागर तरंग, पृ0 79 छं0 228 ; सोमनाथ ग्रंथावली; माधवविनोद, पृ0 329, छं0 77, ~~वृंद विनोद~~, पृ0 510, छं0 110 ; 502, 12 मनूची , स्टोरिया द मोगोर, भाग 2 पृ0 340

कटि के आभूषण : किंकिणी – किंकिणी जिसे रशना क्षुद्रघंटिका आदि कहा गया कमर में पहना जाने वाला आभूषण था:

मंद गयंद की चाल चलै कटि किंकिनी नेवर की धुनि बाजैं ।[1]

किंकिनी के अतिरिक्त स्त्रियाँ मेखला नामक आभूषण भी धारण करती थी :

1– मतिराम: रसराज, पृ० 285 छं० 375 ; पृ० 274 छं० 319 ; पृ० 54 छं० 71; पृ० 64 छं० 103; पृ० 109 छं० 257 ; पृ० 113 छं० 27; सतसई, पृ० 413 छं० 537; रत्नावली पृ० 56 छं० 89; पृ० 91 छं० 158; पृ० 94 छं० 164; पृ० 94 छं० 165; सोमनाथ ग्रंथावली, रसपीयूषनिधि, पृ० 68 छं० 43; पृ० 67 छं० 38; पृ० 70 छं० 49; श्रृंगारविलास, पृ० 282 छं० 38; पृ० 283 छं० 42; माधव विनोद पृ० 415 छं० 33; पृ० 441 छं० 93; 493/113; रामचरित्र रत्नाकर पृ० 71 छं० 18; ब्रजेंद्रविनोद, पृ० 501 छं० 40; सुजानविलास, पृ० 642 छं० 99; पृ० 808 ; सोमनाथ-ग्रंथावली; पृ० 502 छं० 9; देवग्रंथावली; भाव विलास, पृ० 91 छं० 63; पृ० 43 छं० 18; पृ० 73 , 87; 109; चतुर्थ भाव विलास, पृ0110 छं04; सुखसागर तरंग, किंकणीक रसना, [रत्नमणि मुक्तायुक्त] पृ० 75 छं० 218; पृ० 98 छं० 285; पृ० 83 छं० 218; पृ० 79 छं० 194 ; पृ० 74 छं० 163; पृ० 115 छं० 6; अष्टयाम, पृ० 18 छं010; शब्दरसायन, पृ० 38; प्रेमचन्द्रिका, रसना, पृ० 41 छं० 43; रागरत्नाकर कटिसूत्र, पृ086 , 31; सुजानविनोद, रसना रव, पृ० 61 छं० 59; पृ० 55 छं० 37; आलम-आलमकेलि, क्षुद्र घंटिका पृ० 760 , 16; किंकिणी पृ० 24 छं० 55; पृ0113 छं० 370; पृ0115 छं० 378 ; रसना, पृ० 38, छं० 90; भिखारीदास ग्रंथावली: खंड 2, पृ० 248 छं० 21; रसना, भिखारीदास ग्रंथावली; खंड 1, पृ0132 छं० 198 ; अंतरीःहरम आफ द ग्रेट मुगल, भाग 34, पृ0114, आईन०, भाग 3, पृ० 313

करभक मेखला पहिरैं नारी ।[1]

पैर के आभूषण – पैर के आभूषण में घूंघरी या घुंघरिया धारण किये जाने का प्रसंग मिलता है ।

पिय वियोग मैं तरुनि को पियरानो मुख जोति ।

मृदु भुजा को घुंघरी कटि मैं किंकिनी होती । [2]

अन्य चरणाभूषणों में पायल का उल्लेख मिलता है । जिसमें घुंघरू लगे होने के कारण चलते समय ध्वनि होती थी ।[3]

1– सोमनाथ ग्रंथावली; ध्रुवविनोद, पृ0 708 छं0 24 ; पृ0 292 छं0 76 ; देव ग्रंथावली; रामररत्नाकर, पृ0 5 छं0 16 ; वही; तथा आईन0, 3, जे. एंड सेल, पृ0 343–345 ।

2– सोमनाथ ग्रंथावली : रसपीयूषनिधि, पृ0 206 छं0 187; [नायिका विरह से इतनी पतली हो गयी है कि वह पैर के घुंघरी नामक आभूषण को किंकिनी बनाकर कमर में पहन लेती है] सोम–सुधानिधि; पृ0 16 छं0 53; पृ0 23 छं0 29; पृ0 39 छं0116; पृ0 132 छं0 348; घुंघरिया पृ0 93छं0 273 ; 97 छं0 284 ; आईन–ए– अकबरी, भाग 3, पृ0 313

3– "पायल" भिखारीदास ग्रंथावली; खंड1, काव्य निर्णय, पृ0 9 छं0 24; 125 छं0 167; भिखारीदास ग्रंथावली; खंड 2, पृ0 139 छं0 43; सोमनाथ ग्रंथावली; ध्रुवविनोद, पद भान पायल बाजती; पृ0 501 छं0 39 [पायल को पायल कहा गया है , हेमिल्टन भाग 1, पृ0 163; मनूची ; स्टोरिया द मोगोर, भाग 2, पृ0 340, अंसारी; हरम ऑफ द ग्रेट मुगल, 34, पृ0114 आईन ए अकबरी, भाग 3, जे. एडं एस, पृ0 343–345

नूपुर [1] और पायजेब [2] पायल की भाँति पैरों में पहना जाने अन्य प्रकार का आभूषण था ।

जेहर[3] का उल्लेख भी चरणाभूषण के अन्तर्गत मिलता है ।

1- पग के धरत कल किंकिनी नूपुर बजे
बिछिया झनक उठे एक ही झमक तें ।
- मतिराम, रसराज पृ0 239 छं0 170;
पृ0 238छं0 168; 274 छं0 319; पृ0239छं0170; पृ0 92; नेवर, 54छं071; 113, छं0 271 ऋरत्नावली: पृ0 56 छं0 89; कुमारमणि, रसिक-रसाल, पृ0 48 छं0 55; सोमनाथ ग्रंथावली: पृ0503 छं0 22; माधवविनोद, पृ0493 छं0 113; 444 छं0130 ; 329/79 ; रत्नाकर पृ0 71 छं018; रसपीयूषनिधि पृ0 95 छं0 42; पृ0 96 छं0 48; ब्रजेंद्रविनोद पृ0 501 छं0 39; पृ0 709 छं0 32; पृ0 511 छं0112 ; 774 छं044; शृंगारविलास, 304 छं0 43; देवग्रंथावली: भावविलास, पृ0 68 छं0 8; 43/18; सुखसागर तरंग, पृ0 72 छं0 152 ; 82/214 नेवर, देवचरित्र पृ0 72 छं0 21; प्रेम-चन्द्रिका, नेवर, पृ041 छं0 43; आलम; आलमकेलि, पृ0 24 छं0 55; पृ0 31 छं0 71 ; पृ0117 छं0 266; भिखारीदास ग्रंथावली: खंड 1, पृ0 456 , 304; रससारांश, पृ0 45 छं0 304; नूपुर को कहीं-कहीं नेवरभी कहा गया है। नूपुर की विशेषता यह है कि यह ध्वनि प्रधान आभूषण है।

2- सोमनाथ ग्रंथावली: सुजानविलास, पृ0 642 छं0101; रसपीयूषनिधि पृ0 176, 35

3- देव ग्रंथावली: सुजानविनोद पृ051 छं024, सोमनाथ ग्रंथावली, रसपीयूषनिधि पृ0 176छं0 35; सुजानविलास, पृ0 642 छं0101 , अंसारी, हरम ऑफ दि ग्रेट मुगल, 34, पृ0 114; आईन-ए- अकबरी, -भाग 3 जैरेट, पृ0 313

इनके अलावा पैर की अंगुलियों में बिछिया या बिछुआ[1] धारण किया जाता था। अनवट पैर के अंगूठे में पहना जाने वाला आभूषण था :

रूप गुमान भरी मद में
पग होंअंगूठा अनौट सुधारे ।[2]

"बिछिया"

1- गौने के चौस कहै मतिराम
सहेलिन को मिलि के गनु आयौ ।।
कंचन के बिछिया पहिरावत
प्यारि सखी परिहास बढ़ायौ ।।

— मतिराम रसराज पृ० 269 छं० 296 , पृ० 239 छं० 170 पृ० 54 छं० 71, तोष:सुधानिधि पृ० 13 छं०43 पृ० 23 छं० 70 देव ग्रंथावली अष्टयाम, प० 18-10, भाव विलास पृ० 68, 109, पृ०77 छं० 9, 103 छं० 2, पृ० 86 छं० 38, पृ० 108, 97 छं० 22 , 99 छं०30, पृ० 100 छं० 39, पृ० 110 छं० 4, सुखसागर तरंग 79 छं०194 ओविंगटन पृ० 320, आईन-ए अकबरी भाग 3, जे एंड एस पृ० 343-345

2- "अनवट," मतिराम; रसराज, पृ० 217, छं० 80; रत्नावली, पृ० 64छं०104; सोमनाथ ग्रंथावली शशिनाथविनोद प्रथमोल्लास पृ० 503 छं० 22; भिखारीदास ग्रंथावली; खंड1, पृ० 105छं० 69; औरंगजेबनामा, अनुवादक मुंसिफ, भाग 2, पृ० 39; आईन, भाग 3, जैरट., पृ० 313

पुरुषों तथा बच्चों के आभूषण :

स्त्रियों को अपेक्षा पुरुषों को आभूषण के प्रति कम रूचि थी इसलिए तत्कालीन साहित्य में स्त्रियों की अपेक्षा पुरुषों के आभूषण का कम उल्लेख मिलता है। फिर भी कुछ आभूषण ऐसे थे यथा, माला, अंगूठी आदि जो स्त्री पुरुष दोनो इस्तेमाल करते थे। और कुछ आभूषण पुरुष, स्त्री अलग-अलग पहनते थे। शिरोभूषण में पुरुष मुकुट लगाते थे :

पीवै सोभा सीस तब रचिए मुकुट बनाइ ।
बढ़ति बड़ाई मुकुट की जब हरि सीस लगाइ ।।[1]

1- "मुकुट" सोमनाथ ग्रंथावली: रसपीयूषनिधि, पृ०206छं0189; पृ0 378छं034, 49, छं0 49; पृ0187छं015; पृ0134छं019; पृ0 120छं044; पृ0122छं050; पृ0 134छं018; ब्रजेंदविनोद, पृ0 514छं011; पृ0626छं018; पृ0709छं035; पृ0841 छं0 48; रामकलाधर पृ0 455छं09; माधवविनोद पृ0 321छं03 पृ0 317 छं01; रामचरित्ररत्नाकर, पृ0 231छं03; ध्रुवविनोद पृ0555छं0 52; सुजानविलास पृ0 759छं0 7; श्रृंगार विलास, पृ0 601 छं069; पृ0602छं072; भिखारीदास ग्रंथावली: छंदार्णव, पृ0 119 छं0161; पृ0119 छं0165; पृ0 74 छं0508; पृ0221 छं0 45; काव्यनिर्णय, पृ040छं011; पृ088छं021; पृ0228छं039; रससारांश: पृ0 77छं0521; भिखारीदास ग्रंथावली; खंड 1, पृ0228छं039; मतिराम ग्रंथावली; रत्नावली, अवतंस, पृ0 107 छं0 190; पृ0 17 छं01; किरीट पृ0 82 छं0140; 84 छं0144 पृ0299छं05; ललितललाम, पृ0352 छं0322; सतसई, पृ0401 छं0590; रसराज, पृ0290छं0401; देव ग्रंथावली: सुखसागरतरंग, पृ061 छं085; देवसुधा किरीट, पृ0 1छं02; देव: जगदीश गुप्त, रीतिकाव्यसंग्रह पृ0728छं035; कुमारमणि: रसिक-रसाल, पृ0 1छं0 1; पृ0 96छं0115; उपर्युक्त कुछ छंदों में मुकुट को किरीट और अवतंस भी कहा गया है। मुकुट का चलन सामान्य रूप से था ऐसा नहीं लगता इसका प्रयोग विवाह आदि अवसरों पर ही होता होगा क्योंकि मुकुट का अंकन कृष्ण के ही संदर्भ में हुआ है। श्रीमती चमीला कृष्णकुमार: कास्ट्यूम्स एंड टेक्सटाइल्स इन कास्ट्यूम्स रोमैन्टिक इन द पहाड़ी पेन्टिंग्स ऑफ द एटटीन्थ सेन्चुरी चित्र 3 में कृष्ण को मुकुट पहने दिखाया गया है।

मुकुट में कलँगी [1] भी लगी होती थी । पुरूषों के अन्य आभूषणों में विभिन्न प्रकार कुंडल का उल्लेख मिलता है जो कानों में पहना जाता था :

> मोर परवानि किरीट बन्यो,
>
> मुकुतानि के कुंडल श्रौन बिलासी ।[2]

ग्रीवाभूषण में पुरूष वर्ग हार [3] तथा माला का प्रयोग करते थे :

1- "कलँगी" सोमनाथ ग्रंथावली: प्रेमपचीसी पचरंग पाग लटपटी तिलपै कलँगी मनिमय वारी है" पृ0 893 छं0 17 औरंगजेबनामा द्वितीय भाग अनुवादक मुंसिफ पृ0 118

2- "कुंडल"- मतिराम: रसनावली, पृ0 84 छं0145; ललितललाम पृ0 352 छं0 322; पृ0 329 छं0 174; सोमनाथ ग्रंथावली: ब्रजेंदविनोद, मकराकृति कुंडल, पृ0690 छं07; पृ0 695 छं0 37; पृ0 621 ; 21; 708 छं023 ; 841 छं0 49; 514 छं0 11; 788 छं0 76; रसपीयूषनिधि, मनिमय कुंडल, पृ0 78 छं0 24; छं0 24 पृ0 49छं0 49; पृ0 120 छं0 44; पृ0 122 छं0 50; पृ0134 छं019; पृ0 87छं015; पृ0 163छं016; ध्रुवविनोद: पृ0551 छं021; पृ0 555 छं059; रामचरित्र रत्नाकर, द्वि0ख0पृ0 202 छं02; पृ0 214 छं013; प्रेमपचीसी, पृ0 893छं017; सुजानविलास, पृ0 794छं023; रामकलाधर, पृ0 455छं09; माधव-विनोद, कंचनकुंडल, पृ0 321छं03; कालधौत कुंडल, पृ0327 छं0 59; भिखारीदास ग्रंथावली: श्रृंगारनिर्णय, पृ0210छं0 582; काव्यनिर्णय, पृ098छं019; छंदार्णव, पृ0 221छं045; हेमिल्टन भाग 1, पृ0 163आईन-ए-अकबरी, भाग3, पृ0126 पी. एन. ओझा; ग्लिम्पसेज आफ सोशल लाइफ इनमुगल इंडिया, पृ0 15

3- "हार"- हरि द्युति कोकुंडल मुकुट हार हिये को स्वच्छ ।
> आँखिन देख्यौं तो रह्यो हिय मैं छाई प्रतच्छ ।
>
> -भिखारीदास ग्रंथावली, द्वि. ख. काव्यनिर्णय पृ0 239 छं0 3

रस सारांश पृ032छं0225; मतिराम:ललितललाम, पृ0354छं0334; सतसईपृ0 405 छं0 437; रसनावली, पृ0 75छं0127; सोमनाथ ग्रंथावली, द्वि0ख0, पृ0239, छं0 10; ब्रजेंदविनोद, पृ0 708 छं023; रामकलाधर, पृ0 455 छं09; [illegible]ग्रंथावली; पृ0 74 छं0 68; 904/21; 915/4

सेत माल पहरै जुग भा' ।[1]

माला में पुरूष वर्ग एक विशेष प्रकार की माला पहनते थे जिसे बनमाला कहा गया :

मोती माल बनमाल गुंजन की माल गरै,

फूले फूले फूलनि के गजरा रसाल है ।[2]

1- "माला" सोमनाथ ग्रंथावली: रामचरित्र रत्नाकर, पृ0 106 छं0 19; पृ0 107 छं0 27; पृ0 111 छं0 48; बेसतीमाला, ब्रजेंदविनोद, पृ0 560 छं0 73; पृ0 735 छं0 11; मतिराम: ललितललाम, गुंज की माला, पृ0 336 छं0223; भिखारीदास ग्रंथावली: खंड1 पृ0 74 छं0 58; गुजमाल, श्रृंगारनिर्णय, पृ0 90 छं0 9; देवग्रंथावली: रसविलास, पृ0 176 छं0 46; बर्नियर 268; पेन्सर्ट इंडिया पृ0 25

2- "बनमाला" भिखारीदास ग्रंथावली: खंड 1, 74 छं058; छंदार्णव, पृ0221 छं0 45; भिखारीदास ग्रंथावली: खंड 2, पृ0 125 छं0 14; कुमारमणि, रसिक-रसाल पृ0 8 छं015; सोमनाथ ग्रंथावली: रसपीयूषनिधि, पृ0 111 छं0 25; पृ0 78 छं024; ब्रजेंदविनोद, पृ0 691 छं010; पृ0 626 छं0 18; ध्रुव विनोद, पृ0555 छं0 60; देवग्रंथावली: देवसुधा पृ0117 छं0 210; भावविलास, पृ0 73; शब्दरसायन, पृ0 45; मतिराम ग्रंथावली: रसराज, पृ0 291 छं0 402; पृ0 292 छं0 410; पृ0 372 छं0284; पृ0213छं060; ललितललाम, पृ0 205; पृ0 353; छं0323; छं052; 6 62 ; 476; छं0 105; पृ0334 छं0268; रत्नावली, पृ083छं0 143; पृ0 107 छं0191; सतसई, छं0 426 ; 383 छं0186; आलम: आलमकेलि छं0 91; बनमाला की विशेषता यह थी कि यह एक विशेष प्रकार के फूलों से निर्मित थी तथा घुटनों तक लम्बी होती थी । श्रीमती यशोधरा कुमुदम: कास्ट्यूम्स एंड टेक्सटाइल्स ऑफ ऐट्टोन्थ सेन्चुरी पृ057 चित्र सं0 3 ।

भुजा के आभूषण में पहुँची [1] भुजबंद [2] तथा बाजूबन्द पहनते थे ।

सोहत बाजूबंद बड़े बाहुनि जाकैं ।[3]

हाथ के आभूषणों में पुरूष कंकन का भी प्रयोग करता था :

काहू लई कर की बँसरी कवि देवकोउ कर कंकन मोरे ।[4]

1- "पहुँची"- कंचन की पहुँची मुक्तानि की मंजुल माल गैरे ।।
-भिखारीदास ग्रंथावली: भाग।, श्रृंगारनिर्णय 85छं0 581; तोष सुधानिधि, पृ0 63 छं0 182; मआसीर-ए-आलमगीरी, अनुवादक सरकार, पृ093, मनूची ;भाग 2, स्टोरिया दमोगोर, पृ0 339-40 डौमिट पृ081; मैन्डस्लौ पृ0 50; मुहम्मदयासीन; ए सोशल हिस्ट्री ऑफ इस्लामिक इंडिया, 41

2- "भुजबंद"- सोमनाथ ग्रंथावली ;द्वि खं, पृ0 214 छं0 13; 231 छं0 11; ब्रजेंदविनोद, पृ0 502 छं0 45; रामचरित्र रत्नाकर, पृ0 214 छं0 12; ध्रुवविनोद, वही 555 छं0 62; वही ।

3- "बाजूबंद" सोमनाथ ग्रंथावली: पृ0 962छं0 36 ब्रजेंदविनोद पृ0 691 छं010, देवग्रंथावली सुखसागर तरंग, पृ0 97 छं0 283 तोष-सुधानिधि पृ0 102 छं0 300 वही, पी0एन0 ओझा ग्लिम्पसेज आफ सोशल लाइफ इन मुगल इंडिया पृ0 15,

4- "कंकन" देवग्रंथावली: पृ0 74 छं0 68; आलम-आलमकेलि, पृ0 35, छं081; सोमनाथ ग्रंथावली ;ब्रजेंदविनोद, पृ0 788 छं076; माधवविनोद, 469, छं0104; मुहम्मदयासीनए सोशल हिस्ट्री आफ इस्लामिक इंडियापृ0 41, डौमिट पृ0 81; मआसीर ए- आलमगीरी, अनुवादक सरकार, पृ0 93, मनूची ; स्टोरिया द मोगोर भाग 2 पृ0 339-40

करामूषण में गजरा भी पुरुष पहनते थे :

मोतीमाल बनमाल गुंजन की माल गैरे,

फूले – 2 फूलनि के गजरा रसाल हैं ।[1]

हाथ की अँगुलियों को पुरुष अँगूठी या मुँदरी नामक आभूषण से सुसज्जित करते थे :

मुँदरी धनी अँगुरीनि मैं ।।

मनि जटित जोति जगीनि मैं ।।[2]

बच्चों को अधिकांशतया ध्वनियुक्त पैंजनी [नेवर, पायल] पाँवों में तथा चूरा [कड़ा] नामक आभूषण हाथ पाँव दोनों में पहनाया जाता था :

कंचन के चूरा, नेवर पगनि बाजै, साजै सुभ किंकिनी

झनक झनकारी के ।

1– भिखारीदास ग्रंथावली: पृ० 74 छं० 508; देवग्रंथावली: रागरत्नाकर, पृ० 14 छं० 55; मतिराम: रसराज, पृ० 27 छं० 50; पृ 27 छं० 51; यह गजरा गले के गजरे से भिन्न कलाई में बाँधा जाता है [आईन – ए– अकबरी, अनुवादक एच० एस० जैरेट,, जिल्द 3 पृ० 313

2– सोमनाथ ग्रंथावली; ध्रुवविनोद पृ० 502 छं० 42; सुजानविलास, पृ० 642 छं० 94; मतिराम ग्रंथावली; रत्नावली, पृ० 119 छं० 107; कुमारमणि, रसिक रसाल पृ० 85 छं० 75; हेमिल्टन, भाग 1, पृ० 163; मुहम्मदयासीन; ए सोशल हिस्ट्री ऑफ इस्लामिक इंडिया पृ० 41; आईन–ए–अकबरी, भाग 2 पृ० 126; आईन–ए–अकबरी, भाग 3, अनुवादक जे एच एस, पृ0343, 345

अंचल सों ढांकत, दृगचलनि ताकत, मयंक मुह तारी दै अंग महतारी के ।[1]
छोटे बच्चों की कमर में करधनी[2] पहनायी जाती थी जिसे कवियों ने क्षुद्रघंटिका,
किंकिणी आदि उपनामों से संबोधित किया।

हिन्दुओं के विपरीत मुसलमानों में आभूषण के प्रति नाममात्र का
आकर्षण था ।

निष्कर्ष - चूंकि अट्ठारहवी शती के मध्ययुगीन का मुख्य वर्ण्य विषय स्त्री, उसका सौन्दर्य एवं आकर्षण रहा है, फलस्वरूप पुरुषों के आभूषणों की अपेक्षा
स्त्रियों के आभूषणों का अंकन विशेष रूप से हुआ है। ऊपर के विवेचन से यह
स्पष्ट हो गया है कि आभूषण एक ओर तो स्त्री के रूप सौन्दर्य को बढ़ाते हैं
तो दूसरी ओर इसके साथ ही साथ आभूषण उस काल की स्त्रियों की सामाजिक
प्रतिष्ठा एवं उनके अभिजात्य को भी भली भांति घोषित करते हैं ।

1- देव ग्रंथावली:देवचरित ,पृ0 7 छं0 21; तोषसुधानिधि,पैजनी, पृ013 छं0 42, बजनी पैजनी, पृ0 27 छं0 83; भिखारीदास ग्रंथावली, पैजनी बाजत पृ0 248 छं021; चूरा,देव ग्रंथावली:पृ0 7 छं0 21; भिखारीदास ग्रंथावली; कंचनपुरे पाइ जराई,पृ0 85छं0 282 ; 121/147;आलम-आलमकेलि, पृ0 35छं051; 36/81;डॉ0ललन राय,रीतिकालीनहिन्दी साहित्य में उल्लिखत वस्त्राभरणों का अध्ययन, पृ0 165तथा पृ0 171; आईन-ए-अकबरी,भाग3, अनुवादक जे0 एड एस,पृ0 343 ,345

2- करधनी-भिखारी दास ग्रंथावली: करधनी,पृ0 20 छं0 134; भिखारीदास ग्रंथावली, छं02,बजरीली किंकिणीपृ0248 छं021; आलम,आलमकेलि, क्षुद्र घंटिका,पृ07छं016; किंकिणी,पृ0 24छं0 55; देवग्रंथावली; देवचरित पृ07 छं0 21; आईन-ए- अकबरी, भाग3, पृ0313

पाँचवाँ अध्याय

प्रसाधन

प्रसाधन

वैसे तो प्रसाधन का प्रयोग लोग अपनी रूचि तथा आर्थिक स्थिति के अनुसार करते हैं तथापि स्त्रियों के लिए शृंगार की जिन सामग्रियों को महत्वपूर्ण स्थान दिया गया वह इस प्रकार है – स्नान करना, तेल लगाना, चोटी गूँथना आभूषण पहनना , चन्दन के लेप करना, वस्त्र धारण करना, कुरका लगाना, काजल लगाना, बुन्दे पहनना, नाक में सोना एवं मोती पहनना गले में आभूषण पहनना, फूल या मोती की माला पहनना, पानखाना, इत्रलगाना आदि का वर्णन है। ये सभी वस्तुएं स्त्रियों मे सोलह शृंगार के अन्तर्गत परिगणित की गयी है ।[1]

कुछ अन्य लोगों के अनुसार सोलह शृंगार के अन्तर्गत जिन वस्तुओं का समावेश हुआ है उनमें स्नान, चीर, हार, तिलक, अंजन ,कुंडल नासामौक्तिक, केशपाश रचना, कंचुक, नूपुर, सुगंध, कंकण चरणराग, मेखल,ताम्बूल, करदर्पण आदि प्रमुख है ।[2]

स्पष्ट है कि सोलह शृंगार के अन्तर्गत प्रयुक्त होने वाली वस्तुओं के बारे में लोगों का भिन्न दृष्टिकोण है ।

अट्ठारहवीं शताब्दी की उच्चवर्गीय महिलाएं ऊपर बताये गये विधियों से शृंगार करती थीं । वास्तव में भोग-विलास में लिप्त होने की प्रवृत्ति का

1- आईन-ए- अकबरी, भाग3, अनुवादक सरकार, पृ0 343

2- डॉ0 बच्चनसिंह, रीतिकालीन कवियों की प्रेमव्यंजना, पृ0 306

का प्रभाव सम्पूर्ण समाज पर पड़ा अतः कवियों ने भी जो अपने समाज की प्रचलित प्रवृत्तियों से ही कविताओं का स्रोत एकत्रित करते हैं ईश्वरीय प्रेम पर आधारित काव्यों को मानवीय प्रेम एकत्रित करते हैं, ईश्वरीय प्रेम पर आधारित काव्यों को मानवीय प्रेम कविताओं में बदल दिया । इसी कारण नायिका की वेशभूषा आभूषणों तथा श्रृंगार का वर्णन करना स्वभाविक ही था । इससे हमें तत्कालीन समाज में प्रचलित श्रृंगारों आदि के विषय में ज्ञान प्राप्त होता है ।

यहाँ तत्कालीन समय में प्रयुक्त होने वाली श्रृंगारिक प्रसाधनों के कतिपय उन विशिष्ट तत्वों की चर्चा की जायेगी, जिससे यह पूर्णतया स्पष्ट हो सके कि किन श्रृंगारिक उपकरणों का विनियोग विशेष रूप से किया गया है -

मंजन और स्नान : मंजन संस्कृत के मार्जन शब्द से बना है, जिसका मूल अर्थ रगड़ कर साफ करना है अतः इसे स्नान से भिन्न और उसके पूर्व की क्रिया समझनी चाहिए ।[1] संस्कृत साहित्य में मज्जनम्- शब्द डूबने और कभी-कभी नहाने के अर्थ में प्रयुक्त हुआ है।[2]

कवियों ने प्रसाधन के अन्तर्गत मंजन का उल्लेख किया है ।[3]

1- आप्टे - संस्कृत इंग्लिश डिक्शनरी, जिल्द 2, पृ0 1265

2- वही, पृ0 1220

3- मंजन- देव: अष्टयाम, सं0 रामकृष्ण वर्मा, पृ0 10 छं0 18; सुखसागर तरंग, पृ0 19 छं0 58; पृ0 79 छं0 230; आलम: आलमकेलि, पृ0 15छं0 53; आलम ग्रंथावली: पृ0 21 छं0 33; तोष: सुधानिधि, पृ0 102 छं0 300; मतिराम: रसराज, पृ0 217 छं0 80.

कुछ कवियों ने मंजन शब्द का प्रयोग स्नान के अर्थ में किया है ।[1] किन्तु यह नहीं कहा जा सकता कि मंजन-मार्जन अर्थ तत्कालीन समय में समाप्त हो गया था ।

कवि ने स्पष्ट रूप से लिखा है :

मंजन कै निज न्हाइ के अंग अँगोछि के बार छुरावन लागी [2]

अन्य कवि ने मंजन का प्रयोग पोतने या मलने के अर्थ में किया है :

अंजन दै नैननि अतर मुख मंजन कै

लीन्हें उबटाइ कर गजरा जराइ के ।[3]

इसके अलावा मंजन का तात्पर्य नहाने से पहले लगाये गये उबटन से लगाया गया है :

मर्दन करि उबटाइ तन आयौ न्हान नरेस ।

कंचन चौकी पैलस्यौ मानौ उदैदिनेस ।[4]

इस प्रकार विभिन्न प्रसंगों में प्रयुक्त हुए मंजन का यदि सूक्ष्मता से अध्ययन किया जाय तो वह प्रसाधन के एक विशेष पक्ष को घोतित करता है।

1- मतिराम ग्रंथावली: रसराज पृ0 69 छं0 114, ललितललाम पृ014 छं0 34, सौन्दर्य-सुधानिधि पृ0 103 छं0 302 आलम आलमकेलि पृ0 15 छं0 530,

2- मतिराम: ललितललाम, पृ0 14 छं0 34

3- देव-अष्टयाम, पृ0 14 छं0 38

4- सोमनाथ ग्रंथावली: सुजानविलास पृ0 764 छं0 11

मार्जन या उबटन मलने की क्रिया तथा सौंधे अलंकरण के अन्तर्गत नहीं आयेंगे। इन्हें प्रसाधन के लिए पूर्व नियोजन माना जा सकता है। मंजन और स्नान को षोडश श्रृंगार का प्रथम कृत्य माना गया है।[1]

स्नान भोग के अन्तर्गत विभिन्न रीतियों से सुगंधित जल बनाने, मैल छुड़ाने के लिए गुग्गुल, सैन्धव, चौल, सज्ज-रस आदि में दूध या पानी मिलाकर लगाने, विभिन्न प्रकार से बने उबटनों को शरीर पर मलने आदि का विस्तार से वर्णन हुआ है।[2] नित्य-स्नान को आयु बढ़ाने वाला तथा लक्ष्मी को विपुल करने वाला बताया है।[3]

<u>विभिन्न अनुलेपन और सुगन्धियाँ :</u> मंजन एवं स्नान के बाद शरीर को सुगन्धित करने, उसके रंग को निखारने तथा त्वचा को कोमल बनाए रखने के लिए विभिन्न प्रकार के सुगंधित लेप तैयार किये जाते थे जिसका प्रयोग अति प्राचीन काल से ही होता रहा है।[4]

1- आईन-ए- अकबरी भाग 3 अनुवादक सरकार पृ0 343, बच्चन सिंह: रीतिकालीन कवियों की प्रेम व्यंजना, पृ0306

2- सोमेश्वर देव: अभिलषितार्थ चिन्तामणि प्रथम भाग, पृ0 284 पीटर मुंडी, पृ0 450

3- वही

4- डॉ0 वासुदेवशरण अग्रवाल, पाणिनीकालीन भारतवर्ष- पृ0 138; वाल्मीकि कृत रामायण, 1/6/10, 2/11म -18-19; मनुस्मृति: अध्याय 5/126; अर्थशास्त्र; अनुवादक पं0 गंगाप्रसादशास्त्री, पृ0 126 -28; आईन 30, अनु0ब्लाकमैन, पृ0 78 से 87 तक

मार्जन या उबटन मलने की क्रिया तथा सीधे अलंकरण के अन्तर्गत नहीं आयेंगे। इन्हें प्रसाधन के लिए पूर्व नियोजन माना जा सकता है। मंजन और स्नान को षोडश श्रृंगार का प्रथम कृत्य माना गया है।[1]

स्नान भोग के अन्तर्गत विभिन्न रीतियों से सुगंधित जल बनाने, मैल छुड़ाने के लिए गुग्गुल, सैन्धव, चोल, सर्ज-रस आदि में दूध या पानी मिलाकर लगाने, विभिन्न प्रकार से बने उबटनों को शरीर पर मलने आदि का विस्तार से वर्णन हुआ है।[2] नित्य-स्नान को आयु बढ़ाने वाला तथा लक्ष्मी को विपुल करने वाला बताया है।[3]

<u>विभिन्न अनुलेपन और सुगन्धियाँ :</u> मंजन एवं स्नान के बाद शरीर को सुगन्धित करने, उसके रंग को निखारने तथा त्वचा को कोमल बनाए रखने के लिए विभिन्न प्रकार के सुगंधित लेप तैयार किये जाते थे जिसका प्रयोग अति प्राचीन काल से ही होता रहा है।[4]

1- आईन-ए-अकबरी भाग 3 अनुवादक सरकार पृ0 343, बच्चन सिंह: रीतिकालीन कवियों की प्रेम व्यंजना, पृ0306

2- सोमेश्वर देव: अभिलषितार्थ चिन्तामणि प्रथम भाग, पृ0 284 पीटर मुंडी, पृ0 450

3- वही

4- डॉ0 वासुदेवशरण अग्रवाल, पाणिनीकालीन भारतवर्ष- पृ0 138; वाल्मीकि कृत रामायण, 1/6/10, 2/11म -18-19; मनुस्मृति: अध्याय 5/126; अर्थशास्त्र, अनुवादक पं0 गंगाप्रसादशास्त्री, पृ0 126 -28; आईन 30, अनु0ब्लाकमन, पृ0 78 से 87 तक

कवियों ने गंध एवं अनुलेपनों का उल्लेख (प्रसाधन के लिए) किया है, जिसके निर्माण में चंदन,[1] केसर[2], कुकुम[3] कपूर[4], जबाद[5] इत्र[6] अरगजा[6] चोवा[8] कस्तूरी आदि पदार्थों का योगदान रहता था।

1- "चंदन" भिखारीदास ग्रंथावली: प्रथमखंड, पृ0 51 छं0 357; पृ0 53 छं0370; पृ0 147 छं0 263; पृ0 159 छं0318; मतिराम, रसराज, पृ0 67 छं0 114; पृ0 246 छं0 199; ललितललाम, पृ0 355 छं0 343; छं0 89; रत्नावली, पृ0 50 छं0 76; सोमनाथ ग्रंथावली: द्वितीय खंड, रामचरित्र रत्नाकर, तृतीय-सर्ग, पृ0 28 छं0 32; शृंगार विलास, पृ0 311 छं0 69; देव ग्रंथावली: राग-रत्नाकर, पृ0 13 छं0 52; पृ0 13 छं0 53; सुजानविनोद, पृ0 58 छं0 44; भवानी विलास, (पृ0 110 छं0 92) तोष: सुधानिधि, पृ0 60 छं0 174; पृ0 89 छं0 259; पृ0 94 छं0 274; आलम: आलम ग्रंथावली, सं0 विद्यानिवास मिश्र, पृ0 10 छं0 29; आईन 30, ब्लाखमन, पृ0 83; जरनल ऑफ वेंकटेश्वरा ओरियंटल इंस्टीट्यूट, भाग 1, 1964, पृ0 25-26

2- "केसर" देव ग्रंथावली : तृतीय भाग, पृ0 110 छं0 92; रसविलास, अष्टम-भाग, पृ0 238 छं0 33; भावविलास, पृ0 72, 128; पृ0 84 छं0 26; राग-रत्नाकर, पृ0 5 छं0 16; पृ0 9 छं0 34; पृ0 18 छं0 76; सुजान विनोद, पृ0 58 छं0 44; शब्दरसायन, पृ0 22; सुखसागर तरंग पृ0 79 छं0 230; अष्टयाम, पृ0 16 छं0 6; तोष-सुधानिधि, पृ0 2 छं0 6; पृ0 102, छं0 300; मतिराम: ललितललाम, पृ0 356 छं0 344; छं0 88; रसराज, पृ0 63 छं0 101; पृ0 246 छं0 201; ~~छं0 201~~ पृ0 223 छं0 105; मतिराम सतसई, छं0 22; घन आनंद ग्रंथावली, पृ0 125 छं0 407; वही; जे.ए.एस.बी. 1, 1935 पृ0 80

3- "कुकुम" - सोमनाथ ग्रंथावली: रसपीयूषनिधि, अयोध्यातरंग, पृ0 122 छं0 50; मतिराम: रसराज, 271 छं0 304; सतसई, पृ0 357; भिखारीदास ग्रंथावली, प्रथमखंड, पृ0 39 छं0 260; पृ0 122 छं0 154; पृ0 127 छं0 177; पृ0 135 छं0 211; भिखारीदास ग्रंथावली: द्वितीय खंड, पृ0 156 छं0 26; देवग्रंथावली, राग रत्नाकर, पृ0 20 छं0 96; तोष: सुधानिधि, पृ0 102 छं0 300, वही; रेखा मिश्रा: वोमेन इन मुगल इंडिया, पृ0 123; आइन-ए-अकबरी, भाग 3, पृ0 312

4- "कँपूर"- देव ग्रंथावली: सुजानविनोद, पृ0 58, छं0 44; रागरत्नाकर, पृ0 5छं0 16; पृ0 9 छं0 34; पृ0 13 छं0 52; पृ0 13 छं0 53; सोमनाथ ग्रंथावली: रसपीयूषनिधि, त्रयोदशतरंग, पृ0 122 छं0 50; वही ।

5- "जावाद"-भिखारीदास ग्रंथावलीद्वितीय खंड पृ0 137 छं0 33, वही आईन उ0, ब्लाकमन, पृ0 83

6- "छत्र" - सोमनाथ ग्रंथावली: माधवविनोद, पृ0 328 छं0 68; श्रृंगारविलास, पृ0 311 छं0 69; रसपीयूषनिधि, एकादशतरंग, पृ0 104 छं0 75; देवग्रंथावली: सुखसागर तरंग, पृ0 22 छं0 67; देव अष्टयाम, पृ0 16 छं0 6; पृ0 17छं08; पृ0 18 छं0 10; देवग्रंथावली, सुजानविनोद, पृ0 34 छं0 18; पृ052 छं0 27; भूषण ग्रंथावली: शिवाबावनी पृ0 15 छं0 10; वही । मआसीर-ए-आलमगीरी, अनु० सरकार, पृ0 100; मनूची, 1, पृ0 163; माथीन, पृ0 42; सियार-उल-ओलिया, पृ0 100

7- "अरगजा" देवग्रंथावली: राग-रत्नाकर, पृ0 166 वही । आइन उ0, ब्लाकमन, 83

8- "चोवा" घन आनंद कवित्त, पृ0 45 छं0 72; मतिराम: रसराज, पृ0 228, छं0 123; देवग्रंथावली, रागरत्नाकर, पृ09 छं0 34; सुजानविनोद, पृ0 34, छं0 18; पृ0 43, छं0 49; पृ0 58, छं0 44; सुखसागर तरंग, पृ0 22छं0 66; पृ0 89; छं0 250; देव अष्टयाम पृ0 16 छं0 6; भूषण ग्रंथावली: शिवाबावनी, पृ0 15 छं0 10; वही । के०एम० अशरफ: लाइफ एंड कंडीशन आफ पीपुल आफ हिन्दुस्तान, पृ0 180-181

9- "कस्तूरी" - मतिराम: रसराज, पृ0 61 छं0 97; रामसतसई, छं0 378; देवग्रंथावली: सुजान विनोद, पृ0 58 छं0 44; पृ0 60 छं0 54; पृ083 छं0 39; सुखसागर तरंग, पृ083 छं0 240; राग रत्नाकर, पृ0 5छं0 19; पृ0 9 छं0 34; आलम, आलमकेलि, पृ0 39, छं0 91; पृ0 84 छं0 242; सोमनाथ ग्रंथावली: श्रृंगारविलास, पृ0 306 छं0 48, वही ।

उपर्युक्त अनुलेपनों का विस्तृत विवरण निम्न प्रकार से है :

<u>चंदन</u> : प्रसाधन के चंदन का प्रयोग कई प्रकार से होता है । परन्तु यहाँ से बनाये वाले अनुलेपन पर ही विचार किया जायेगा। शरीर की गौर चर्म कोकोमल और शीतल बनाए रखने के लिए किसी स्निग्ध पदार्थ के मेल से इसका अत्यन्त पतला लेप तैयार कया जाता है, जिसका उपयोग प्रायः गर्मी से बचने, विरहणियों के शीतोपचार आदि के लिए किया जाता था:

धीर धनो धनसार सो केसरि चंदन गारि के अंग सम्हारे । [1]

दो रंगों के चंदन सफेद चंदन[2] और लाल चंदन[3] अधिक इस्तेमाल किये जाते थे । कवि के अनुसार सौन्दर्य वृद्धि के दृष्टिकोण से भी चंदन नामक प्रसाधन का प्रयोग स्त्रियाँ करती थी :

1- देव ग्रंथावली: पृ0 110 छं0 92, के0 एम0 आरफ लाइफ एंड कंडीन्शन्स ऑफ पीपुल ऑफ हिन्दुस्तान पृ0 181

2- "सफेद चंदन : मतिराम: मतिराम रत्नावली, पृ0 50 छं0 76; सोमनाथ, ग्रंथावली: ब्रजेंदविनोद पृ0 779 छं014; वही, आईन 30, अनुवादक ब्लाखमन, पृ0 83, अर्थशास्त्र अनुवादक गंगाप्रसाद शास्त्री, पृ0 126

3- "लाल चंदन " सोमनाथ ग्रंथावली: रामचरित रत्नाकर, तृतीय सर्ग, पृ0 28छं0 32; सुजान विलास, पृ0 790 छं0 19; पृ0 232 छं012; पृ0 231 छं05; आईन 30, अनुवादक ब्लाखमन, पृ0 83, अर्थशास्त्र, अनुवादक गंगाप्रसाद शास्त्री पृ0 126

ए री बाल तेरे भाल- चंदन के लेप आगे

लोपि जात और के हजारन के गहने ।[1]

<u>केसर और कुंकुम :</u> चंदन की भाँति केसर नामक प्रसाधन तथा कुकुंम का उल्लेख मिलता है । अनुलेपन के लिए यह केसर अन्य सुगंधियों के मेल से बनता था:

1- भिखारीदास ग्रंथावली : प्रथम खण्ड, पृ0 147 छं0 263; पृ0 159 छं0 318; प0 53 छं0 370; मतिराम: रसराज, पृ0 246 छं0 198; पृ0 67 छं0 114; सोमनाथ ग्रंथावली; रामचरित रत्नाकर, पृ0 28 छं0 32; देवग्रंथावली; राग-रत्नाकर, पृ0 13 छं0 52; पृ0 13 छं0 53; सुजानविनोद, पृ0 58 छं0 44; के एम अशरफ लाइफ एंड कंडीशन आफ पीपुल ऑफ हिन्दुस्तान पृ0 180; आईन, भाग 3, पृ0 312

2- "केसर तथा कुंकुम" - तोषः सुधानिधिः पृ0 2 छं0 6; पृ0 102 छं0 300; देव-ग्रंथावली, रसविलास, पृ0 202 छं0 24; अष्टयाम, पृ0 16 छं0 6; देवग्रंथावली; तृतीय भाग, पृ0 110 छं0 92; भिखारीदास ग्रंथावली, पृ0 137 छं0 33; सोमनाथ ग्रंथावली; रसपीयूषनिधि, पृ0 107 छं0 11; श्रृंगार विलास, पृ0 598 छं0 53; सुजानविलास, पृ0 764 छं0 18; "कुंकुम" भिखारीदास ग्रंथावली, प्रथम खंड, पृ0 39 छं0 260; पृ0 122 छं0 154; पृ0 127 छं0 177; देव: रागरत्नाकर, पृ0 20 छं0 96; सोमनाथ ग्रंथावली; रसपीयूषनिधि, त्रयोदशतरंग, पृ0 122 छं0 50; बनारस ऑफ वेक्टोरियर ओरियंटल इंस्टीट्यूट भाग 7, 1946 पृ0 25-26; के0एम0 अशरफ लाइफ एंड कंडीशन आफ पीपुल आफ हिन्दुस्तान, पृ0 181; पी0एम0 ओझा सिमप्लेक्स ऑफ सोशल लाइफ इन मुगल इंडिया पृ0 15

घोरि घनी घनसार सो केसरि चंदन गारि कै अंग सम्हारे ।[1]

कभी- कभी अकेले ही केसर का लेप तैयार किया जाता था जिसे स्त्रियाँ प्रसाधन के रूप में इस्तेमाल करती थी :

सारी जरतारी की झलकत तैसी
केसरि को अंगराग कीनो सब तन मैं ।[2]

केसर की प्रकृति समशीतोष्ण है, सभी ऋतुओं में इसका प्रयोग हो सकता है फलतः केसर को युवतियों का सर्वाधिक मन पसंद लेप बताया गया है । [3]

केसर को पुष्प का किंजल्क माना गया है । [4] प्राचीन संस्कृत साहित्य में कुंकुम आज के केसर के अर्थ में प्रयुक्त हुआ है तथा किंजल्क पराग या फूलों के बीच के पतले तंतु को केसर कहा गया है । [5]प्राचीन कुंकुम को केसर से

1- देव ग्रंथावली: तृतीय भाग, पृ0 110 छं0 92; भिखारीदास ग्रंथावली, द्वितीय खंड, पृ0 137 छं0 33; आईन-ए- अकबरी, भाग 3 पृ0 312

2- मतिराम; ललितललाम, पृ0 356 छं0 344; मतिराम, रसराज, पृ0 246 छं0 120; पृ0 223 छं0 105; देव ग्रंथावली; रसविलास, पृ0 238 छं0 33; के0एम0 अशरफ लाइफ एंड कंडीशन आफ पीपुल्स ऑफ हिन्दुस्तान, पृ0 181; पी0एन0 ओझा ग्लिम्पसेज ऑफ सोशल लाइफ इन मुगल इंडिया पृ0 15

3- मल्लराय, रीतिकालीन हिन्दी साहित्य मे उल्लिखित वस्त्राभूषणों का अध्ययन पृ0 189 -190

4- देव: सुखसागर तरंग पृ079छं0230

5- कालिदास: रघुवंश सर्ग 4/ 67; पूर्व मेघदूत छं0 22 में कदम्ब में किंजल्क को भी केसर कहा गया है।

भिन्न माना जाने लगा । कवियों ने कुंकुम का उल्लेख केसर के साथ और स्वतंत्र रूप से दोनों ही प्रकार से किया है ।[1]

कस्तूरी : कस्तूरी एक सुगंधित पदार्थ है जो मृग की नाभि से प्राप्त किया जाता है । इस काले रंग के इस सुगंधित पदार्थ को कवियों ने मृगमद और कुरंगसार कहा है जिसे केसर की भाँति शरीर में लगाया जाता था :

पुनि अंगनि केसर मद कुरंग , ...।[2]

कस्तूरी चूँकि उष्ण प्रकृति की मानी गयी है इसलिए कवि ने शीतकाल में कस्तूरी के लेप का उल्लेख किया है :

सिसिर के सीत प्रियापीतम सनेह दिन छिन से बिहात देव रति नियरातीं केसर कुरंगसार अंग में लिपट दोऊ दुहू में दिपत औ छिपत जातछाती में ।[3]कस्तूरी

1- भिखारीदास ग्रंथावली: प्रथम खंड, केसरि कुंकुम, पृ0 135 छं0 211, तोष: सुधानिधि केसरिकुंकुम, पृ0102 छं0 300, सोमनाथ ग्रंथावली: केसरि कुंकुम पृ0 122 छं0 50, देव ग्रंथावली: रागरत्नाकर कुंकुम पृ020 छं0 96, कुमारमणि रसिक रसाल कुंकुम पृ0 77 छं0 50, भिखारीदास ग्रंथावली: प्रथम खंड, पृ0 कुंकुम, पृ0 39 छं0 260 पृ0 122 छं0 154 छं0 154 ,पृ0 127 छं0 177, भिखारीदास ग्रंथावली , द्वितीय खंड, पृ0 156,26पी. एन. ओझा ग्लिम्पसेस आफ सोशल लाइफ इन मुगल इंडिया,पृ0 15
2- सोमनाथ ग्रंथावली: सुजानविलास, पृ0 764 छं0 18; मतिराम: रसराज,मृगमद पृ0 61 छं0 97;आलम-आलमकेलि पृ0 84 छं0 242
3- देव ग्रंथावली: राग-रत्नाकर, मृगमद, पृ05 छं0 19; सुजानविनोद,पृ0 60, छं0 54 ,कुरंगसार,देव: सुजानविनोद ,पृ0 58छं0 44;पृ0 83छं0 39
4- देवग्रंथावली : सुजानविनोद: पृ0 79 छं0 26

को मृगम्मद तथा मृगमदपोति को कहा गया है ।[1] इस प्रकार कस्तूरी नामक प्रसाधन अंगराग के लिए इस्तेमाल किया जाता था ।[2]

<u>कपूर</u> : प्रसाधन के रूप में कपूर[3] का भी प्रयोग स्त्रियाँ करती थीं । कपूर को घनसार भी कहा गया ।[4] अनुलेपन के लिए या सुगन्धि के लिए कपूर का प्रयोग स्वतंत्र रूप से नहीं बल्कि गुलाब रस, इत्र, चोवा आदि के साथ मिलाकर किया जाता था :

1- देव ग्रंथावली : मृगम्मद पृ० 83 छं० 240; मृगम्मद पोति, आलमइ आलमकेलि, पृ० 39 छं० 91

2- कस्तूरी - मतिराम ग्रंथावली : रसराज, पृ० 61 छं० 97; सतसई, छं०378; देवग्रंथावली : राग-रत्नाकर, पृ०83 छं० 39; सुजानविनोद, पृ060, छं० 54; पृ० 58 छं० 44; देवसुधा, 132/131; 271/95; 222/168; सोमनाथ ग्रंथावली : सुजानविलास, पृ० 764, छं० 18; के०एम० अशरफ, लाइफ एंड कंडीशन ऑफ पीपुल आफ हिन्दुस्तान, पृ० 181; पी०एन० ओझा, ग्लिम्पसेज ऑफ सोशल लाइफ इन मुगल इंडिया पृ० 18

3- "कपूर" देवग्रंथावली : रागरत्नाकर पृ० 5 छं० 16; 9/34; 13/52; 13/53; सुजानविनोद, पृ० 58 छं० 44; सोमनाथ ग्रंथावली : रसपीयूषनिधि, पृ० 122 छं० 50; आईन-ए-अकबरी भाग 3, पृ० 312

4- भूषण ग्रंथावली : शिवाबावनी, पृ०15छं010; देव : भावविलास, पृ०128; देव ग्रंथावली : तृतीय भाग पृ० 110 छं० 92

अतर गुलाब इस घोवा घनसार सब,[1]

— —

किसी भी वस्तु के साथ मिलाने पर यह अपना रंग न देकर केवल गंध देता है। क्योंकि यह ऐसा पदार्थ है जो अलग रहने पर उड़ जाता है। कपूर का वृक्ष होता है। इसी वृक्ष से निकलने वाले द्रव पदार्थ को सुखाकर कपर बनाया जाता है।[2] कपूर के विशाल वृक्ष का वर्णन मिलता है जिसकी छाया में सौ घुड़सवार एक साथ ठहर सकते थे।[3]

गोरोचन : यह गाय के पित्ताशय से प्राप्त होने वाला ठोस पदार्थ है जिसे चंदन कहा गया।[4] चंदन का प्रयोग मुख्य रूप से प्रसाधन के रूप में तिलक लगाने के लिए किया जाता था :

1- भूषण ग्रंथावली : शिवाबावनी, पृ0 15 छं0 10; पृ0 39 छं0 128; सोमनाथ ग्रंथावली : रसपीयूषनिधि, पृ0 122 छं0 50; देवग्रंथावली तृतीय भाग, पृ0 110 छं0 92

2- आईने, 30 अनुवादक ब्लाखमन, पृ0 83

3- वही

4- "चंदन" भिखारीदास ग्रंथावली : प्रथम खंड, पृ0 1 छं0 2; पृ07 छं0 32; भिखारीदास ग्रंथावली : द्वितीय खंड, पृ0 40 छं0 12; पृ0 177 छं017; तोष-सुधानिधि, पृ0 61 छं0 438; पृ0 89 छं0 259; पृ0 123 छं0 362; मतिराम : मतिराम सतसई, छं0 696; देवग्रंथावली : सुखसागर तरंग, पृ0 83, छं0 240; ललनराय, रीतिकालीन हिन्दी साहित्य में उल्लिखित वस्त्राभरणों का अध्ययन, पृ0 191

चंदन तिलक लिलार में ऐसी मुख छवि होति ।

रूप-भौन में जगमगी मनो दीप की ज्योति ।।[1]

ललाट पर गोरोचन (चंदन) के तिलक से मुख का सौन्दर्य इस प्रकार प्रकाशित हो रहा है मानों छविगृह में दीप की ज्योति जगमगा रही है। यहाँ तिलक को दीपक की लौ द्वारा संकेतित किया गया है। चूँकि चंदन को तिलक लगाने के अर्थ में लिया गया है इसलिए इसे अनुलेपन न मानकर रंजन द्रव्य मानना अधिक संगत लगता है।

<u>जबाद या जुबाद</u> : जबाद या जुबाद बिल्ली जैसे जानवर (गंध बिलाव) के मद से बनने वाला अत्यन्त मूल्यवान सुगंधित पदार्थ है ।[2]

कवि ने जबाद नामक प्रसाधन का प्रयोग उबटन के रूप में किये जाने का उल्लेख किया है :

केवा जबादिन सों उबट्यौ सज्यौ केसरि को अंगराग अपारो ।[3]

अंगराग : विभिन्न अनुलेपनों को कवियों ने प्रायः अंगराग शब्द से अभिहित किया है । जहाँ चंदन केसर, कस्तूरी आदि के अंगराग का उल्लेख है , वहाँ तो इसके निर्माण में योग देने वाले पदार्थ स्पष्ट है, लेकिन जिन स्थलों

1- मतिराम: मतिराम सतसई, पृ० 309, छं० 696; तोष:सुधानिधि, पृ० 89 छं० 259; पृ० 123 छं० 362; पृ० 61 छं० 438 ; देव, सुखसागर तरंग, पृ० 83 छं० 240; भिखारीदास ग्रंथावली, प्रथम खंड, पृ० 7/32; पृ० 1 छं० 2; द्वितीय खंड पृ० 167 छं० 17; पृ० 40 छं० 12

2-आईन 30, अनुवादक ब्लाकमन, पृ० 85

3- भिखारीदास ग्रंथावली: द्वितीय खंड, पृ० 137 छं० 33, वही ।

पर केवल अंगराग शब्द का उल्लेख हुआ है, वहाँ पर पता नहीं चलता कि वह किन किन वस्तुओं के योग से बना है सिर्फ अंगराग लगाये जाने की पुष्टि होती है :

अंग ललित सित रंग पटअंगराग अवतंस ।[1]

अरगजा : अरगजा ग्रीष्म काल का अत्यन्त शीतल लेप है। कवि ने ग्रीष्म का दुपहरी में अंगराग लगाये जाने का उल्लेख किया है :

ग्रीष्म मध्यान अरगजा कियो अंगराग ।[2]

चोवा : चोवा एक प्रकार का सुगन्धित द्रव्य है जिसे स्त्रियाँ प्रसाधन के रूप में इस्तेमाल करती । यह चुवाया जाने वाला द्रव-पदार्थ है, जो प्रायः श्यामवर्ण का होता था, किसी ने श्वेत वर्ण का भी बताया है अगरू की लकड़ी से चुवाया जाता था ।[4] कवि ने चोवा चुवाकर बनाने का उल्लेख किया है ।[5]

1- अंगराग -मतिरामः मतिराम सतसई, पृ० 401 छं० 393 ; छं० 511 रसराजः पृ० 626 छं० 99; भिखारीदास ग्रंथावली द्वितीय खंड, पृ० 127 छं० 177,

2- अंरगजा" देव- रागरत्नाकर पृ० 16 छं० 68, पृ० 16 छं० 66 देवसुधा, तथा मिश्रबन्धु पृ० 168,

3- "चोवा" भूषण ग्रंथावलीः शिवाबावनी, पृ० 15 छं 10; मतिरामः रसावली, पृ० 67 छं० 111; रसराज , पृ० 228 छं० 123; देव ग्रंथावलीः सुखसागर तरंग, पृ० 22 छं० 66; 89 छं० 250; अष्टयाम, पृ० 16 छं० 6; 270/10; 271/16; सुजान विनोद पृ० 34 छं० 18; पृ० 43 छं० 49; पृ० 58 छं० 44; राग-रत्नाकर, पृ० 9 छं० 34; आईन 30 अनुकलावमन, पृ० 86

4- आईन 30 कलावमन , पृ० 86

5- चुवाइ किधौं चितचैन को चोवा-

घनानंद कवित्त, पृ० 45 छं० 75; वही

चोवा नामक प्रसाधन को बालो में लगाये जाने का उल्लेख कवि ने इस प्रकार है :

तिलोछति सुकेस देस चोवा चुपरत हो।[1]

चोवा द्वारा अँगिया तथा कंचुली को सुरभित किया जाता था। कवि ने कंचुकी में चोवा लगाने का सुन्दर चित्रण किया है :

कंचुकी मैं चुपरयौ करि चोवा लगाइ लियौ उर सों अभिलाखयौं ।।[2]

<u>अगुरु</u> : अगुरु या अगर को एक विशेष वृक्ष की जड़ बताया गया है, जो काफी समय तक जमीन में गाड़कर तैयार किया जाता था ।[3] आयुर्वेदिक ग्रंथो में इसे उत्कृष्ट एवं गुणकारी औषधि बताया गया है।[4] इसके तैल को काषाय, कुष्ठ, कफ और वायु का नाशक बतलाया गया है ।[5] अगरू से बाल धूपा जाता था जिसका उल्लेख प्राचीन संस्कृत साहित्य मे भी मिलता है।[6] चंदन आदि मिलाकर इसका लेप तैयार किया जाता था ।[7] तत्कालीन कवि नेअगुरू से बाल धूपने का स्पष्ट उल्लेख किया है :

1- देव ग्रंथावली : सुजान विनोद, पृ0 43 छं0 49; पृ0 34 छं0 18;

2- देवग्रंथावली : पृ0 67 छं0 14; भवानी विलास, पृ0 45 छं0 29; राग रत्नाकर, पृ0 9 छं0 34; "अंगिया मैं लगावत चोवे "मतिराम : रत्नावली, पृ0 67 छं0 111; घनानंद ग्रंथावली : पृ0 45 छं0 72, आईन 30 पृ0 78-87

3- आईन 30, अनुवादक ब्लाकमन, पृ0 85

4- श्री अत्रिदेव [illegible] विद्यालंकार, प्राचीन भारत के प्रसाधन, पृ0 48, 5।

5- वही, पृ0 50

6- कालिदास ऋतुसंहार, 4/5, 5/13

7- वही, 2/2।

वारन धूपि, अगारन धूपि कै, धूम अंध्यारी पसारी महाहै ।।[1]

अगुरू को कीटाणु निरोधक बताया गया है, जिसका चूर्ण चर्म और वस्त्र में मलने के काम आता था ।[2]

इत्र :- यद्यपि प्राचीन समय से ही अनेक सुगन्धियों का वर्णन मिलता है । परन्तु विशेष प्रक्रिया से इत्र बनाने का आरम्भ मुगल काल में हुआ ।[3] नूरजहाँ की माँ ने गुलाब के पुष्प से एक नये प्रकार का इत्र तैयार किया जिसका नाम इत्र-ए- जहाँगीरी रखा ।[4]

तत्कालीन समय में उच्चवर्गीय स्त्रियाँ सुगंधियों का अधिकाधिक प्रयोग करती थी फलतः इत्र का प्रयोग प्रसाधन के रूप में खूब किया जाता था :

1- मतिराम ग्रंथावली: ललितललाम, पृ0 22 छं0 35, विस्तृत विवरण के लिए आईन 30, पृ0 78-87 ।

2- आईन 30 वही

3- मनूची स्टोरिया द मोगोर भाग 1 पृ0 163-164; मुहम्मद यासीन: ए सोशल हिस्ट्री ऑफ इस्लामिक इंडिया, पृ0 42

4- उपरोक्त, आईन 30, अनु0 ब्लाकमन पृ0 85, वही, मुहम्मदयासीन मतिबार उल औलिया, भाग 3, पृ0 225, तुजुक-ए- जहाँगीरी अनुवादक ,आर, एंड बी, भाग 1, पृ0271 , मनूची सोरिया द मोगोर भाग 1, पृ0 163-164

सोमनाथ कहैं आछौ अतर लगायौ तैसो
छहरी सुगंध चारू चंपक सुदेसा ते ।[1]

कवि ने चंदन के इत्र का उल्लेख किया है :

सोमनाथ चंदन को अतर लगायो चारू, छहरी सुगंध तन कंचन
सुदेसते ।[2]

इत्र के अलावा अन्य कई प्रकार की सुगन्धियों का प्रयोग स्त्रियाँ करती
थीं जैसे " गुलाब [जल] [3] विभिन्न प्रकार सुगंधित तैल -फुलेल आदि "

1- इत्र - सोमनाथ ग्रंथावली: रसपीयूषनिधि, एकादश तरंग पृ0 104 छं0 75, श्रृंगार विलास पृ0 311 छं0 69, माधवविनोद पृ0 328, छं068 सुजानविनोद पृ0 670 छं0 30, देवग्रंथावली: सुजानविनोद, पृ034 छं0 18; अष्टयाम पृ0 16 छं0 6; 188 छं0 10; 270/10; 269/16; सुखसागर तरंग, पृ0 22 छं0 67; मआसीरे-आलमगीरी अनुवादक सरकार पृ0100, पी0एन0 ओझा ग्लिम्पसेज ऑफ सोशल लाइफ इन मुगल इंडिया पृ017, मुहम्मद यासीन, ए सोशल हिस्ट्री आफ इस्लामिक इंडिया, 42 आईन, अनुवादक ब्लाकमन पृ 0 78-93 प्रस्तुत छंदों में इत्र को अतर कहा गया है।

3- गुलाब[जल] - भूषण ग्रंथावली: शिवाबावनी, पृ0 15 छं0 10; देव: भाव विलास, पृ0 111 छं0 69; देव, अष्टयाम, पृ0 16 छं0 6; देव: सुखसागर तरंग, पृ0 22 छं0 67; पृ0 86 छं0 249; सोमनाथ ग्रंथावली, रसपीयूषनिधि, पृ0 94, छं0 40; पृ0 95 छं0 45; आईन: I, पृ0 75 अकबर, 181,

4- "फुलेल" -देव ग्रंथावली : पृ0 86 छं0 249; सुखसागर तरंग 89/250 मनूची, स्टोरिया द मोगोर, भाग 3, पृ0 40

कुछ स्थलों पर कवियों ने सिर्फ - सुगंधि या सोंधा[1] शब्द का इस्तेमाल किया है जिससे सिर्फ इतना ज्ञात होता है किसी सुगंधित वस्तु का प्रयोग हुआ है यह सुगंधि विशेष किस वस्तु से बनी है यह ज्ञात नहीं हो पाता ।

एक समय में स्त्रियाँ विभिन्न प्रकार के प्रसाधन का प्रयोग करती थीं। इसके लिए कवि का निम्न छंद बहुत महत्त्वपूर्ण है :

घोवा सों घुपरि केस केसर सुरंग अंग केसरि उबटि

अन्हवाई है गुलाब सों ।

अंतर तिलोद आछे अंबर लै पोंछि ....।।[2]

मुस्लिम द्वारा इत्र आदि सुगंधित वस्तुओं का प्रयोग "सुन्ना" के रूप में स्वीकार्य था अतः उनके द्वारा इसका प्रयोग सामान्य व वृहद् स्तर पर किया गया ।[3]

1- "सुगंधि या सोंधों" -घनानंदः घन आनंद कवित्तः पृ0 47 छं0 75 ; पृ0 228 ; पृ0 49 छं0 78; देव ग्रंथावलीः भावविलास, पृ0 69; शब्द-रसायन, पृ0 45; राग-रत्नाकर पृ0 5 छं0 18; देव-अष्टयाम, पृ0 5 छं02; पृ0 8 छं0 9; भूषण ग्रंथावलीः शिवाबावनी, पृ015 छं0 10; तबकाते अकबरी, भाग 2, 494

2- देव-अष्टयाम, पृ0 16 छं0 6; सुखसागर तरंग, पृ0 79 छं0 230 ; 89/250 ; भिखारीदास ग्रंथावलीः पृ0 135 छं0 211; तोषः सुधानिधि, पृ0 102 छं0 300; भूषण ग्रंथावलीःशिवाबावनी पृ0 15 छं0 10; घनआनंद, घनानंद कवित्त, पं. विश्वनाथ प्रसाद मिश्र, पृ0 228, के0एम0 अशरफ लाइफ एंड कंडीशन ऑफ पीपुल ऑफ हिन्दुस्तान , पृ0 181

3- मआसीर ए- आलमगीरी अनुवादक सरकार, पृ0 100; मुहम्मदयासीन, ए सोशल हिस्ट्री ऑफ इस्लामिक इंडिया, पृ0 42

अन्य प्रसाधनों में स्त्रियाँ विभिन्न प्रकार के तिलक बिन्दी पत्रावली, गोदना आदि का प्रयोग करती थीं जो इस प्रकार है –

<u>तिलक</u> – तिलक का प्रयोग स्त्रियाँ काफी समय पहले से ही करती थीं ।[1]

तिलक को एक जंगली पौधा बताया गया है जो चार-पाँच फीट का होता है। उसके फूल में पाँच पंखुरियाँ होती हैं और नीचे की पंखुरी सबसे बड़ी होती है । उसकी बड़ी पंखुरी पर एक चिन्ह बना होता है, जो स्त्रियों के मस्तक पर बनाये जाने वाले तिलक से बहुत मिलता है ।[2] किन्तु यहाँ पर यह बात स्पष्ट नहीं हो पायी कि तिलक का आकार-प्रकार कैसा था । इसके विपरीत तत्कालीन कवि ने स्त्रियों द्वारा माथे पर लगाये जाने वाले तिलक का जो उद्धरण प्रस्तुत किया है उससे तिलक के आकार के संदर्भ में कुछ संकेत मिलता है, उद्धरण इस प्रकार है :

> चंदन तिलक लिलार में ऐसो मुख छवि होति ।
> रूप भौन में जगमगै मनो दीप की ज्योति ।।[3]

यहाँ पर तिलक दीप की लौ द्वारा संकेतित किया गया है। अतः उसके दीपशिखा जैसे लम्बा तथा नुकीला होने की ओर एक अस्पष्ट सा संकेत माना जा सकता है।

1- कालिदासः रघुवंश, 9/41

2- आप्टेः संस्कृत इंग्लिश डिक्शनरी, जिल्द 2 पृ0 774

3- मतिरामः मतिराम रत्नावली, पृ0 122 छं0 138

माथे पर तिलक लगाने के लिए स्त्रियाँ रुचि के अनुकूल विभिन्न प्रसाधनों का प्रयोग करती थी ।[1]

आड़[2] तथा खौर[3] भी एक प्रकार का तिलक माना गया है जिसे स्त्रियाँ माथे पर लगाती थीं । आड़ के नाम से ही पता रहा है कि इसे आड़े आकार का बनाती होगीं ।

1– "तिलक"– आलम: आलमकेलि, कुंकुम तिलक, पृ0 146 छं0 278; देव ग्रंथावली: राग रत्नाकर, चंदन तिलक, पृ0 14 छं0 45; केसरि को तिलक, पृ0 18छं0 76; तिलक भाल कुंकुम, पृ0 20छं0 96; सुखसागर-तरंग, मुगम्मद केसरि चंदन तिलक, पृ0 84 छं0 242; तोष: सुधानिधि, चंदन तिलक पृ0 89 छं0 259; मतिराम: रत्नावली चंदन तिलक, पृ0 122 छं0 138; मैन्डलसो, पृ0 51; के0 एम0 अशरफ लाइफ एंड कंडीशन आफ पीपुल आफ हिन्दुस्तान, पृ0 181; पी. एन. ओझा: ग्लिम्पसेज ऑफ सोशल लाइफ इन मुगल इंडिया, पृ0 15

2– आड़ : भिखारीदास ग्रंथावली: द्वितीय खंड, पृ0 170 छं0 19; देव: प्रथम खंड, पृ0 छं0 334; पृ0 122 छं0 154; देव: शब्दरसायन, पृ0 22; सोमनाथ ग्रंथावली: शृंगार विलास, पृ0 296 छं07; रसपीयूषनिधि, पृ0 228 छं023; ए रशीद, सोसाइटी एंड कल्चर इन मीडिवल इंडिया, पृ0 56

3– "खौर" – तोष: सुधानिधि पृ0 2 छं0 6; पृ0 126 छं0 439; देव: भावविलास, पृ0 72; भिखारीदास, ग्रंथावली: प्रथम खंड, पृ0 7 छं032; पृ0 24 छं0 159; पृ0 119 छं0 139 ; भिखारीदास ग्रंथावली: द्वितीय खंड, पृ0 170 छं0 19; वही ।

माथे को बिन्दी[1] लगाकर भी सजाया जाता था। बिन्दी को टीका[2] तथा यबोड़ा[3] भी कहा गया।

पत्रावली रचना : पत्रावली रचना का फैशन काफी पहले से ही था। पत्रावली मुख, ललाट और शरीर के अन्य अंगों पर बनाया जाता था कवियों ने पत्रा वली शरीर के विभिन्न भाग में बनाने का उल्लेख किया है।[5]

1- "बिन्दी"- आलमः आलमकेलि, पृ० 19 छं० 29; पृ० 14 छं० 32; पृ० 146 छं० 378; मतिरामः सतसई, छं० 650; देवः भाव विलास, पृ० 126; शब्दरसायन, पृ० 127; प्रेम-चन्द्रिका, पृ० 35 छं० 23; राग-रत्नाकर, पृ० 5 छं० 16; पृ० 9 छं० 34; सुजान-विनोद, पृ० 47 छं० 5; पृ० 52 छं० 26; पृ० 57 छं० 42; पृ० 60 छं० 54; सुखसागर तरंग, संपा. बालादत्त मिश्र, पृ० 75 छं० 218; पृ० 81 छं० 230; पृ० 83, छं० 240; तोषः सुधानिधि, पृ० 17 छं० 55; पृ० 102 छं० 300; 103 छं० 303; मैम्क्लसी पृ० 51; के० एम अशरफ, लाइफ एंड कंडीशन ऑफ पीपुल आफ हिन्दुस्तान, पृ० 181; रवीन्द्र-सोसाइटी एंड कल्चर इन मोडिवल इंडिया, पृ० 56

2- "टीका" भिखारीदास ग्रंथावली: पृ० 174 छं० 43९; आलम-आलमकेलि, पृ० 10 छं० 32; पृ० 31 छं० 73

3- आलमः आलमकेलि, पृ० 6 छं० 12; आलमग्रंथावली, पृ० 15 छं० 12

4- आप्टेः संस्कृत इंगलिश डिक्शनरी, जिल्द 2, पृ० 955, कामसूत्र भाग 1, मधवाचार्य शर्मा पृ० 100,

5- देव अष्टयाम, पृ० 17 छं० 9; [देव के पत्रावली के लिए अंग रचना शब्द प्रयुक्त किया है]: भिखारीदास ग्रंथावली: प्रथम खंड, पृ० 136 छं० 137; पृ० 147 छं० 262; भिखारीदास ग्रंथावली:, द्वितीय खंड, पृ० 89 छं० 19,

तिल या श्यामल बिन्दु :- कपोल या ठुड्डी पर स्वभाविक तिल की अनुपस्थिति में काजल कस्तूरी आदि से कृत्रिम तिल बनाया जाता था ।[1] सौन्दर्य बढ़ाने हेतु संभवतः कृत्रिम तिल का प्रयोग किया जाता होगा ।

गोदना : गोदने के लिए प्रयुक्त अंग्रेजी "टैटूइंग" अपने मूल रूप में पालिनेशियाई शब्द है ।[2] गोदना चर्म में सुई चुभोकर रंग के सहारे बनायी जाने वाली आकृति को कहते हैं ।[3] गोदना के लिए महत्वपूर्ण बात यह है कि गोदना विश्व के अनेक भागों में प्रचलित रहा है ।[4]

गोदने की उत्पत्ति कहाँ से हुयी इसके बारे में विद्वानों में मतभेद है । किसी विद्वान ने गोदने की प्रथा को प्राचीन मिस्र से पूरब की ओर अंत में जापान पालिनेशियाई द्वीपों तथा न्यूजीलैंड तक फैलने का उल्लेख किया है ।[5] इसके विपरीत अन्य विद्वान ने गोदने की प्रथा का आरम्भ द्वापर युग में हुआ ऐसा बताया है ।[6]

1- "तिल" देव ग्रंथावली: सुजानविनोद, पृ0 57 छं0 43; सोमनाथ ग्रंथावली: पृ0 228 छं0 23; प रयोद, सोसाइटी एंड कल्चर इन्मीडिवल इंडिया, पृ0 56; आईन-ए अकबरी, अनुवादक, ब्लाखमन, जिल्द।पृ0 103 द्वितीय संस्करण

2- द इन साइक्लोपीडिया अमेरिकाना, जिल्द 26 [1951] पृ0 283 [लक्ष्मराय के प्रबन्ध काव्य के फुटनोट से उद्धृत]

3- वही

4- डब्ल्यू. वी. ग्रिक्सन, द माड़िया गौंड्स आव बस्तर, पृ0 74, फिजोपासी, द इन्साइक्लोपीडिया ब्रिटानिका, जिल्द 16 [1926] पृ0 451, अरब, एवं अब्बोरिया, मार्टेल मिर द इम्पार्टेन्स ऑफ पियरिंग -कलापूर्व पृ0320

5- मार्टेल मागमर, द इनसाइक्लोपीडिया ब्रिटानिका, जिल्द 16[1926] पृ0 451

6- द इण्डियन एन्टीक्वेरी: सितम्बर 1904, जिल्द 33, में प्रकाशित "टैटूइंग इन सेन्ट्रल इंडिया शीर्षक लेख, पृ0 219

कुछ भी हो किन्तु गोदना भारत के विभिन्न प्रान्तों में किसी न किसी रूप में प्रचलित रहा ।

भारत के पश्चिमोत्तर सीमान्त पर पायी जाने वाली गिलजाई जाति में गोदना प्रचलित था ।[1] सीमन्त के कुछ मुसलमान भी गोदना गोदवाते थे ।[2]

दक्षिण भारत में गोदना टोड़ जाति में विशेष महत्त्व रखता है ।[3] मध्य प्रदेश में विभिन्न आकृतियों का गोदना प्रचलित था ।[4] तत्कालीन समाज में भी गोदना स्त्रियों में प्रचलित था ।[5]

<u>रंजन -द्रव्य :</u> शरीर पर स्नानु लेपन और विभिन्न सुगंधियों के प्रयोग से इच्छित वर्ण एवं गंध की प्राप्ति होती है तथा तिलक, पत्रावली रचना, गोदना आदि से अपेक्षित वर्ण को उद्दीप्त किया जाता है। रंजन-द्रव्यों का कार्य इन दोनों से कुछ भिन्न है । प्रकृतिदत्त सौन्दर्य से मानव मन कभी तुष्ट नहीं होता । वह उसे और बढ़ा चढ़ाकर देखने का प्रयत्न करता है । अधर, हाथ,

1- द इण्डियन एण्टीक्वेरी मई [1904] जिल्द 33 में प्रकाशित फोमिल टैटूइंग अमॉगस्ट गिलजाई, पृ० 147
2- द इण्डियन एण्टीक्वेरी, जून [1902] जिल्द 3, में प्रकाशित नोट्स आन फीमेल टैटूइंग इन पंजाब, पृ० 297,
3- डब्ल्यू रिवर्स, द टोडस, पृ० 578
4- द इण्डियन एण्टीक्वेरी [जून 1902] जिल्द 31, पृ० 296-7
5- भिखारीदास ग्रंथावली: प्रथम खंड, पृ० 98 छं० 44, भिखारीदास ग्रंथावली द्वितीय खंड, पृ०248 छं० 21; देव ग्रंथावली: पृ० 215 छं० 2, व रशीद तोताबदी पेंड कापर इनमीडिवल इंडिया पृ० 56

पैर की स्वाभाविक लाली, नेत्रों की स्वभाविक श्यामता उसे पूर्ण संतोष नहीं दे पाती । विभिन्न रंजनों से वह उसे और बढ़ाता है। तत्कालीन समय में प्रचलित रंजन द्रव्य निम्न प्रकार के थे :

अंजनः : भारत में अंजन का प्रचलन अत्यन्त प्राचीन काल से है ।[1] संस्कृत-साहित्य में अंजन को स्पष्ट रूप से मांगलिक माना गया है ।[2] अंजन का प्रयोग आँखों की श्यामता को बढ़ाने के लिए किया जाता था:

अंजन दै करी नैननि मे सुषमा बढ़ि स्याम सरोज प्रभाते ।[3]

1- अथर्ववेद: 4/9/9,

2- कालिदासः कुमार संभव, 6 छं0| 20

3- अंजन मतिरामकृ ललितललाम, पृ0 331 छं0 188, छं0 56; रसराज, पृ0 40 छं0 27; पृ067 छं0114; पृ0 91 छं0 189; पृ0 114 छं0 272; पृ0 267 छं0 290; पृ0 250 छं0 214; पृ0 217 छं0 77; पृ0 217 छं0 80; पृ0 228 छं0 125 ; देव ग्रंथावली: सुजान विनोद, पृ0 52 छं0 27; देव-अष्टयाम, पृ0 18 छं0 10; देव: सुखसागर तरंग, पृ0 19 छं0 58; आलम, आलमकेलि, पृ0 13 छं0 29; पृ0 15 छं0 33; आलम ग्रंथावली: पृ0 21 छं0 33; भिखारीदास ग्रंथावली: प्रथम खंड, पृ0 23 छं0 150; पृ0 122छं0 154; भिखारीदास ग्रंथावली: द्वितीय खंड, पृ0101 छं0 32; पृ0 153, छं0 36; काव्यनिर्णय, पृ0 130 छं0 42; पृ0 88 छं0 14; तोष: सुधानिधि, पृ0 94 छं0 274; सोमनाथ ग्रंथावली: रसपीयूषनिधि, पृ0 176 छं0 32; मनूची: स्टोरिया द मोगोर, भाग3, पृ0 340

अंजन के लिए कई पर्यायवाची शब्द काजल, कज्जल, काजर आदि शब्द कवियों ने प्रयुक्त किये हैं ।[1]

दिठौना : दिठौना यद्यपि बिन्दी, तिल आदि के साथ आना चाहिए था लेकिन यह काजल से बनाया जाता था अतः इसे रंजन द्रव्यों के अन्तर्गत परिगणित किया जा सकता है । दिठौना काजल से बनाया जाने वाला संरक्षणात्मक प्रसाधन बताया गया है ।[2] वैसे तो दिठौना बच्चों को लगाया जाता है किन्तु अवलोकित काल में स्त्रियाँ भी दिठौने का प्रयोग करती थी इस डर से कि उनके सौन्दर्य पर किसी की कुदृष्टि न पड़े । न केवल दूसरे की नजर से बचने के लिए दिठौना लगाती थीं बल्कि सौन्दर्य में वृद्धि के लिए दिठौना लगाया जाता था ।[3]

1- "काजल" मतिराम: रत्नावली, पृ० 113 छं० 53, सतसई काजर, छं० 769; भिखारीदास ग्रंथावली: काजल पृ० 131 छं० 48; तोष: सुधानिधि, काजर, पृ० 60 छं० 175; कज्जल, पृ० 102 छं० 300; आलमग्रंथावली: आलमालिका, काजर, पृ० 134 छं० 222; मनूची भाग 2 स्टोरिया दमोगोर पृ० 340; पी. एन. ओझा: ग्लिम्पसेज ऑफ सोशल लाइफ इन मुगल इंडिया, पृ० 15; के०एम० अशरफ लाइफ एंड कंडीशन ऑफ पीपुल आफ हिन्दुस्तान, पृ० 151; ए रशीद, सोसाइटी एंड कल्चर इन मेडिवल इंडिया, पृ० 56

2- "दिठौना" देव: सुजानविनोद, पृ० 96 छं० 15, सुखसागरतरंग, पृ० 86 छं० 251, भिखारीदास ग्रंथावली: प्रथम खंड, पृ० 33 छं० 227; भिखारीदास ग्रंथावली: द्वितीय खंड, पृ० 158 छं० 6

3- आलम-आलमकेलि, पृ० 6 छं० 12, भिखारीदास ग्रंथावली: प्रथम खंड, पृ० 33 छं० 227 ।

पान: भारत में पान खाने का चलन प्राचीन काल से है जिसे ताम्बूल पत्र, नागवल्ली, नागपर्णी आदि अनेक नामों से अभिहित किया गया है ।[1]

पान के साथ सुपारी का उल्लेख भी प्राचीन समय से मिलता है ।[2]

अवलोकित काल में स्त्रियाँ पान[3] का प्रयोग बहुत अधिक करती थी । पान खाने से उनके ओष्ठ लाल रंग के हो जाते थे जो एक प्रकार से लिपस्टिक {ओष्ठ रंगने का पदार्थ} का कार्य करते थे ।

1- कामसूत्र: अनु0 पं0 माधवाचार्य शर्मा, पृ0 128; कालिदास: रघुवंश पृ0 6 छं0/59, 60; आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी: प्राचीन भारत के कलात्मक विनोद, पृ0 23

2- कालिदास: रघुवंश पृ0 6छं0/ 63

3- "पान" - सोमनाथ ग्रंथावली: रसपीयूषनिधि पृ0 132 छं0 10; पृ0 166 पृ0 126 छं0 16; पृ0 162 छं0 9; पृ0 107 छं0 11; पृ0 116 छं0 21; ब्रजेंदविनोद, पृ0 527 छं0 66; भिखारीदास ग्रंथावली: द्वितीय खंड पृ0 22[illegible] छं0 46; देव ग्रंथावली: भाव विलास, पृ0 126 छं0 2; सुखसागर तरंग, पृ0 92 छं0 268; देव: अष्टयाम, पृ0 7 छं0 7, मनूची: स्टोरिया द मोगोर, भाग1, पृ0 63; मआसीर ए आलमगीरी, पृ0 262; मैन्डस्लो, पृ0 33; ट्रेवेनियर, भाग1, पृ0 294; पी0एन0 ओझा, ग्लिम्पसेज, ऑफ, सोशल लाइफ इन मुगल इंडिया, पृ0 15; के0 एन0 अशरफ, लाइफ एंड कंडीशन ऑफ पीपुल आफ हिन्दुस्तान पृ0 18।

पान की गिलौरी के लिए बिरी[1] तथा बीरी[2] दो पर्यायवाची शब्द का प्रयोग कवियों ने किया है ।

मेंहदी: मेंहदी जिसे हिना[3] भी कहा गया एक कँटीला पौधा होता है, जिसकी पत्तियाँ पीसकर हथेली, पैर नखों, आदिपर लगायी जाती है, जिससे गाढा लाल रंग उत्तर आताहै ।[4] विदेशी पौधा बताया गया जो मुसलमानों के साथ भारत आया और धीरे -धीरे श्रृंगार का प्रमुख उपकरण बन गया ।[5]

मेंहदी नामक प्रसाधन का प्रयोग स्त्रियाँ नख पाणि तथा चरण में लगाने के लिए करती थीं कवियो ने इसका स्पष्ट संकेत दिया है :

1- "बिरी" भिखारीदास ग्रंथावली: प्रथम खंड, पृ0 51 छं0 272; पृ0122 छं0 154; पृ0 146 छं0 258; भिखारीदास ग्रंथावली: द्वितीय खंड, पृ0 145 छं0 25; मतिराम: रसराज ,पृ0 114 छं0 272; पृ0 285 छं0 376; देव ग्रंथावली: रागरत्नाकर, पृ0 15 छं0 60; तोष: सुधानिधि, पृ0 102 छं0 300; पृ0 126 छं0 363

2- "बीरी" -सोमनाथ ग्रंथावली: रसपीयूषनिधि, पृ0 111 छं0 24; पृ0107, छं0 11; पृ0 116 छं0 21; पृ0 84 छं0 5; पृ0 121छं0 47,

3- मुहम्मदयासीन:ए सोशल हिस्ट्री ऑफ इस्लामिक इंडिया पृ0 65; के0एम0 अशरफ, लाइफ एंड, कंडीशन्स्आफ पीपुल ऑफ हिन्दुस्तान पृ0 181

4- मनूची, स्टोरिया दमोगोर भाग 2 पृ0 340

5- डॉ0 नगेन्द्र: रीतिकाव्य की भूमिका तथा देव और उनकी कविता, पृ0 102, डॉ0 बच्चन सिंह, रीतिकवियों की प्रेम व्यंजना, पृ0 313

मेंहदी के द्वारा हथेली पर बुंदकियाँ बनायी जाती थीं :

यों ललित करनि मिहिंदी बनाय, राखी अनिंद बुंदनि रचाय ।[1]

मेंहदी लगाना सामंती समाज-व्यवस्था और पर्दा-प्रथा का परिचायक है, जिसमें स्त्रियों को हाथ पर/रखकर बैठे रहना पड़ता था। इस्लामी देशों में इसकेलिए अत्यन्त वातानुकूल वातावरण था। अवलोकित काल की समाज-व्यवस्था भी इसके लिए अनुकूल पड़ी ।[2]

<u>महावर</u> : महावर लाल रंग का द्रव्य- पदार्थ था तथा महावर स्त्रियों का अत्यन्त मनपसंद प्रसाधन था जिसे स्त्रियाँ अपने पैरों में लगाती थीं :

अति कोमल चरन महावर मंड़ित नूपुर लसत नवीनें ।[3]

1- सोमनाथ ग्रंथावली : सुजानविलास, पृ० 642 छं० 95, गोविंदविनोद, पृ० 502 छं० 42, शशिनाथविनोद, प्रथमोल्लास, पृ० 505 छं० 33, देव ग्रंथावली, सुखसागर तरंग, पृ० 85 छं० 230, आईन-ए-अकबरी, अनुवादक जैरट जिल्द 3 पृ० 312, (प्रसाधन के सोलह वस्तुओं या विधियों में बुंदकिया बनाने की गणना आईन-ए-अकबरी में की गयी है ।)

2- ललनराय, रीतिकालीन हिन्दी साहित्य में उल्लिखित वस्त्राभरणों का अध्ययन, पृ० 236

3- "महावर" सोमनाथ ग्रंथावली : माधवविनोद पृ०329 छं० 79; पृ० 379 छं०107; शृंगार विलास, पृ० 295 छं० 5; शशिनाथविनोद, प्रथमोल्लास, पृ० 505 छं०34; रसपीयूषनिधि : पृ० 208 छं० 203; 203 छं० 163; मतिराम : रसराज, व्याख्याकार रामजी, पृ० 50 छं०60; पृ० 243 छं० 187; पृ० 217 छं० 77; मतिराम रत्नावली, पृ० 77 छं० 130; पृ० 75 छं० 127; घन आनंद ग्रंथावली, पृ० 209; देव ग्रंथावली : रसविलास अष्टमभाग, पृ० 238 छं० 35; पृ० 236, 17; शब्दरसायन, पृ० 22; सुजानविनोद, पृ० 20 छं०6; पृ० 43, छं० 49; पृ० 59, छं०51; सुखसागर तरंग पृ०104 छं०301; कुमारमणि, रसिक रसाल, पृ० 93 छं०106; भिखारीदास ग्रंथावली, 29 छं० 203; मनूची स्टोरिया द मोगोर भाग2 पृ० 340

कवियों ने महावर के जावक[1] तथा महाउर[2] भी कहा है। महावर को आलता भी कहा गया ।[3]

कवियों ने जावक या महावर का कथन प्रायः श्रृंगार की कोमल भाव-व्यंजना को लेकर किया है अतः हमें कई ऐसे भी उदाहरण मिलते जिसमें नायक द्वारा नायिका के पैरों में महावर लगाया गया है :

1- जावक- देव ग्रंथावली :सुखसागर तरंग पृ0 79 छं0 94; चतुर्थ भाव विलास, पृ0 123 छं0 4; पृ0 110 छं0 5; अष्टयाम, पृ0 18 छं0 10; भिखारीदास ग्रंथावली :काव्यनिर्णय, पृ0 130 छं0 42 ; श्रृंगारनिर्णय, पृ0 150; रस सारांश, पृ0 19, छं0 122; पृ0 23 छं0 149; पृ0 23 छं0 150; भिखारीदास ग्रंथावली ; द्वितीय खंड , पृ0 153 छं0 4; शशिनाथ विनोद, पृ0 505 छं0 34; मतिराम, ललितललाम, पृ0 331 छं0188; छं0 56 , सतसई छं0 98; पृ0 419 छं0 614; पृ0 476 छं0 361 ; पृ0 411 छं0 511; रत्नावली, पृ0 92 छं0160; पृ0 87 छं0 151 ; रसराज, पृ0 40 छं0 27; पृ0 67 छं0 114; पृ0 90 छं0 189; पृ0 267 छं0 290; पृ0 223 छं0 105; छं0 105; पृ0 228 छं0 125 ; तोष सुधानिधि, पृ0 102 छं0 300

2- महाउर* मतिराम: रत्नावली पृ0 63 छं0 103; देव: चतुर्थ भावविलास, पृ0 116 छं0 2; भिखारीदास: रससारांश, पृ0 29 छं0 203; पृ0 53; घनानन्द ग्रंथावली: सुजानहित, पृ0 14 छं0 14,

3- अनूठी ; स्टोरिया द मोगोर , भाग 2, पृ0 340

आपने हाथ सों देत महावर आप ही बार सँवारत नीके ।

आपुन ही पहिरावत आनिकै हार सँवारिकै मौरसिरी के ।[1]

प्रस्तुत छंद से समाज में व्याप्त विलासिता स्वयं स्पष्ट है प्रसाधन का प्रयोग तो मात्र माध्यम का कार्य कर रहा है।

सिन्दूर : सिन्दूर सुहागिनस्त्रियों के लिए मांगलिक एवं सौभाग्य चिन्ह माना जाता है जिसे स्त्रियाँ मांग में लगाती हैं :

पुनि भरो मांग मुकतनि सों सुंदरि भरि सिंदूर ललाई ।[2]

सिन्दूर का प्रयोग मुस्लिम स्त्रियाँ भी करती थीं जिसे कवि ने बड़े चातुर्यपूर्ण ढंग से प्रस्तुत किया है । कवि ने मुस्लिम स्त्रियों के मस्तक पर सिन्दूर का अभाव दिखाकर उनकी वैधव्यावस्था व्यंजित की है :

1- मतिराम ग्रंथावली: रसराज पृ0 241 छं0 179; पृ0 223 छं0 105; सतसई, पृ0 328 छं0 352; रत्नावली, पृ0 75 छं0 127; पृ0 77छं0 130; पृ0 63 छं0 103; देव ग्रंथावली: चतुर्थभावविलास, पृ0 126 छं02; सोमनाथ ग्रंथावली: श्रृंगारविलास, पृ0 295 छं0 5; रसपीयूषनिधि, पृ0 84 छं05; पृ0 208 छं0 203

"सिन्दूर"

2- सोमनाथ ग्रंथावली, शशिनाथविनोद, पृ0 504, छं0 31; पृ0 729 छं018; देव: शब्दरसायन, पृ0 127 छं0 9; सुखसागरतरंग, पृ0 83 छं0 242; देव ग्रंथावली: पृ0 76 छं0 81; देवमायाप्रपंच, पृ0 228छं0 15; भिखारीदास श्रृंगारनिर्णय, पृ0 102 छं0 57; तोषःसुधानिधि, पृ0 123 छं0 362; पृ0 मनूची, स्टोरिया दमोगोर, भाग 2, पृ0 340

बिनु सिन्दूर के बुंद मुख इंदु जमनीन के ।[1]

रोरी : रोरी नामक प्रसाधन का प्रयोग स्त्रियाँ माथे पर टीका लगाने के लिए करती थीं ।[2]

केश विन्यास : बाल सीधे न तो वस्त्रों के अन्तर्गत आएंगे न ही आभूषणों के । फिर भी अन्यान्य प्रसाधन-विधियों तथा उपकरणों की चर्चा करते हुए उनकी उपेक्षा नहीं की जा सकती । केश-विन्यास नारीसौन्दर्य के अनिवार्य उपकरणों में परिगणित किया जाता है। केश-प्रसाधन में सर्वप्रथम बालों को अच्छी प्रकार से साफ करके विभिन्न सुगंधियों से वासा जाता है। यह प्रक्रिया प्राचीन समय से ही विद्यमान थी।[3] धूपने के लिए बालों को धो ि पहले अच्छी तरह साफ करके सुखा लिया जाता है फिर अगुरु आदि सुगन्धित वस्तुओं के धुएं से बालों को देर तक धूपा जाता है :

धारन धूपि अगारन धूपि के, धूम अंध्यारी पसारी महा है ।।[4]

1- भूषण ग्रंथावली: शिवराजभूषण, पृ0 96 छं0 174; प्रस्तुत उद्धरण में कवि ने यह बताया कि छत्रपति शिवाजी ने उसके पतियों को मारडाला है परिणामतः उन्होंने सिन्दूर मिटा दिया जिससे उनका मुख बिना सिन्दूर के चन्द्रमा की भाँति दिख रहा है । वही ।

2- तोष: सुधानिधि: पृ0 103 छं0 300; भिखारीदास ग्रंथावली: द्वितीय खण्ड, पृ0 40 छं0 13

3- कामसूत्र: वात्स्यायन, टी0 देवदत्त शास्त्री, पृ0 106, कालिदास: ऋतुसंहार, 1-4, 2-21

4- मतिराम: ललितललाम, पृ0 15 छं0 35,

चूँकि धूपने की प्रक्रिया लम्बी तथा कठिन थी अतःतेल फुलेल, चोवा आदि सुगन्धित वस्तुओं से बालों को सुगन्धित किया जाने लगा ।[1]

<u>माँग और पाटी :</u> बालों को स्वच्छ और सुगंधित करने के बाद कंघी द्वारा उन्हें बीच से दो भागों में विभाजित किया है जिससे मध्यभाग से बाल हट जाते हैं । मध्यभाग, जहा से बाल हट जाते हैं, उसे माँग और अगल बगल बैठाये गये बालों को पाटी [पट्टिका] कहते हैं :

पाटी दुहुँ बिच माँग ....।[2]

कंघी तथा दर्पण[3] का प्रयोग भी किया जाता था ।

1- देवग्रंथावली: चोवा सों चुपरि केस -सुखसागर तरंग, पृ086छं0249, गुलाब फुलेल चोवा [बालों के लिए] पृ0 86छं0 248; फुलेल', पृ० 91 छं० 80; सुजान विनोद गुहि बार सुगंधि सबै चसि कै, पृ0 35छं0 22; तिलोत्तम - सुकेश, पृ0 43छं0 49; अष्टयाम चोवा से चुपरि केस, पृ0 16छं06; मनूची, स्टोरिया द मोगोर, भाग2, पृ0 341, भाग3 पृ0 40

"माँग और पाटी"

2- भिखारीदास ग्रंथावली: शृंगारनिर्णय पृ0 102छं0 57; 122छं0154; पाटी सोमनाथ ग्रंथावली माधवविनोद, पृ0 328छं0 69, 'माँग' देवसुखसागरतरंग, 83, छं0 241; पृ0 83छं0 242, पृ0 84छं0 243; देवग्रंथावली, पृ076छं081; सोमसुधानिधि; पृ0 122छं0 362; बोधा ; वि. वा, 99 छं0 23; मनूची स्टोरिया द मोगोर, भाग2 पृ0 339-40

"कंघी तथा दर्पण"

3- देव ग्रंथावली: सुखसागर तरंग, पृ0 89छं0 250; भिखारीदास ग्रंथावली, रससारांश, पृ0 17 छं0104; सोमनाथ ग्रंथावली, रसपीयूषनिधि, पृ0 101 छं0 65; पृ0 189 छं0 52; पेलसार्ट, पेल्सर्ट, ×× , पृ0 37-38, हेमिल्टन I पृ0 119,

वेणी : सौन्दर्य को निखारने हेतु स्त्रियाँ बालों को विभिन्न प्रकार से संवारती थीं जिससे वेणी (या चोटी गुँहना) बनाना स्त्रियों को विशेष प्रिय था कवियों ने गुँथी चोटी या वेणी का उल्लेख किया है :

बड़वारे कारे लटकारे केसना गूँदो बेनी ।[1]

स्त्रियाँ अपने बालों को बिखरने से बचाने के लिए बालों को रेशमी धागे से बांधे रहती थी :

बारन ज्यौं बाँधि राखे तामरस ताग सों ।[2]

1- "वेणी" शीर्षक : विरह वागीश, पृ० 99 छं० 23; देव ग्रंथावली : सुजान-विनोद, पृ० 78 छं० 24; 35छं० 22; सुखसागर तरंग, पृ० 79 छं० 230; पृ० 83 छं० 441; पृ० 84 छं० 43; पृ० 99 छं० 287; देव ग्रंथावली : तृतीय भाग, पृ० 110 छं० 92; देव: शब्दरसायन, पृ० 124; भाव विलास, पृ० 111; अष्टयाम, 18 छं० 10; मतिराम: मतिराम रत्नावली, पृ० 77 छं० 130; पृ० 63 छं० 103; रसराज, पृ० 213 छं० 57; पृ० 217 छं० 77; सतसई, पृ० 388 छं० 245; पृ० 413, छं० 545; भिखारीदास ग्रंथावली: प्रथम खंड, पृ० 16छं० 92; पृ० 17 छं० 104; पृ० 131, छं० 194; पृ० 147 छं० 262; भिखारीदास: रससारांश, पृ० 29 छं० 196; पृ० 103 छं० 59; सोमनाथ ग्रंथावली : रसपीयूषनिधि, पृ० 228, छं० 24; पृ० 247 छं० 67; तोष: सुधानिधि, पृ० 31 छं० 93; पृ० 98 छं० 386; मनूची: स्टोरिया द मोगोर, भाग 3, पृ० 40

2- मतिराम: ललितललाम, छं० 100, मनूची स्टोरिया द मोगोर, भाग 3, पृ० 40

<u>अलक लट :</u> वेणी के अतिरिक्त अलक[1], लट[2] तथा घुँघराले बाल[3] रखने का भी वर्णन कवियों ने किया है जो संभवतः सौन्दर्य वृद्धि के लिए रखे जाते थे ।

<u>छूटे हुए केश या खुले केश :</u> कवियों ने छूटे बालों या खुले बालों का भी चित्रण किया है :

खुले केस वारो छिपा स्यामता सो ।
दियो देह दीपै तमी मे छटा सो ।[4]

1- अलक -भिखारीदास ग्रंथावली : प्रथम खण्ड पृ0 91 छं0 12; पृ0 143 छं0245; पृ0 145छं0 255; भिखारीदास ग्रंथावली द्वितीय खंड, पृ0 87 छं08पृ0118छं0 120; देव : रागरत्नाकरपृ03छं010सुजानविनोद, पृ0 52छं0 26; भाव-विलास, पृ0 24; आलम-आलमकेलि, संग्रह, पृ0 7छं0 16;

2- "लट" सोमनाथ ग्रंथावली : रसपीयूषनिधि, प0 230 छं0 37; देवग्रंथावली : प्रेम चन्द्रिका, पृ0 35छं0 23; शब्दरसायन, पृ0 22; तोष : सुधानिधि पृ0 97छं0 284 ; पृ0 123छं0 361; प0126 छं0 369

3- "घुँघरारे केश" देव ग्रंथावली : सुखसागरतरंग, पृ0 103 छं0 299; मतिराम सतसई छं0695

4- "खुले केश" बोधा : ग्रंथावली : विरह-वारीश, पृ0 117छं035; मतिराम : रसराज, पृ0 56छं080; तोष : सुधानिधि, पृ093छं0 273पृ0 103छं0302पृ0103छं0303; देव : भावविलासपृ043छं0 69; राग रत्नाकर, पृ0 8छं028; आलम, आलमकेलि, पृ0 123छं0300; पृ0 124छं0 305; पृ0 37छं087; भिखारीदास ग्रंथावली, प्रथम खंड, पृ0 135छं0 211; पृ0 119 छं0138 ; भारत कला, भवन से प्राप्त चित्र राधा-कृष्ण गुलेर, लगभग, 1760 ई0 इस चित्र में राधा के बाल खुले दिखाए गये हैं ।

<u>जूड़ा</u> : केश-विन्यास के अन्तर्गत जूड़ा बनाने का भी उल्लेख मिलता है :

> धरी हठीली हरि नजरि जूरी बाँधत जाइ ।
>
> भुज अमरन मे करन मैं चिकुरन मैं लपटाइ ।।[1]

भुजाओं को उलटा पीछे ले जाकर बालों को समेटना फिर उसे घुमाकर लपेटना आदि जूड़ा बाँधने में सहायक होने वाली स्वाभाविक क्रियाएँ बतायी गयी हैं ।[2] जूड़ा प्राचीन काल से ही भिन्न-भिन्न प्रकार से बनाया जाता रहा है ।[3]

चूँकि स्त्रियाँ अपने बालों की देखभाल अच्छी तरह करती थीं तथा विभिन्न प्रसाधनों के माध्यम से उन्हें स्वस्थ्य एवं सुन्दर बनाती थी फलतः अधिकांश स्त्रियों के बाल काले चिकने और लम्बे होते थे :

1-"जूड़ा " - भिखारीदास ग्रंथावली: प्रथम खंड, रससारांश, पृ0 29 छं0 196; तोषःसुधानिधि,पृ0 89 छं0 259 ; मनूची: स्टोरिया दमोगोर भाग३, पृ0 40; भारतकला-भवन से प्राप्त चित्र स्नान दृश्य, मुगल शैली, 1750 ई0 स्त्रियों ने भिन्न -भिन्न केश विन्यास बनाये है जिसमें एक स्त्री को जूड़ा बनाया है।

2- भारत कला भवन से प्राप्त चित्र, स्नानोत्तरिता, गुलेर - लगभग 1780 ई० का चित्र

3- ऋग्वेद 7 छं0 33 / 1 ; 3 छं0 10, 114; रामायण, 2 छं093, 13; वासुदेवशरण, अग्रवाल ,पृ0 96

सटकारे बारनि के भार अंक लचकति ।[1]

<u>पुरुषों के प्रसाधन</u> : स्त्रियों की भाँति पुरुष भी प्रसाधन सामग्री का प्रयोग शरीर को स्वस्थ्य एवं सुन्दर बनाने के लिए करते थे ।

यद्यपि स्त्रियों की अपेक्षा पुरुष कम प्रसाधनों का प्रयोग करते थे किन्तु कुछ प्रसाधनो का प्रयोग स्त्री पुरुष दोनों समान रूप से करते थे।

उच्चवर्ग के पुरुष कुंकुम, चंदन अगर आदि सुगंधित पदार्थों का प्रयोग अधिक करते थे :

औ नृप दिव्य सुगंध लगाए ।
कुंकुम चंदन अगर मिलाए ।।[2]

1- सोमनाथ ग्रंथावली : श्रृंगार विलास, पृ० 602 छं० 76; रसपीयूषनिधि, काले चिकने बाल पृ० 230 छं० 37; बोधा : विरहवारीश, काले चिकने केश पृ० 99 छं० 23; देव-शब्दरसायन, बड़े बड़े बार पृ० 96; अष्टयाम, बार बड़े पृ० 16 छं 4; राग रत्नाकर, चीकने केस, पृ० 38 छं० 10; आलम-आलमकेलि; कारे-कारे केस, पृ० 24 छं० 55; बड़े बार, पृ० 124 छं० 305; आलम : ग्रंथावली : पृ० 28 छं० 55; तोष : सुधानिधि, पृ० 93 छं० 273; भिखारीदास ग्रंथावली : रससारांश, पृ० 103 छं० 59; मेन्डस्लो, पृ० 50,

2- सोमनाथ ग्रंथावली : माधवविनोद, पृ० 744, छं० 31; पृ० 779 छं० 14; पृ० 622 छं० 37; सुजानविलास पृ० 764 छं० 18; सोमनाथ ग्रंथावली : द्वितीय खंड, पृ० 232 छं० 12; बोधा : विरह वारीश पृ० 37-38; मतिराम : ललितललाम पृ० 58 छं० 89; तोष : सुधानिधि, पृ० 100, 256; अबुल फ़ज़ल-अकबरी भाग 2, पृ० 126 के०एम० अशरफ, लाइफ एंड कंडीशन आफ पीपुल, आफ हिन्दुस्तान, पृ० 181; मनुची : स्टोरिया द मोगोर, भाग 3, पृ० 157

इसके अलावा अरगजा[1] मदकुरंग[2] सुगंधित इत्र [3] केसर[4] आदि का भी प्रयोग भी(हुआ)

1- अरगजा: देवग्रंथावली:अरगजा, पृ0 120 छं0 187 सोमनाथ ग्रंथावली: ब्रजेंदविनोद,पृ0 670 छं0 30, पृ0 658 छं0 12, आईन भाग 1 पृ081

2- "कस्तूरी या मदकुरंग - आलम: आलमकेलि, पृ0 38 छं0 90,पृ039,छं-91; देव ग्रंथावली : सुखसागर तरंग, पृ0 83 छं0 240, सोमनाथ ग्रंथावली: सुजानविलास पृ0 764 छं0 18, के0 एम0 अशरफ लाइफ एंड कंडीशन आफ पीपुल आफ हिन्दुस्तान,पृ0 181

3- जे राजनि को उचित हैं अंबर अरू भूषना।
सु कलमाल अरू अरगजा अरू अतर अहफन ।।

– सोमनाथ ग्रंथावली: ब्रजेंदविनोद, पृ0 695 छं0 36; श्रृंगार विलास 311,60;पृ0 670 छं0 30; रसपीयूषनिधि, पृ0 104 छं0 75; देव: भवानी विलास, पृ0 103 छं0 12; भाव-विलास, सं0 लक्ष्मीनिधि चतुर्वेदी पृ0 24 छं0 48; के0 एम0 अशरफ, लाइफ एंड कंडीशन आफ पीपुल आफ हिन्दुस्तान,पृ0 181; पी0एन0 ओझा, ग्लिम्पसेज आफ सोशल लाइफ इन मुगल इंडिया, पृ0 17; मआसीर,ए आलमगीरी सरकार, पृ0 100; मुहम्मद यासीन,ए सोशल हिस्ट्री आफ इस्लामिक, इंडिया पृ0 42

4- बोधा:विरहवारीश,पृ0 37-38; सोमनाथ ग्रंथावली सुजानविलास, पृ0 764 छं0 18; के0 एम0 अशरफ ,पृ0 181

पुरूष माथे पर तिलक [टीका] लगाते थे :

भाल तिलक शोभावलि भाल मैं, केसर गंध सुहाई ।[1]

प्रसाधन के अन्य उपकरणों में आँखों का काला करने के लिए एक काले रंग का पदार्थ जिसे अंजन कहा गया, का प्रयोग करते थे :

देव दुख भंजनि लला के दृग कंजनि अंजनि लीक
पीक पलक लकीर की ।*[2]

पान[तमोल] का प्रयोग भी करते थे जिससे उनके अधर में अरूणिमा आ जाती थी जो ओष्ठ में लगाये जाने वाले प्रसाधन का कार्य करती थी :

मुख तमोल अधरन अरूनाई ....।[3]

1- बोधा: विरह-वारीश, पृ0 37-38; सोमनाथ ग्रंथावली: द्वितीय खंड, पृ0132 छं0 12; सुजानविलास पृ0 790 छं019; श्रृंगारविलास, षष्ठोल्लास पृ0 297 छं0 12; रसपीयूषनिधि, ग्यारहवाँरंग पृ086 छं013; आलम आलमकेलि, पृ0 146 छं0 278; आलम ग्रंथावली: पृ0 18छं022; मैन्डलो: पृ051; अर्ली ट्रैवेल्स इन इंडिया, पृ096

2- "अंजन" देव ग्रंथावली: सुखसागर तरंग पृ0 68छं0126; सोमनाथ ग्रंथावली: रसपीयूषनिधि, ग्यारहवाँरंग: पृ0 87 छं0 16; मतिराम ग्रंथावली: पृ0 64 छं0104; [अंजन का प्रयोग पुरूषों की अपेक्षा बच्चों के लिए अधिक लगाया है] जनरल आफ वेंकटेश्वर ओरियंटल इन्स्टीट्यूट, भाग7, पृ01946, पृ025; आईन-ए-अकबरी भाग1, पृ0 75

3- 'पान' बोधा/विरहवारीश, पृ0 68छं016, सोमनाथ ग्रंथावली: रसपीयूषनिधि, चतुर्थरंग: पृ0 126 छं016; विलसितमतरंग: पृ0 162 छं09; रसपीयूषनिधि, पृ0 34छं0 16; मतिराम: रसराज, पृ0 67 छं0114; भिखारीदास ग्रंथावली: द्वितीय खंड, पृ0 229 छं0 46; केरी, पृपृ0 205-6; आईन-ए-अकबरी, भाग पृ0 72

मेंहदी रची पग अरू पानि ।

मिहदी नखन रचाई । [1]

मेंहदी को कवियों ने मिंहदी भी कहा है :

.... पायन तेरे रची मिंहदी ।[2]

1- "मेंहदी"- मतिराम: रसराज पृ0 144 छं0 272, सतसई पृ0 2 छं0 102 , पृ0 265 छं0 315, पृ0 460, छं0 676 , सोमनाथ ग्रंथावली: वृंदविनोद पृ0 502 छं0 42, सुजान विलास पृ0 642 छं0 95 शशिनाथविनोद, पृ0 505 छं0 33, माधव विनोद, पृ0 329, छं077 मनुची: स्टोरिया द मोगोर भाग 2, पृ0 340 , जनरल आफ बैंकटेश्वर ओरयंटल इंस्टटीयूट , भाग 7, 1946 , पृ0 28 के0 एम0 अशरफ, लाइफ एंड कंडीशन आफ पीपुल आफ हिन्दुस्तान, पृ0 181 , मुहम्मद यासीन, ए सोशल हिस्ट्री आफ इस्लामिक इंडिया, पृ0 65 देव ग्रंथावली: सुजान विनोद पृ0 43 छं0 49, सुखसागरतरंग पृ0 79 छं0 228 पृ0 79, छं0 229, पृ0 104 छं0 301, पृ0 85 छं0 230, घनआनंद, घनआनंदकवित्त, पृ0 217 छं0 49 [जगदीशगुप्त रीतिकाव्य संग्रह] घन आनंद ग्रंथावली, पृ0 28 छं0 87, घनआनंद ग्रंथावली संपा, विश्वनाथ प्रसाद मिश्र 69 छं0 213

2- "मिंहदी"- घनआनंद ग्रंथावली: पृ0 217 छं0 49, सोमनाथ ग्रंथावली: सुजानविलास, पृ0 642 छं0 95, वृंदविनोद , पृ0 502 छं0 42, माधवविनोद, पृ0 329 छं0 77

कंघी तथा दर्पण का प्रयोग भी समान रूप से करते थे ।[1]

अवलोकित काल के पुरुष षोड्श श्रृंगार के अन्तर्गत आने वाले प्रथम कृत्य अर्थात् स्नान और उसके पूर्व का कृत्य उबटन की मालिश भी भली प्रकार से करते थे । स्वच्छता के इन्हीं रूपों को ध्यान में रखकर तत्कालीन विदेशी यात्री ने कहा कि सुगंधित जल से स्नान करने तथा उबटन आदि की मालिश के कारण (अर्थात् शारीरिक स्वच्छता पर ध्यान देने के कारण) ये मन मस्तिष्क से सदैव प्रसन्न रहते हैं ।

उच्चवर्गीय पुरुषों के विपरीत निम्नवर्गीय पुरुष सुगंधित प्रसाधनों के नाम पर नारियल का तैल प्रयोग करते थे ।[3]

1- डेलावैलो, पृ० 376; हैमिल्टन, भाग 1, पृ० 119

2- मर्दन कर उबटाइ तन आयौ न्हान नरेस
कंचन चौकी पै लस्यौ मानौ उदैदिनेस ।
—सोमनाथ ग्रंथावली: सुजानविलास, पृ० 764 छं० 11;
रसपीयूषनिधि, पृ० 94 छं० 40; कवींद विनोद, एकषष्ठितमोध्याय: पृ० 587 छं० 10; मतिराम: ललितललाम, पृ० 11 छं० 34; देव ग्रंथावली: शब्दरसायन, पृ० 45; ग्रौस 1, पृ० 113-14,

3- मनूची, स्टोरिया द मोगोर, पृ० 430

छठाँ अध्याय

खण्ड (क) खान-पान व आवास

खण्ड (ख) मनोरंजन के साधन

(खंड क) खान पान

आहार पेट भरने और उसके द्वारा जीवनी शक्ति को बनाए रखने के लिए मनुष्य और अन्य जीवधारियों केलिए सामान्य रूप से आवश्यक अवश्य है, किन्तु अपनी अन्य आवश्यकताओं की भाँति मनुष्य ने इसमें संस्करण, परिष्करण के प्रयास किये हैं। इस प्रकार किसी काल की सभ्यता एवं रहन-सहन के स्तर पर तत्कालीन खानपान से भी यथेष्ठ प्रकाश पड़ता है।

भारतीय आदर्श एवं परम्परा के अनुसार शाकाहारी भोजन सात्विक एवं उत्तम भोजन माना गया है। अवलोकित काल में भी लगभग उसी प्रकार के भोजन प्रचलित थे :

रोटी[1] दाल[2] तथा पके हुए चावल का उल्लेख मिलता है :
पक्के तंदुल ढेर कराए. ....।[3]

1- "रोटी" -सोमनाथ ग्रंथावली: सुजानविलास, पृ० 631 छं० 87; आईन, I, पृ० 61; रोटी को चपाती कहा गया है, मुहम्मदयासीन: ए सोशल हिस्ट्री: पृ० 37

2- "दाल" वही, छं० 84; शम्भुनाथ विनोद, पृ०524 छं० 3; मैन्डल्सो, पृ० 68; मांसरेट कमेन्ट्री, पृ० 8; पेंट टर. I, 160,

3- "चावल" सोमनाथ ग्रंथावली" पृ० 631 छं० 85; घनानंद कवित्त, पृ० 26; देव; देवचरित्र, पृ० 5 छं० 14; [चावल को भात भी कहा गया] मनूची; स्टोरिया दमोगोर, भाग3 पृ०41, डुबाय्स: हिन्दू मैनर्स, कस्टम्स एण्ड सेरेमनीज पृ० 183 तथा 272; मुहम्मदयासीन: ए सोशल हिस्ट्री ऑफ इस्लामिक इंडिया, पृ० 37; पी०एन० ओझा: ग्लिम्पसेज ऑफ सोशल लाइफ इन मुगल इंडिया, पृ० 2, ट्रेवेनियर ट्रेवल्स इन इंडिया, भाग 2, पृ०41

पूरी का भी उल्लेख मिलता है।
पूरी में मोइन [अर्थात् घी या तेल डालकर मुलायम करना] डालकर बनाया जाता था -

मीठी और सलोनी पूरी ।।
धरीं भेट मोइनि की करीं ।।[1]

उच्चवर्गीय लोगों में घी[1] तथा दूध का प्रयोग बहुत किया जाता था :

कनक कटोरा क्षीर पियायो । ....।[3]

1- सोमनाथ: ध्रुवविनोद, पृ0 510 छं0 107; सुजानविलास, पृ0 631 छं0 86; चौपड़ा, 35

2- "घी" सोमनाथ ग्रंथावली: सुजानविलास, पृ0 631 छं088; घनानंद कवित्त, पृ0 26 आईना पृ0 61, बोधा पृ0 2; पृ0 435; मुहम्मदयासीन ए सोशल हिस्ट्री आफ इस्लामिक इंडिया, पृ0 37, बहारिस्तान, I, पृ0 201; पी0 एन0 ओझा: ग्लिम्पसेज ऑफ सोशल लाइफ इन मुगल इंडिया, पृ0 2

3- "दूध" - बोधा, विरह वारीश, पृ0 140 छं0 15; देव देवचरित पृ0 5 छं0 14; सोमनाथ ग्रंथावली, सु0 विलास, पृ0 631 छं0 87; [मैदा से बनी रोटी में मैदे को दूध से साने जाने] का कथन है] देव देवचरित पृ0 25 छं0 131; मनूची: स्टोरिया द मोगोर, भाग3, पृ0 41; ओविंगटन, पृ0 303; आसरेट, कोमेन्ट्री, पृ0 8; मैन्डेल्सो पृ0 68; मुहम्मदयासीन: ए सोशल -, पृ0 37, ।

मक्खन[1] का भी प्रयोग किया जाता था । दूध से बनी वस्तुओं में दही[2] तथा दही बड़े[3] का उल्लेख मिलता है :

अन्नान बटक दही में बोरे, रासि लै अधिक गोल अरु गोरे ।[3]

~~रोटी तथा चावल का प्रयोग भी करते थे ।~~[4]

1- "मक्खन" ,देवचरित पृ0 5 छं0 14; पृ0 25; 131;सोमनाथ ग्रंथावली: रसपीयूषनिधि, पृ0 221 छं0 317 ; 156/1; डुबाएस, हिन्दू मैनर्स, कस्टम्स एण्ड सेरेमनीज, पृ0 272 ; मनूची: भाग3, स्टोरिया द मोगोर, पृ0 42; मैन्डल्सो, पृ0 68; ओविंगटन , पृ0 303; मुहम्मदयासीन, ए सोशल हिस्ट्री ऑफ इस्लामिक इंडिया, पृ0 37

2- "दही" , मतिराम: ललितललाम, पृ0 352 छं0 316; मतिराम रत्नावली, पृ0 43 छं0 63; सोमनाथ ग्रंथावली, रसपीयूषनिधि, पृ0 50 छं0 53; देव; देवचरित, पृ05 छं0 14; पृ0 25 छं0 131; भिखारीदास ग्रंथावली, पृ0 328छं0 220; आलम ग्रंथावली: विद्या निवास मिश्र, पृ0 12 छं0 4; मनूची, भाग3, स्टोरिया द मोगोर , पृ042, ओविंगटन पृ0 303, मैन्डल्सो पृ0 68; मुहम्मदयासीन, ए सोशल-, पृ0 37,

3- "दही-बड़ा"- सोमनाथ ग्रंथावली, सुजानविलास पृ0 631, छं0 85; देव; देवचरित पृ 5 छं0 14 (बड़ा उड़द या मूंग की दाल की गोलाकार टिकिया जो तेल में छानी जाती है)। सोमनाथ ग्रंथावली सु. वि. पृ0 631. छं087; ~~देव चरित्र पृ0 5छं0 14~~, सोमनाथ ग्रंथावली, सु. वि. पृ0 631, छं085; निजार पृ0 143; ~~केटी आफ वैम्बर पृ0 160~~; पी०एन०ओझा: ग्लिम्सेस ऑफ सोशल लाइफ इन मुगल इंडिया पृ0 2

विभिन्न प्रकार की सब्जियों[1] का प्रयोग किया जाता था। सब्जियों में कटहल[2], आलू[3] बैगन आदि का उल्लेख मिलता है :

घनी कचौरी बैगन तत्ते, मोहन भोग गुलगुता रत्ते।[4] श्रीफल[5] (कद्दू) का उल्लेख मिलता है।

भोजन में पूरी कचौरी [6] भी खाया जाता था।

1- हुबाएस, हिन्दू मैनर्स, कस्टम्स एण्ड सेरेमनीज पृ0 188-189; मुहम्मद यासीन: ए सोशल हिस्ट्री ऑफ इस्लामिक इंडिया, पृ0 38

2- "कटहल"- सोमनाथ ग्रंथावली, दीर्घनगर वर्णन, पृ0 821 छं0 27; माधव विनोद, पृ0 337 छं0 31; सुजानविलास पृ0 691, छं0 14; हुबाएस, हिन्दू मैनर्स, कस्टम्स एण्ड सेरेमनीज, पृ0 272; मनूची, भाग 3, पृ0 180, 182 बर्नियर पृ0 438।

3- "आलू" सोमनाथ ग्रंथावली, सुजानविलास, पृ0 691, छं0 14; दीर्घनगर वर्णन पृ0 821 छं0 27।

4- "बैगन" वही, पृ0 631 छं0 86; इरफान हबीब, द सिस्टम ऑफ मुगल इंडिया, पृ0 91; आईन; I, पृ0 391

5- "श्रीफल" सोमनाथ ग्रंथावली: दीर्घनगर वर्णन, पृ0 821 छं0 21; माधव-विनोद, पृ0 337 छं0 33; बोधा: विरह वारीश पृ0 5; आलम, अधर मालिका, पृ0 140 छं0 321।

6- बोधा : विरह वारीश, पृ0 2; सोमनाथ ग्रंथावली : सुजानविलास, पृ0 691, छं0 14'

उच्च वर्ग के लोग विभिन्न प्रकार के स्वादिष्ट फलों का भी सेवन करते थे :

और फल मीठे खट्टे। षिट्रस व्यंजन सकल भांति के बने इकट्ठे

बने फलों में सेब [2] फालसा [3] तथा अनार का उल्लेख मिलता है :

ससिनाथ सुजान लसै पहिचानि अनार घने रचि थार धरै ।।[4]

अन्य फलों में नासपाती[5] का उल्लेख मिलता ।

1- सोमनाथ ग्रंथावली: शशिनाथ विनोद, पृ0 524 छं04; सुजान विलास, 691/14; बोयार।6।2मिरात-ए-सिकन्दरी, अनु0 फरीदी पृ0 68; आईन-ए-अकबरी, ब्लाकमान, 1, पृ0 59; मुहम्मदयासीन: ए सोशल हिस्ट्री ऑफ इस्लामिक इंडिया, पृ0 37-38 ।

2- सोमनाथ ग्रंथावली; रसपीयूषनिधि, पृ0 84छं0 4; सुजानविलास , पृ0 631 छं0 88; दीर्घ नगर वर्णन, पृ0 821 छं0 26; बर्नियर, पृ0 18-19; अंसारी पृ0 34

3- "फालसा" -सोमनाथ ग्रंथावली, माधवविनोद, पृ0 337 छं0 31; दीर्घनगर, वर्णन, पृ0 821छं0 28 ।

4- वही, रसपीयूषनिधि, पृ0 84 छं0 4; माधवविनोद, पृ0 337 छं0 31; दीर्घनगर वर्णन, पृ0 821 छं0 29; अंसारी पृ0 34 ।

5- "नासपाती"- भूषण ग्रंथावली; शिवाबावनी, पृ0 14छं0 9; अंसारी, पृ0 34 बर्नियर की भारत यात्रा, पृ0 43जाड़े की ऋतु में रुई की तह में लिपटे हुए नासपाती के बिकने का उल्लेख किया है।

अंजीर [1] नारियल का भी वर्णन मिलता है :

नारियर अँबिली बकुल खूर बिलंद हैं ।[2]

नीबू[3] इमली [4] खजर का भी प्रयोग किया जाता था ।

1- अंजीर सोमनाथ ग्रंथावली, दीर्घश्गार वर्णन,पृ0 821 पृ0 28, माधवविनोद, पृ0 337, छं0 31

2- नारियल सोमनाथ ग्रंथावली, माधव विनोद ,पृ0 337 छं0 31, पी0 एन0ओझा ग्लिम्सेज आफ सोशल लाइफ इन मुगल इंडिया, पृ0 3, आईन । ब्लाकमन,पृ065-66

3- नीबू - वही,

4- इमली, वही

5- खजूर, वही

कुछ अन्य फलों में बड़हर[1], करौंदा[2] आम[3] गूलर[4] चकोतरा[5] आदि का उल्लेख मिलता है ।

1- सोमनाथ ग्रंथावली, माधवविनोद, पृ0 337 छं0 31; सुजानविलास पृ0 691 छं0 14

2- करौंदा : बोधा ग्रंथावली: पृ0 5, सोमनाथ ग्रंथावली , दीर्घनगर वर्णन, पृ0 821 छं0 29; माधवविनोद, पृ0 337 छं0 33

3- 'आम' -सोमनाथ ग्रंथावली, माधवविनोद, पृ0 337 छं0 31; बोधा ग्रंथावली पृ0 5;

रूक्याते-आलमगीरी, अब्दुर्रहमान, पृ0 4; अंसारी पृ0 35; आम भारत में सामान्य रूप से प्रचलित और बहुत पसंद किया जाता था। मनूची, स्टोरिया द मोगोर, भाग3, पृ0 177, पी0 चटर्जी, पृ0 85 ट्रैवर्नियर , ट्रैवेल्स इन इंडिया, पृ0 225-278

4- 'गूलर' वही, पृ0 337, छं0 33

5- चकोतरा, वही, पृ0 337, छं0 33

उच्च वर्ग विभिन्न प्रकार की मिठाइयों का सेवन करते थे । मीठी वस्तुओं में हलुआ [2] बहुत पसंद किया जाता था शकरपारा भी अन्य प्रकार की मिठाइयों के साथ खाया जाता था:

सुंदर पैठे पाग और खाजे अतिखासे ।
प्याचीदाने और सकरपारे परकासे ।। [3]

1- बनी असरफी, रबड़ी, बरफी अरु पेरा।
मोदक मगद मलूक और मट्ठे पहुँ सेरा।।
फेनी गुझा गबक गुरमुरे भव सुहारे।
जोर जलेबी पुंज कंद स ो पगे छुहारे ।।
- सोमनाथ ग्रंथावली; शशिनाथ विनोद, पृ0 524 छं0 1;
उरद मूंग के मोदक मीड़, और मुरमेड़े पागअखेड़े।
-सोमनाथ ग्रंथावली, पृ0 561 छं0 83; देव-देवचरित्र, पृ0 5 छं0 14, बोधा गंधू 2 मीरजा नाथ, बहरिस्तानए-गालिबी, अनुवादक, डॉ0एम0आई0 बोरा, I, पृ0 348; सियार उन-मुन्तखबीरीन, सैयद गुलाम हुसैनखान, रेमण्डस इंग्लिश ट्रांसलेशन I, पृ0 389; पी0एन0 ओझा, ग्लिम्पसेज ऑफ सोशल लाइफ इनमुगल इंडिया, पृ0 2
2- हलुआ देवग्रंथावली, पृ0 149;
मुहम्मदयासीन, ए सोशल लाइफ ऑफ इस्लामिक इंडिया, पृ0 37, ओविंगटन पृ0 235; डी लैट, पृ0 92; रो एण्ड फ्रायर पृ0 279,
3- 'सकरपारा'- सोमनाथ ग्रंथावली, शशिनाथ विनोद पृ0 524 छं0 2; सैयद गुलाम हुसैन खान, सियार-उल- मुन्ताखरीन, रेमण्डस, इंग्लिश ट्रांसलेशन I, पृ0 389; मुहम्मदयासीन, ए सोशल हिस्ट्री आफ इस्लामिक इंडिया, पृ0 37; बहारिस्तान ए गालिबी, I, पृ0 348,

शादी विवाह के अवसर पर विभिन्न प्रकारके व्यंजन बनते थे ।[1] उच्चवर्गीय आहार में मेवे [2] खाने का भी उल्लेख मिलता है:

मेवा भरी सु मिठाइ । पिस्ते बादाम प्रकास ।[2]

मेवे में बादाम [3], चिरौंजी [4],

1- पूरी करीमिलैं कै हरदीबारी लखि सुबरन को जरदो ।
घनो कथौ रौबैगन तले, मोहनभोग, गुलगुला तले ।।
उरद मूँग की पिठी पीसि के लडुवा कीने ।
निकुती छोटी छाँटि मंजु मुतिलड्डु बनाए ।
सरस अमृती खुरमा सुन्दर बेल सजाए ।
अरु अनेक विधि अमलधरे बासन में भरिके ।
हूज, डिक्शनरी ऑफ इस्लाम पृ0 319

2- सोमनाथ ग्रंथावली, दीपनगर वर्णन पृ0 821 छं0 25; पृ0 21 छं0 27; सुजानविलास: पृ0 691 छं0 14; पृ0 794 छं0 16; मनूची, स्टोरिया द मोगोर, भाग3, पृ0 117; आईन-ए -अकबरी, 1, अनु0ब्लाकमन, पृ085; मुहम्मदयासीन, ए सोशल हिस्ट्री ऑफ इस्लामिक इंडिया, पृ0 37,

3- "बादाम" वही, सुजानविलास, पृ0 691 छं0 14; बोधा ग्रंथावलीपृ0 5; पी0ए0 ओझा, ग्लिम्पसेस ऑफ सोशल लाइफ इन द मुगल इंडिया, पृ03; आईन, 1, ब्लाकमन, पृ0 65; बर्नियर पृ0 17; कार्लौफिकरदत्त, सर्वे ऑफइंडिया .... पृ0 208

4- चिरौंजी वही, माधवविनोद, पृ0 337 छं0 33

<u>निम्न वर्ग के आहार</u> - निम्न वर्ग भी पका चावल[1], मक्खन[2], तथा दही[3] का प्रयोग करते थे । सब्जियों में निम्न वर्ग साग खाते थे ।

1- चावल - .... ।

- सोमनाथ ग्रंथावली, सुजानविलास, पृ0 631 छं0 85 तथा देव देवचरित, पृ0 5 छं0 14, मुहम्मदयासीन, ए सोशल हिस्ट्री ऑफ इस्लामिक इंडिया पृ0 37, डुबाएस हिन्दू मैनर्स, कस्ट म्स एण्ड सेरेमनीज पृ0 272 मनूची. स्टोरिया द मोगोर, भाग3, पृ0 41 पी0एन0 ओझा गिलम्पसेज ऑफ सोशल लाइफ इन मुगल इंडिया, पृ0 2

2- मक्खन- देव देवचरित, पृ0 5 छं0 14 सोमनाथ ग्रंथावली: रसपीयूषनिधि पृ0 221 छं0 317 , उपरोक्त , हैमिल्टन । पृ 162 हौलैंट पृ0 89 ।

3- "दही-" भिखारीदास ग्रंथावली रससारांश, पृ0 32 छं0 220 , मतिराम ग्रंथावली, ललितललाम, पृ0 3[illegible] छं0 316 मतिराम रत्नावली, पृ0 43 छं0 63 सोमनाथ ग्रंथावली रसपीयूषनिधि, पृ0 50 छं0 53, दही को घोलकर पतला कर लिया जाता था उसमें चीनी खाँड आदि डालकर मीठा कर लिया जाता था उसको गोरस(लस्सी) कहा गया निम्न वर्ग गोरस तथा खाँड का भी प्रयोग करता था, भिखारीदास , काव्यनिर्णय पृ0 120 छं026 रससारांश पृ0 32 छं0 220, सोमनाथ ग्रंथावली, रसपीयूषनिधि पृ0221 छं0 320 निम्न वर्ग ...

मनूची, स्टोरिया द मोगोर, भाग3, पृ0 42; निजार पृ0 143; कैरी पृ0 160; खाँड, गुड, से बनता था, गुड का उल्लेख ट्रेवेनिर्यर पृ0 133 में किया

तत्कालीन समय में भोजन को स्वादिष्ट बनाने के लिए विभिन्न प्रकार के मसाले यथाः कालीमिर्च, लौंग , नमक, जाइफल आदि का प्रयोग किया जाता था :

और चंद से गोल दही में बरा भिजोये

लौनें मिरच अरू लौगें पोलि लोनि मधिन संजोये ।।[1]

मांसाहारी भोजन में लोग जानवरों के (बकरा, सुअर आदि के) गोश्त, तथा कबाब जो गोश्त से ही बनता था और मछली आदि का सेवन करते थे।[2]

पेय पदार्थ तथा मुखशोधक वस्तुएँ -

अट्ठारहवी शताब्दी का काल श्रृंगार काल माना जाता है तत्कालीन समय में सम्राट अत्यन्त विलासी थे वे सदैव रासरंग में व्यस्त रहते थे । ऐसी परिस्थिति में मदिरा का सेवन कोई आश्चर्य की बात नही है। लगभग सभी लोग मदिरा का प्रयोग करते थे । नकेवल पुरूष बल्कि स्त्रियाँ भी समयानुसार मदिरा का प्रयोग करती थी :

1- सोमनाथ ग्रंथावली: शशिनाथ विनोद,पृ0 524 छं0 3; सुजानविलास, पृ0 338 छं0 34 ।;
कालीकिंकर दत्त,सर्वे ऑफ इंडियांज सोशल लाइफ एण्ड एकोनामिक कंडीशन इन द एट्टीन्थ सेन्चुरी पृ0 1707-1813 पृ0 79, 85, 80, 81, 83, 89, 127;मनूची, स्टोरिया द मोगोर,भाग3, पृ0 44; डेलावेली, 2 पृ0 226; मेन्डल्सो, पृ0 33; पी0 एन0 ओझा, ग्लिम्पसेज ऑफ सोशल लाइफ इन मुगल इंडिया,पृ0 8

2- मिरात- ए- सिकन्दरी, पृ0 42; मैन्डल्सो, पृ0 58; डेलावेली,पृ0 435

आसव सेऊ सिखाए सखीन के सुन्दरि मंदिर में खसौवै ।

सापने में बिछुरे हरि हेरि हरैह हरै हरिनी दृग रोवै ।[1]

नशे की अन्य वस्तुओं में भाँग का उल्लेख कवि ने किया है :

खान पान की वस्तु करी जे जे अनमोली

तिनि में दई मिलाई भंग की करिके गोली ।[2]

यह सामान्य तौर पर गरीबों में प्रचलित थी,[3] तथा इसे किसी वस्तु में साथ मिलाकर खाया जाता था ।[4] उच्च वर्ग भी इसका सेवन करता था ।[5]

नशे की अन्य चीजों में तम्बाकू का भी प्रयोग होता था ।[6] मुख शोधन वस्तु में भोजन के उपरान्त पान खाया जाता था :

1- "मदिरा"- देव ग्रंथावली, भाव विलास,पृ० 32, छं० 22; यहाँ पर आसव का तात्पर्य शराब अथवा मदिरा से ही है, सोमनाथ ग्रंथावली, प्रेमविनोद,पृ० 634 छं० 10; पृ० 620 छं० 22; पृ० 621 छं० 26, सोमनाथ ग्रंथावली, द्वितीय खण्ड ,पृ० 87 छं० 11; तोष,सु० नि०, पृ० 150; मआसीर -ए- आलमगीरी, पृ० 531; अब्दुर्रहमान,हयात ए- आलमगीरी, पृ० 33; पेलसर्ट इंडिया,पृ० 65; थेवनॉट पृ० 33

2- सोमनाथ ग्रंथावली:शशिनाथ विनोद,पृ० 524 छं० 4;

2- ट्रेवेनियर,ट्रेवेल्स इन इंडिया पृ० 165; लिन्सटन, भाग2,पृ० 115-16

3- सोमनाथ ग्रंथावली शशिनाथ विनोद पृ० 524 छं० 4,

4- सोमनाथ ग्रंथावली शशिनाथ विनोद पृ० 524,छं०4; लिन्सटन भाग 2 पृ० 115-16

5- मैकाल्फो । पृ० 120,

6- मनूची स्टोरिया द मोगोर भाग2, पृ० 175

भोजन करि द्विज बीरा लीन्हीं । नमस्कार पुरामनि कीन्हो ।[1]

यद्यपि पान भोजन के उपरान्ततोखाया जाता था, कवियो ने पान का अन्य कई दृष्टियों से उपयोग करने का उल्लेख किया है यथा- अतिथि सत्कार शादी विवाह के अवसर पर और प्रतिदिन पान खाने का उल्लेख है।[2]

1- "पान" बोधा विरह वागीश, पृ0137 छं0 47; देव, ग्रंथावली, पृ0 चतुर्थभाव विलास पृ109 छं0 3; मआसीर ए आलमगीरी [illegible] पृ0 262; डेलाविली, भाग2, पृ0 226; मैन्डलसो, पृ0 33; पी0एन0 ओझा: ग्लिम्पसेज आफ सोशल लाइफ इन मुगल इंडिया, पृ0 8, डुबाएस, हिन्दू मैनर्स, कास्टम्स एण्ड सेरेमनीज, पृ0 183; मनूची, स्टोरिया द मोगोर, पृ0 63-64

2- देव: चतुर्थ भाव विलास, पृ0 113 छं0 5; पृ0 126 छं0 2; पृ0 109 छं0 3; भिखारीदास ग्रंथावली, प्रथम खण्ड, पृ0 51, छं0 355; सोमनाथ ग्रंथावली, शृंगारविलास, पृ0 596 छं0 40; पृ0 608 छं0 107; पृ0 285 छं0 56; पृ0 295 छं0 5; पृ0 493 छं0112; रसपीयूषनिधि, पृ0 116 छं0 21; पृ0 127 छं0 18; पृ0 132 छं010; सुजानविलास, पृ0 764 छं0 17; बोधा: विरह वागीश, पृ0 226 छं0 18; पानकोबोड़ा या बीरी भी कहा गया है। मीरजा नाथ बहारिस्तान एगायिबी, अनुवादक डॉ0 एम0 आई बोच, पृ0 140 मुहम्मद यासीन: ए सोशल हिस्ट्री ऑफ इस्लामिक इंडिया, पृ0 68; डुबाएस, हिन्दू मैनर्स, कस्टम्स एण्ड सेरेमनीज, पृ0 226; ट्रैवर्नियर, ट्रैवेल्स इन इंडिया, पृ0 116; थेवेनाट कैरी पृ0 13; बर्नियर ट्रैवेल्स पृ0 13 ।

पान का उपयोग स्त्री, पुरुष दोनों करते थे :

पान खवाइ उन्हैं पहिलैं तब, नाथ के हाथ के पाननि खैहौं ।[1]

लोग पान में तम्बाकू, लौंग इलायची, तथा कपूर का मिश्रण डालकर खाते थे:

लाइची लवंग करपूर पूरि पाननि मैं

अरविंद आनन मैं हँसि के खवाइहौं ।[2]

1- देव: भावविलास पृ0 109 छं0 3; पृ0 126 छं0 2; पृ0 113 छं0 5; भिखारीदास ग्रंथावली, प्रथम खण्ड, पृ0 51 छं0 355; सोमनाथ ग्रंथावली, श्रृंगारविलास, पृ0 608 छं0 107; पृ0 285 छं0 56; पृ0 295 छं0 5; माधव विनोद: पृ0 493 छं0112; रसपीयूषनिधि, पृ0 41; पृ0 127; छं0 18; पृ0 132 छं0 10; पृ0 116 छं0 21; सुजान विलास, पृ0 764 छं0 17; बोधा: विरह वारीश, पृ0 137, छं0 47, पृ0 226 छं0 18; ट्रेवेर्नियर ट्रेवेल्स, भाग 1, पृ0 294; मैन्डल्सो, पृ0 33, पी0एन0 ओझा, ग्लिम्पसेज ऑफ सोशल लाइफ इन मुगल इंडिया, पृ08; डेलावैली भाग2, पृ0 226 ।

2- सोमनाथ ग्रंथावली: रसपीयूषनिधि, पृ0 132 छं0 10; पृ0 116छं0 21; श्रृंगारविलास, पृ0596 छं0 40; पृ0 608 छं0 107; मतिराम, रसराज, तमोल [तम्बाकू] पृ0167 छं0 114; पृ0 24; 318; 359; तोष: सुधानिधि, पृ0102 छं0 300; पृ0 123 छं0 362; ट्रेवेर्नियर, ट्रेवेल्स इन इंडिया, पृ0 149; डेलावैली, भाग2, पृ0 226; मैन्डल्सो, पृ0 33; पी0 एन0 ओझा, ग्लिम्पसेज ऑफ सोशल लाइफ इन मुगल इंडिया, पृ0 8; मनूची, स्टोरिया द मोगोर भाग2, अनुवादक इरविन, पृ0 175

इस प्रकार के पान में डालने वाले मसालों का प्रयोग संभवतः उच्च वर्ग ही करता था ।[1]

उच्चवर्गीय लोग पान के बीड़ा को रखने के लिए बहुमूल्य मणियों से युक्त पानदान रखते थे :

पन्ननि के पानदान [2]

1- आईन-ए-अकबरी, I ,पृ0 72

2- देवः सुखसागरतरंग, पृ0 78 छं0 186; बोधा ग्रंथावली पृ0 6; सोमनाथ ग्रंथावलीः श्रृंगारविलास, पृ0 5 94; छं0 29; रसपीयूषनिधि, पृ0 108 छं0 16; मिरातुल आलम, पृ0 365; मुहम्मदयासीन, ए सोशल हिस्ट्री ऑफ इस्लामिक इंडिया, पृ0 43

आवास तथा भवन-सज्जा

मानव जीवन की सम्पूर्ण कलात्मकता पहले आवश्यकता के रूप में अवतरित हुई हैं, वस्तुतः कला भी उसके लिए अनिवार्य ही है। मकान रक्षा के लिए बनाये जाते थे सुरक्षा के साथ धीरे-धीरे वे सौन्दर्य सृष्टि भी करने लगे। आवश्यकता अविष्कार की जननी तो है सौन्दर्य की परिचारिका भी है, फलतः मकान मजबूत ही नहीं सुन्दर भी बनाये जाने लगे। साज सज्जा के समान भी रखे गये।

तत्कालीन समाज का उच्च वर्ग यथाः सुल्तान सामंत आदि के भवन पूर्णरूप से सुरक्षित तथा सौन्दर्य से परिपूर्ण होते थे। भवन के चारों ओर गहरी खाई होती थी तथा अत्यन्त ऊँची दीवारे बनी होती थी जिस पर मणि जैसे लाल पत्थर से कँगूरे आदि बने रहते थे :

चहुँ ओर विराजति दीरघ खाई। सुभ देव तरंगिनि सी फिरि आई।
अति दीरघ कंचनकोटि बिराजै। मणि लाल कंगूरन की रूचि राजै।[1]

उच्च वर्ग बड़ी-बड़ी हवेलियों में रहते थे[2] जिसमें कई खण्ड होते थे कवि ने

1- देव ग्रंथावली: पृ0 2 छं0 26

2- " बड़े बाजार बिलंद हवेली। फुहरति धुजा बहलनि मेली-
- सोमनाथ ग्रंथावली पृ0 79 छं0 17

मतिराम ग्रंथावली: पृ0 362 छं0 437, पृ0 363 छं0 438, देवदर्शन पृ0120 बोधा: विरह वारीश पृ0 95 छं0 39, सोमनाथ ग्रंथावली: रसपीयूषनिधि पृ0 206 छं0 185

तिमंजले पर बैठी नायिका जो पंतग उड़ने के खेल देख रही है, का वर्णन, इस प्रकार किया है :

> रावरी तिमहले की बैठि छविवारी बाल ।
> देखति तमासो गुड़ी अलिनि उड़ायो है ।[1]

सम्पन्न वर्ग प्रारम्भ से ही अपने महलों की विशालता तथा सुन्दरता के प्रति पूर्णरूप से जागृत थे । सम्भ्रांत लोगों के भवन का एक उल्लेख इस प्रकार मिलता है ।

यद्यपि वे भूमि के विभिन्न टुकड़ो पर सुनियोजित रूप से बने नही है तथापि अद्वितीय सुन्दर है । वे पूर्णतया काटे हुए पत्थर के बने हैं । महल अधिक उन्नत तथा भव्यहै। महल की दीवार का एक भाग पूर्व की ओर है और इसका यह हिस्सा अन्य भागों की अपेक्षा अधिक सुसज्जित है। इसकी ऊँचाई लगभग चालीस या पचासगज है तथा पूर्णरूपेण कटे हुए पत्थर का बना है। इसके अग्र-भाग पर श्वेत सिमेंट का पलास्टर है। अनेक स्थानों में महल चार मंजिला जितना ऊँचा है। प्रथम की दो मंजिले बहुत अंधेरी है, किन्तु उनमें कुछ समय बैठने के पश्चात् आप भली-भाँति देख सकते हैं । इस महल के एक भाग में एक ऐसा भवनहैजिसमे पाँच गुम्बद है और उनके चारो ओर अनेक छोटे-छोटे गुम्बद है और भारतीय परम्परा के अनुसार एक बड़े गुम्बद के दोनो के ओर

1- तोषःसुधानिधि;पृ0 174 छं0 206; देव देवदर्शन,पृ0120; मतिराम ग्रंथावली: पृ0 363 छं0 438; भूषण ग्रंथावली, पृ0 70 छं0 245; पर्सी ब्राउन, दि इंडियन आर्किटैक्चर, पृ0 131 ।

भारतीय परम्परा के अनुसार एक बड़े गुम्बद के दोनो के ओर एक-एक छोटे गुम्बद हैं । बड़े गुम्बद ताँम्बे के पत्तरो से मढ़े हुए हैं । दीवार के बाह्य भाग को उन्होंने हरे रंग से रंगे हुए खपड़े से जड़ दिया है । सम्पूर्ण दीवारको उन्होंने केले के वृक्ष के चित्र से मढ़ा है जो कि रंगे हुए खपड़े काहै। पूर्वी भाग के स्तम्भ पर हातीपुल है। ये हाथी को "हाती" तथा द्वार को " पुल कहते हैं । इस द्वार के बाह्य-भाग पर हाथी का एक चित्र है जिस पर दो महावत बैठे हैं । यह बिल्कुल एकहाथी की भाँति का बना है । फलतः यह हातीपुल कहलाता है। महल की सबसे निचली मंजिल [जो कि ऊचाई में चार मंजिला जितनी है] में एक खिड़की है जो हाथी के इस चित्र की ओर खुलती है। इसकी ऊपरी मंजिल पर भी इसी प्रकार के गुम्बद हैं । दूसरी मंजिल में बैठक है .....। [1]

सम्पन्न वर्ग का भवन इस प्रकार निर्मित होता था कि चारों ओर से भली-भाँति प्रकाश और हवा अन्दर आ सके ।[2]

1- मेमॉयर्स ऑफ बाबर, भाग2, [किंग] पृ0 337, प्रस्तुत उद्धरण में बाबर ने अपने [आत्म चरित बाबरनामा] में ग्वालियर के राजा मानसिंह के महल के वर्णन किया है ।

2- देव-देवदर्शन पृ0 120; सोमनाथ ग्रंथावली: पृ0 819 छं0 7; सुजान विनोद पृ0 746 छं0 17; मआसीर-ए आलमगीरी, [उर्दू] अनुवादक मुहम्मद फिदा अली, पृ0 100, बर्नियर पृ0 247

कवि ने सुनियोजित गृह व्यवस्था स्थापित किये जाने का उल्लेख किया है :

> रच्यौ गृह परब न्याह निमित्त। रसोइनि को दिसि अग्नि उचित।
> कियौ गृह पश्चिम भोजन अर्थ। समीर दिसा हित अन्न समर्थ।
> दिसा पुनि उत्तर गेह भँडार। सुरालय ईस दिसा अविकार।[1]

भवन मे आँगन को भी होता था :

> ऊजरी उज्यारी ऐसी गूजरी न देखी कोउ
> आँगन में सहज देखंगना सो ठाढ़ो है।[2]

भवन में अनेक कमरे यथा बैठक, शयनकक्ष आदि हुआ करते थे।[3]

महलों के ऊपर कंचन के कलश बने रहते जिनकी ऊँचाई और पीत आभा के कारण गगन पीला सा लगता था:

1- सोमनाथ ग्रंथावली: शशिनाथ विनोद, पृ0 520 छं0 55-56।

2- आलम ग्रंथावली: संपा0 श्री विद्यानिवास मिश्र, पृ0 128, छं0 106 पा0 313 छं0 66, पृ0 34 छं0 74- पृ0 66 छं0 174 आलम अक्षर मलिका: वही, पृ0 123 छं0 4, सोमनाथ ग्रंथावली: रसपीयूषनिधि, पृ0 91 छं0 31, पृ0 95 छं0 43।

3- सोमनाथ ग्रंथावली: दीर्घनगर वर्णन, पृ0 819 छं0 8, घनानंद ग्रंथावली, पृ0 323, मतिराम ग्रंथावली: पृ0 363 छं0 436, मिथोहोफस वायजेज, पृ0 221 पर्सी ब्राउन, द इंडियन आर्कीटेक्चर, पृ0 3

महलनि ऊपर जँह बने कंचनकलश अनूप ।

निज प्रभानि सौं करत है गगन पीत अनुरूप ।[1]

महलों में बाग तथा तालाब की भी व्यवस्था रहती थी :

नृप आवास के अनुसरी बाग असोक नवीन ।

निकट तड़ाग महेसमठ तहाँ अमन द्विज कीन ।[2]

गर्मी में जब तालाब का पानी सूख जाता था तब कुएं से पाइप के माध्यम से तालाब में पानी भरा जाता था ।[3] बाग में विभिन्न प्रकार फलों के वृक्ष मौसम के अनुसार लगाये जाते थे :

अरू बिहीसेब सुदाख । पुजवै सु उर अभिलाख ।

नीके छुहारे बेरि । कमरख्य दुरख्य निबेरि ।

आलू मधुर खुबानि । नारँगी अरू सुखदानि ।

कहहरी कटहर बाल । अरू आँवरे सु बिसाल ।।

क्रमशः

1- मतिराम ग्रंथावली पृ० 362छं० 435 ,सोमनाथ ग्रंथावली दीर्घनगर वर्णन पृ० 819 छं08 ।

2- बोधा: विरह वारीश ,पृ0 137 छं0 49, पृ0 194 छं0 6, सोमनाथ ग्रंथावली दीर्घनगर वर्णन पृ0 819 छं0 15, पृ0820 छं0 22, माधव विनोद पृ0 336/21, 336/25, आलम ग्रंथावली पृ0 151 मैनूमलो पृ0 54

3- पलसर्ट, जहाँगीर इंडिया,पृ0 67

श्रीफल करौंदा नूत । मिठ्ठा चिरौंजिय नूत ।

अरु फालसे अंजीर । खिरनी बकुल जंबीर ।।

अरु बीजपूर अनार । गौंदी कपित्थ उदार ।

× ×

अरु औ र बहु विधि वृक्ष तै सोभियै परतक्ष ।[1]

फलो के वृक्ष के अलावा विभिन्न प्रकार के पुष्पो के भी वृक्ष बागो में लगे होते थे तथा भवन के द्वार पर दरवाजे लगे होते थे :

अरु गढ़ दुवार । सोहहिं प्रकार

बहु कपाट । जुत लौह ठाट ।।[2]

कुलीनो का भवन इतना बड़ा होता था कि इनके महलों में जानवरो को रखने के लिए भी अलग से प्रबन्ध होता था ।

हरिन हरमखाने सिंध है शुतुरखाने

पीलखाने पाठी है करजखाने कीत हैं।

बहुगी खाने खरगोश सिलखत खाने,

खीसें खोसे खसखाने खुसत सबोत हैं।[3]

1- सोमनाथ ग्रंथावली : माधवविनोद, पृ0370छं0 42, छं043, पृ0338छं035पृ0338 छं0 36, दीर्घनगर वर्णन, पृ0820छं022-24कथ्यातए आलमगोरी अनुवादक नवीन आरक पृ04

2- सोमनाथ ग्रंथावली दीर्घनगर वर्णन, पृ0 819छं013, आलम अक्षरमालिका, पृ0 123छं04; वही प्रस्तुत. पृ० 133

3- भूषण ग्रंथावली, पृ0 102 छं0 36। राजकमल बोरा पृ0 27, शुतुरखाने से तात्पर्य, [ऊंटों का बाड़ा], पीलखाने का तात्पर्यहाथियों का स्थान अर्थात जहाँ हाथी बाँधे जाते थे] करजखाने[मुर्गों का स्थान] आदि की व्यवस्था कुलीनों के भवनों में होती थी ।

महल की सज्जा का वर्णन कवि ने इस प्रकार किया है :

चांदनी महल में फव्वारे लगे हैं जिनसे दुग्धधोज्ज्वल निकल रहा है चंदोवा और मणि-माणिक्य की झालरें लटक रही हैं

छुटत फुहारे, वै विमल जल, झलकत,
चमकै चंदोवा मनि-मानिक महालरैं ,[1]

फर्श श्वेत संगमरमर का बना होता था जिस पर रोशनी पड़ती थी तो वह सफेद दूधिया सा दिखाई पड़ता था और भवन में बना मंदिर भी श्वेत स्फटिक से निर्मित होने के कारणदधि के सागर की भाँति प्रतीत होता है,

फटिक सिलानि सों सुधारयौ सुधा-मंदिर
उदधि दधि को सो अधिकाइ उमगें अनंद
बाहर तै भीतर लौं भीति न दिखाई देत
छीर कैसे फेन फैलो आंगन फरसबंद ।[2]

भवन में बने सरोवर का सौन्दर्य दर्शनीय है:

इक पक्को निकट सरोवर तामै निरमल नीर बिराजे ।
बहु वाकी तरल तरंगे दरसै सुख सरसै छबि छाजै ।

क्रमशः

1- देव देवसुधा ,पृ0 35 छं0 42 [यहाँ पर फव्वारे को फुहारे कहा गया है], बोधा: विरह वारीश पृ0 94 छं0 37, भैय्यालाल, पृ0 54 ।

2- डॉ0 नगेन्द्र ,देव और उनकी कविता,पृ0 186

पुनि दिन अरबिंद रैनि इंदीवर फूले रहत सुहाए ।

नित हित मकरंद बुंद के सौरभ भ्रमत अलिंद सुहाए ।

उर कपट तजे जल कुक्कुट विहरै चक्रवास रस भीगे ।[1]

<u>निम्न वर्ग के आवास</u> – निम्न वर्ग के लोग एक साधारण सी झोपड़ी बनाकर रहते थे जिसकी दीवारे मिट्टी की बनी होती थीं ।[2]

झोपड़ी को घास-फूस की चटाई सी बनाकर बांस के सहारे से झोपड़ी को ढक देते थे ।[3] उच्च वर्ग के विपरीत निम्नवर्ग के घरों मे प्रायः एक ही दरवाजा होता था तथा खिड़की का भी अभाव होता था परिणामतः रोशनी और हवा समुचित रूप से नहीं मिल पाती थी ।[4]

फिर भी गरीब लोग अपने घर को लीप-पोतकर (गोबर मिट्टी से) साफ रखते थे :

आँगन लिपाय दिवाल पुताई। जरक सभी बरवरी छवि बारी ।[5]

1– सोमनाथ ग्रंथावली, दीर्घसार वर्णन, पृ० 821 छं० 31–32, बोधा विरह वारीश, पृ० 95 छं० 39; बर्नियर, पृ० 247; सरकार, मआसीर-ए-आलमगीरी, पृ० 100

2– बर्नियर पृ० 252

3– पेलसर्ट, पृ० 67; आइने-ए-अकबरी, अनु० जैरेट, भाग2, पृ० 122; मनूची, स्टोरिया द मोगोर, भाग3, पृ० 211 ।

4– (टैवर्नियर भाग1, पृ० 100

5– बोधाः विरह वारीश पृ० 152 छं० 20; बॉम फ्रायरतथा टॉमसरो पृ० 451

(खंड़ख) मनोरंजन के साधन

विविधता ही जीवन जगत का आधार है । सुख और दुःख हर्ष तथा विषाद कर्म एवं विश्रांति के युग्मों में से किसी एक संस्थिति पर्याप्त नहीं है । संतुलन के लिए दोनों अपेक्षित हैं । कर्म की गंभीरता और गुरुता से मन और शरीर दोनों थक जाते हैं । इस थकान को कम करने दूर करने और पुनः नवीन चेतना एवं उत्साह के सहित कार्यरत होने के लिए ही मनोरंजन की उपयोगिता है यही इसका साध्य और प्रयोजन है यद्यपि यह स्पष्ट है कि मनोरंजन अपने आपने पूर्ण नहीं है, फिर भी इसकी आवश्यकता को नकारा नहीं जा सकता ।

मध्ययुग में चित्रित सामाजिक वातावरण में भौतिक संपन्नता और उन्नति का अभाव नहीं है इसलिए मनोरंजन की व्यवस्था स्वभावतः सुलभ हो जाती है । सामान्त सरदार तथा संपन्न वर्गों में शान-शौकत की अतिशयता थी अतः उसी के अनुरूप अनेक मनोरंजन के साधनों का प्रचलन हो गया था।

मनोरंजन के साधन गृह-बाह्य दो भागों में विभाजित किया जा सकता है

गृह-मनोरंजन - गृह मनोरंजन में शतरंज[1] सबसे अधिक प्रिय खेल था ।

1- डॉ0 मोहन अवस्थी:- हिन्दी रीतिकविता और उर्दू काव्य, पृ0 95; मआसीर-ए-आलमगीरी: मुहम्मद खान साकी, अनुवादक [उर्दू] मुहम्मद फिदा अली तलब, पृ0 811-12; मनूची: स्टोरिया द मोगोर, भाग2, पृ0 460; मुहम्मदयासीन : ए सोशल हिस्ट्री ऑफ इस्लामिक इंडिया, पृ0 118; बहारिस्तान-ए-गायबी, अनु0 एम0 आई बोराह, भाग2, पृ0 637

शतरंज स्त्री पुरूष दोनों खेलते थे ।[1] कवि ने एक ऐसी नायिका को चित्रित किया है जो शतरंज खेल रही थी कि नायक ने जाकर उसके हाथ में फरजी दिया :

पहले हम जाय दियै कर मैं तिय खेलति ही घर मैं फरजी ।[2]

चौपड़ – यह कपड़े की बिसात पर कौड़ियों से खेला जाता था [3], जो सम्पूर्ण मुगल काल में खेला जाता रहा,[4] बिसात की अन्य सामग्रियों में मुख्य खेल माना जाता था ।[5]

1– बहारिस्तान ए- गालिबी, अनुवादक एम0आई0 बोच, भाग2, पृ0 637; ऑर्विंगटन, पृ0 267; आईन-ए-अकबरी, ब्लाकमैनन, भाग 1, पृ0 308; मुहम्मदयासीन ए सोशल हिस्ट्री ऑफ इस्लामिक इंडिया, पृ0 118; डुबाएस; हिन्दू मैनर्स, कस्टम्स एण्ड सेरेमनीज, पृ0 670 कानून-ए-इस्लाम, [illegible], पृ0 23।

2– तोष डॉ0 मोहन अवस्थी, हिन्दी रीतिकविता और समकालीन उर्दू काव्य, पृ0 94 तथा, वही । (फरजी का तात्पर्य पत्र से है।)

3– जाफर शरीफ, कानून-ए- इस्लाम, अनुवादक जी. ए. हरक्लार्ट्स पृ0331, चौपड़, का विशद विवरण इस पुस्तक में है।

4– मैकालिफी भाग 1, पृ0 162; आईन-ए-अकबरी भाग 3 सरकार, पृ0 328

5– एडवर्ड एण्ड गैरेट, मुगल रूल इन इंडिया, पृ0 228; जाफर शरीफ, कानून-ए इस्लाम, अनुवादक जी0 ए0 हरक्लार्ट्स, पृ0 331 ।

शतरंज की भाँति चौपड़ भी स्त्री-पुरुष ही खेलते थे :

संग प्यारे के चौपट खेलौं, हसौं, सकुचौ न कहू सखियाँजन सौं ।[1]

स्वतंत्र रूप से चौपट में किसी को हराया जा सकता था ।

इनकौ चौपरि माहि हरइये ।।

खेलन के हित इहा बुलइये ।।[2]

<u>द्यूत या जुआ :</u> जुआ खेलने का व्यसन बादशाहों, सामंतों तथा समाज के उच्च वर्ग में बुरी तरहव्याप्त था।[3] कवियों ने जुआ खेले जाने का उल्लेख किया है :

1- कुमारमणि, रसिक रसाल, पृ0 77 छं0 48, पृ0 23 छं0 30, सोमनाथ ग्रंथावली ब्रजेंदविनोद, पृ0 535 छं0 7, पृ0 584 छं0 86 , पृ0 589 छं0 29, पृ0 589 छं0 30, रामचरित रत्नाकर: द्वितीय खण्ड, पृ0 380 छं0 5, सुजानविलास: पृ0 716 छं0 31, श्रीमती मीर हसन अली, आब्जरवेशन्स ऑन द मुसलमान्स, पृ0 250, यदुनाथ सरकार: स्टडीज इन द मुगल इंडिया, पृ0 82 आईन-ए-अकबरी । पृ0 316 अंसारी पृ0 177

2- सोमनाथ ग्रंथावली: ब्रजेंदविनोद, पृ0 589 छं0 29, पृ0 584 छं0 86, फ्रामरंरी, पृ0 333 .

3- डॉ0 मोहन अवस्थी: हिन्दी रीतिकविता और समकालीन उर्दू काव्य पृ0 95 ।

खेले मिलि जुआ पैज पूरे दांव आवहीं ।

हारहिं उतारि जीतै मौत धन लच्छन सों ।[1]

<u>चौगान</u> – चौगाँन [2] जिसे पोलो भी कहा गया यह खेद गेंद के माध्यम से खेला जाता था । यह धनी वर्ग का खेल था :

आलमगीर के मीर वजीर फिरै चउगान बटान से मारे ।[3]

<u>शिकार</u> – शिकार खेलना प्रारम्भ से ही मुगल बादशाहों, उच्चवर्गीय सामंतो आदि

1– घनानंद, घनानंद कवित्त, पृ0 16, छं0 6; पृ0 46; सोमनाथ ग्रंथावली, सुजान विलास पृ0 786 छं0 31; पृ0 786 छं0 32; पृ0 786 छं0 33; ब्रजेंदविनोद: पृ0 630 छं0 48; आईन; I, पृ0 321; एडवर्ड एण्ड गैरेट, मुगल रूल इन इंडिया, पृ0 282

2– के एम अशरफ, लाइफ, पृ0 287, अंसारी पृ0 171; आईन-ए-अकबरी, I, पृ0 214-215

3– भूषण: राजकमल बोरा, पृ0 27छं0 469; बोधा, इश्कनामा, पृ0 200 छं0 13; डॉ0 मोहन अवस्थी हिन्दी रीतिकविता तथा समकालीन उर्दू, काव्य, पृ0 98; अंसारी, सोशल लाइफ आफ द मुगल इम्परर्स, पृ0 171; आईन-ए- अकबरी, भाग I, पृ0 214-215; के0 एम0 अशरफ, लाइफ एण्ड कंडीशन आफ पीपुल आफ हिन्दुस्तान, पृ0 287 ।

का प्रिय खेल रहा ।

कवियों ने शिकार खेलने का उल्लेख किया है :

एक समै सजि कै सब सैन सिकार को आलमगीर सिधारा ।[1]

अधिकांशतः घोड़े पर सवार होकर जंगली जानवर हिरन, चीता आदि का शिकार करते थे ।[2] तथा इन जंगली जानवरों को शिकार के हेतु सुरक्षित रखने के लिए बहुत धन व्यय किया जाता था ।[3]

1- भूषण ग्रंथावली: पृ0 30 छं0 90 ; सोमनाथ ग्रंथावली, रसपीयूषनिधि, पृ0 221 छं0 318; पृ0 42 छं0 11; पृ0 156 छं0 3; पृ0 222 छं0 332; पृ0 38/43; माधव विनोद, पृ0 320 छं0 18; सोमनाथ ग्रंथावली, द्वि0 खं0, रामचरित रत्नाकर, पृ0 126 छं0 8; दीर्घनगर, वर्णन 823 छं0 2; सुजान-विलास, पृ0 645 छं0 132; ब्रजेंदविनोद, पृ0 537 छं0 22; [यहाँ शिकार के लिए आखेट शब्द का भी प्रयोग हुआ है]

2- चललयै सिकार, हुव हय सवार।

— सोमनाथ ग्रंथावली, सु0 विलास, पृ0 645 छं0 132;

धोड़े कुरंग के बल उदार *—

* रामचरित रत्नाकर, द्वि0खं0, पृ0 126 छं0 8

रसपीयूषनिधि पृ0 320 छं0 18; पृ0 222 छं0 332; दीर्घनगर, पृ0 823, छं0 2; सुजानविलास, पृ0 645 छं0 139; पृ0 650 छं0 193; ब्रजेंदविनोद, पृ0 537 छं0 22; मिरात-ए- आलमगीरी, पृ0 522-23; 489; ट्रेवेर्नियर, पृ0 125; मनूची स्टोरिया द मोगोर, भाग4, पृ0 255,

3- मनूची, स्टोरिया द मोगोर, भाग4, पृ0 255

<u>कबूतरबाजी</u> – तत्कालीन समाज में लोगों को कबूतर पालने तथा उन्हें उड़ाने का व्यसन था।[1] कवि ने कबूतर बाजी (इश्क-बाजी) का उल्लेख किया है :

> गिराबाज लोट लोटन कबूतरो को
>
> फंदला लिया पै एतो तरलाई वारो है।[2]

<u>पतंग</u> – अट्ठारहवीं शती में पतंग[3] उड़ाने का आम रिवाज था। कवि ने एक ऐसी नायिका का चित्रण किया है जो उड़ती हुयी पतंग को देखकर प्रसन्न हो रही है :

> रावरी तिमहले को बैठि छविवारी बाल।
>
> देखति तमासौ गुड्डी, अलिनि उड़ायो है।[4]

1– श्रीमती मीरहसन अली, ऑब्जरवेशन्स ऑन द मुसलमान्स, पृ0 217–218, आईन–ए–अकबरी, I, ब्लाकमैनन, पृ0 318 डॉ0 मैहन अवस्थी, हिन्दी रीति कविता और समकालीन उर्दू काव्य, पृ0 96

2– बोधाविरह वारीश पृ0 105 छं0 44, लोटन कबूतर भी एक जाति बतायी गयी है डॉ0 अवस्थी, हिन्दी रीतिकविता और समकालीन उर्दू काव्य पृ0 96, ~~वही~~ आइन-ए-अकबरी I, ब्लाकमैनन, पृ० 318; मीर हसन ऑब्जरवेशन्स ऑन द मुसलमान्स, पृ० 217-218;

3– आनन्दराम मुखलिस, सफरनामा, पृ0 54; मीरहसन अली, ऑब्जरवेशन्स, ऑन द मुसलमान्स, पृ0 217

4– तोष सुधानिधि पृ0 174, छं0 102, यहाँ पतंग को गुड्डी कहा गया : आलम ग्रंथावली, पृ0 109 छं0 345 पृ0 118 छं0 394, वही।

<u>नट</u> – नट लोग विभिन्न प्रकारके वेश बनाकर तरह–तरह के तमाशे दिखाते थे :

के के कला अनेक नटवा चढ़ि बांस फैला तोड़त खरातन ।[1]

<u>आँख मिहीचनी या चोरमिहीचनी</u> – अन्य मनोरंजन के साधनो में कवियों ने चोरमिहीचनी का उल्लेख किया है, जिसमें एक व्यक्ति को जो चोर बनता था उसकी आँख बन्द कर दी जाती थी फिर वह अन्य लोगों को ढूंढता और चोर व्यक्ति जिसे पकड़ लेता था वह व्यक्ति फिर चोर बनता था :

दुवत परसपर हेरिके राधा नंदकिसोर ।
सबमें है हो होत हैचोर मिहीचनी चोर ।[2]

1– बोधार्क,पृ0 69; देवग्रंथावली पृ0 191; सोमनाथ ग्रंथावली, सुजान विलास, पृ0 800, छं0 30; पृ0 800 छं0 41; पृ0 800 छं0 42; पृ0 800 छं0 43; तथा छं0 44; वृन्द विनोद,844/1788/74; नौरीस, एम्बेसी टू औरंगजेब, पृ0 16–67; डौलेट, पृ0 82; आईन ए अकबरी, भाग 3, पृ0 258,

2– मतिराम ग्रंथावली ;मतिराम सतसई, पृ0 378 छं0 117; पृ0 386 छं0218; पृ0 373 छं0 56; पृ0 372 छं0 55; रसराज, पृ0 204 छं0 19; पृ0 279 छं0 346; ललितललाम, पृ0 329 छं0 181; पृ0 335 छं0 216; मतिराम रसावली, पृ0 109 छं0 15; पृ0 102 छं0180; पृ0 59 छं0 94; देव ग्रंथावली, रसविलास, पृ0239 छं0 40; बंगाल इन सिक्सटीन्थ सेन्चुरी पृ0 186; यह खेल अट्ठारहवीं शती से पर्व भी विद्यमान था ।

इन सबके अलावा गेंद[1] खेलना कबड्डी, नमर गेंद आदि तथा अन्य छोटे -मोटे खेलों का उल्लेख मिलता है ।

<u>संगीत</u> - मनोरंजन के साधनों में संगीत [2] का अपना विशेष स्थान होता है ।

संगीत एक ऐसी कला है जो व्यक्ति के मनोभावों को व्यक्त करने में सहायक होती है। [3] प्रारम्भिक मुगल काल से ही शासकों ने संगीत में रूचि ली और संगीतज्ञों को प्रश्रय प्रदान किया। अकेले औरंगजेब को छोड़कर[4] तत्कालीन समय में विभिन्न प्रकार के वाद्य यंत्र प्रचलित थे तथा वाद्य यंत्रों के साथ गीत गाने का क्रमपूर्ववत चलता रहा :

मल्लन मांहि कालोलानि करें ।। गेंद आदि खेलन विहरे ।।

1- सोमनाथ ग्रंथावली; ब्रजेंद्रविनोद, पृ0 843 छं0 2; सोमनाथ ग्रंथावली, माधव-विनोद, पृ0 400 छं0 30; तथा देवकृत देवचरित, पृ013 छं0 59 ।

2- मैन्डल्सी पृ0 310

3- अंसारी पृ0 174

4- तारीख-ए-रशीदी, मीर्जा मुहम्मद हैदर, अनुवादक ई0 डेनीसन रौस, पृ0 174, पृ0 174 हुमायुनामा, अनुवादक बेवरिज, पृ0 98; हुमायुं ने सोमवार तथा बुधवार संगीत सुनने का लिए दिन तय कर रखा था। आईन एअकबरी : ब्लाकमैन पृ0 611 -12, तुजुक-ए-जहाँगीरी, रोगर्स एण्ड बेवरिज, 1, पृ0 331, 292; इकबालनामा-ए- जहाँगीरी, पृ0 308; कजवीनी, बादशाहनामा, पृ0 160; मिरातए-आलमगीरी, इलियट एण्ड डाउसन खण्ड7, पृ0 156; मआसीर-ए-आलमगीरी पृ0 71-81; इरविन, लेटर मुगल्स, 1, पृ0 192, 93 ।

प्यारे लियो कर बीन बजावत, तान नवीनतहाँ उपजाई,
प्यारो अलापि के राग यहै, मधुरो धुनि बीन तें बानि सुनाई[1]

जहाँदार के उत्तराधिकारियों को भी संगीत में अत्यधिक रुचि थी। मुहम्मदशाह का युग तो राग-रंग का ही युग था तथा वह स्वयं रंगीला के नाम से प्रसिद्ध था। उसके दरबार में 22 नर्तकियाँ तथा 24 गवैये सेवारत थे।[2]

नृत्य - संगीत और नृत्य एक दूसरे के परक हैं :

सांगीतक नाचत त्रिया गावत गीत रसाल[3]

अवलोकित काल में दरबार तथा सभाओं में स्त्रियाँ नृत्य करती थीं :

1- कुमारमणि: रसिक रसाल, पृ0 92 छं0 102; पृ0 96 छं0 116; पृ0 96 छं0 117; पृ0 47 छं0 49; मतिराम: रत्नावली, पृ0 55 छं0 87; 116/84; रसराज, पृ0 267 छं0 285; पृ0 213 छं0 60; पृ0 220 छं0 92; देव: देवचरित्र, पृ0 12 छं0 53; पृ0 16 छं0 76; पृ0 17, छं0 80; पृ0 22 छं0 111; सोमनाथ ग्रंथावली: रसपीयूषनिधि, पृ0 200 छं0 135; पृ0 226 छं0 12; पृ0 237 छं0 85; ब्रजविनोद, 843/6; विरह वारीश, पृ0 856 छं2 पृ0 104 छं0 43; [21] आसीर ए-आलमगीरी: उर्दू अनुवादक /अनु. मु. फिदा अली, पृ0 806 आईन, भाग II, पृ0 211; III 378

2- डा0 मुहम्मद उमर, मीर का अहद, पृ0 250, तारीखे शाकिर खानी पृ0 114, के संदर्भ से।

3- बोधा: विरह वारीश, पृ0 99 छं0 21; 85 छं0 2; 104 छं0 43

पुनि परदा को टारि तहँ आई चेरी दोइ ।

नृत्य कियौ तिनकौ निरखि रहे सबै सुख मोई ।[1]

प्रसन्नता के अवसर यथा विवाह, जन्मदिन तथा तीज-त्यौहारों पर भी नृत्य और संगीत के माध्यम से मनोरंजन किया जाता है ।[2]

हिंडोरा- अवलोकित काल में मनोरंजन का एक अन्य साधन हिंडोरा या झूला झूलना भी था । स्त्री-पुरुष दोनों ही हिंडोरे में झूलने का आनन्द लेते थे :

दंपति मिलहि हिंडोरा झूलहि ......।[3]

1- सोमनाथ ग्रंथावली, माधव विनोद, पृ० 351 छं० 1; बोधा, विरह-वारीश, पृ० 89 छं० 21; एस. सी. रायचौधरी, सोशल कल्चरल एण्ड एकोनॉमिक हिस्ट्री ऑफ इंडिया, पृ० 117; मनूची: स्टोरिया द मोगोर, भाग 2, पृ० 9, थेवनॉट, 3 चैप्टर, XXXII, पृ० 85

2- हुमायूँनामा, अकबर के जन्म दिन पर पृ० 160, पीटर मुंडी, 2, पृ० 217

3- बोधा, विरह वारीश, पृ० 138; पृ० 94 छं० 30; कुमारमणि, रसिक रसाल, पृ० 82 छं० 65; देव: सुखसागर तरंग, पृ० 55 छं० 162; मुहम्मद यासीन: ए सोशल हिस्ट्री ऑफ इस्लामिक इंडिया पृ० 181

बगीचो की सैर करना - बगीचो में घूमना बैठना आदि तत्कालीन समाज के लोगों का एक अन्य शौक था। बगीचो में जाकर लोग अपना मन बहलाते थे अधिकांशतः उच्च वर्ग के लोग बगीचो में जाकर बैठते थे यथा राजा सामंतादि,

पुनि नृप बनबाग में आयो। हवा देखि बहुतईसुख पायो ।[1]

बगीचो में तरह-तरह के फल-फूलो के वृक्ष लगे रहते थे ।[2]

निष्कर्ष -

उपरोक्त विवरण से विदित होता है कि कवियों की दृष्टि मनोरंजन के विविध साधनों पर पड़ी । उन्होंने तत्कालीन समाज में प्रचलित मनोरंजनों के साधनो पर जिस प्रकार अपनी कविता के माध्यम से दिया है वह अत्यन्त रोचक है। तत्कालीन समाज के लोगों की विभिन्न मनोरंजनो में रुचि यह स्पष्ट करती है कि बाह्य आक्रमणो व आन्तरिक विप्लवो का कोई भी स्थायी प्रभाव तत्कालीन जनता की मानसिक स्थिति पर नहीं पड़ा । ~~अकस्मात् जनता की मानसिक स्थिति पर नहीं पड़ा।~~ अकस्मात् निकल जाने पर

1- बोधा: विरह वारीश, पृ0 194 छं0 6; सोमनाथ ग्रंथावली, माधवविनोद, पृ0 336 छं0 25; अर्ली ट्रेवल्स इन इंडिया, विलियम फास्टर, पृ0 303

2- सोमनाथ ग्रंथावली: माधवविनोद, पृ0 337 छं0 30; पृ0 337, छं0 31; पृ0 337 छं0 33; सोर्यनगर वर्णन, पृ0 821 छं0 27; पृ0 821 छं0 28; पृ0 821 छं0 29; पृ0 820, छं0 22 ; पृ0 820 छं0 23; बोधा: विरह-

मनोरंजन के मध्य दुःख एवं विषाद के बादल भी छंट जाते थे। आर्थिक कठिनाइयों एवं विषमताओं के मध्य समाज का प्रत्येक वर्ग यह भली भाँति जानता था कि किन किन साधनो से दुःखों को कम किया जा सकता है। मुगल सम्राटो ने अपना दुःख उधानो के सैर-सपाटों, आखेट नृत्य व संगीत की महफिलें, पशु एवं पक्षी इन्हो आदि के द्वारा मध्यवर्गीय समाज के लोगों ने भी विभिन्न पक्षियो की बाजियो पतंग बाजियों, संगीत नृत्य, शतरंज, चौपड़ तथा घर में खेले जाने वाले खेलो के द्वारा नादिरशाह एवं अहमदशाह की लूटो, मराठो, रूहेलो के निरन्तर उपद्रवों को भुलाने की चेष्टाकी तथा उनकी ओर से अपना ध्यान हटाकर अधिक सेअधिक दिल बहलाने का निरन्तर प्रयास किया था, इस युग में मदिरागोष्ठियां समाज के विभिन्न वर्ग के लोगों के लिए आकर्षक बनगये। अट्ठारहवी शताब्दी के मनोरंजन के साधन एवं उसमें विविध वर्गों की रूचि तत्कालीन सभ्यता को स्पष्ट करते हैं। इस संबंध में प्राप्त विवरण एक ओर तो स्वतंत्र उन्मुक्त समाज का बोध कराते है तो दूसरी ओर समाज की पतोन्मुख स्थिति को स्पष्ट करते है कि ऐसे कठिन समयमें जबकि देश के समक्ष असंख्या आन्तरिक एवं वाह्य समस्यायें थी तत्कालीन समाज किस प्रकार दैनिक जीवन मे ऐसो आराम की घड़ियो से आनन्दित हो रहा था यदि तत्कालीन कवि समाज को इस प्रवृत्ति में सुधार का प्रयत्न करते तो शायद समाज सुषुप्तावस्था से जागृत होकर विभिन्न बाजियो एवं खेल तमाशों की ओर से अपना ध्यान हटाकर अपने दायित्व का बोध करता तथा आन्तरिक एवं वाह्य चुनौतियो का मुकाबला कर विघटन की प्रक्रिया को रोक सकता।

सातवाँ अध्याय

धार्मिक अवस्था

पर्वोत्सव, आस्थाएं तथा संस्कार

धार्मिक-जीवन

किसी भी समाज के धार्मिक जीवन और उसकी विचार-परम्परा तथा जीवन के आदर्शों में घनिष्ठ संबंध होता है । भारतवर्ष में यह बात और भी विशेष रूप से लागू होती है, क्योंकि यहाँ धार्मिक जीवन और सामाजिक जीवन के बीच विभाजन रेखा खींचना अत्यन्त कठिन है ।[1]

यद्यपि अवलोकित काल के धर्म में उदात्त-भावों का लोप, मानसिक एवं हार्दिक अधःपतन के लक्षण उसमें दिखाई देते थे ।[2] आलोच्य काल का धर्म ऐसे पंडों, पुरोहितों द्वारा चालित था जो शास्त्र, धर्म एवं आध्यात्म तत्व से स्वतः अनभिज्ञ थे फिर भला वे जनता का मार्ग-दर्शन क्या करते अतः धर्म का बेहतर हास हुआ । धर्म के मामले में त्याज्य बातों का ग्रहण और ग्रहणीय बातों का त्याग हुआ । सबसे विशेष बात यह थी कि समस्त धार्मिक कार्यों संस्कार विवाद आदि ब्राह्मण द्वारा संचालित होते थे ।[3] इस समय मे एक विशेष बात यह हुयी कि तत्कालीन समाज का सम्पन्न वर्ग धर्म के प्रस्तुत स्वरूप को बनाए रखने में पूरा विश्वास रखता था क्योंकि ऐसे अंध धर्म की बदौलत ही उसका धन-वैभव और भोग-विलास सुरक्षित रह सकता था जो सिखलाता है कि प्राणिमात्र का सुख-दुख, सम्पन्नता -दरिद्रता उसके अपने ही कार्यों का भोग है ।[4]

1- डॉ० लक्ष्मी सागर वार्ष्णेय: आधुनिक हिन्दी साहित्य की भूमिका, पृ० 90

2- डॉ० कृष्ण चन्द्र वर्मा: रीतियुगीन काव्य, पृ० 43

3- दुबायस: हिन्दू मैनर्स, कस्टम्स एंड सेरेमनीज, पृ० 582 डॉ० कृष्ण चन्द्र वर्मा, रीतियुगीन काव्य, पृ० 41

इस प्रकार इस युग में धर्म का कोई उदात्त रूप सामने नहीं लाया जा सका क्योंकि यह भोग-विलास तथा शोषण और दमन का युग था । जो भी हो अवलोकितन काल में लोग विभिन्न प्रकार के देवी-देवताओं तथा धार्मिक कर्मकांडो में विश्वास रखते थे ।

तत्कालीन समाज में प्रचलित धर्म का स्वरूप निम्न प्रकार से था :

<u>शैव धर्म</u> :- उस समय शैव धर्म तथा वैष्णव धर्म । इन दो धर्मों को प्रमुखता मिली जिसमें शैव धर्म के अन्तर्गत भगवान शिव की आराधना की जाती थी । भगवान शिव के रूप का चित्रण कवि ने इस प्रकार किया है जो नित्य, अनंत, भयरहित तथा आनंद से पूर्ण है जिसके सिर पर जटाजूट तथा चन्द्रमा सुशोभित हो रहा है और भाल पर त्रिनेत्र शोभायमान है । हाथ में डमरू तथा त्रिशूल है और अंग पर व्याघ्र के खाल का वस्त्र धारण किये हुए हैं । सारे अंग में भभूत लगा रखा है । ऐसे संकट हरने वाले, विघ्नविनाशक मंगलदायक भगवान शिव की जयकार की जाती रही है ।[1]

अदम अभय अनंत नित्य आनंद उमंडित ।
जटाजूट ससि भाल सोभि लोचन दुति मंडित ।।
कर त्रिशूल अरु डमरू व्याल भूखन अवखंडित ।
सुत्य छिय सितारंग अंग भभूति धमंडित ।।
अरपैन बाम कुंदन बरन विकट कोटि संकट हरन
जय किसि उजागर गंगधर सोमनाथ मंगलकरन ।।

- सोमनाथ ग्रंथावली: माधव विनोद, पृ0 321 छं0 । शृंगारविलास, पृ0 279 छं0 ।, शशिनाथ विनोद 509/46, ,510/47-48-49-50 मतिराम ग्रंथावली: रसराज, पृ0 101 छं0 ।, कुमारस्वामी: हिन्दी मैनर्स, कस्टम्स एण्ड सेरेमनीज, पृ0 111,

शैव धर्म को मानने वाले लोग बहुत कठोरता से तपस्या पूजन आदि करते थे। ऐसे लोग सम्पूर्ण अंग में भस्म लगाते थे, अग्नि में तपने, वर्षा झेलने और शरीर को प्राकृतिक स्थिति में साथ अनुकूल रखकर तपस्या करने में विश्वास रखते थे।[1]

शिव का रूप लिंग के रूप में भी माना जाता है अतः लिंगपूजा भी प्रचलित थी।[2] संभवतः इसीलिए शैवधर्म के अनुयायियों को लिंगधारी कहा गया।[3] शैव-धर्म के अनुयायी शिवरात्रि जो (माघ) फरवरी के महीने में मनायी जाती थी बहुत धूम से मानते हैं।[4]

<u>वैष्णव धर्म</u> :- शैव धर्म के विपरीत वैष्णव-धर्म अधिक लचीला होने के कारण इसका काफी प्रसार हुआ। विशेष रूप से द्वारिका मथुरा, जोधपुर, उदयपुर कोटा आदि में।[5] वैष्णव धर्म के अन्तर्गत विष्णु तथा कृष्ण इन दो रूपों की आराधना की गयी है।[6] कृष्ण भक्ति के द्वारा न केवल वैयक्तिक जीवन में सामान्य

1- ट्रैवर्नियर: कलेक्शन आफ ट्रेवल्स, भाग1, पृ0 102
2- जी0एन0 शर्मा: सोशल लाइफ मेडीवल राजस्थान, पृ0 183-84
3- दुबाएस: हिन्दू मैनर्स, कस्टम्स एंड सेरेमनीज, पृ0 111
4- तुजुक-ए-जहाँगीरी अनुवादक आर. एण्ड बी. पृ0 361, दुबाएस: हिन्दू मैनर्स, कस्टम्स एण्ड सेरेमनीज, पृ0 270, आइन-ए- अकबरी, भाग1, पृ0 210
5- जी. एन. शर्मा: सोशल लाइफ इन मेडीवल राजस्थान पृ0 194-200 दुबाएस: हिन्दू मैनर्स कस्टम्स एण्ड सेरेमनीज, पृ0 624
6- सोमनाथ ग्रंथावली: ध्रुवविनोद, तृ. वि. पृ0 760 छं07, रसपीयूषनिधि, 22/28 पृ0 581 छं022, देव: भावविलास पृ03छं01, कुमारमणि: रसिक रसाल पृ01, मतिराम: सतसई सम्पा (मतिराम-सतसई) सं0 श्याम सुन्दरदास, पृ0 117, मनूची: स्टोरिया द मोगोर भाग3, पृ0 333, दुबाएस: हिन्दू मैनर्स कस्टम्स एण्ड, सेरेमनीज, पृ0553

भोगों का पश्चाताप करके अपने मन को भक्ति की उन्मुख करने का प्रयास किया है अपितु उसे मनुष्य-मात्र कीएक अनिवार्य भावना के रूप में भी स्वीकार किया है। यही कारण है कि आध्यात्मिक विचारों के प्रति उदासीन मनुष्यों की निंदा की गयी है :

राधा मोहन-लाल को जाहि न भावत नेह ।

परियौ मुठी हजार दस ताको आँखिनि खेह ।।[1]

कृष्ण की उपासना राधा के साथ की गयी है, जबकि अन्य देवता अपनी पत्नी के साथ पूजे जाते हैं ।

राधाकृष्ण किसोर जुग, पग बंदौं जगबंद ।

मूरति रति सृंगार की, सुद्ध सच्चिदानन्द ।।[2]

शैव धर्म और वैष्णव धर्म के देवता के रूप भी भिन्न माने गये हैं । कवि ने वैष्णव-धर्म के अन्तर्गत आने वाले भगवान विष्णु के रूप सौन्दर्य का चित्रण इस प्रकार किया है- सांवले शरीर वाले भगवान विष्णु के नेत्र अंबर के समान लाल और बड़े हैं । उन्होंने श्वेत वस्त्र धारण कियाहै तथा माथे पर मुकुट और भुजाओं में भुजबंद सुशोभित हो रहे हैं । विष्णु के हाथ में गदा और हृदय पर हार तथा कानों में सुन्दर कुण्डल शोभायमान हो रहे हैं ऐसे विष्णु के नाम लेने के लिए सिर झुकाकर उठकर हाथजोड़कर नमन करताहूँ ।[3]

1- मतिराम-मतिराम सतसई, पृ0 117

2- देव: भावविलास, पृ0 3, छं0 1, मतिराम: मतिराम-सतसई, पृ0117

3- अक स्यामल गात अरुन अंबर से नैन बड़े अनियारे ।
अति उज्जवल बसन मुकुट माथे पर सरसैं भुजमूल बंदिन
कर लोनै गदा हार हिय श्रवननि कुंडल जोति अमंदनि ।
× ×
उठि ठाढ़ो है कर जोरि विष्णु के नामहि लै सिरनाये ।
- सोमनाथ ग्रंथावली: ध्रुवविनोद, पृ0 581022

शक्ति पूजा : प्राचीन काल से ही शक्ति की पूजा प्रचलित थी ।[1] शक्ति की आराधना शौर्य, क्रोध और दया की भावना से जुड़ी है, अतएव शक्ति की मातृदेवी, दुर्गा, काली, भवानी, राधिका आदि विभिन्न रूपों के प्रति श्रद्धा रखी जाती थी तथा आराधना की जाती है । चूँकि मध्ययुगीन जीवन भय और युद्ध से अधिक जुड़ा हुआ था । अतः शक्ति के विभिन्न रूपों में शौर्य और क्रोध की भावना को अधिक बल दिया जाता था । कवि ने युद्ध में विजय प्राप्त करने के लिए जिस शक्ति(देवी) की उपासना की है वह इस प्रकार है :

> जै जयंति जै आदि सकति जै कालि कपर्दिनी ।
> जै मधुकैटभ छलनि जै महिष विमर्दिनी ।।
> जै चमुंड जै चंड, मुंड भंडासुर खंडिनि ।
> जै सुरक्त जै रक्तबीज बिड्डाल विहंडिनी ।।
> जै जै निसुंभ सुंभद्दलनि भनि भूषन जै जै भननि ।
> सरजा समत्थ सिवराज कहँ देहि बिजै जै जग- जननि ।

अर्थात् हे जयन्ती (दुर्गा का एक नाम) तुम्हारी जय हो । हे आदि शक्ति तुम्हारी जय हो । हे काली, हे कपर्दिनी, अर्थात् जटाजूट धारण करने वाली, तुम्हारी जय हो । हे मधुकैटभ को छल करने वाली, हे महिषासुर का मर्दन करने वाली, तुम्हारी जय हो । हे चामुण्डा हे चंड, और मुंड के नाम असुरों को

1- डॉ० एम० पी० श्रीवास्तव: प्राचीन भारत का सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक एवं सांस्कृतिक इतिहास, पृ० 30 ,

मारने वाली , तुम्हारी जय हो । हे रक्तवर्ण वाली, रक्तबीज और बिड़ाल नाम के असुरों का विनाश करने वाली ,तुम्हारी जय हो । अन्ततः कवि कहते हैं कि हे निशुंभ और शुंभ नामके दानवों का दलन करने वाली, तुम्हारी जय हो, जय हो और आप समर्थ शिवराज को हे जगज्जननी, विजय दो ।[1]

अन्य देवियों में राधा की स्तुति की गयी है :

> पूजों नहिं देव, देव पूजों राधिका के पद,
> पलक न लाऊँ यदि लाऊँ पलकनि पै ।[2]

राधा के अतिरिक्त सरस्वती देवी की भी पूजा की जाती थी :

> तुही त्रिलोक्य माइ है । समुद्रजा सुभाई है।
> गुविंद वक्ष वासिनी । सरस्वती सुहासिनी ।।[3]

1- भूषण ग्रंथावली: पृ0 1-2 छं0 2, सोमनाथ ग्रंथावली: सुजानविलास, [सप्तम कथा], पृ0 685 छं0 30, पृ0 685 छं0 31, सप्तशतीकथा, पृ0685 छं0 26, मतिराम ग्रंथावली पृ0 437 डुबायस: हिन्दू मैनर्स, कस्टम्स एण्ड सेरेमनीज पृ0 629 पृ0 114 कालीकिंकरदत्त, ... सोशल लाइफ एण्ड एकोनॉमिक कंडीशन इन द ऐट्टीन्थ सेन्चुरी , पृ0 25

2- देव: देवसुधा पृ05 छं08, सुखसागर तरंग , पृ0 50 छं0 20, देव दीपशिखा तृतीय भाग पृ0 66 छं0 120 कालीकिंकर दत्त: ...सोशल लाइफ एण्ड एकोनॉमिक कंडीशन इन द ऐट्टीन्थ सेन्चुरी, पृ0 25-26

3- सोमनाथ ग्रंथावली: सुजानविलास, पृ0 808 छं0 22, मतिराम , मतिराम रत्नावली, पृ0 120 छं0 117, देव ग्रंथावली: सुखसागर तरंग, पृ0 49, छं011, डुबायस: हिन्दू मैनर्स, कस्टम्स एण्ड सेरेमनीज, पृ0 207, 224, 613, 636 ।

इसी प्रकार जानकी {सीता} तथा रुक्मिणी के प्रति भी लोग श्रद्धा का भाव रखते थे ।[1]

इस प्रकार देवी के लोग अन्तर्जामिनी तीनों लोकों चल और अचल सभी जगह चौदहों भुवन में निवा करने वाली तथा भूत, भविष्य और वर्तमान सबको ज्ञाता है इस रूप में देवी की वंदना की जाती थी :

श्री देवि देव समूह, सज्जन,जूह, जीवन मूरि जू ।
चल अचल चौदह भुवन मै तुमही रही भरिपूरि जू ।
त्रैलोक अंतरजामिनी, जग-स्वामिनी, जस भूति जू ।
अनुभूत भव सब भूत -भावी वर्तमान न दूरि जू ।।[2]

स्त्रियाँ गौरी-पूजन अपने इच्छित पति की प्राप्ति के लिए करती थी :

सासु ने बोलि बहू सौं कही हित सौं अपने अभिलाषनिपूरनि ।
है ससिनाथ यौं आजु को नेग अकेलिये पूजियो गौरि की मूरति ।[3]

1- देव ग्रंथावली: सुखसागर तरंग,पृ0 50 छं0 19, पृ0 50 छं0 17, ट्रेवेर्नियर ट्रेवेल्स इन इंडिया, भाग 2 पृ0 150, डुबाएस:हिन्दू मैनर्स,कस्टम्स एण्ड सेरेमनीज पृ0 224, 619, कालीकिंकर, वही, पृ0 64 छं0 66

2- देव ग्रंथावली: देवमायाप्रपंच,पृ0 215 छं0 15,

3- सोमनाथ ग्रंथावली: शृंगार विलास{चतुर्थ उल्लास} पृ0 288 छं0 11, देव ग्रंथावली: सुखसागर तरंग,पृ049 छं0 14, रसविलास,पृ0 172 छं019, डुबाएस: हिन्दू मैनर्स कस्टम्स एण्ड सेरेमनीज ,पृ0 568

देवी-देवताओं के पूजन के लोग मन्दिर जाते थे :

> दुर्गा के दरसन रस भीनों । मंदर मांझ गयो परवीनों ।
>
> गंध पुहुप अच्छित अनखंडित । तिनसों पूजी हित सौं मंडित ।
>
> धूप आरती सबी नवीनी । बालभोग धरि बिनती कीनी ।।[1]

इन देवी- देवताओं के अलावा हिन्दू- संस्कृति में गणेश- पूजा प्रचलन का भी उल्लेख मिलता है :

> सुमिरत पद, विपद हरत, पूजत सुर मुनि जनेस ।
>
> उलहत सुख सिद्धि, कहत जय जय जय गनेस ।[2]

सूर्य पूजा प्राचीन काल से ही प्रचलित थी ।[3]

1- सोमनाथ ग्रंथावली: सुजानविलास पृ0 734 छं020-21 पृ0 655 छं0 39, रसपीयूषनिधि, पृ0 81 छं0 6, सरकार हिस्ट्री ऑफ औरंगजेब पृ0 320, मनूची: स्टोरिया द मोगोर भाग3, पृ0 134

2- देव ग्रंथावली: देवमायाप्रपंच, पृ0 193 छं05, भूषण (राजकमल बोरा), पृ0 13 छं0 2, भूषण ग्रंथावली: शिवराज-भूषण, पृ0 1 छं0 1, सोमनाथ ग्रंथावली: शशिनाथ विनोद, प्रथमोल्लास: पृ0 501 छं0 1, मतिराम: मतिराम-सतसई, पृ0 401 छं0 391, ललितललाम छं01, पृ0 299 छं02, कालीकिंकरदत्त ... सोशल लाइफ एण्ड एकोनॉमिक कंडीशन इन द ऐट्टीन्थ सेन्चुरी पृ0 25, दुबाएस, हिन्दू मैनर्स, कस्टम्स एण्ड सेरेमनीज, पृ0 162, 631

3- डॉ0 रमेशचन्द्र मजूमदार, प्राचीन भारत हिन्दी, अनुवाद पृ0 13

कवि ने सूर्य को प्रणाम किये जाने का उल्लेख किया है :

> बाहिर कढ़िकर जोरिकै, रवि को करौ प्रनाम ।
>
> मन इच्छित फल पाइकै, तब वैबो निजधाम ।[1]

आलोच्यकाल में कवियों ने अवतारवाद में विश्वास दिखाया है :

> या कवि में अवतार लियौ तऊ तेइ सुभाय सिवाजीबली के ।
>
> आइ धरयौ हरि तें जरूप पै काल करै सिगरे हरि ही के ।[2]

ये अवतार व्यक्ति के गुणों को आधार अर्थात् सद्गुणों के होने पर देव-स्वरूप और खराब गुण होने पर असुर रूप पर होता है ।

तत्कालीन समाज में लोगों की ऐसी धारणा थी कि तीर्थ-स्थानों की यात्रा करने से सारे पापों का नाश हो जाता है फलतः लोग तीर्थ यात्रा पर जाते थे तथा वस्त्र- आभूषण आदि अनेक वस्तु दान करते थे :

1- भिखारीदास ग्रंथावली: काव्यनिर्णय, पृ0 58 छं0 63, भूषण ग्रंथावली पृ0 2 छं0 3, राजमल बोरा: भूषण और उनका साहित्य, पृ0 14 छं0 3

2- भूषण ग्रंथावली: शिवराजभूषण, पृ0 46 छं0 282, पृ0 49 छं0 307, पृ0 36 छं0 313, पृ0 57 छं0 350 शिवाबवानी पृ0 27, छं0 21 जगदीश गुप्त: रीतिकाव्य संग्रह, पृ0 53 छं0 14, राजमल बोरा, भूषण और उनका साहित्य पृ0 20, सोमनाथ ग्रंथावली: अधरामकलाधर बालकांड, द्वितीय खंड, पृ0 441, छं01, कुमारमणि: रसिकरसाल, पृ0 1 छं0 2, दुबाएस: हिन्दू मैनर्स, कस्टम्स, एण्ड सेरेमनीज, पृ0 616 ।

यौं बिचारि कैं धन्य न्हाइकै तीरथ सगरे ।
आयौं निज पुर मद्धि छाँडि पापनि के झगरे ।
ब्रह भोज करवाइ वस्त्र आभरन अनेकनि ।
दिए हिए मैं हर्षि सच्चिकैं परम बिबेकनि ।।[1]

अवलोकित काल में यज्ञ (होम) प्राचीन काल की भाँति प्रचलित थे :

राजसूय हयमेध जज्ञ करि नैम सौं ।
जानैं कीनौं तृप्ति हुतासन प्रेम सौं ।।
द्विजनि दक्षिना दई सहस्त्रनि गाय हैं ।
तप करि पाली धरनि सत्य अपनाम हैं ।।[3]

1- सोमनाथ ग्रंथावली: सुजानविलास, पृ0 685 छं0 22, पृ0 720 छं0 10, देव ग्रंथावली, देव मायाप्रपंच, पृ0 217 छं0 37

2- घनानंद ग्रंथावली, पृ0 182

3- सोमनाथ ग्रंथावली: रामचरित्र रत्नाकर(चतुर्थ सर्ग) पृ0 666 छं030, दशमसर्ग, पृ0 898 छं0 87, नवति: सर्ग: पृ0 381 छं0 13, ध्रुवविनोद, पृ0 718 छं0 8, पृ0 788 छं0 80, सुजानविलास, पृ0 736 छं0 36, देव ग्रंथावली:देवमायाप्रपंच, पृ0 217 छं0 37, दुबाइस: हिन्दू मैनर्स, कस्टम्स एण्ड सेरेमनोज, पृ0 151

ईश्वर के प्रति आस्था धार्मिक नैतिकता का प्रमुख आधार है। ईश्वर के प्रति भय एवं प्रेम जैसे भाव उत्पन्न करके ही मनुष्य को भक्ति के क्षेत्र में प्रवेश कराया जा सकता है।[1]

कवि ने ईश्वर के साथ होने वाली प्रीति को श्रेष्ठ माना है। ईश्वर के नाम स्मरण का उपदेश देते हुए कवि ने कहा है :

हरि भजि लै मन मेरे भाई।

हरि भजि निरमल भए बिकारी अब तेरी हूँ बारी आई।[2]

ईश्वर भक्ति के मार्ग में आने वाली कुछ बाधक वस्तुओं के त्याग का उपदेश कवि ने दिया है। यथा धन-संग्रह वृत्ति की निंदा: धन-संपति की रक्षा एवं उसकी संवृद्धि के मोह- पाश में फँसा व्यक्ति पाप की ओर उन्मुख होता है अतः भारतीय धार्मिक नैतिक परम्पराओं में धन को क्षणिक कहकर व्यक्ति को अनैतिक कार्यों से बचने का उपदेश दिया गया है। क्योंकि धन-धाम इत्यादि के आकर्षण में लिप्त व्यक्ति इन भौतिक ऐश्वर्य की वस्तुओं का भोग करने के पश्चात् व्यक्ति इस संसार से रिक्त हाथ चला जाता है। समस्त भौतिक वस्तुएँ यहीं रह जाती हैं। इसीलिए कवि ने धन के प्रति आसक्ति न रखने का उपदेश दिया है :

1- घनानंद-ग्रंथावली। प्रेम पत्रिका। सं0 विश्वनाथ प्रसाद मिश्र, छं0 13, सोमनाथ: सुजानतरंगिणी- छं0 526

2- घनानंद ग्रंथावली : [पदावली], छं0 9।

भोग भुलाइ संजोग डुलाइ कै जोग लै लै मुनिलोग लरेई ।
भूपति यौं धन भार भँडार गए गड़ि दाम सुधाम धरेई ।
देव कहैं दिन चारि के ख्याल मैं खेलि गए खल खोइ खरेई ।
काहू के संग कहू न गयौ सब सैंत मरे अकसेत मरेई ।।[1]

अर्थ- संबंधी नैतिकता का प्रतिपादन करने वाले प्राचीन विचारकों का कथन है कि प्राप्त किये गये धन का दान करना ही उचित है, उसे भोग अथवा संग्रह में व्यय करना अनुचित है ।[2]

आध्यात्म -मार्ग में अन्य बाधा कवियों ने नारी साहचर्य को माना है । इसलिए इन्होंने मनुष्य को नारी के प्रति विमुख होने का उपदेश दिया है :

मूरख तूं तरुनी-तन को भवसागर को तरनी अनुमान्यौ ।
ऐसो डरयौ हरिनाम के पाठहि काठहि को हरि कौ जिय जान्यौ ।।[3]

इसके साथ ही मांस-मदिरा तथा रजस् एवं तमस् गुण से दूर रहने को कहा गया क्योंकि उपर्युक्त चीजें धर्म क्षेत्र में बाधक होती हैं ।[4]

1- देव ग्रंथावली: सुमिलविनोद, सं. लक्ष्मीधर मालवीय, पृ0 8 छं0 4
2- महाभारत [शान्ति पर्व] पंचम खण्ड, अनुवादक पण्डित रामनारायणदत्त शास्त्री, 26/28
3- भिखारीदास ग्रंथावली: प्रथम खण्ड, रससारांश, छं0 479, सोमनाथ, ग्रंथावली, प्रथम खण्ड, रसपीयूषनिधि, पृ0 22 छं0 28
4- डॉ0 शकुन्तला अरोरा: रीतिकालीन श्रृंगार कवियों की नैतिक दृष्टि पृ0 205 तथा 206

धर्म नैतिकता की स्थापना के लिए मन के कपटपूर्ण विचारों को दूर रखना चाहिए क्योंकि मन में निहितकपट ग्रंथियों को त्याग कर ही मनुष्य आत्मा की आवाज को सुन सकता है :

> तो मैं जो उठत बोलि ताहि क्यों न मिलै डोलि,
>
> खोलिए हिये में दिए कपट-कपाट है ।[1]

कपट के अतिरिक्त कपटी की संगति भी वर्जनीय बतायी गयी है क्योंकि वह कदापि अपना नहीं हो सकता फलतः उसके गलत साथ से भी धर्म के कार्य में बाधा सकती है :

> दिनराज उदै न प्रतीची करै अहिराज तजै विष के तपने
>
> कहि काग निरामिष होत कहाँ रहिराज मिलै न मिलै सपने ।
>
> कहि तोष करै अविवेकी विवेक नहीं विषई हरि के जपने ।
>
> सखि मे जब होय तौ होय कदापि पै होहिं नहीं कपटी अपने ।।[2]

मानव मन में विषयों की तृष्णा-रूप, रस, गंध, स्पर्शादि अनेक रूपों में हो सकती है। समस्त विषय सुखकर होते हुए भी अंततः व्यक्ति के नाश का कारण होने के कारण निंदनीय है । इस प्रकार इस काल के कवि के शब्दों में रूप सौंदर्यादि विषयों में फंसा हुआ मन धर्मच्युत होकर इधर-उधर भटकता रहता है :

1- डॉ० नगेन्द्रः देव और उनकी कविता, पृ० 120

2- डॉ० शैलेन्द्र माथुरः कवि तोष और उनका सुधानिधि, छं० 57

रूप को रसिकु रसलंपट परम लोभी
राग ही सौं रंग्यो बलै बासु लै अड़ाइतो,
मारयो नहीं जातु बिनु मारे न डेरातु धरी
काम करे खोटे छोटे बड़े सौं बड़ाइतो ।
होइ जो हमारो कोई हितू हितकारो या सौं
कहै समुझाय देव कुमति छड़ाइतो,
मानै न अनेरो मनु मेरो बहुतेरो कह्यो,
पूतु ज्यौं कपूतु लरिकाई को लड़ाइतो ।।[1]

अवलोकित काल में तरह-तरह के अंधविश्वास तथा कर्मकांड प्रचलित थे जिनको व्यर्थ बताते हुए कवि ने कहा कि ईश्वर को विभिन्न कर्मकांडों से नहीं, अपितु भक्ति से ही प्राप्त सेही प्राप्त किया जा सकता है :

कथा मैं न, कंथा मैं न, तीरथ, के पंथा मैंन
पोथी मैं, न पाथ मैं, न साथ की बसीति मैं
जटा मैं न, मुंडन न, तिलक त्रिपुंडन न,
नदी-कूप, कुंडन अन्हान दान- रीति मैं ।
पैठ- मठ-मंडल न, कुंडल कमंडल न
माला दण्ड मैं न देव देहरे की भीति मैं,
आपु ही अपार पारावार प्रभु पूरि र
पाइय प्रकट परमेसुर प्रतीति मैं ।।[2]

1- देवः देवसुधा, छं0 184

2- देवः देवसुधा, छं017, सोमनाथ ग्रंथावली: सुजानविलास, पृ0 65छं0 58

श्राद्ध जैसे धार्मिक आडम्बर के प्रति भी कवि ने खेद प्रकट किया है जिसमें मृत व्यक्ति के लिए व्यक्ति भोजन की सामग्री देता है किन्तु जीवन काल में व्रत आदि करके शरीर को दुर्बल बनाता है। जीवित शरीर की उपेक्षा करना और मृत होकर मिट्टी में मिले शरीर के लिए भोजन की व्यवस्था करना अगर दुर्बुद्धि नहीं तो क्या है ?

> मूढ़ कहैं मरिकै फिरि पाइए, द्दनों जु लुटाइये भौन-भरे को,
> है खल खोय बिख्यात खरे, अवता तुम्यो कहुँ छार परे को ।
> जीवत तो व्रत भूख सुखोत, सरीर महा सुर-रूख हरे को,
> ऐसो असाधु असाधुन को बुधि, साधन देत सराध मरे को ।[1]

इस प्रकार वाह्याडंबर और मन में निहित कपट-ग्रंथियों का त्याग कर ही मनुष्य आत्मा की आवाज को सुन सकता है और ईश्वर के निकट पहुँच सकता है :

> तो में जो उठत बोलि ताहि क्यों न मिलै डोलि,
> खोलिए हिये में दिए कपट कपाट है ।।[2]

दार्शनिक दृष्टि से सत्य एक सत्तात्मक तत्व है। विश्व की समग्र सत्ताओं का आधार सत्य माना जाता है। सामाजिक दृष्टि से सत्य से अभिप्राय निष्कपट व्यवहार से है जिसमें किसी प्रकार का विकार (दोष) नहीं होता।

1- देव हिन्दी नवरत्न, मिश्रबन्धु, पृ0 22।
2- डॉ0 नगेन्द्र: देव और उनकी कविता, पृ0 120

इस लिए कवि ने यह शिक्षा दी कि धर्म के मार्ग पर चलने के लिए सत्य का अनुकरण करना चाहिए क्योंकि यह एक ऐसा शाश्वत तत्त्व है जो कभी नष्ट नहीं होता और सत्य की चिरंतन वस्तु है, उसके अतिरिक्त सब शून्य है:

एक तें अनेक है परारधि लौं पूरि करि,

लेखौं करि देखौ एक साँचो और सून है ।[1]

धर्म के मार्ग या अन्य किसी भी कार्य में उचित मार्ग-दर्शन के लिए एक पथ-प्रदर्शक की आवश्यकता होती है जिसके लिए कवि ने गुरु के महत्त्व को स्वीकार करते हुए यह कहा है कि गुरु के बिना जीवन में दृढ़ता एवं विवेक नहीं आ सकता :

गुरुजन जावन मिल्यौ न भयौ दृढ़ दधि,

मथ्यौ न विवेक रई "देव" जो बनायगो ।[2]

दार्शनिक विचार :- तत्कालीन कवियों ने दार्शनिक विचार भी व्यक्त किये हैं। कवि का कहना है कि एक मात्र ईश्वर [ब्रह्म] सत्य है बाकी सारा जगत अर्थात् संसार झूठा है :

जग झूठौ प्रभु सत्य है यौं निरवेदु विचार ।

तन मन दुख तें छीनता होति सु ग्लानि अपार ।।[3]

एक मात्र ईश्वर ही सत्य है बाकी संसार झूठा है इस सर्वमान्य सत्य को जानते

1- डॉ० नगेन्द्र: देव और उनकी कविता, पृ० 130

2- मिश्रबन्धु, [देव] हिन्दी- नवरत्न, पृ० 222

3- सोमनाथ ग्रंथावली: शृंगार [प्रथमोल्लास] पृ०27। छं० 20, द्वारा, हिन्दू बैनर्स, कल्हता एण्ड सोमनाथ, पृ० 409

हुए भी मनुष्य सांसारिक माया-मोह में बंधा रहता है और इसी अज्ञानता के कारण वह ईश्वर के स्वरूपको नहीं समझ सकता । कवि ने माया में फंसे हुए मनुष्य का जो चित्रण किया है वह अतुलनीय है मनुष्य- शरीर की रचना बड़ी बारीकी से बिने हुए जरतारी के झीने वस्त्र की भाँति विधाता ने की है। इसकी समता मकड़ी के जाले से की जा सकती है । ओस के हार सा मकड़ी के समान यह शरीर है। माया-रूपी मकड़ी जरतारें यानी झीने रंगों के धागों और ओस-बिन्दुओं, जैसे क्षण-भंगुर ताने-बाने से बुनती है। वही माया मनुष्य को भी ऐसी चक्कर में डाल देती है कि वह धारे दृष्टि में कागज की छतरी लगातार पत्थर की नाव में बैठकर वर्षा की उफनती नदी पार करना चाहता है यही उसका मोह है, अज्ञान है, मिथ्या भ्रम है, वह अज्ञानी ऐसे अवसर पर राम रूपी नौका और सत्य की छतरी का उपयोग न कर उपर्युक्त मायाजन्य अज्ञान में ग्रस्त हो विनाश के पथ पर अग्रसर होता चला जाता है । वह कैसा मूढ़ है कि पतिंगों के पंखों को अगल-बगल बाँधकर उड़कर आकाश में सूर्य का साथी बनना चाहताहै। वाह्याडम्बरों के तुच्छातितुच्छ साधनों से सर्वोच्च परम पद पाने का प्रयास करने की चेष्टा करता है । वह यह भी नहीं जान पाता कि उसका नश्वर शरीर मोम के बने घर जैसा है जिसमें मन रूपी मक्खन की मूर्ति काम-क्रोधादि के आग्नेय अर्थात् अग्नि निर्मित आसन पर विराजमान हो इस मोम के शरीर को इधर-उधर घुमाता फिरता है उसकी स्थिति कितने क्षणों की हो सकती है, यह इसे भूला हुआ है। नवनीत-सदृशा जीवन कोकाम-क्रोध के तपते हुए आसन पर आसीन कराकर सुख-शान्ति और शीतलता की अनुभूति कोई कैसे कर सकताहै। इस प्रकार माया-कल्पित मिथ्या है और सत्य सामने

की भूल में पड़े मानव को इस रूपक द्वारा कवि ने बड़ी मार्मिक चेतावनी दी है ।[1]

> बाम्यौ बन्यौ जरतार को तामहि, ओस को हार तन्यौ मकरी ने ।
> पानी में पाहन पोत चल्यौ चढ़ि , कागद की छतुरी सिरदीने ।।
> काँख में बाँधिके पाँख पतंग के, देव सतुंग पतंग कौ लीने ।
> मोम के मंदिर माखन को मुनि बैठ्यौ हुतासन आसन दीने ।।

इस प्रकार अज्ञानता [माया के मोह] में फँसा व्यक्ति किसी प्रकार अंधकार से बाहर निकल पाता और वह मकड़ी के जाले के समान उसी में उलझता जाता है:

> वै अपने ही गुन बँधे, माया को उपजाइ ।
> ज्यौं मकरी अपने गुननि, उरझि उरझि अरझाइ ।[2]

कर्मों के अनुसार पुर्नजन्म को माना गया है ।[3]

इन कवियों ने मनुष्य को दुर्गुणों से बचाने और धर्म के वास्तविक स्वरूप को समझाने का प्रयास किया है किन्तु विलासिता और कमशिक्षा होने

1- -देवः दीपशिखा, तृतीय भाग, पृ0 65, छं0 101, देवः देवसुधा पृ09 छं0 19, देवग्रंथावली: देव माया प्रपंच, पृ0 199 छं0 61, पृ0 205 छं037, पृ0 207 छं0 48, पृ0 210 छं0 69, डुबायसःहिन्दू मैनर्स, कस्टम्स एण्ड सेरेमनीज , पृ0 403

2- देव ग्रंथावली: देवमाया प्रपंच, पृ0216 छं0 25, डुबायस, हिन्दू मैनर्स, कस्टम्स एण्ड सेरेमनीज, पृ0 403-407

3- देव ग्रंथावली देव मायाप्रपंच पृ0 221 छं0 65

होने के कारण लोग अंधविश्वास होते जा रहे थे। धर्म का क्रूर और सबसे बिगड़ा स्वरूप तो हमें बलि – प्रथा के रूप में दिखाई देती है जिसमें न केवल पशु– बल्कि मनुष्य की भी बलि दी जाती रही है :

> इहाँ होतु बलिदान, नर–पसु पुंजनि के सदा ।[1]

धर्म का ह्रास इस कदर होने लगा कि एक बार तो ऐसा महसूस किया जाने लगा कि जैसे समाज में बढ़ती अनीति और दुराचार के कारण देवता भी चुप होकर बैठ गये :

> गौरा गनपति आप औरंग को देखि ताप,
> आपने मुकाम सब मारि गए दबकी ।[2]

धर्म के मार्ग से विचलित जनता शाँति पाने के लिए साधु फकीरों की ओर बढ़ने लगी ।[3] परिणाम यह हुआ कि अधिक से अधिक लोग साधु बनने लगे । साधुता उनके लिए आसान बात हो गयी "मुई नारि घर संपति नासी, मूँड़ मुंडाय भये सन्यासी वाली बात तत्कालीन युग में और भी सार्थक सिद्ध हुयी ।[4]

1– सोमनाथ ग्रंथावली : माधव विनोद, पृ० 401 छं० 44, पृ० 401 छं० 46, सुजान विलास, पृ० 638 छं० 45, पृ० 638 छं० 46, ध्रुव विनोद, पृ० 654 छं० 58, दृष्टव्य ।

2– राजमल बोरा : भूषण और उनका साहित्य– पृ० 20

3– राजमल बोरा : भूषण और उनका साहित्य, पृ० 20

4– डा० कृष्ण चन्द्र वर्मा, रीतियुगीन काव्य, पृ० 39

संक्रान्ति – युग में बेकार व्यक्तियों का साधु जीवन करना समाज को अन्य प्रकार अशान्तियों से बचाता था । साथ ही साधु- जीवन व्यतीत करने में कोई धार्मिक बाधा भी नहीं थी, कोई भी व्यक्तिसाधु होकर जनता पर अपना आध्यात्मिक प्रभुत्व स्थापित कर सकता था । अतः हिन्दुओं केलिए बैरागी और गोसाई और मुसलमानों केलिए फकीर हो जाना आसान बात थी क्योंकि इस रूप में उन्हें कम से कम खाना तो मिल ही जाता था ।[1]

भारत धार्मिक सम्प्रदायों के प्रगति एवं धार्मिक सम्प्रदायों के मतभेद का विशाल क्षेत्र रहा है ।[2]

सूफी शब्द अरबी के सूफ शब्द से निकला है, जिसका अर्थ है "ऊन" ।[3] अरब देश में पैगम्बर मुहम्मद साहब तथा अन्य सन्त सात्विकता का प्रतीक ऊन धारण करते थे फलतः ईरान में इन रहस्यवादी साधकों को परिमनापूरा (पश्मने वाला) कहा जाता था ।[4]

सूफीवाद का सिद्धान्त : नवीं सदी में जब सूफी मत का धर्म में रूप में आविर्भाव हुआ तो इसके लिए कुछ नियमों तथा सिद्धान्तों का

1- मेजर स्लीमैनः रैम्बिल्स एण्ड रिकलेक्शन्स, पृ0 370 लक्ष्मी सागर वार्ष्णेयः आधुनिक हिन्दी साहित्य की भूमिका,पृ0 97 डॉ0 कृष्ण चन्द्र वर्मा, रीतियुगीन काव्य पृ0 41

2- मुहम्मदयासीनः ए सोशल हिस्ट्री ऑफ इस्लामिक इंडिया,पृ0 71 सर डरबल री, पृ0 274

3- रामपूजन तिवारी, सूफी मत, साधना और साहित्य,पृ0 169

4- ई0 बी0 ब्राउन, लिट्रेरी हिस्ट्री ऑफ पर्शिया ,पृ0 417

प्रतिपादन किया गया जिसमें तत्व-चिंतकों और दार्शनिकों ने सूफी सिद्धान्त की विवेचना की तथा सूफी दर्शन को एक रूप दिया जिसमें परमात्मा आत्मा तथा सृष्टि आदि की विवेचना की तथा सूफियों के चरम लक्ष्य तथा गुरु के महत्व की व्याख्या निम्न प्रकार से की है।

परमात्मा सम्बन्धी इस्लाम के अनुसार एक है जो अपने आपमें पूर्ण है, सर्वज्ञाता, सर्वशक्ति तथा सर्वव्यापी है ।[1] उसका ज्ञान कर्म तथा स्वभाव जीव से बिल्कुल भिन्न है तथा परमात्मा आकाश और पृथ्वी की ज्योति (नूर) है ।[2] आले में रखे हुए दीपक के की तरह प्रकाश है, परमात्मा जिसे चाहता है उसे प्रकाश की ओर अग्रसित करता है ।[3] आत्मा को सूफी साधकों ने ईश्वरीय अंश स्वीकार करते हुए कहा कि वह सत्य-प्रकाश का अभिन्न अंग है, परन्तु मनुष्य के शरीर में अपने अस्तित्व को भी बैठता है ।[4] अतः उसका सतत् प्रयास अपने उद्गम स्थान में मिल जाना है इसलिए सूफी का मुख्य कर्तव्य है कि वह दानिया (परमात्मा के एकत्व का ध्यान) जिक्र (परमात्मा का स्मरण) तरीका (सूफीमार्ग) में लगा रहे, तभी परमात्मा के साथ एकमेव होना सम्भव है ।[5] जगत के संबंध में सूफी साधकों का मत हिन्दू सन्तों के विपरीत है सूफी साधक जगत को माया से पूर्ण नहीं देखते थे ।[6] मनुष्य के विषय में

1- रामपूजन तिवारी: सूफी मत साधना और साहित्य, पृ० 169
2- के०ए० निजामी: रिलिजन एण्ड पालिटिक्स इन थर्टीन्थ सेन्चुरी पृ० 50
3- ताराचंद: इन्फ्लुएन्स ऑफ इस्लाम आन इण्डियन कल्चर, पृ० 72
4- वही, पृ० 76
5- रामपूजन तिवारी: सूफी मत साधना और साहित्य, पृ० 255
6- ताराचंद इन्फ्लुएन्स ऑफ इस्लाम आन इण्डियन कल्चर, पृ० 76

सूफी साधकों का विचार है कि मनुष्य परमात्मा के सभी गुणों को अभिव्यक्त करता है ।[1] इस प्रकार परमात्मा के सभी गुण मनुष्य को हृदय को जानना है ।[2] हिन्दू संतो की भाँति सूफी संतो का भी यही धारणा है कि बिना आध्यात्मिक गुरु के सूफी साधक कुछ भी नही प्राप्त कर सकता है ।[3] आध्यात्मिक गुरु पीर अथवा शेख पर ही सारा सूफी सिद्धान्त आधारित है ।[4] सूफी साधक परमात्मा में पूर्ण लय हो जाने जिसमें साधक जागतिक प्रपंचो से अलग होकर अपने अस्तित्व को लय कर देना ही अपने लक्ष्य की प्राप्ति मानते हैं ।[5]

भारतीय परिपार्श्व में सूफीमत ने थोड़े समय में ही ख्याति प्राप्त की और सूफी सिलसिला तथा खनकाह का विस्तार मुल्तान से लखनौती तथा पंजाब से देवगिरी तक हो गया ।[6]

भारत वर्ष में सबसे लोकप्रिय चिश्ती सिलसिला के प्रवर्तक ख्वाजा इसहाक शामी चिश्ती माने जाते हैं [7] जो एशिया से आकर खुरासान के चिश्त नामक स्थान पर बस गये इस लिए यह चिश्ती कहलाया ।[8] चिश्ती सम्प्रदाय के

1- ताराचंद: इनफ्लुयेन्स ऑफ इस्लाम आन इण्डियन कल्चर, पृ० 76
2- वही,
3- आर० ए० निकोलसन: आइडिया ऑफ पर्सनाल्टी इन सूफिज्म पृ० 388
4- ताराचन्द्र पृ० 81
5- रामपूजन तिवारी, सूफी मत साधना और साहित्य पृ० 297
6- निजामी: रिलिजन एण्ड पोलिटिक्स इन थर्टींथ सेन्चुरी
   पृ० 50
7- के०ए० नुजामी: सेन्ट एण्ड   इस्म, पृ० 175 , तिवारी वही, पृ०
   [illegible] ।
8- के०ए० नुजामी: वही, पृ० 175

अजमेर के मुइनुद्दीन चिश्ती इतिहास में सुप्रसिद्ध सूफी संत हुए।[1] अट्ठारहवीं शताब्दी के प्रमुख सूफी संत जिसके जन्म के बारे में पता नहीं है किन्तु मृत्यु और स्थान का उल्लेख मिलता है, यह निम्न प्रकार से हैं शाह अबुल मुवाली 1704 सहारनपुर, अब्दुर रशीद, 1709 जालन्धर, सैय्यद मुहम्मद सईद मीरान भीख, 1729 कौहराम कलीमुल्लाह 1729 दिल्ली शेख निजामुद्दीन 1730 औरंगाबाद, शेख मुहम्मद सलीम सवोरी 1739 लाहौर, शाह बरकी 1757 जालन्धर, शेख आदुद्दीन 1759 अमरोहा, शाह लतफुल्लाह, 1773, जालन्धर, मौलाना फखरुद्दीन 1785 दिल्ली: सैय्यद अलीमुल्लाह 1786 जालन्धर, शेख नूर मुहम्मद 1791 भावालपुर स्टेट, शेख मुहम्मद सईद शारापुरी 1799 लाहौर।[2]

चिश्ती सम्प्रदाय के सूफी साधक फकीरी जीवन पर जोर देते थे जबकि सुहरावर्दी (जो चिश्ती सिलसिला के बाद आया) के सूफी साधक सुखमय जीवन पर बल देते थे। ये उपवास तथा भूखे रहकर आध्यात्मिक साधना को अनावश्यक बताते हैं।[3]

सुहरावर्दी सिलसिला के प्रवर्तक शेख बहाउद्दीन जकारिया थे।[4] सुहरावर्दी सिलसिला की सबसे बड़ी विशेषता यह थी कि इसमें उत्तराधिकार का नियम वंशानुगत था।[5]

1- के०ए० निजाम, वही पृ० 176
2- के०ए० निजामी: सूफी सेन्ट एण्ड श्राइन्स, पृ० 356
3- निजामी: रिलिजन एण्ड पॉलिटिक्स इन थर्टींथ सेन्चुरी पृ०222
4- वही, पृ० 221
5- वही, पृ० 224

अट्ठारहवीं शताब्दी में कुछ प्रमुख संत सुहरावर्दी सिलसिला के हुए जिनके नाम इस प्रकार है :

शेख अब्दुर रहीम 1703 काश्मीर, शेख जान मुहम्मद 1708 लाहौर, शेख हमीद 1752 लाहौर, शेख करमुल्लाह कुरेशी 1758 शाहजहाँपुर, शेख सिकन्दर कुरेशी 1799 लाहौर।[1]

इसके बाद कादिरी सिलसिला लोकप्रिय हुआ भारत मे इसके प्रवर्तक मुहम्मद गौस थे।[2]

कादिरी सिलसिला के सूफी साधकों में शेख दाउद किरमानी तथा शेख अबुल मा अली के नाम विशेष उल्लेखनीय है।[3] अट्ठारहवीं शताब्दी के कादिरी सम्प्रदाय के जो प्रमुख सन्त हुए उनके नाम मृत्यु तिथि तथा स्थान इस प्रकारहैः सैयद मुहम्मद फरीदी 1701, लाहौर, शेख रहीम दाद 1703, मौलवाल, शाह रौदा 1706, लाहौर, शाह कंत 1707 लाहौर, शेख सदरुद्दीन 1708 लाहौर शाह दरगाही 1710 लाहौर, शेख ताज महमूद 1711 मौलोवाल, शेख, अब्दुल हमीद नवाशाही 1713 मौलोवाल सैयद नूर मुहम्मद 1714 हुजरा शेख कामीश. 1715 हाफिज बरर्खुरदार नवाशाही 1718 शेख फतह मुहम्मद गयासुद्दीन 1718 किराना, सैयद अब्दुल वहाब, 1719 लाहौर, ख्वाजा हाशिम दरियादिल नवाशी 1721 सैय्यद अहमद शमाकुल हिन्दो जिलानी 1722 कोटला, शाह शरफ, 1723 लाहौर, शेख

1- के०ए० नुमानु, सूफी सेन्ट एण्ड श्राइन्स, पृ० 361

2- तिवारीः सूफी मत, साधना और साहित्य, पृ० 479

3- मुजुक हुसैन, ग्लिम्पसेज ऑफ मेडिवल इण्डियन कल्चर, पृ० 54

इसमाइल्लाह नक्शाही 1725 लाहौर, शेख अहमदबेग नक्शाही 1727 सियालकोट, शाह इनायत 1728 लाहौर, शेख जामलउल्लाह नक्शाही, 1729 शाह, मुहम्मद गौथ जिलानी 1739 लाहौर, शेख अब्दुर्रहमान ...1740 सैरी सैयद अब्दुल कादिरशाह गादा, 1741 लाहौर, शेख फरीद नक्शाही, 1745 लाहौर सैयद शाह हुसैन, 1749 हुजरा, मियाँ रहमतउल्ला, 1753 हुजरा, शेख नसरतउल्ला नक्शाही 1756 हुजरा, मीर अली, शाह, 1757 मुलूर, शेख सादुल्ला नक्शाही, 1761 कुसूर, शेख मुहम्मद अजीम 1767 लाहौर, 1770 शेख मसाहिब खान, 1776 लाहौर, शेख जान मुहम्मद 1791 बकायल [लाहौर] शेख अब्दुल्ला बिलोची 1797 लाहौर ।[1]

कादिरी सम्प्रदाय के लोग अपनी टोपी में गुलाब का फूल लगाते थे ।[2] क्योंकि गुलाब का फूल पैगम्बर का प्रतीक माना जाता था ।[3]

भारत में नक्शबंदी सिलसिला का प्रमुख स्थान है जिसके प्रवर्तक ख्वाजा बहाउद्दीन माने जाते हैं ।[4] बहाउद्दीन तरह-तरह के नक्शे आध्यात्मिक तत्वों के संबंध में बनाते थे और अनेक रंगों से भरते थे इसी लिए उनके अनुयायी नक्शबंदी कहलाये ।[5]

1- जे० ए० सुभान: सैन्ट्स एण्ड श्राइन्स, पृ० 366 से 369

2- जे० ए० सुभान सूफी सैन्ट एण्ड श्राइन्स पृ० 181

3- तिवारी, सूफी मत साधना और साहित्य, पृ० 480-81

4- सुभान, पृ० 187

5- सुभान, पृ० 187, तिवारी, 492-93

भारत में नक्शबंदी सिलसिला का प्रचार शेख अहमद फारूकी सरहिन्दी ने किया।[1] इस सम्प्रदाय के अट्ठारहवीं शताब्दी में हुए प्रमुख संत की मृत्यु तिथि नाम और स्थान इस प्रकार है: मखदूम हाफिज अब्दुला गापुर 1701 काश्मीर, शेख मुहम्मद मुराद 1718 कश्मीर, सैयद नूर मुहम्मद 1723 बदायूँ ख्वाजा मुहम्मद सादिक 1724 सरहिंद ख्वाजा अब्दुल्ला बल्खी 1726 काश्मीर ख्वाजा अब्दुल्ला बुखारी 1728 काश्मीर, वाजामिस्टूर रहमत 1729 सरहिंद शेख मुहम्मद फारूख, 1731 सरहिंद, हाजी मुहम्मद अफ्जल 1733 सरहिंद, हाजी मुहम्मद मुशान, 1734 दिल्ली, शेख मुहम्मद आदिल 1739पटियाला ख्वाजा हाफिज सद्दुल्ला 1740 शाहजहानाबाद, शाह गुलशन, 1742 दिल्ली, नूरुद्दीन मुहम्मद आफताब 1743 काश्मीर, शेख हाजी मुहम्मद सईद, 1752 लाहौर, ख्वाजा अब्दुल सलीम 1758 काश्मीर ख्वाजा मुहम्मद आजम दीमारी, 1771 काश्मीर, ख्वाजा कमलुद्दीन 1774 काश्मीर .... जान ए जाना मजहर 1780 दिल्ली, मौलवी अहमदउल्ला, 1783 पानीपत, शेख मुहम्मद ईशान, 1791 दिल्ली, मौलवी अली मुल्लाह, 1796 गंगोह, मौलवी, सनाउल्लाह, 1797 पानीपत।[2]

सूफी संतों ने अपने शिष्यों से समाज सेवा सद्व्यवहार और क्षमा आदि गुणों पर जोर दिया।[3]

मुसलमान भी हिन्दुओं की भांति तीर्थ आदि करने में विश्वास रखते थे जिसे हज कहते हैं। इनका तीर्थ स्थान पवित्र मक्का है।[4]

1- तिवारी, पृ० 495
2- के०एम० इनाम, पृ० 371-372
3- द स्टडीज सोसायटी एण्ड कल्चर इन मेडिवल इंडिया पृ०180
4- प्रो० गोमस पैलेस्टीन एण्ड हारमोनी आफ इंडिया, पृ० 46

तत्कालीन समय में कुछ धर्म सुधारक संत हुए यथा रामचन्द्र जी । धर्म की स्थिति संतोषजनक नहीं थी । व्रत, उपवास, तीर्थ, पूजा प्रतिष्ठा आदि के नाम पर धर्म भीरू जनता को ठगा जाता था या डराया जाता था । ऐसे आंतक के विक्षुब्ध वातावरण को शुद्ध करने के लिए ऐसी विभूति की आवश्यकता थी जो युग की आवश्यकता को समझे और पथ भ्रष्टों को सच्चा मार्ग दिखाये ।[1]

भाग्यवंश 1718 ई0 में जयपुर राज्य के अन्तर्गत सोडा (सूरसेन) नामक गाँव में एक बीजावर्गी वैश्य कुल में राम चरण जी का जन्म हुआ । इनके पिता का नाम बखतराम तथा माता देउजी थीं । इनके नक्षत्रों से ज्योतिषियों ने यह बताया कि नवजात बालक या तो सम्राट होगा या महान योगी ।[2]

रामचरण जी के गुरू के नाम कृपाराम था ।[3] एक समय रामचरण जी का अपने गुरू कृपारामजी के साथ गलता के मेले में जाने काअवसर मिला। वहाँ सहस्रो साधु एकत्रित थे जिनकी भीड़ भाड़ को देखकर रामचरण जी का मन घबराया, परन्तु गुरू के द्वारा राम-स्मरण का उपदेश सुन इन्हें शांति हुयी । यहाँ से वे विरक्त वेश में वृन्दावन गये, परन्तु एक साधु ने उन्हें फिर मेवाड़ लौट जाने की सलाह दी और आदेश दिया कि लोक कल्याण में लगकर साधारण

1- गोपीनाथ शर्मा: राजस्थान का इतिहास, पृ0 518

2- स्वामी लालदास, रामचरण जी परची, गुरू लीला विलास पद्य 44, रामचरणजी परची, पद्य 30-32 (गोपीनाथ शर्मा: वही)

3- ब्रह्म समाधि लीन जोग, पद्य 33-34 श्री राम स्नेही सम्प्रदाय संपा0 केवल स्वामी पृ0 8-11 (गोपीनाथ शर्मा वही, पृ0 519) ।

जनता का उद्धार करना वास्तविक धर्म है । इस प्रकार का निर्देश प्राप्त कर वे भी लवाडा पहुँचे । यहाँ लोग मूर्तिपूजक थे तथा सगुणोपासना में विश्वास करते थे । स्वामी जी ने निर्गुण उपासना तथा सभी के प्रति प्रेम भावना का उपदेश देना शुरू किया । अनेक नर-नारी उनके उपदेशों को सुनकर मुग्ध हो गये और उनकी एक शिष्य मण्डली बन गयी । यहाँ दस वर्ष रहकर स्वामी जी ने साधना की और उसका लाभ अपने शिष्यों को भी दिया । किन्तु सगुणोपासना में विश्वास करने वाले व्यक्ति स्वामीजी के विरोधी बन गये और उनकी हत्या के षड्यंत्र रचने लगे । फलत: विरोधियों को प्रसन्न रखने केलिए स्वामी जी ने भीलवाड़ा छोड़ दिया और वहाँ से ढाई मील दूर कुवाड़े गाँव गये जहाँ "रामधुन" की ध्वनि से सहस्रों की संख्या में लोगों को आकर्षित किया। थोड़े समय के बाद शाहपुरा से निमंत्रण आने पर वे वहाँ चले गये जहाँ रामस्नेही सम्प्रदाय तथा मठ की स्थापना की तथा अपनी आध्यात्मिक अनुभूतियों को "अणभैवाणी" के रूपमें रूप में अवतरित किया। सहस्रों अनुयायियों के कल्याण मार्ग के सृजन के बाद स्वामी का देहावसान 1798 ई0 में हो गया ।[1] इस प्रकार रामचरण जी ने घूम घूमकर जनता को सन्मार्ग दिखाने में तथा धर्म के वास्तविक स्वरूप को समझाने में मदद की ।

1- रामचरण जी परची छ0 51-53, अणभैवाणी, पृ0 997-98 श्रीरामस्नेही सम्प्रदाय वैद्य केवल स्वामी आदि द्वारा संपादित पृ0 12-26 [गोष्ठी वही] ।

<u>बाबा किनाराम</u> :- बाबा किनाराम का जन्त वर्तमान वाराणसी जिले की चंदौली नामक तहसील के रामगढ़ नामक गाँव के एक रघुवंशी क्षत्रिय- कुल में किसी नामक व्यक्ति के घर सन् 1740 ई0 में हुआ था ।[1] और इनका देहान्त सन् 1787 ई0 में हुआ था । बाबा किनाराम ने देश-विदेश का भ्रमण किया और जनता के कल्याण में अपना जीवन लगा लिया । बाबा किनाराम ने सवंत् 1818 मेंबाबाकालूराम से दीक्षा ली ।[2]

बाबा किनाराम की जो रचनाएँ उपलब्ध हैं उनमें " विवेक सार" सर्वाधिक महत्वपूर्ण है। इसके अतिरिक्त गीतावली तथा रामगीता नामक छोटे-छोटे संग्रह ग्रंथ भी है जिसमें बाबा राम जी के अघोर पंथ के अनुयायी होने का संकेत मिलता है । अन्य ग्रन्थ "रामरसाल" रामचपेटा, तथा राम मंगल नामक तीन छोटे-छोटे ग्रन्थों से इनके वैष्णव मत का परिचय मिलता है ।[3]

बाबा किनाराम से ग्रंथों को देखने से पता चलता है कि इसकी रचना सं01812 में उज्जैन नगर के निकट प्रवाहित होने वाली शिप्रा नदी के तट पर किसी मंगलवार के दिन और अभिजित नक्षत्र में हुई थी । इसमें साधु प्रसाद का फलस्वरूप अपना अनुभव दिया गया है ।[4]

बाबा किनाराम ने "अनुभव" की परिभाषा देते हुए कहा है " अनुभव वही है जो सदा विचार व भावना में परिणत हो गया जान पड़े और जिसके

1- दैनिक आज , वाराणसी , 26 नवम्बर सन् 1953 ई0

2- आचार्य परशुराम चतुर्वेदी : उत्तरी भारत की संत परम्परा पृ0 690

3- वहीं, पृ0 694

4- बाबा किनारामकृत, विवेक सार, पृ0334

अनुसार "अत्यशा बद" को ग्रहण करके संसार के पार जाया जा सके ।[1]

किनाराम की आध्यात्मिक अनुभव, क्रमशः "वैष्णव मत" तथा अवधूत मत का सार ग्रहण करता हुआ अन्त में "अघोरपथ" की विशिष्ट विचार-धारा द्वारा पुष्टि प्राप्त कर चुका था और वह इन सभी के समन्वय पर आधारित था ।[2] बाबा किनाराम घूम-घूम कर लोगों की सेवा- सुश्रुषा करते रहे और लोगों को अध्यात्मक का ज्ञान बांटते रहे । बाबा किनाराम ने बताया कि विश्व के आत्ममय होने तथा आत्म- स्थिति के रक्षार्थ दया, विवेक, विचार तथा सत्संग के द्वारा जीवन यापन की चार विधियाँ बतलायी गयी हैं ।[3]

इस प्रकार तत्कालीन समाज में धर्म सुधारक संतों ने अपने-अपने पंथ और सम्प्रदाय चलाये जैसे रामचरण सम्प्रदाय, अघोर सम्प्रदाय आदि ।

दीन- दरवेश

संत दीनदरवेश उन लोगों में थे जो परिस्थिति मे आ पड़ने पर अपने जीवन में कायापलट सा किया करते हैं । इनका जन्म उदयपुर में गुड़ली नामक गाँव में बताया गया जहाँ सं0 1810 में ये उत्पन्न हुये ।[4]

1- बाबा किनाराम कृत, गीतावली, पृ0 12

25 परशुराम चतुर्वेदी, उत्तरी भारत की संत परम्परा पृ0 695

3- वही, पृ0 696

4- परशुराम चतुर्वेदी: उत्तरी भारत की संत परम्परा पृ0 750

कहते हैं कि ये "ईस्ट इंडिया कम्पनी" की सेना में मिस्त्री के काम करने लगे थे। वहाँ पर इन्हें गोला लगने से इनकी एक बाँह कट गयी जिससे ये निकाल दिये गये फलतः ये साधु-फकीरों को के साथ सत्संग करने की ओर उन्मुख हुए।[1] इनकी रचनाओं में भजन, महाका, सत्वसार"भ्रमतोड़ " ध्यान परचे और चेतावाणीसार" के नाम दिये गये मिलते हैं।[2]

संत दीनदरवेश की रचनाओं को देखने से पता चलता है कि उनके भी वर्ण्य विषय प्रायः वे ही है जो अन्य संतो की कृतियों में पाये जाते हैं। उन्हें सरल स्वच्छन्द जीवन, विश्व-प्रेम ईश्वर भक्ति, परोपकार करना पंसद था। साथ ही इन्होंने हिन्दू तथा मुस्लिम धर्मों के अनुयायियों के पारस्परिक विद्वेष और झगड़ो की व्यर्थता पर भी कहा है और बतलाया कि वास्तव में ये दोनों एक समान ठहराये जा सकते है :

हिन्दू कहैं तो हम बड़े, मुसलमान कहे हम्मः
एक मुंग दो फाड़ हैं, कुण जादा कुणकम्म।
कुण ज्यादा कुल कम्म, कभी करना नहि कजिया
एक भगत हो राम, दूजो रहिमन से रजिया
कहे दीन दरवेश दोय सरिता मिल सिंधु
सबका साहेब एक एक हो मुस्लिम हिन्दू।

1- परशुरामदासः खड़ी बोली हिन्दी साहित्य का इतिहास काशी सं0 1995, पृ0 161
2- शोध पत्रिका साहित्य संस्थान उदयपुर, अप्रैल, 1963 ई0पृ0 119,
3- अनवर आगेवान, साँई दीन दरवेश, अहमदाबाद सं0 2009 पृ0 15

इन्होंने इसी शैली (कुंडलियां) में सर्व साधारण को जीवन की क्षण भंगुरता के प्रति सचेत किया है, कर्मवाद का महत्व दिखलाया है तथा कहा कि जो कुछ भी होता है वह करतार के किये से होता है । इनकी प्रेरणा के बिना एक साधारण पत्ता तक भी नहीं हिलता ।[1]

इनकी मृत्यु चंबल नदी में स्नान करते समय सं0 1890 में इसी नदी में डूबकर हुयी । इस प्रकार इनका समय अट्ठारवीं शताब्दी से लेकर उन्नीसवीं तक माना गया ।[2]

<u>संत बुल्लेशाह तथा मियाँ मीर</u> – संत बुल्लेशाह के मूल निवास स्थान के विषय में मतभेद है फिर भी एक मत के अनुसार इनका जन्म कुस्तुन्तुनियाँ में सन् 1703 में हुआ ये जाति के सैयद मुसलमान थे ।[3] अपनी किशोरावस्था में ही आध्यात्मिक जिज्ञासा ने इन्हें देश विदेश भ्रमण के लिए प्रवृत्त किया और इनकी भेंट इनायतशाह सूफी से हो गयी और कई हिन्दू साधकों के भी सम्पर्क में आकर इन्होंने सत्संग किये तथा अन्त में कुसूर जाकर बस गये ।[4]

इनकी रचनाओं में दोहरे" "काफी" सीहर्फी "अठवारा" "बारामासा" आदि प्रसिद्ध हैं ।[5]

1- वही, पृ0 4
2- डा0 मोतीलाल मेनारिया, राजस्थान का पिंगल साहित्य, पृ0 213
3- परशुराम चतुर्वेदी उत्तरी भारत की संत परम्परा पृ0 754
4- क्षिति मोहन सेन: मिडीवल मिस्टिसिज्म ऑफ इंडिया लंदन पृ0 156
5- डॉ0 मोहन सिंह, हिस्ट्री ऑफ दि पंजाबी लिटरेचर लाहौर, पृ0 24

अतः संत बुल्लेशाह का कादरी शत्तारी सम्प्रदाय के साथ संबंध था। उन पर कबीर साहब के सिद्धान्तों की छाप स्पष्ट लक्षित होती है साथ ही ये वेदांत सिद्धान्तों द्वारा भी बहुत प्रभावित थे।[1]

इन्होंने बाह्याडंबर का खण्डन करते हुए कहा कि, मंदिर, ठाकुर द्वारा व मसजिद सभी चोरों और डाकुओं के अड्डों के समान हैं। उनमें प्रेमरूपी परमात्मा का निवास स्थान कभी नहीं हो सकता। मैं तो जो कुछ भी अपने सोधे-साधे यत्नों द्वारा आध्यात्मिक अनुभव प्राप्त कर पाता हूँ वह इन स्थानों के आचार्यों के संपर्क में आ जाने पर भ्रमात्मक बन जाता है। मक्के जाने से तब तक उद्धार नहीं हो सकता, जब तक हम अपने हृदय से अंहता का त्याग न कर दें न इसी प्रकार गंगा में सैकड़ों डुबकियाँ लगाने से ही कुछ संभव है।[2]

अपना उदाहरण देते हुए मीर ने कहा कि मैंने तो अल्ला का अनुभव अपने भीतर किया है करके सदा के लिए विशुद्ध आनन्द तथा शांति को उपलब्ध किया है। इसलिए ईश्वर के प्रेम में सदा मस्त बने रहो। तुम्हें इसीलिए सैकड़ों हजारों विरोधों का सामना करना पड़ेगा, किन्तु इसकी परवाह न करो।[3] अपने उपदेश में बुल्लेशाह ने कहा कि .. वह मेरा प्रियतम परमात्मा निर्लोप निरुपाधि तथा नित्य आनंद स्वरूप है और जिसने उसे एक बार भी देख लिया वह चकित हो गया। तुम शास्त्रादि का अध्ययन करते हो तथा

1- परशुराम चतुर्वेदी: उत्तरी भारत की संत परम्परा, पृ0 755
2- क्षिती मोहन सेन: मिडीवल मिस्टिसिज्म ऑफ इंडिया, पृ0 156-7
3- वही,

व्यर्थ ही उल्टा सीधा लड़ते हो । यदि द्वैत की भावना को दूर करके देखों तोहिन्दू तथा मुसलमान में कोई अन्तर ही नहीं है, सभी एक समान साधु जान पड़ते है और सबके भीतर वही एक व्याप्त समझ पड़ता है मैं न तो मुल्ला हूँ, न काजी हूँ और न अपने को कभी सुन्नी और हाजी मानने को तैयार हूँ । अब तो उसके साथ आत्मीयता की बाजी मार ली है और अनाहत शब्द बजाता हुआ आनंद में विभोर हूँ ।[1]

अंतत : यह कहा जा सकता है कि तत्कालीन समाज में होती हुयी धार्मिक दशा को सुधारने में संतों ने समय-समय पर जनता का मार्ग दर्शन किया किन्तु जनता पर इसका असर कितना रहा यह कह पाना मुश्किल है ।

1- बुल्लाशाह की सीहर्फी: श्री वेंकटेश्वर स्टीम प्रेस, बंबई,पृ0 6

पर्वोत्सव

पर्वोत्सव मानवीय मनोभावों को क्रियात्मक रूप देते हैं । वे मानव जाति के सांस्कृतिक दर्पण है, क्योंकि युगों-युगों के संस्कार उन पर्वोत्सवों में संचित रहते हैं । यद्यपि काल प्रवाह पर्वोत्सवों के वाह्य रूप में परिवर्तन करता रहता है, लेकिन उनसे सम्बद्ध विश्वासों, रीति-रिवाजों एवं संस्कारों में अनुस्यूत चेतना-सूत्र का रंग अपेक्षाकृत बहुत कम परिवर्तित होता है । अतः किसी जाति या देश के पर्वोत्सवों का अध्ययन वहाँ की संस्कृति के ज्ञान में बहुत अधिक सहायता पहुँचाता है ।

तत्कालीन समाज में हिन्दू एवं मुसलमानों के व्यक्तिगत जीवन पर धार्मिक प्रभाव इतना अधिक था कि वे अपने -अपने धर्मों के सिद्धान्तों काअनुकरण करते हुए उनके अन्तर्गत प्रतिपादित सैकड़ों वर्ष से चली आ रही परिपाटियों की उपेक्षा नहीं कर सकते थे । उन परिपाटियों का पालन करना पुनीत कर्त्तव्य, धार्मिक निष्ठा एवं धर्म परायणता समझा जाता था । समाज में रहकर कोई भी व्यक्ति उसकी मान्यताओं परे रहने की न तो इच्छा करता था और न ही चेष्टा ।

<u>हिन्दुओं के प्रमुख त्योहार</u> -

<u>होली</u> - होली हिन्दुओं का प्राचीन और प्रमुख त्योहा

1- केम्ब्रिज हिस्ट्री एण्ड फेस्टिवल्स, पृ0 85-86,हिन्दू हॉलीडेज,पी0 थॉमस,पृ0 88; हिन्दू मुहम्मडन फीस्ट्स, पृ0 38, आइन भाग2, पृ0 173,आईन भाग 3, पृ0 321

वस्तुतः भारतीय त्योहारों मेंहोली ही एक ऐसा पर्व है, जिसमें हमारे सांस्कृतिक जीवन की सच्ची झलक मिलती है तथा अन्य पुनीत पर्वो की तुलना में होली के अवसर पर हमारे हृदय के अनाविल उल्लास और प्रेम की जैसी दिव्य प्रभा प्रस्फुटित होती है, वैसी प्रभा अन्य अवसरों पर बहुत कम देखने को मिलती है ।[1]

वर्ण व्यवस्था के आधार पर होली शूद्रों से संबद्ध है।[2] यह उन्मुक्ति का पर्व है जिसमें सभी सामाजिक मर्यादाएं शिथिल हो जाती है छोटे-बड़े का भेद मिट जाता है और सभी एक से हो जाते हैं । होलिका की भस्म का वंदन किया जाता है ।[3]

होली इस समयकेवल सामाजिक उत्सव के रूप के न होकर राष्ट्रीय त्योहार के रूप में मनाया जाने लगा था जिसमें मुस्लिम शासक औरमुस्लिम जनता भी भाग लिया करती थी ।[4]

1- डॉ0 किशोरी लाल, रीति कवियों की मौलिक देन, पृ0415
2- गिरिधर शर्मा, चतुर्वेदी, वैदिक विज्ञान और भारतीय संस्कृति,पृ0 288
3- वही ।

4- भीमसेन, नुस्खा-ए-दिलकुशा, पृ0 64; मनूची , मुहम्मदयासीन-ए सोशल हिस्ट्री ऑफ इस्लामिक इंडिया, पृ0 52;कामीकिंकरदत्त, सर्वे ऑफ इंडियाज सोशल लाइफ एण्ड एकोनॉमिक कंडीशन इन द ऐट्टीन्थ सेन्चुरी पृ0 24 ।

स्त्री पुरूष सभी एक साथ रससिक्त होकर फाग [होली] खेलते है तथा एक दूसरे पर रंग [गुलाल] आदि] डालते हैं :

खेलत फाग खिलार खरे अनुराग भरे बड़भाग कन्हाई।

× × ×

लाल गुलाल सों लीनो मुठी भरि बाल के भाल के ओर चलाई ।[1]

चूँकि यह प्रसन्नता का त्योहार है अतः इस दिन लोग खूब गाना-बजाना तथा नाच करते हैं तरह-तरह के वाद्ययंत्रों के साथ गीत गाते है :

1- देव ग्रंथावली; तृतीय भाव विलास, पृ0104, छं0 60; पृ0111 छं0 100; रस विलास, पृ0 236 छं020; देवसुधा, पृ043छं080; सुखसागरतरंग, पृ0 60, छं0 79; पृ0 67 छं0 119; पृ0 68 छं0 123; पृ0 67 छं0122; पृ0 68, छं0 128; पृ068 छं0 124; पृ0 69 छं0 130; पृ 68 छं0129; पृ0 67 छं0 122; भिखारीदास ग्रंथावली; काव्यनिर्णय, पृ010 छं0 30; रससारांश पृ0 48, छं0 328; पृ0 37, छं0 252; सोमनाथ ग्रंथावली, रसपीयूषनिधि, पृ0 107, छं0 13; पृ0 164 छं0 23; पृ0 107 छं07; पृ0 164 छं0 23; पृ0 170, छं0 7; पृ0 149 छं019; तोष सुधानिधि, पृ0101; मतिराम ग्रंथावली; पृ0490; घनानंद, पद रचना, पृ0 139 छं0 5; पृ0 140, छं06; बोधा; विरह वागीश सं0 213 छं0 36; मनूची; स्टोरिया द मोगोर, भाग2, पृ0 154; नुस्खा-ए-दिलकुशा, भीमसेन, पृ0 64; हेमिल्टन, भाग1, पृ0 128-129; डलाफेली, भाग1, पृ0 122-23; कांगड़ा पेंटिंग ऐट्टोम्थ्, सेन्चुरी चित्र सं0 482, पी0 थामस; फेस्टीवल्स एण्ड हालीडेज आफ इंडिया पृ0 7

घर घर दंपति सुरंग बसननि साजि,
बिलसै बिलास, लखि फागु चहुँ ओरो है।
सोमनाथ कहै मंजु बाजत मृदंग डफ
नारि नर नाँचत सुलाज गुन तोरो है ।[1]

<u>बसंत पंचमी :</u>

होली की धूम का प्रारम्भ बसन्त पंचमी से माना गया है ।[2] बसन्त पंचमी को हिन्दू-मुसलमान दोनों बड़ी धूमधाम से मनाते थे ।[3] आसमान में गुलाल उड़ रहा है, दिशाएँ मृगमद फुलेल से पूरित है, कुंकुम गुलाल घनसार तथा अबीर के बने बादल छाए है। बसन्त का उत्सव उत्साह पूर्वक मनाया जाता था। कवि का कहना है कि इस अवसर पर नाचे बिना नहीं रह जा सकता । इस प्रकार

1- सोमनाथ ग्रंथावली रसपीयूषनिधि पृ0 107 छं0 13, पृ0 170, छं0 7 बोधा पृ0 144, घनानंद पद रचना पृ0 318 घनानंद पृ0 454 पद रचना पृ0 140, छं0 7 58, छं0 79 तोष सुधानिधि पृ0 101 देव ग्रंथावली, सुखसागर तरंग पृ0 60 छं0 79, पृ0 67 छं0 122 तथा वही, खाफी खाँ, मुन्तख़ब उल-लुबाब पृ0 291 । (ह·र·उ·)

2- डॉ0 मोहन अवस्थी, हिन्दी-रीतिकविता और समकालीन उर्दू काव्य पृ0 124, देव सुखसागर तरंग, संपा0 बालादत्त मिश्र, पृ0 26 ।

3- श्रीमती मीर हसन; ऑब्ज़रवेशन्स ऑन द मुसलमान्स, अली, • जिल्द 2, पृ0 287; डॉ0 मो0 उमर, हिन्दुस्तानी तहज़ीब का मुसलमानों पर असर, पृ0 19; पी थॉमस, फेस्टीवल्स एण्ड हालीडेज़ आफ इंडिया, चैप्टर, I, पृ0 12

बसन्त का उत्सव बहुत उत्साह पूर्वक मनाया जाता था।

आवौरी मिलकर गाओ बसन्त पंचमी आई है । [1]

दीपावली – दीपावली कार्तिक मास में मनाया जाता है ।[2] वर्णक्रमानुसार दीपावली वैश्यों का प्रधान पर्व है । [3] दीपावली के दिन घर को दीपमालाओं से सुसज्जित करते हैं तथा स्त्रियाँ वस्त्राभूषण से सुसज्जित हो दीपकराग गाती है, ।

दैवै दिया आकास को गृह बारि दीपक पूरि ।

गावैं सुदीपक राग बाला सजे भूषन भूरि ।[4]

1– मतिराम ग्रंथावली, पृ0 382, देव सुखसागर तरंग, पृ0 26 मोहन अवस्थी पृ0 124 देव सुधा पृ0 57 , पृ0 60 छं0 74, पृ0 59, छं0 72 पृ060, छं077 घनानंद पद रचना पृ0 139 छं0 4, पृ0 80 छं0 193, 127/410, देव रीति-काव्य संग्रह जगदीश गुप्त, पृ0 78 छं0 65, पृ0 78 छं0 65 देव शृंगार सुधाकर पृ0 287 छं0 18 देव सुधा पृ0 96 सोमनाथ ग्रंथावली पृ0 विलास, पृ0 678 छं0 9, पृ0 678 छं0 15, रसपीयूषनिधि, पृ0210 छं0 219, कुमारमणि, रसिक रसाल पृ0 49, छं0 59, बोधा वि0 वा0 162/19, हिन्दू मुहम्डन फीस्ट्स, पृ0 77 । पी.थॉमस, फेस्टिवेल्स एंड हालीडेज आफ इंडिया पृ0 12

2– पी थॉमस फेस्टिवेल्स एण्ड हालीडेज आफ इंडिया पृ0 3, दुबाइस हिन्दू मैनर्स कस्टम्स एण्ड सेरेमनीज पृ0 517, हिन्दू हॉलीडेज पृ042, हिन्दू मुहम्डन फीस्ट्स पृ0 18, आईन 1, प0 216 .

3– गिरिधर शर्मा, वैदिक विज्ञान और भारतीय संस्कृति, पृ0 223

4– बोधा, विरह वारीश, पृ0 221 छं0 11, सोमनाथ ग्रंथावली, नवाबोल्लास, पृ0 832 छं0 4; मुहम्मद यासीन: ए सोशल हिस्ट्री ऑफ इस्लामिक इंडिया पृ0 52; दुबाइस: हिन्दू मैनर्स, कस्टम्स एण्ड सेरेमनीज पृ0 517

कवि ने दीपावली के त्योहार को हिन्दुओं की भाँति मुसलमान के द्वारा भी मनाये जाने का वर्णन किया है ।[1] दीपावली में घर की सफाई होती है तरह-तरह के पकवान बनते हैं तथा लक्ष्मी गणेश की पूजा होती है ।[2]

दीपावली के त्योहार पर मुख्याकर्षण द्यूत क्रीडा (जुआ खेलना) का होता था । इस दिन लोग जुआ खेलते थे :

आई है दिवारी जीते काजनि जिवारी प्यारी,
कैसे मिलि जुआँ खेज पूरे दाँव आवहीं ।[3]

जुआँ के अतिरिक्त टोना-टोटका भी होता था यह मंत्र जगाया जाता दीपावली के दिन मंत्र जगाने का उल्लेख भी कवि ने किया है :

कान्ह दीवारी की राति घरयौ बरसाने मनोज को मंत्र जगावन ।[4]

1- सोमनाथ ग्रंथावली: नवाबोल्लास, पृ० 832 छं० 4; मुहम्मदयासीन: ए सोशल हिस्ट्री आफ इस्लामिक इंडिया पृ052; अकबर के समय मे यह राष्ट्रीय पर्व के रूप में मनाया जाता था। अकबरनामा: बेवरिज, भाग3, पृ० 958

2- पी0 थॉमस फेस्टीवल्स एण्ड हालीडेज ऑफ इंडिया , पृ० 4

3- रसखान और घनानंद: संकलनकर्ता स्व0 बाबू अमीर सिंह कवित्त, पृ086, छं0 23। घनानंद ग्रंथावली, पृ017; बोधा ग्रंथावली, विरह वारीश पृ021। छं0 12; मुहम्मदयासीन: ए सोशल हिस्ट्री ऑफ इस्लामिक इंडिया, पृ0 108, तुजुके जहाँगीरी: रोजर्स एण्ड बेवरीज, I, पृ0 268, आईन; I, पृ0321 ; एडवर्ड एण्ड गैरेट , मुगल रूल इन इंडिया पृ 0282

4- सोमनाथ ग्रंथावली: पृ0 99 छं0 59, फुटकर कवित्त, (शोध प्रबन्ध)

गोवर्धन पूजा : दीपावली के बाद अन्नकूट अथवा गोवर्धन पूजा का उत्सव मनाया जाताहै ।[1] सामान्यतः इस त्योहार का प्रचलन समस्त भारत में है, किन्तु ब्रज में, विशेषकर, गोवर्द्धन ग्राम में यह बड़े समारोह के साथ मनाया जाताहै क्योंकि यहाँ पर ऐसी मान्यता है कि इसी कार्तिक शुक्ल की प्रतिपदा को श्रीकृष्ण ने गोप एवं ग्वाल बालों से गोवर्धन की पूजा करायी थी । जिसमें स्त्रियाँ गोबर से गोवर्धन की मूर्ति बनाकर उसकी पूजा करती हैं[2] गोवर्धन पूजा का उल्लेख कवियों ने किया है :

> गिरी गोधन पूजन को दिन आयौ,
> ब्रजवासिन कौ मन अति भायौ ।।[3]

मुसलमान भी उसमें भाग लेते थे ।[4]

1- आईन 1, पृ० 216; पी थॉमस फेस्टीवेल्स एण्ड हालीडेज ऑफ इंडिया, पृ० 4

2- शशि प्रभा कुशवाहा: रीतिकालीन कवियों द्वारा समाज चित्रण पृ० 310 (शोध प्रबन्ध)

3- घनानंद पृ० 247; बोधा, विरह वारीश, पृ० 211 छं० 12; पृ० 142

4- वही ।

दशहरा - दशहरा क्षत्रियों का त्योहार माना गया है।[1] इस दिन "आयुध-पूजा" (अस्त्र शस्त्र की) की जाती थी।[2] दशहरे को महानवमी [3] तथा विजयादशमी [4] के नाम से भी माना जाता है। महानवमी में शक्ति की पूजा होती है।[5] शक्ति के भी तो भय क्रूर आदि नाना रूप है।[6] अपनी इच्छा के अनुसार ही रूपो की उपासना होती है।[7] सत्व, रज, और तम को श्वेत, रक्त और कृष्ण (काला) रूप शास्त्र में माना गया है।[8] स्वच्छता, सयंत्र और आवरण का बोधन कराने के लिए ही इन रूपो की कल्पना है। उन्ही के गुणों के रूपमें यहा की महाकाली, महालक्ष्मी महासरस्वती की उपासना होती है [9]

1- डुबाएस, हिन्दू मैनर्स, कस्टम्स एण्ड सेरेमनीज पृ0 569; आईन, भाग3, पृ0 319।

2- डुबाएस हिन्दू मैनर्स कस्टम्स एण्ड सेरेमनीज पृ0 570

3- वही, इलियट एण्ड डाउसन, भाग, IV पृ0 117-18

4- इलियट एण्ड डाउसन, भाग IV पृ0 117-18; -
भाग 2, पृ0 372-380

5- दशरथ जू के राम ने ढंढी है ......।
भूषण ग्रंथावली, शिवराजभूषण पृ0 9 छं0 61;
सोमनाथ ग्रंथावली सुजान विलास, पृ0 685 छं0 30; 685 छं0 31;
पृ0 734छं0 20; तुजुके जहांगीरी, रोजर्स एण्ड बेवरिज, I, पृ0 224-25;
थोमस, फेस्टीवल्स एण्ड हालीडेज ऑफ इंडिया, पृ0 4

6- गिरिधर शर्मा, वैदिक विज्ञान और भारतीय संस्कृति, पृ0 223 भी, थामस फेस्टीवल्स एण्ड हालीडेज आफ इंडिया पृ0 4-5

7- गिरिधर शर्मा- वैदिक विज्ञान और भारतीय संस्कृति पृ0223

8- वही

9- देव सुखसागर तरंग पृ0 49 छं0 11; मतिराम, रत्नावली; पृ0 120 छं0 117,

तथा गुणों के अनुकूल होउनके हाथों में आयुध भी रखे जाते हैं। इनकी उपासना से अपने अपने कार्य में सबको विजय प्राप्त होती है। यही विजयादशमी का लक्ष्य है।[1] दशहरे का त्योहार मुस्लिम भी बड़े ठाठ बाट मनाते थे कवि ने इसका उल्लेख किया है :

सोहै आज सरस सभा में दसहरा मान,
आजन कों आप पुरहूत सों प्रबोनी है।
× × ×
× × ×
सोमनाथ बरनत दसहरा सुप्रसन्न है के,
ठाठ बार देखि कै अतीव मन योनी है।[2]

<u>रक्षा - बंधन</u> - रक्षा बंधन[3] ब्राह्मणों का महत्वपूर्ण है जो श्रावण(जुलाई अगस्त) में बताया गया। कतिपय प्रान्तों में रक्षाबंधन लड़कियों का मुख्य त्योहार[4] माना जाने लगा। रक्षाबंधन का अभिप्राय यह है कि भाई इसे जब बहन के द्वारा अपनी कलाई पर बंधवाता है तो वह बहन के सम्मान और जीवन सुरक्षा के बंधन लिए वचन बद्ध हो जाता है :

1- गिरिधर शर्मा, वैदिक कीशन .....पृ0 223

2- सोमनाथ ग्रंथावली: ध्यावोल्लास, पृ0 831, छं0 3; आलमगीरनामा, पृ0 914; हिन्दू हॉलीडेज, पृ0 185-88; मुहम्मदयासीन: ए सोशल हिस्ट्री ऑफ इस्लामिक इंडिया, पृ0 51

3- हिन्दू पर्व प्रकाश, पृ0 25; हिन्दू हॉलीडेज, पृ0 178

4- हिन्दू पर्व प्रकाश, पृ025

द्रुपद सुता को लाज राखो महाराज तुम ।

ऐसी यहो राखी ह मैं तिहारे हाथ राखो है ।[1]

अट्ठारहवी शती से पूर्व भी राखी का त्योहार मुगल दरबार में मनाया जाता था ।[2]

गनगौर – गनगौर पर्व वस्तुतः कुमारी लड़कियों सेअधिक सम्बद्ध है, क्योंकि अभीष्ट वर की प्राप्ति की कामना से प्रेरित होकर कुमारियाँ इस व्रत को रखती हैं ।[3] गनगौर का प्रचलन राजस्थानमें अधिक है ।[4] गनगौर के दिन गणेश और गौरी की पूजा होती है :

प्रातहि गनपति पूजिहो निशा अकेलो जाय [5]

1- घनानंद ग्रंथावली पृ0 326, आईन, भाग 3 पृ0 317-21 तुजुके जहाँगीरी आर-बी0 1, पृ0 244 पी थामस फेस्टिवल्स एण्ड हालीडेज आफ इंडिया, पृ0 1

2- आईन , 3, पृ0 319 आर0 एण्ड बी, तुजुके जहाँगीरी, पृ0 246

3- डॉ0 किशोरी लाल, रीतिकवियों की मौलिक देन, पृ0412

4- वही

5- ~~कुमारमणि, ग्रंथावली,~~ पृ05

" गौरि थाप मायै तब साजी । करै कुंगार नारिरत राजी,

बोधा वि0 वा0 पृ0 223 छं0 29,'

तोष-सुधानिधि,पृ0 78; कुवारत, हिन्दू मैनर्स, कस्टम्स एण्ड सेरेमनीज, पृ0 568

<u>ग्रहण</u> – किसी भी धार्मिक अथवा त्योहार के दिन गंगा, यमुना अथवा किसी नदी में स्नान-दान करने की परिपाटी अट्ठारहवीं शती में यथावत् विद्यमान रही :

दुरित दावागन दूर करन कौ जाको पावन पानी ।
हरिपद रति गति मति अति दाइनि फौरत विशद बरवानी ।[1]

<u>हिंडोला वर्णन</u> – जिस प्रकार बसन्त के अन्तर्गत फाग का वर्णन किया गया है, उसी प्रकार वर्षा के अन्तर्गत हिंडोल [2] का कथन हुआ है । कवियों ने हिंडोला उत्सव बड़े उल्लास के साथ मनाने का वर्णन किया है जिसमें हिंडोला झूलते समय सभी लोग गीत गाते हैं :

तु गावैं हिंडोरा सबै देत टेरे ।[3]

1– घनानंद ,पृ0 469, बदायूनी, पृ0 95, तुजुके जहाँगीरी, आर0 एण्ड बी, I पृ0 180, 183, 281 ,पी0 एन0 ओझा, ग्लिम्पसेज आफ सोशल लाइफ इन मुगल इंडिया पृ0 31, ट्रेवर्नियर ट्रेवेल्स इन इंडिया,पृ0 192

2– हिंडोला डॉ0 किशोरी लाल, रीति कवियों की मौलिक देन, पृ0 404 मुहम्मद यासीन ए सोशल हिस्ट्री ऑफ इस्लामिक इंडिया,पृ0 181

3– बोधा, विरह वारीश, पृ0 202 छं0 32; पृ0 120 छं0 11; पृ0207 छं0 60; देव सुखसागर तरंग, पृ0 55 छं0 162;तोष ब्रजभाषा साहित्यकुत सौन्दर्य, सं0 प्रभुदयाल मीतल, पृ0 119; वही पृ0 120;दोनों छन्दों में हिंडोला झूलती हुयी स्त्रियों के विभिन्न अवयवों के हिलने तथा वस्त्रों आदि के उड़ने का चित्रण हुआ है । वही ।

मुस्लिम त्योहार - मुसलमानों के त्योहारो में ईद मुख्य माना गया जो मुख्य रूप से रोजा तोड़ने के उपलक्ष्य में[1] मनाया जाता है।

ईद को ईद-उल-फितर[2] कहा जाता है। मुगल काल में यह बड़े उत्साह से मनाया जाता था औरंगजेब के काल में ईद का त्योहार बहुत धूम-धाम से मनाया जाता था।[3] मुस्लिम ईद के दिन ईदगाह जाते थे[4] से मिलते जुलते उन्हें बुलाते, स्वयं ईद के दिन सभी मुसलमान ईदगाह जाते थे[5] तथा एक दूसरे के यहाँ जाकर उन्हें बधाई देते थे।[6]

1- "ईद" इस्लामी त्योहार पृ० 72-78 आउटलाइन ऑफ इस्लामिक कल्चर,, पृ० 704; मुहम्मदयासीन ए सोशल हिस्ट्री ऑफ इस्लामिक कल्चर पृ055; पी थामस, चैप्टर 5, मुस्लिम फेस्टिवल एण्ड हालीडेज पृ० 44

2- वही, हिन्दू मुहम्मडन फीट्स, पृ० 102 बादशाहनामा पृ० 235, 36; ओविंगटन पृ० 243; मआसीर ए आलमगीरी [उर्दू] पृ० 28 तबकाते अकबरी 2 पृ० 605।

3- मआसीर-ए- आलमगीरी सरकार, पृ० 18, 25, 36; तथा आलमगीरी [उर्दू] पृ० 28, तथा मुहम्मदयासीन ए सोशल हिस्ट्री ऑफ इस्लामिक इंडिया पृ० 55

4- डेला वैली, पृ० 429; हिन्दू मुहम्मडन फीट्स, पृ० 102; तुजुके जहाँगीरी एलो0 पृ 37

5- पेलसर्ट इंडिया पृ० 73; रो एण्ड फ्रायर, पृ० 304; मुहम्मद यासीन, ए सोशल पृ० 55।

ईद के अवसर पर सबसे महत्वपूर्ण बात यह थी कि इस्लाम में वैसे तो संगीत (नाच-गाना) निषिद्ध माना गया किन्तु उल्लास एवं हर्ष के इस अवसर पर ईद के दो दिन बाद तक संगीत नृत्यादि चलता रहता था :

कंत अवनी को गुनवंत गाजी आजम खाँ,
ईद मान इंद्र को बिलास परसत है
बाजत मृदंग बीन मधुर मधुर मंजु,
तान की तरंगन सो रंग दरसात है।
कुंदन लता सो बाली काम कंदला सो बाल,
नृत्यत अनंत अंग रूप सरसत है।[1]

ईदर के अवसर पर (बादशाह द्वारा नजरें तथा बख्शीश आदि दिये जाते थे :

नजर बिलंद सो गयंद बकसत रीझि,
करन सो कंचन कौमिक बरसत है।[2]

ईद एक प्रकार का धार्मिक त्योहार माना गया है।[3]

1- सोमनाथ ग्रंथावली, नवाबोल्लास, पृ0 831 छं01, मनूची मास्टोरियाद मोगोर, भाग4, पृ0 235 अकबरनामा, बेवरिज, भाग3, पृ0614-615
2- वही, मिसेज मीर हसन अली" आब्जरवेशन्स आन द मुसलमान्स, लाहौरी बादशाहनामा, I पृ0 259।
3- इस्लामिक कल्चर, क्वाटरली, जुलाई 1961, पृ0 194, ईदुल।

<u>बकरीद</u> : बकरीद जिसे ईद-उल अजहा[1] कहा गया मुसलमानों का अन्य महत्वपूर्ण त्योहार[2] रहा है। बकरीद के त्योहार में कुर्बानी[3] दी जाती है तथा इसे भी ईद की तरह प्रसन्नता से मनाते हैं :

नृत्यत अनेक नृत्य कारक अनंत गति,
गावत सुधर सम किन्नर सुवेस के ।।
सोमनाथ कहत मुबारकी पहुँचा चारू,
पायन सों चतुर नरेस देस देस के ।
आज यों गाजी को विलोक बकरीद आज,
फीके होत सुधर समाज अमरेस के ।। [4]

1- "ईद उल- अजहा" इस्लामी त्योहार, पृ० 78-88, फेथ फेयर्स एण्ड फेस्टीवल्स, पृ० 20। श्रीमती मीर हसन अली : आब्जरवेशन ऑन द मुसलमान आफ इंडिया, । पृ० 25१, हिन्दू मुहम्मडन फोट्स पृ० 102-3, आईन भाग 2, पृ० 31, तुजुके जहाँगीरी आर. एण्ड बी. । पृ० 189, पी. थामस. चेप्टर 5, मुस्लिम फेस्टवल एण्ड हालीडेज पृ० 43 ।

2- मुहम्मद यासीन ए सोशल हिस्ट्री आफ इस्लामिक इंडिया, पृ० 53 ।

3- मुहम्मद यासीन ए सोशल हिस्ट्री ऑफ इस्लामिक इंडिया, पृ० 54, अकबरनामा, बेवरिज, भाग2, पृ० 51, तथा तुजुके जहाँगीरी, आर, एण्ड बी० 1, पृ० 189, पीटरमुंडी, 2 पृ० 51

4- सोमनाथ ग्रंथावली, नवाबोल्लास, पृ० 83। छं० 2, वही ।

मुसलमानो का अन्य त्योहार नौरोज था पर यह त्योहार मुख्य मुसलमानो के उच्च वर्गों तक ही जो सुल्तान के साथ घनिष्ठ रूप से सम्बन्धित थे, सीमित था ।[1]

मुसलमानों का दूसरा महत्वपूर्ण त्योहार शबे-बारात" था जो शा-बान महीने की चौदहवीं रात को मनाया जाता था ।[2]

मुहर्रम यानी शोक का पर्व भी मुसलमानों के बीच लोकप्रिय था जो खास कर शियों, कट्टर धार्मिक विचारों के मुसलमानों द्वारा मनाया जाता था ।[3]

1- डॉ० ई०डी० रॉस , हिन्दू मुसलमान फिन्ड्स , पृ० 100 ,
के० एन० अशरफ , लाइफ एण्ड कंडीशन्स ऑफ पीपुल ऑफ हिन्दुस्तान
पृ० 204

2- के० एम० अशरफ, पृ० 205, रॉस, पृ० 111-12

3- के० एम० अशरफ, लाइफ एण्ड कंडीशन ऑफ दि हिन्दुस्तान"
पृ० 206-207 ।

निष्कर्ष -

इस प्रकार अवलोकित काल में राजनीतिक पराजय और सांस्कृतिक पराभव ने भी भारत के लोक जीवन की परम्पराओं को विश्रृंखलित नहीं किया था । लोक जीवन में त्यौहारों का अत्यन्त व्यापक महत्व था और वे जीवन के प्रायः प्रत्येक क्षेत्र का स्पर्श करते थे । होली केवल इसलिए महत्वपूर्ण नहीं है कि उस समय कुछ मनचले लोगों को सुन्दरियों के साथ अबीर गुलाल खेलने का अवसर मिल जाता था, कोई गोरी किसी "लला" को पगुहारों की भीड़ से खींचकर भीतर ले जाकर मनमानी कर लेती थी वरन् इसलिए अधिक महत्वपूर्ण था कि वहत्यौहार स्त्री, पुरूष, छोटे, बड़े हीन और समर्थ सभी प्रकार के कृत्रिम भेदों को मिटाकर समानता और उन्मुक्ति का वातावरण प्रस्तुत करता था । उसमें कृत्रिम वर्जनाओं और नियमों-विनियमों का अस्तित्व समाप्त हो जाता था । इसी प्रकार वसन्तोत्सव नायक-नायिका के काम की अभिव्यक्ति का ही अवसर नहीं था, उस समय समस्त प्रकृति जीर्णशीर्ण और पुरातन को त्यागकर नया जीवन धारण करती थी । खेत की फसल कटकर घर पहुंचती थी, लोक समृद्धि और सम्पन्नता का उल्लास रहता था । रक्षा बंधन या ईद जैसे त्यौहार हिन्दू मुसलमानों को एक दूसरे के त्योहारों में भाग लेने का अवसर प्रदान कर सांस्कृतिक समन्वय की प्रक्रिया में ठोस योगदान भी करते थे ।

सर्व साधारण में अशिक्षा और अज्ञान के कारण अंधविश्वास की जड़े गहरी हो गयी थीं । तरह-तरह के जादू-टोने, ज्योतिष में विश्वास, भूत-प्रेतों आदि में विश्वास होने के कारण इनका जीवन रूढ़ियों और अंधविश्वासों [1] से ग्रस्त था ।

ज्योतिष - परलोक तथा परमात्मा में विश्वास एवं कर्म-फल सिद्धान्त के कारण लोग भाग्यवादी बन गये थे ।[2] कवियों ने ज्योतिष में विश्वास करने का उल्लेख किया है, नायिका ज्योतिषी से प्रियतम के आने की शुभ घड़ी पूछती है तो कोई ज्योतिषी से शुभ मुहूर्त निकलवाता है ।[3]

1- डॉ० कृष्ण चन्द्र वर्मा- रीतियुगीन काव्य, पृ० 38-39 । डुबायस हिन्दू मैनर्स .... पृ० 216

2- डॉ० मोहन अवस्थी हिन्दी-रीतिकविता और समकालीन उर्दू काव्य, पृ० 112, एडवर्ड ऐण्ड गैरेट मुगल रूल इन इंडिया, पृ० 225

3- ज्योतिषी हो तो चलो घर मैं पिय आवन की जुदरी तुम देहौ ।
आलम आगे घने बनहै धन के उनए ते घने दुख पैहौ ।।
- [आलम शृंगार संग्रह , सं० सरकार कवि, पृ० 54 छं० 11]
डॉ० किशोरी लाल रीतिकवियों की मौलिक देन, पृ० 389
सोमनाथ ग्रंथावली, सुजानविलास, पृ० 803 छं० 6; पृ० 625 छं० 26; तथा सोमनाथ ग्रंथावली, डॉ० मोहन अवस्थी, हिन्दी रीतिकविता, और समकालीन उर्दू काव्य, पृ० 113, मुहम्मदयासीन ए सोशल हिस्ट्री आफ इस्लामिक इंडिया, पृ० 93, मनूची स्टोरिया द मोगोर I, पृ० 213-डुबायस हिन्दू मैनर्स कस्टम्स एण्ड सेरेमनीज, पृ० 221-22

लोक विश्वास

ज्योतिष के अतिरिक्त सगुन असगुन देखकर भी कर्त्तव्याकर्त्तव्य का निर्णय होता था।[1] काग का मुँडेरा पर आकर बोलना, फिर उड़ जाना, किसी के आने का सूचक माना गया है।[2] ऐसी परिस्थित आने पर नायिकाएँ को काफी खातिरदारी करती दिखाई गयी है :

कंचन कटोरे खीर खाँड भरि-भरि तेरे
 हेत उठि भोर ही अटान पर धारिहौं।
आपने ही घर तें निकारि नीको मोतिन कंठ
 भूषन सँवारि नीको तेरे गले डारिहौं।
ए रे कारे काग तेरे सगुन सुभाय आज
 जो मैं इन अँखियन प्रीतम निहारियौं ।।[3]

1- डॉ० मोहन अवस्थी, हिन्दी रीतिकविता तथा समकालीन उर्दू-काव्य पृ० 115

2- वही, डॉ०किशोरी लाल, रीतिकवियों की मौलिक देन, पृ० 390

3- भिखारी दास ग्रंथावली:1, रससारांश, पृ० 22 छं० 143; देव: भाव-विलास, पृ० सं०, पृ० 36; देव, रीतिकाव्य संग्रह, जगदीश गुप्त, पृ० 73 छं० 41; भूषण: स्फुट काव्य, जगदीश गुप्त, रीतिकाव्य संग्रह, पृ० 59 छं० 34; तोष: सुधानिधि, छं० 183 [डॉ० किशोरी लाल पृ० 390]

प्रियतम से भेंट न होने पर नायिका सारे दिन काग उड़ाती रहती है कि शायद भेंट हो ही जाय ।[1] सगुन शुभिकर देखकर फिर लोग [बाहर] परदेश जाते थे ।[2]

असगुन – असगुन का अर्थ ही है शुभ गुण रहित । सगुन शुभ सूचक हैं तो असगुन अशुभ सूचक ।[3] तत्कालीन समाज में लोगों का ऐसा विश्वास था कि यदि रास्ते पर रिक्त गागर दिखाई पड़ जाये तो गन्तव्य से रीति हाथ ही वापस आना पड़ता है। इस कारण लोग ऐसी स्थिति में प्रायः प्रस्थान नहीं करते थे :

नागरि नवेली रूप आगरि अकेली रीति
गागरि लै ठाढ़ी भई बाट ही के घाट में ।[4]

इस प्रकार असगुनों में एक असगुन है रीति गागर देखना ।

रीति गागर की तरह ही छींक [5] को भी बुरा मानते थे । धारणा बन

1– देव भाव विलास पृ0 36

2– सोमनाथ ग्रंथावली रसपीयूषनिधि पृ0 163 छं0 17, इसमें सगुन साधने का तात्पर्य इससे है कि प्रियतम के परदेश जाने के लिए सभी शुभ घड़ी देखकर तब नायिका बिदा करती है ।

3– डॉ0 मोहन अवस्थी, हिन्दी रीतिकविता और समकालीन उर्दू काव्य पृ0 116

4– मतिराम ग्रंथावली, रसराज पृ0 119 छं0 212 वही, डॉ0 किशोरी लाल, रीतिकवियों की मौलिक देन पृ0 390

5– आगम, मोहन अवस्थी पृ0 117 ।

गयी थी कि यदि चलते समय छींक हो तो कार्य सिद्ध नहीं होगा । इसके अतिरिक्त आफत आ जाना भी असंभाव्य नहीं था विशेषकर विदेश (बाहर) जाते समय । नायक मोह छोड़कर जैसे ही प्रस्थान करने वाला था कि ,

ऐसे मैं काहूँ अचानक छींकैं ।[1]

अतः नायक को उस दिन रुकना पड़ा ।

<u>टोना - टोटका -</u>

सगुन असगुन अपने शरीर अथवा दूसरे के शरीर की चेष्टाओं से मन में कल्पित मंगल या अमंगल की सृष्टि करते हैं, लेकिन टोटके मनमें उठी आशंका के निवारणार्थ कियेजाते हैं ।[2] टोटका करने में यह उद्देश्य निहित रहता है कि विघ्न बाधायें समाप्त हो जायेंगी ।[3] कवियों ने शृंगारिक परिवेश में गोरे अंगो के नजर लगने के भय से "राई नोन वारने का स्पष्ट संकेत किया है :

गात की गोराई पर सहज भाराई पर।
सारी सुंदराई पर राई- नोन वारती ।[4]

1- देव, मोहन अवस्थी, पृ० 117, आलम आलमकेलि सपांदक लाला भगवानदीन पृ० 62

2- डॉ० मोहन अवस्थी, हिन्दी रीतिकविता और समकालीन उर्दू काव्य, पृ० 118 ।

3- वही

4- भिखारीदास ग्रंथावली; I, पृ० 55छं० 227; देवग्रंथावली; सुखसागरतरंग, पृ० 89 छं० 252 ; सुमिल विनोद, पृ० 9 छं० 15; घनानंद ग्रंथावली; पृ० 537

राई लोन उतारने के अलावा पानी वारने का भी उल्लेख कवि ने किया है,

तिल है अमोल लोल नैनो के कपोल गोल

बोलत अमोल जन वारि फेरियत है ।[1]

पानी बाटने का अर्थ है पानी को किसी बर्तन में लेकर अपने इष्ट व्यक्ति के सर के चारो तरफ घुमाना (फिराना)[2] उपर्युक्त छंद में यह भाव व्यक्त किया गया कि नैलिन केगाल का अमोल तिल उसके अमोल बोल में दोनो गजब में है । लोग उस चंचलनयना को कुदृष्टि से बचाने केलिए बारम्बार पानी फेरते हैं ।

इसी प्रकार तृण तोड़कर फेंकने से भी नजर से बचा जा सकता था:

जिन जिन ओर चित चोर चितवति ज्यों हो,

तिन तिनओर तिन तोरति फिरति है ।[3]

तंत्र-मंत्र - लोगों में अंधविश्वास बढ़ जाने के कारण तंत्र मंत्र[4] का भी पचार था।

तत्र: प्रधान प्रवृत्ति से संबंधित प्रयोजन दृष्टि में रखकर जोक्रियाएं की जाती हैं वे तंत्र है तथा उन क्रियाओं के साथ जो मंत्र जपे जाते हैं उनसे क्रिया फलवती होती है ।[5] चूंकि ऐसे मंत्र जप घोर अंधकार में किये जाते हैं अत: दीवानी

1- देव ग्रंथावली; सुखसागर तरंग, पृ0 92 छं0 268; देव :देवसुधा, पृ0 145 छं0 273

2- डॉ0अवस्थी, हिन्दी रीतिकविताऔर समकालीन उर्दू काव्य,पृ0119

3- देव,सुखसागर तरंग,पृ0 89 छं0 252;सुमिलविनोद,पृ0 9 छं0 15

4- डॉ0 मोहन अवस्थी, हिन्दी रीतिकविता .... पृ0 121।

5- वही, सोमनाथ ग्रंथावली, माधवविनोद,पृ0 47छं0 187

को रात मंत्र जगाने के लिए उपर्युक्त मानी गयी :

कान्ह दिवारी को रैनि चलै बरसाने मनोज को मंत्र जगावन ।[1]

<u>भूत-प्रेत</u> – मध्ययुगीन समाज में भूत-प्रेत[2] विषयक मान्यताएँ भी प्रचलित थी ।

भूत-प्रेत संबंधी झाड़ फूंक भी किये जाते थे ।[3] भूत प्रेत का भय स्वभावतः अँधेरे में सांझ और रात में अधिक रहता है :

भूत परेत को सांझ समो, यह देखो धरीक धौं होत कहा है ।[4]

<u>ताबीज</u> : अमंगल निवारण के लिए लोग ताबीज [5] पहनते थे जो व्याघ्रनख आदि

1- वही, सोमनाथ, सोमनाथ रत्नावली ,पृ090

2- बोधा, विरह-वागीश, पृ0 67 छं0 6 सोमनाथ ग्रंथावली, माधवविनोद पृ0 400 छं0 36

3- सोमनाथ ग्रंथावली, माधवविनोद पृ0 400 छं0 36, देव देव माया प्रपंच डुबाय्स :हिन्दू मैनर्स,कस्टम्स एण्ड सेरेमनीज, पृ0 644-45

4- कुमारमणि: रसिक रसाल, पृ0 15 वही ।

5- तोष-तोष, सुधानिधि, पृ0 64 छं0184, भिखारीदास ग्रंथावली: 1,पृ085 छं0 283;पृ0 211 छं0 583;भिखारीदास ग्रंथावली: 2, बधैनहा पृ0 102, छं0 36, जाफरशरीफ:कानून ए इस्लाम — अनुवादक इस्लाम इन इंडिया,अनु0 जी0 ए0 हरक्लाट्स, पृ0 247-82 ।

का बना होता था । ताबीज को एक प्रकार से रक्षा-यंत्र[1] माना गया ।

दिठौना - दिठौना काजल की बिन्दी को कहते हैं, जो इस दृष्टिकोण से लगाया जाता है कि किसी की कुदृष्टि न पड़े । दिठौना[2] लगाये जाने का उल्लेख मिलता है इसे संरक्षात्मक प्रसाधन बताया गया ।

निठुर दिठौना दीन्हे मीठि निकसन कहै,
डीठि लागिबे के डर पीठि दै गिरति है ।

निष्कर्ष रूपमें यह कहा जा सकता है कि जनता पूर्ण रूप से अंध-विश्वासों से घिरी थी फलतः उसके निवारण के लिए वह हर संभव प्रयास करती थी जैसा कि उपरोक्त विवरण में दिखाया गया है अंधविश्वास बहुत कुछ समाज में व्याप्त अज्ञानता के कारण व्याप्त थी ।

1- दिठौना" भिखारीदास ग्रंथावली पृ0 33 छं0 227 भिखारीदास ग्रंथावली, 2, पृ0 158 छं0 6देव सुखसागर तरंग पृ0 86 छं0 251 देव सुमिलविनोद, पृ0 9 छं0 15, मतिराम मतिराम सतसई ,पृ0 380, छं0 148

2- देव, सुमिलविनोद पृ0 9 छं0 15, भिखारीदास ग्रंथावली, पृ0 33 छं0 227

संस्कार

संस्कार हिन्दू धर्म के महत्वपूर्ण अंग हैं संस्कार का उदय सुदूर अतीत में हुआ था और काल प्रवाह के साथ अनेक परिवर्तनों सहित वे आज भी जीवित हैं ।[1] संस्कार शब्द का उपर्युक्त अंग्रेजी पर्याय" सेक्रामेन्ट[2] शब्द है, जिसका तात्पर्य धार्मिक विधि: विधान या कृत्य से है जो आंतरिक तथा आत्मिक सौन्दर्य का वाह्य तथा दृश्य प्रतीक माना जाता है । यह शब्द अन्य धार्मिक क्षेत्रों को भी व्याप्त कर लेता है जो संस्कृत साहित्य में शुद्धि, प्रायश्चित व्रत आदि शब्दो के अन्तर्गत आते हैं ।[3]

हिन्दुओं में संस्कार जन्म के पूर्व से ही प्रारम्भ हो जाते हैं ।[4]

1- कु0 शशि प्रभा कुशवाहा, शोध प्रबन्ध ।

2- डा0 राजबली पाण्डेय, हिन्दू संस्कार, पृ0 18

3- वही ।

4- आर बी पाण्डेय, हिन्दू संस्कार, पृ0 79-104; पी0 थामस, हिन्दू रिलिजन कस्टम्स एण्ड मैनर्स, पृ0 87; तथा जी0 पी0 मजूमदार, सम आस्पेक्ट्स ऑफ इंडियन सिविलाइजेशन, पृ0 30। यथा [गर्भाधान पुंसवन आदि]

सैद्धान्तिक रूप से सोलह प्रकार के संस्कार माने गये हैं[1] किन्तु, भारतीय मनीषियों ने एक व्यक्ति केलिए छह प्रकार संस्कारों को महत्वपूर्ण माना है[2] जातकर्म (जन्म संस्कार), नामकरण संस्कार, चूणाकर्म (मुंडन संस्कार), उपनयन संस्कार, विवाह तथा अन्त्येष्टि संस्कार ।[3] तत्कालीन समाज में प्रचलित कुछ संस्कार निम्न प्रकार से हैं ।

सीमंत संस्कार : सीमंत संस्कार प्रागृजन्म संस्कारों में से एक है ।[4] सीमंत संस्कार में गर्भिणी के केशों को ऊपर उठाया जाता है[5] एवं मातृत्व की गरिमा से सम्पन्न होने के लिए उसे बधाइयाँ एवं आशीर्वाद दिये जाते हैं। स्त्री अपने पति के साथ पूजन स्थल पर गाँठ जोड़कर बैठती है :

कंत चौक सीमंत की बैठी गांठि जुराय ।[6]

1- विस्तृत विवरण केलिए देखिए, आर०बी० पाण्डेय, हिन्दू संस्कार, पृ० 79-480; पी० थॉमस, पृ० 87-96; ए जे० ए० डुबाइस, हिन्दू मैनर्स, कस्टम्स एण्ड सेरेमनीज (आक्सफोर्ड) पृ० 155-72 ।

2- आर० बी० पाण्डेय, पृ० 105-15, 146-50, 151-56

3- विस्तृत विवरण केलिए देखिए जी०पी० मजूमदार , पृ० 367-408 तथा आर०बी० पाण्डेय, पृ० 407-80 ।

4- ए० जे० ए० डुबाइस, हिन्दू मैनर्स, कस्टम्स एण्ड सेरेमनीज, पृ० 151

5- वही, तथा आर०बी० पाण्डेय, हिन्दू संस्कार, पृ० 105-15

6- मतिराम ग्रंथावली, पृ० 285

जातकर्म संस्कार :- जातकर्म संस्कार प्रसव के उपरान्त होता है ।[1] इस संस्कार में जैसे ही नवजात शिशु का जन्म होता है, तत्काल ही शिशु के जन्म से संबंधित बातें यथा} जन्म समय दिन तारीख आदि} लिख लिया जाता है और पुरोहित को बुलाकर शिशु के जन्म और मुहूर्त आदि पर विचार किया जाता है ।[2]जातकर्म संस्कार के अन्तर्गत शिशु के जन्म के उपरान्त मागध, सूद एवं बन्दीगण विरूदावली गाते हैं और हर्षित होकर नेग के लिए लड़ते हैं ।[3] मुसलमान शिशु के जन्म के बाद नवजात शिशु के कान में अजान}प्रार्थना} करते है ।[4]

छठी समारोह : शिशु जन्म के छठें दिन जो उत्सव मनाया जाता है उसे छठी के नाम से जाना जाता है ।[5] इस दिन शिशु के जन्म के उपलक्ष में विविध वाद्ययंत्रों के साथ } एक विशेष प्रकार का} गीत गाया जाता है जिसे सोहर या सोलहें कहा गया, नृत्य आदि के माध्यम से प्रसन्नता व्यक्त की जाती

1- डुबाएस, हिन्दू मैनर्स, पृ0 155

2- साही सबै आये ग्यानसागर गरम मुनि, गुन के नियानयोगीजोतिषविशेष हो
× × ×
जनम मुहूरत सुमुहूर्त मंगल देव मनोरथ पूरत, विचारि अपरेरवहो ।
देव कृत देवचरित्र, पृ0 5 छं0 12, डुबाएस, हिन्दू मैनर्स, कस्टम एण्ड, सेरेमनीज, पृ0 151 ।

3- घनाआनंद, पृ0 23।

4- कानून-ए-इस्लाम, पृ0 24, मुहम्मद यासीनःए सोशल हिस्ट्री ऑफ इस्लामिक इंडिया, पृ0 63

5- मनूची, स्टोरिया द मोगोर भाग3, पृ0 150, कानून-ए- इस्लाम, पृ0 35-37, मिसेज मीर हसन अली, आब्जरवेशन्स.....पृ0 212 तथा मुहम्मद यासीन ए सोशल हिस्ट्री ऑफ इस्लामिक इंडिया पृ0 63,

घौंसा घुघक ढोल ढमकारति । इत नट नचनिपुलकि किलकारति ।
गायक विविध सोहिले गावनत । ....।

छठी का उत्सव हिन्दू तथा मुसलमान दोनों ही मनाते हैं ।[2]

<u>नामकरण संस्कार</u> :- जैसा कि इस संस्कार के नाम से ही स्पष्ट है कि इस संस्कार के अन्तर्गत नवजात शिशुओं एक नाम दिया गया है इसे ही नामकरण संस्कार के नाम से सम्बोधित किया गया।[4] यह संस्कार कब सम्पन्न किया जाता है इस पर मतभेद दिखाई पड़ता है। कोई इसे जन्म के दस दिन बाद तथा कोई जन्म के बारह दिन बाद तथा कोई जन्म के दिन ही [नाम दे दिया जाता था] सम्पन्न किया जाने वाला संस्कार बताते है ।[5] नामकरण संस्कार के शुभ अवसर पर संबंधियों को बुलाया जाता है तथा उन्हें भोजन भी कराया जाता है । तत्कालीन समाज में इस अवसर पर आमंत्रित लोगों को किस प्रकार भोजन कराया गया इसका दृश्य इस प्रकार है:

जैंवत अहीर, नंद मंदिर गहीर भीर, भोजन परोसिबे कोघोर सबरेफिरै
कढ़ी ओरओरी, परसत बरजोरी, भरे भात झकझरी, झोरी झलि झबरे फिरै ।

1- घनानंद ग्रंथावली पृ0 231

2- मनूची, स्टोरिया द मोगोर, भाग 3, पृ0 150, मीर हसन अली: आब्जरवेशन्स... पृ0 212, मुहम्मद यासीन, ए सोशल हिस्ट्री, पृ0 63

3- माया के चरित जाके जानत न वेद सो अजान, नामु धरै ता निरीह नर हरि को -
देव ग्रंथावली - देव चरित्र पृ0 5 छं0 ।।
जे0ए0 डुबाएस हिन्दू मैनर्स..... पृ0 156, कानून-ए- इस्लाम, ऑन द मुस्लिम मेन एण्ड द मैनर ऑफ मेमिंग पृ0 26, 29, 33, 34 ग्रोस, पृ0 99, तथा आईन भाग3, पृ0317

4- डुबाएस हिन्दू मैनर्स........पृ0 156

5- ओविंगटन ए व्वायेज टू सूरत [अनु0 एस0एस0 रॉलिन्सन] 1929, पृ0 197 डुबाएस हिन्दू मैनर्स.....पृ0 156 हार्कलॉट इस्लाम इन इण्डिया पृ0 26, मनूची स्टोरिया....भाग2, पृ0 343 ।

माखन मलाई, खाँड खीर सिरिखरनि वहो, मही दूध दही मिले, राबर बरे फिं
पौढ़े जग्यनायक, अंगूठनि को चूसत, दसूठनि को जूठनि को देव दबरे फिरें ।[1]

नामकरण संस्कार के पश्चात् "अन्न प्राशन" नामक रस्म अदा की जाती है ।[2]
इसरस्म को तब किया जाता है जब शिशु छह माह का हो जाता है [3] इस
संस्कार को पूर्ण करने के लिए प्रथम बार शिशु को अन्न खिलाया जाता है [4]
तत्कालीन मध्ययुगीन कवि ने इस पासनी कहा है ।[5]

अन्य संस्कारों में मध्ययुगीन समाज में "उपनयन" संस्कार महत्वपूर्ण
माना गया ।[6] इस संस्कार के पश्चात ही जनेउ धारण किया जाता है ।
अवलोकित काल में जनेऊ धारण किये जाने का उल्लेख मिलता है :

1- देव, देवचरित , पृ0 5 छं0 14

2- पाण्डेय, हिन्दू संस्कार, प0 151-57 {अन्नप्राशन का विस्तृत विवरण ।
तथा डुबाएस, हिन्दू मैनर्स कस्टम्स एण्ड सेरेमनीज, पृ0 156 ।

3- डुबाएस हिन्दू मैनर्स..... पृ0 156 ।

4- आर. बी. पाण्डेय , हिन्दू संस्कार, पृ0 151, डुबाएस, हिन्दू मैनर्स,
पृ0 156,

5- देव देवचरित, पृ0 6 छं0 15 ।

6- उपनयन संस्कार"- आर. एण्ड बी, भाग 1, पृ0 357 तथा विस्तृत विवरण
के लिए देखिए भाग 1, पृ0 16 पृ0 18 ।

सीस लटूरी कुटिल जनेउ तुलसि माला ।[1]

विवाह : विवाह को भारतीय समाज में सबसे महत्वपूर्ण संस्कार माना गया है।[2]

सामाजिक तौर पर साथ ही विवाह को जीवन की एक अनिवार्य आवश्यकता माना गया है। अविवाहित व्यक्ति को भारतीय समाज में सम्मान की दृष्टि से नहीं देखा जाता ।[3]

देश-काल एवं सामाजिक परिस्थिति के अनुसार विवाह संबंधी नैतिक मानदण्ड परिवर्तित होते रहते हैं । वैसे आठ प्रकार के विवाह माने गये है [4] जिसमें से कुछ समाजानुमोदित वैवाहिक पद्धतियाँ तत्कालीन समाज में प्रचलित थी अभिभावक वर्ग द्वारा निश्चित विवाह, इस प्रकार के विवाह अभिभावक के अनुमोदन पर होता था तथा विवाह सम्बंधी सारे निश्चय अभिभावक ही लेते है पारंपारिक तौर से यह विवाह होता था ।[5] विवाह से पूर्व पति पत्नी एक दूसरे

1- सोमनाथ ग्रंथावली, ध्रुवविनोद प्र080 पृ0552 छं0 40; पुन, वही ग्रंथावली, कादितीय खण्ड, पृ0 231छं05; सुजानविलास, पृ0 639 छं0 54; पृ0 627 छं042; [यहाँ जनेऊ कोउपवीत भी कहा गया] वही, मनूची, भाग3, पृ0 64

2- पाण्डेय, हिन्दू संस्कार, पृ0 261; दुबाएस हिन्दू मैनर्स......पृ0 205 अ सोकर पोजीशन आफवोमेन, पृ0 37; लक्ष्मीसागर वार्ष्णेय, पृ0115 ।

3- दुबाएस, हिन्दू मैनर्स, कस्टम्स एण्ड सेरेमनीज, पृ0 205 ।

4- आईन-ए अकबरी , भाग3, पृ0 338-39 ।

5- देव ग्रंथावली, रसविलास, पृ0 234छं09; भावविलास, पृ036 छं09; सोमनाथ ग्रंथावली, शशिनाथविनोद पृ0 533-34; 38; 39-40; तथा छं0 15, 21; 59, 60; 61 , 9; मनूची, स्टोरिया द मोगोर, भाग3, पृ0 152; दुबाएस, हिन्दू मैनर्स...पृ0 215 ।

से नहीं मिल सकते ।[1] इसे आदर्श विवाह माना गया है । विवाह स्वयंबर विधि द्वारा भी किया जाता था :

रूकमवती प्रद्युमन सुनाम ।।
वरे स्वयंवर में अभिराम ।।[2]

स्वयंबर विधि से विवाह करने के अलावा कवि ने प्रेम-विवाह का भी वर्णन किया है जिसमें प्रेमी इस बात के इच्छुक हैं कि उनका विवाह इच्छित व्यक्ति से ही हो इसका उल्लेख निम्न प्रकार से हुआ है :

गोप-सुता कहैं, गौरि गुसाईंन । पायं परौं विनती सुनिलीजे,

x x x

x x x

सुन्दर सांवरौ नंदकुमार, बसै उर जो वह, सो बर दीजे ।।[3]

विवाह की एक अन्य विधि प्रचलित थी, जिसे गंधर्व विवाह कहा गया। इस प्रकार का विवाह स्त्री पुरूष अपने आप कर लेते थे :

1- मनूची स्टोरिया द मोगोर भाग 3, पृ० 152

2- सोमनाथ ग्रंथावली: ध्रुवविनोद, पृ० 589 छं० 23; पृ० 562 छं० 86; पृ० 770 छं० 21; पृ० 772 छं० 31 ।

3- मतिराम ग्रंथावली: रसराज, कृष्णबिहारी मिश्र, छं० 63; शकुन्तला अरोरा, रीतिकालीन श्रृंगार कवियों की नैतिक दृष्टि ,पृ० 91

पै सकुंतला ने कियौ, अपनौ आप विवाह ।
धरनौ पति दुष्यंत सौं, मंडित हिये उछाह
और अनेकनि किए यौं अपने ब्याह बिलास ।
है मेरे उपदेश मैं साहस कौ आवास ।[1]

आमतौरपर तत्कालीन समाज मैं विवाह परम्परागत रूप से किया जाता था । सर्वप्रथम ज्योतिषी बुलाकर शुभसगुन काविचार करके तब विवाह कामुर्हूत निकलवाया जाता था:

प्रानमाथ ज्योतिषी बुलायौ । ताहौ छन तासौ फरमायौ ।
सगुन सुमंगलन विचारो । रचि सुमुहरत सब सुखकारो ।[2]

मुर्हूत निकलवाने के बाद वैवाहिक संबंधी दिन तारीख निश्चित किये जाते हैं ।[3] विवाह से पूर्व फलदान[4] [तिलक] नामक रस्म अदा की जाती है। विवाह से पूर्व अन्य कई रस्मैं होती है विवाह वाले घर मैं मंडप[5] बनता है·~~हरित बाँस सुभ साजा~~ ।
हरित बाँस मंडफ सुभ साजा । आम्रन पल्लव छाय विराजा 5

1- सोमनाथ ग्रंथावली: माधवविनोद, पृ0 361 छं0 115, देव और उनकी कविता डॉ0 नगेन्द्र पृ0 51

2- बोधा: विरह वारीश, पृ0 211 छं0 मधुप्रकाश, हिन्दू मैनर्स कस्टम्स एण्ड सेरेमनीज, पृ0 216

3- दुबाइस, हिन्दू मैनर्स कस्टम्स एण्ड सेरेमनीज, पृ0 215

4- बोधा विरह वारीश, पृ0 223 छं0 23, 223/19 के0 एम0 अशरफ लाइफ एण्ड कंडीशन आफ द पीपुल आफ हिन्दुस्तान, पृ0 147 ।

5- मंडप, बोधा विरह वारीश, पृ0223छं0 26 [मंडप हरे बाँस काबनता था उसके ऊपर पातफूल से ढके छाते थे] पृ0 323, 28 पृ0 223 छं0 29, पृ0 225 छं015 मंडप को मंडवा भी कहा गया। मनूची, स्टोरिया द मोगोर भाग3, पृ0 62 तथा पृ0 55 ।

तिलक के दिन पंडित लगन लिखते हैं उसी के अनुरूप अन्य वैवाहिक कार्यक्रम निश्चित होती है ।[1] दोनों को अर्थात् वर तथा वधू दोनों को (हल्दी चावल) पीले कपड़े का कंगन बंधा जाता है । कंगन एक हाथ में ही बांधा जाता है :

कंकन एक हाथ में बांध्यौ । ....।[2]

वर तथा वधू दोनों को तेल चढ़ाया जाता है इस अवसर पर स्त्रियाँ मंगलगीत तब तक गाती रहती हैं जब तक यह रस्म चलती रहती है :

मोदभरी मंगल सब गावैं । एक तोया तेल चढ़ावैं ।[3]

विवाह के समय पुरोहित पूजा-पाठ करवाते हैं ।[4] मंडप कंल्सा रखा जाता है ।[5] विवाह में कुटुंबजन संबंधियों को आमंत्रित किया

1- लिखी लगन पंडित गुर ज्ञानी । सोध मुहूरत अति सुखदानी,
बोधा विरह वारीश, पृ0 222, छं0 9, 222/10, डुबाइस हिन्दू मैनर्स 216

2- सोमनाथ ग्रंथावली शशिनाथविनोद, पृ0 527छं0 31, माधव विनोद पृ0 469 छं0 104, डुबाइस हिन्दू मैनर्स, ..पृ0 222 ।

3- सोमनाथ ग्रंथावली शशिनाथ विनोद पृ0 525/29, 527/30, बोधा विरह वारीश, पृ0 224 छं0 32, पृ0 223 छं0 30 डुबाइस, हिन्दी मैनर्स कस्टम्स एण्ड सेरेमनीज पृ0 218

4- गनपति पावक पूजिकै समिध सुपारी पान ।
परि भाँवरि रतिनाथ के बहुविधि को विधान ।
-बोधा विरह वारीश, पृ0 225 छं013, सोमनाथ ग्रंथावली, शशिनाथ विनोद, पृ0 538 छं0 59,
प्रथा वेद की विध में उचरी और रीति घोंहे ते सचरी पृ0 526 छं028, डुबाइस, हिन्दू मैनर्स, कस्टम्स एण्ड सेरेमनीज, पृ0 221, पृ0 222

5- द्वार कलस मंडप माँह सोहैं । जगमग सब और होई ।
बोधा ग्रंथावली पृ0 223 छं0 29, वि0 वा0 पृ0 222 छं0 17, सोमनाथ ग्रंथावली : शशिनाथ विनोद, पृ0 526 छं0 28,
डुबाइस हिन्दू मैनर्स ..... पृ0 219

जाता है ।[1]

विवाह के अवसर पर तरह-तरह के भोजन बनवाये जाते है ।[2]
विवाह के समय सबसे महत्वपूर्ण रस्म"कन्यादान" को मानो गयी है जिसे पाणिग्रहण संस्कार भी कहा गया है ।[3] इस समय भी गीत गाये जाते हैं । दोनो के (वर एवं वधू के) भाँवरि या फेरे [4] होते हैं ;

1- ....। कुटुंब सनेही सब बुलवाये ।
-बोधा वि० वा० पृ० 222 छं० 11, पृ० 224-छं० 33; डेलावैली, पृ० 430 पृ० 431 ; डुबाएस, हिन्द मैनर्स, पृ० 218

2- बनो असरफी से रबड़ी अरू पेरा ।
मोदक मगद मलूक और मट्टे पहें सेरा ।
औरो साज अनेक और फल खट्टे मीठे ।
षटरस व्यंजन सकल भाँति के बने इकट्ठे ।।
- सोमनाथ ग्रंथावली, शशिनाथविनोद पृ० 524/4; बोधा: विरह वागोश, पृ० 224 छं० 33; 224 छं० 34; पृ० 224छं० 35; डुबाएस, हिन्दू मैनर्स ...., पृ० 226 पृ० 277; मनूची , भाग3, पृ० 57

3- सोमनाथ ग्रंथावली:{महादेव ब्याहुलो} शशिनाथ विनोद पृ० 526छं031; माधव विनोद, पृ० 412 छं09; बोधा:बिरहवागोश पृ० 223 छं० 21; आईन, भाग3, अनु. सरकार पृ० 337 -342; डुबाएस, हिन्दू मैनर्स...पृ० 223

4- सोमनाथ ग्रंथावली, शशिनाथ विनोद, पृ0538, छं0 59; बोधा:विरह वागोश, पृ० 225 छं010; पृ० 225 छं० 13

जिसमें वर-वधू सात बार अग्नि को साक्षी मानकर उसके समक्ष चारों ओर घूमते हैं ।[1] विवाह सम्पन्न होने के बाद दूसरे दिन भात की रस्म होती है । इसमें मंडप के नीचे वर तथा उसके संबंधियों को भात (दही, बड़ा, भात आदि) खाने को दिया जाता है :

दूजे पुन सब कुटुँब बुलायो । बरा भात मड़वा को खायो ।[2]

इस अवसर पर स्त्रियाँ गीत गाती है । भात की रस्म के बाद वर तथा उसके संबंधियों को कुछ उपहार दिया जाता है जिसे (टीका) कहा गया ।

विवाह के अवसर पर बाजे संगीत तथा आतिसबाजी आदि का प्रदर्शन होताहै :

नौबत बजी भई असवारी । आतसबाजी त्यों उजियारी ।[3]

1- सोमनाथ ग्रंथावली: शशिनाथ विनोद, पृ0 538 छं0 59, बोधा वि0 वा0 पृ0 225 छं0 10, पृ0 225 छं0 13

2- बोधा: वि0 वा0 पृ0 224 छं0 33; पृ0 212 छं0 23; पृ0 226 छं0 17; जनरल पंजाब हिस्ट्री सोसा. भाग 10, पृ0 1, पृ0 3; बाहवालपुर के खत्री भी इस परम्परा को मनाते हैं (बाहवालपुर गजेटियर 1904, पृ0 114

3- बोधा: वि0 वा0 पृ0 225 छं0 5; सोमनाथ ग्रंथावली, शशिनाथ विनोद, पृ0 533 छं0 15; हेलावेली, पृ0 पृ0 30-431; मनूची: स्टोरिया, भाग3, पृ0 150-151; डुबाएस, हिन्दू मैनर्स ....., पृ0 224

विवाह के अवसर पर सबको पान जरूर बाँटा जाता है :

सबहिन को बीड़ा[पान] दिये । बड़ी प्रीति के साथ ।[1]

विवाह के रस्म में "गौने" का उल्लेख मिलता है :

गौनें को अब रीति करावौ ।

गाँठि जोरि के सुख बरसावौं ।।[2]

अवलोकित काल में विवाह के अवसर पर दान दहेज की प्रथा का उल्लेख मिलता है ।

1- बोधा विरह वागीशः पृ0 226 छं0 18, पृ0 221 छं0 24, पृ0 223 छं0 23, भिखारीदास ग्रंथावली पृ0 229 छं0 46, देव सुखसागर तरंग, 92 छं0 268 देव अष्टयाम पृ0 7छं0 7 भावविलास पृ0 126 छं02, सोमनाथ ग्रंथावली रसपीयूषनिधि पृ0 126 छं0 16, मुहम्मदयासीन ए सोशल हिस्ट्री ऑफ इस्लामिक इंडिया, पृ0 65, दुबाएस हिन्दू मैनर्स कस्टम्स एण्ड सेरेमनीज, पृ0 217

2- सोमनाथ ग्रंथावलीः शशिनाथ विनोद पृ0 540 छं0 9, देवग्रंथावली, भाव विलास, पृ0 36 छं0 9, रसविलास, पृ0234 छं0 12, पृ0 234 छं09, मतिराम सतसई, पृ0 384 छं0 195 पृ0 390 छं0 262 पृ0 392 छं0 289, मतिराम रसराज, पृ0 257 छं0 242 पृ0 248 छं0 208 पृ0 230 छं0 134 पृ0 256 छं0 241 छं0 269 छं0 296 पृ0 82 छं0 141

अलौकिक काल में विवाह के अवसर पर दान-दहेज[1] दिये जाने का भी उल्लेख मिलता है । दहेज में विभिन्न प्रकार के वस्त्र, आभूषण गाय, स्त्री, हाथी रथ घोड़े हीरा, जवाहर आदि दिये जाने का वर्णन कवियों ने किया है ।[2]

1- सोमनाथ ग्रंथावली ब्रजेंदविनोद ,पृ0 645 छं0 68, 560/ 74 शशिनाथविनोद, पृ0 522 छं0 79, बोधा विरह वारीश:पृ0 222 छं0 14, थैवनॉट पृ0 248, मैन्डोलसलो,पृ0 62, मनूची स्टोरिया.. भाग 3, पृ0 152 बार्टोलोमियो,पृ0 272 ।

2- दई दायजे दूध दिवैया ।।
दस हजार अति सुन्दर गैयाँ ।।
दीन्हीं तीनि हजार लुगाँई ।।
कंठनिक भूषन छवि छाँई ।
अरु बहुरँगनि सबै दुकूलनि ।।

.   .

.   .

नव हजार अरु हाथी दीने।
सतन सुभ नव ते र रथ कीनीनें
रत्थनि तें सत गुनें तुरँगा।
हय ते सत गुन नर सुभ अंगा ।।

- सोमनाथ ग्रंथावली: ब्रजेंदविनोद पृ0 560 छं0 74; माधवविनोद,पृ0 412 छं0 9; बोधा;विरह वारीश,पृ0 222 छं0 14; पृ0 155;मआसीर-ए-आलमगीरी,भाग 1, पृ0 404 ;आईन-ए अकबरी, भाग3 [जैरिट]पृ0 677-678] ।

दहेज की इस कुप्रथा का बोझ गरीब वर्ग के लोग उठाने में असमर्थ थे । कभी-कभी तो विवाह के लिए गरीब वर्ग जो कर्ज लेता था उसे जीवन भर नहीं चुका पाता था ।[1] संभवतः दहेज और अन्य सामाजिक धार्मिक कारणों से प्रेरित होकर लोग बाल विवाह कर देते होंगे । अधिकांश बाल विवाह सात-आठ वर्ष की आयु में होता था । अवलोकित काल में बाल विवाह का उल्लेख मिलता है:

पारबती सु चौक बैठारी । आठ बरस की गुन उजियारी ।[2]

बाल विवाह के अतिरिक्त एक अन्य कुप्रथा भी उसमें प्रचलित थी वह है बहुविवाह :

एको मोहि करी पिय सौतरी सौतरी से उन्हें दूसरी कीनी [3]

1- जनरल ऑफ रॉयल एशियाटिक सोसाइटी [बम्बई] भाग 3, पृ0 15; वार्टोलोमियो, पृ0 272 ; दुबाएस, हिन्दू मैनर्स, कस्टम्स एण्ड सेरेमनीज पृ0 230

2- सोमनाथ ग्रंथावली: शशिनाथ विनोद, पृ0 526 छं0 27; अल्तेकर, पोजीशन आफ वीमेन इन इंडिया पृ0 68-73; ग्रौस, 1, पृ0 194; कालीकिंकरदत्त: सर्वे ऑफ इंडियास सोशल लाइफ एण्ड ऐकोनामिक कंडीशन इन द ऐट्टीन्थ सेन्चुरी [1707-1813] पृ0 60; दुबाएस, हिन्दू मैनर्स, पृ0 212

3- कविलोक और उनका सुधानिधि, सं0 डॉ0 सुरेन्द्र माथुर, छन्द 47, पृ0 61; मतिराम ग्रंथावली: [सतसई] छं0 9; देवसुधा, मिश्रबंधु छं0 20%; देव-शब्द-रसायन सं0 जानकीदास सिंह मनोज, पृ0 117; कालीकिंकरदत्त, सर्वे ऑफ इंडियास सोशल लाइफ एण्ड एकोनामिक कंडीशन इन द ऐट्टीन्थ सेन्चुरी [1707-1813] पृ0 61; दुबाएस हिन्दू मैनर्स, पृ0 207-8

वैसे तो सामान्य तौर पर एक विवाह को ही सर्वत्र नैतिक समझा जाता है किन्तु इस विषय में देश और काल के अनुसार सामाजिक लोकाचारों का रूप भिन्न-भिन्न हो सकता है क्योंकि कहीं समाज का एक वर्ग केवल एक पति एवं एक पत्नी की अनुमति देता है जबकि अन्यत्र इसका रूप भिन्न हो जाता है जैसा कि प्राचीन साहित्य में मिलता है ।[1] मुसलमानी देशों में एक पति कम से कम चार पत्नियाँ रखने का अधिकारी है और कहीं इससे भी अधिक पत्नियाँ रखने की व्यवस्था समाज ने दी है ।[2]

किन्तु अधिक पत्नियाँ रखने के कुछ कारण या नियम रहे होंगे यथा, बहुपत्नीत्व उसी दशा में मान्य है जब स्त्री बाँझ हो अथवा उसे पुत्र न होकर पुत्रियाँ ही हों :

> गुरुजन दूजे ब्याह कौं, प्रतिदिन कहत रिसाइ ।
> पति की पत राखै बहू, आपुन बाँझ कहाइ ।।[3]

1– विप्रश्चतस्त्रो विन्देत– भार्यास्तिस्त्रस्तु भूमिपः।
द्वे च वैश्योयथाकाम भार्यैकामपि चान्त्यजः।।
[विप्र के लिए चार क्षत्रिय के लिए तीन वैश्य के लिए दो तथा शूद्र के लिए एक भार्या की अनुमति दी गयी है।
अग्निपुराण [प्रथम खण्ड] [सं0 श्रीरामशर्मा आचार्य, 59/1] [शकुन्तला अरोरा रीतिकालीन शृंगार कवियों की नैतिक दृष्टि पृ082]

2– एच वाइटले, लेडी एण्ड मास्टर्स, पृ0 10; शकुन्तला अरोरा, रीतिकालीन शृंगार कवियों की नैतिक दृष्टि पृ083

3– मतिराम सतसई [मतिराम] छं0 ९; शकुन्तला अरोरा, रीतिकालीन शृंगार कवियों की नैतिक दृष्टि, पृ0 84; दुबाएस, हिन्दू मैनर्स, पृ0207-8 वात्सायन, कामसूत्र ......पृ0 61

इसी प्रकार यह प्रथा सामाजिक आर्थिक प्रतिष्ठा से भी संबंधित रही ।[1]

वास्तव में बहुविवाह सम्पन्न वर्ग के लोगों अर्थात् शासक सामंतों आदि में प्रचलित थी ।[2] क्योंकि गरीब वर्ग इसका भार नहीउठा सकता था सामाजिक-आर्थिक रूपसे वह असमर्थ था । समाज की स्म व्यवस्था भी इस बात को पुष्टि करती है ।[3]

विवाह संस्कार को संतानोत्पत्ति एवं गृहस्थ धर्म को पालन की भावना को लेकर जीवन में अनिवार्य रखा गया है:

ब्याहो कुल आचार सों सुद्ध सुकीया वाम ।

सुब सेवा संतान हित जस रस निर्मल नाम ।।[4]

अंतिम संस्कार अन्त्येष्टि संस्कार माना गया जिसमें व्यक्ति को अपने-अपने देश में परम्परानुसार पंच तत्त्व में विलीन कर दिया जाता है ।[5]

1- भारत में समाज शास्त्र प्रजाति और संस्कृति सं0 गौरीशंकर भट्ट, पृ0 675/ राखी कैद नारीन को अब दिवाय समुझाय, बोधा, विरह वारीश पृ0 39

2- डुबाएस हिन्दू मैनर्स, कस्टम्स एण्ड सेरेमनीज पृ0 206 तथा पृ0 368; काशीशंकर दत्त, सर्वे आव ....पृ061; शकुन्तला अरोरा, रीतिकालीन शृंगार कवियों की नैतिक दृष्टि, पृ0 92 ।

3- काशीशंकरदत्तः सर्वे आफ .....पृ056

4- देव ग्रंथावली [सुजानविनोद] लक्ष्मीधर मालवीय. 2/92; तथा वही ।

5- विस्तृत विवरण आर.बी. पाण्डेय, हिन्दू संस्कार ।

आठवाँ अध्याय

आर्थिक-स्थिति

आर्थिक - स्थिति

" हिन्दुस्तान की विशेष उत्तमता यह है कि यह विस्तृत देश है। यहाँ चाँदी और सोने की विपुलता है। हिन्दुस्तान में दूसरी सुविधा यह है कि यहाँ प्रत्येक व्यवसाय और उद्योग के कारीगर अगणित मिलते हैं। प्रत्येक काम के लिए कई ऐसे लोग तैयार रहते हैं जिनमें यह काम वंश-परम्परा से चला आया है।[1]

इस प्रकार भारत के प्रमुख आर्थिक स्त्रोत कृषि, व्यापार एवं वाणिज्य थे। किन्तु 17वीं शताब्दी से ही भारत में कृषकों की दशा शोचनीय हो गयी। तत्कालीन विदेशी यात्री के विवरण से कृषि की अवनत दशा पर प्रकाश पड़ता है।[2] जिससे ज्ञात होता है कि इस युग में कृषक कृषि छोड़कर नगरों की ओर आकृष्ट होने लगे थे। अट्ठारहवीं शताब्दी तक जागीरदारों के आमिलों एवं जागीरदारों के अत्याचारों के कारण कृषक कृषि के प्रति और भी उदासीन हो गये थे।[3]

इसके अतिरिक्त मराठा-जाट एवं विभिन्न सैनिक विद्रोहों के मध्य फसलें नष्ट हो जाती थीं[4] तथा समय-समय पर अनावृष्टि तथा अतिवृष्टि के प्राकृतिक

1- इलियट एण्ड डाउसन, द हिस्ट्री आफ हिन्दुस्तान, भाग 4, पृ0 221-223

2- बर्नियर, पृ0 205, मनूची, स्टोरिया द मोगोर, भाग 4, पृ0 451

3- कामोर्डिकर हसन, सर्वे आफ इंडियाज़ सोशल लाइफ एण्ड एकोनॉमिक कंडीशन इन द ऐट्टीन्थ सेन्चुरी 1707-1813, पृ0 110

4- खाफी खाँ, मुन्तखब-उल-लुबाब, इलियट एण्ड डाउसन, भाग 7, पृ0 294-96

प्रयोग भी अच्छी उपज के लिए बाधक सिद्ध होते थे ।[1]

उत्तर मुगलकालीन सम्राटों को भी कृषि की उन्नति के लिए उल्लेखनीय कार्य करने का अवसर प्राप्त नहीं हो पाया । यद्यपि फर्रुखसियर के समय में 1717 में इनायत उल्ला काश्मीरी ने सुधार का प्रयत्न किया किन्तु 1718 के लगभग दिल्ली एवं बंगाल के प्रान्त में दुर्भिक्ष पड़ जाने के कारण स्थिति अत्यधिक गंभीर हो गयी थी, असंख्य लोग - भूखों मर गये तथा उन्हें अपनी संतानों को बेचने के लिए बाध्य होना पड़ा । एक वर्ष पश्चात् स्थिति सामान्य हो सकी और 1719 में अपेक्षाकृत मूल्यों का स्तर गिरा ।[2]

किन्तु, दुर्भिक्ष समाप्त हो जाने पर भी कृषि के समुचित साधनों के प्रयोग न होने के कारण अधिक अनाज नहीं उत्पन्न होता था अतः भारत में विशेषकर दिल्ली में अनाज मँहगा था । 1758 में अनाज की मँहगाई की यह दशा थी कि रुपये में केवल 9 सेर गेहूँ मिलता था मूँग की दाल रुपये को आठ सेर, उड़द की दाल रुपये में पाँच सेर थी ।[3]

देश के सभी भागों में इस प्रकार की आर्थिक अवस्था नहीं थी । कुछ क्षेत्र आर्थिक दृष्टि से सम्पन्न थे । जैसे अवध भौगोलिक दृष्टि से धनधान्य

1- डब्लू० इर्विन: फर्रुखसियर एण्ड हिज टाइम्स, पृ0 361-62

2- डब्लू० इर्विन: फर्रुखसियर एण्ड हिज टाइम्स, पृ0 361-62

3- सर यदुनाथ सरकार: फाल ऑफ दमुगल इम्पायर, भाग 2, पृ0 154

पूर्ण था, यहाँ गेहूँ चावल, जौ, चना , मक्का, बाजरा तिलहन तथा अन्य धान्य की बड़ी फसलें उत्पन्न होती थी, रूई, अफीम तथा गन्ना आदि भी यहाँ के अधिकांश भागों में उत्पन्न होते थे ।[1]

दिल्ली में विभिन्न प्रकार के बाजार, (भी लगते थे।) उच्चवर्गीय स्त्रियाँ भी दुकानें लगाती थी :

" बैठती दुकान लैके रानी रजवारन की "[2]

मिर्जापुर : मिर्जापुर ऊनी एवं रेशमी वस्त्रों की तथा काश्मीर, नैनीताल आदि स्थानों की वस्तुओं की बड़ी मण्डी मानी जाती थी ।[3] यह कस्बा धनी व्यापारियों से भरा पड़ा था जो स्थानीय उपजों तथा निर्मित वस्तुओं को विभिन्न प्रान्तों को भेजते तथा बाहर से अन्य वस्तुएँ मंगाते थे । मिर्जापुर फलों तथा शाक की प्रथम श्रेणी की मण्डी थी ।[4] रूई के व्यापार के लिए भी यह महत्वपूर्ण मंडी थी ।[5]

गोरखपुर - गोरखपुर में चावल, घी, काँच के बर्तन , मुर्गियाँ आदि मिलती थीं।[6] पहाड़ियों के लोग सोना, काँच के गहने, शहद, मोम , कस्तूरी,

---

1- डॉ0 आशीर्वादी लाल श्रीवास्तवः अवध के नवाब, पृ0 275

2- भूषण ग्रंथावली: पृ0 98, बाजारों के विशद विवरण हेतु , डॉ0 मुहम्मद उमर: हिन्दू तहजीब पर मुसलमानों का असर, पृ0 487-891

3- डा0 आशीर्वादीलाल श्रीवास्तवः अवध के नवाब, पृ0 275

4- वही

5- ट्रैवेर्नियर, ट्रैवेल्स इन इंडिया, पृ0 156

6- डॉ0 आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव,अवध के नवाब, पृ0 276-277

अंगूर, मिर्च, लहसुन, अदरक, सौंठ, अनार तथा शिकारी लोग चिड़िया आदि बेचने के लिए आते थे ।[1]

गाजीपुर, जौनपुर : गाजीपुर और जौनपुर के कस्बे विभिन्न प्रकार के इत्रों एवं सुगंधित तेलों के लिए प्रसिद्ध थे । इसके अलावा कपड़ों में झोना तथा महरगुल नामक कपड़ा खूब बुना जाता था ।[2]

फैजाबाद : फैजाबाद भी एक महत्त्वपूर्ण आर्थिक केन्द्र था ।[3] अवध की स्वतंत्र सत्ता स्थापित होने पर बुर्हानुल्मुल्क ने अयोध्या से चार मील की दूरी पर घाघरा नदी के तट पर एक ऊँचे स्थान पर चारों ओर कच्ची दीवार बनवा कर मध्य में बस का एक बंगला बनवाया था तथा बेगमों के लिए कच्चे महल बनवाए और इस बस्ती का नाम "बंगला" पड़ गया । यह स्थान सफदरजंग के समय में फैजाबाद के नाम से प्रसिद्ध हुआ तथा अवध की राजधानी बन गया, इस बंगले के चारों ओर उमरा तथा विभिन्न वर्ग के लोगों ने मकान और बाजार बनवाये तथा फैजाबाद का महत्त्व तीव्र गति से बढ़ने लगा । सफदरजंग के पश्चात् नवाब शुजाउद्दौला ने प्रारम्भ में लखनऊ बसाकर उसे राजधानी बनाया अतः फैजाबाद की शोभा कम होनेलगी किन्तु शुजाउद्दौला वर्ष में दो-तीन बार फैजाबाद अवश्य जाता रहा तथा नवाब अहमद खाँ बंगश के परामर्श पर पुनः फैजाबाद को राजधानी

1- वही,

2- ट्रेवेनियर: ट्रैवेल्स इन इंडिया, पृ067-68

3- डॉ0 आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव, द्वितीय भाग, पृ0 343

बनाया तथा पुराने कच्चे चहारदीवारी के स्थान पर नवीन सिरे से शहरपनाह बनवायी । उसके प्रयत्नों से इस नगर और बस्ती की अत्यधिक उन्नति हुयी तथा यह नगर दूसरी दिल्ली का रूप धारण कर लिया। दिल्ली के लोगों ने दिल्ली छोड़कर फैजाबाद में बसना प्रारम्भ कर दिया । कुछ ही दिनों में फैजाबाद अत्यन्त समृद्ध नगर बन गया ।[1]

फैजाबाद की आर्थिक स्थिति का आँखों देखा वर्णन किसी ने इस प्रकार किया है :

" जब मैं सर्वप्रथम घर छोड़कर फैजाबाद गया तो अभी मुमताज नगर तक ही पहुँचा हूँ जो नगर से चार मील की दूरी पर है। मैंने देखा बाजार लगी है, एक पेड़ के नीचे विभिन्न प्रकार की मिठाइयाँ गर्मागर्म खाने, कबाब, सालन, रोटियाँ, पराठे आदि बिक रहे हैं । मानखताइयाँ, विभिन्न प्रकार के शर्बत बिक रहे हैं और सैकड़ों मनुष्य उन्हें खरीदने के लिए दुकानों पर गिर पड़ते हैं ।[2]

फैजाबाद में निर्मित कपड़ों की अत्यधिक प्रशंसा की है, टांडा में सूती कपड़ा अच्छा बनता था, घाघरा नदी की ओर से यहाँ के निर्मित कपड़े कलकत्ता तथा अन्य नगरों को भेजे जाते थे । यद्यपि 1793 में इन कपड़ों की माँग गिर गयी थी, किन्तु पुनः माँग बढ़ने की आशा थी क्योंकि यहाँ पर निर्मित

1- डॉ० आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव, द्वितीय भाग, पृ० 343-47

2- विलियम हो‌ए: मेमोयर्स ऑफ फैजाबाद, पृ० 81

कपड़े चुंगी विमुक्त, सस्ते तथा अत्यन्त उच्च श्रेणी के होते थे अतः उद्योग उसी प्रकार से चलता रहा ।[1]

कर : राज्य और खेती करने वालों के बीच संबंध स्थापित करने का "कर" एक माध्यम था । अवलोकित काल में कई प्रकार से धन वसूल किये जाते थे । कुछ राज्य कर होते थे जैसे हासिल, रिसालैं आदि । कवि ने राज्य कर रिसाल का उल्लेख इस प्रकार किया है :

> एदिल सौं बेदिल हरम कहै बार-बार,
>
> भेजना है भेजो सो रिसालैं, सिवराज जू कौं,[2]

अधिकांश कर पेशकश, जकात आदि कर मुगलों के सम्पर्क से राजस्थान में चालू हुए थे ।[3]

आयात-निर्यात कर भी लगता था ।[4] इन राज्य करआदि के अलावा पेसकस [भैंट] के द्वारा राज्य आर्थिक लाभ प्राप्त करता था :

> पेसकस लेता है प्रचंड तिलंगाने को ।[5]

1- टैवर्नियर, ट्रैवल्स इन इंडिया, पृ0318-21

2- भूषण ग्रंथावली : शिवाबावनी, पृ0 36-37 छं0 29

3- जी0 एन0 शर्मा : सोशल लाइफ इनमेडिवल राजस्थान, पृ030।

4- कालीकिंकरदत्त : सर्वे आफ इंडियाज सोशल लाइफ एण्ड एकोनॉमिक कंडीशन्स इट्टीन्थ सेन्चुरी पृ0 8।

5- सोमनाथ ग्रंथावली : दीर्घनगरवर्णन पृ0 825 छं012, भूषण ग्रंथावली : शिवराज भूषण पृ034 छं0 206, पृ0 40 छं0245 , मनूची स्टोरिया द मोगोर, पृ0 436

<u>उद्योग</u> : राजपरिवार, अधिकारी वर्ग और सैनिक विभाग की आवश्यकता समयानुकूल बढ़ने लगी, क्योंकि रहन-सहन, शासन और युद्ध के तरीकों में नया मोड़ आ गया था । ज्यों-ज्यों गाँव कच्चे माल का उत्पादन करते थे त्यों-त्यों शहरों और कस्बों में उसकी सहायता से कई उद्योग पनपते थे साथ ही सतत् युद्ध की स्थिति से, कस्बों में बस्तियाँ बढ़ने से औद्योगिक कार्य में विकास होने लगा ।[1]

अवलोकित काल में धातु कार्य ने भी बड़ी उन्नति की थी । शस्त्रों को बनाने के लिए लुहार होते थे जिनका सम्मान होता था :

त्यौं लोहे के काम सौं है लुहार को नाम ।[2]

अन्य उद्योगों में कपड़े की रँगाई का उद्योग प्रचलित था :

"त्यौं पट में अति ही चटकीलौ चढ़ै रंग तीसरी बार के बोरे ।"[3]

वस्त्रों की रँगाई के साथ बंधाई [4] जिसे बांधनू कहा जाता था तथा

1- मनूची : स्टोरिया द मोगोर, भाग 2, पृ0425, ट्रैवेनियर, भाग 2 अध्याय4, पृ0 33

2- सोमनाथ ग्रंथावली : रसपीयूषनिधि, पृ0 165 छं027, मआसिर-ए-आलमगीरी, इलियट एंड डाउसन, भाग 3, पृ0 189, भाग 7, पृ0 187, तुजुक-ए- जहाँगीरी, अनुवादक आर. एण्ड बी. पृ0 377-379 आईन-ए अकबरी, भाग2, पृ0 191-92

3- मतिराम : ललितललाम, छं0 9, तोष:सुधानिधि, पृ0 34 छं0 102, वही

4- देव : सुजानविनोद पृ0 33 छं0 8, आईन 32, ब्लाकमन, पृ0 87

छपाई [1] का कार्य भी होता था।

" वस्त्र का छपाई का कार्य इतना सुन्दर होता था कि वह कभी धुल नहीं सकता था"। [2] सोने-चाँदी के तारों द्वारा अच्छे कपड़ो पर अधिकांशतः साड़ी में (बेलबूटों को बनाने का काम होने लगा। इसे बादला, जरकसी या जरतारी कहा गया। [3] जोधपुर के खुशालचन्द का नाम भी सोने-चाँदी के कारीगरों में लिया जाता है, जो 18वीं शताब्दी में हुआ था। [4]

व्यापार-वाणिज्य का कार्य बनिया ही करते थे :

बनिक पुत्र व्योपार कुइ आयौं आनँद लद्दि। [5]

1- देव ग्रंथावली: सुखसागर तरंग, पृ० 91 छं० 264, मआसिर-ए-आलमगीरी इलियट एण्ड डाउसन भाग7, पृ० 187

2- उमाशंकर मेहरा, मध्यकालीन भारतीय सभ्यता एवं संस्कृति पृ० 106

3- देव ग्रंथावली: भाव-विलास, लालकिनारी वाली बादले कीसाड़ी"पृ०123, शब्द-रसायन, पृ० 71, जरकसी, सारी जरकस बारीभिखारीदास ग्रंथावली: प्रथम खण्ड, पृ० 119 छं० 138, देव ग्रंथावली: शब्द-रसायन, पृ० 25, पृ० 96, सुजानविनोद, पृ० 47 छं० 5, "जरतारी " सारी जरतारी, मतिराम: ललितललाम, छं० 90, भिखारीदास ग्रंथावली: प्रथम खंड, पृ० 36 छं० 249, देव:राग रत्नाकर, पृ० 15 छं० 62, सुखसागर तरंग, पृ०98छं० 285

4- गोपीनाथ शर्मा: राजस्थान काइतिहास, पृ० 493

5- सोमनाथ ग्रंथावली: सुजानविलास, पृ० 807, छं07, दीर्घनगर वर्णन, पृ० 820 छं० 18, माधवविनोद, पृ० 699, छं० 20, पृ० 708, छं० 24, रामकलाधर 442छं0 14 देव ग्रंथावली: सुखसागर तरंग, पृ० 93 छं० 271, मुहम्मदयासीन:ए सोशल हिस्ट्री आफ इस्लामिक इंडिया, पृ085, कालीकिंकरदत्त, सर्वे ऑफ इंडियाज सोशल लाइफ एण्ड एकोनामिक कंडीशन इन द एटीन्थ सेन्चुरी, पृ० 43, बहादुरनामा, पृ० 313-14, ट्रैवेर्नियर, ट्रैवल्स इन इंडिया भाग2 पृ० 144

कवियों ने स्त्रियों को भी कई प्रकार के व्यवसाय करते हुए दिखाया है तथा व्यवसाय के अनुरूप उनके नाम की संज्ञा भी दी है जैसे: तमोलिनि

रंगित चोलो ते ढोलो बरी चुनि, चाइनों गाँठि उचेरिअमेठो
ऊँचो दुकान पै बेंचत पान, तमोलिनि ....।[1]

इसी प्रकार हलवाइनि का उल्लेख हुआ है :

हाट के ऊपर, हाटक बेलि सी, बेंचति है हलुआहलवाइनि [2]

इसी प्रकार चुरिहारिन[3] (चूड़ी बेचने का व्यवसाय करने वाली) गन्धिन[4] (इत्र का व्यवसाय करने वाली) बढ़इनि[5], (लकड़ी का सामान बनाने वाली)

1- देव ग्रंथावली: सुखसागर तरंग, पृ0 92 छं0 269

2- देव ग्रंथावली: सुखसागर, पृ0 93 छं0 270

3- चुरिहारिन-
लाल चुरी तेरे अली लागी निपट मलीन
हरियारी करि देउँगो हौं तो हुकुम - अधीन
- भिखारीदास ग्रंथावली: रससारांश, पृ0 30 छं0 208;
देवग्रं0: सुखसागर तरंग, पृ0 94 छं0 279

4- गन्धिन - देव ग्रंथावली सुखसागर तरंग, पृ0 92 छं0 267,
भिखारीदास ग्रंथावली: रससारांश पृ0 32 छं0 22

5- बढ़इनि -
देव ग्रंथावली: सुखसागर तरंग, पृ0 94 छं0 277

दरजिनि[1] [कपड़ो की सिलाई कढ़ाई करने वाली] कुम्हारिनि[2] [मिट्टी के बर्तन बनाने वाली] सुनारिनि[3] [सोने-चाँदी का व्यवसाय करने वाली] आदि विभिन्न प्रकार की स्त्रियों का उल्लेख मिलता है किन्तु अधिकांश उद्धरणों से यह पता नहीं चलता कि कौन सी स्त्री अपने पति के कारण व्यवसाय में संलग्न थी और कौन सी उस व्यवसाय को स्वतंत्र रूप से करने के कारण उक्त संज्ञा से अभिनन्दीत थी ।

विभिन्न पेशों के अन्तर्गत कवि ने बैधक[4] का उल्लेख किया है ।

आयात- निर्यात : व्यापारी विभिन्न वस्तुओं का आयात -निर्यात करते थे यथा: नमक, सुपारी, घी, चावल, बांस, मछली, अदरक, चीनी, तम्बाकू मदिरा, आदि ।[5]

1- "दरजिन" अंतरपैठि छुई पट के, कवि देव निरंतर ता उर आनै ।

x x

कौन्हुरी कै जिनको दरवै, दरजी की बहू, बरजो नहिं मानै ।
-देवग्रंथावली: सुखसागरतरंग पृ0 93 छं0 27

2- कुम्हारिन " देवग्रंथावली: सुखसागर तरंग, पृ0 93 छं0 272

3- "सुनारिन " भिखारीदास ग्रंथावली: रससारांश, पृ0 38 छं0 205; देव ग्रंथावली: सुखसागर तरंग, पृ0 92 छं0 266

4- बैधक: विरह वागीश, पृ0 107 भिखारीदास ग्रंथावली: रससारांश; पृ0 32 छं0 221

5- कालीकिंकर दत्त: सोशल लाइफ एंड एकोनामिक कंडीशन इन द येट्टीन्थ, सेन्चुरी , पृ0 79

अन्य देश – विदेश से जो आयात-निर्यात होता था उसमें विशेषकर बंगाल से मालाबार पर्शिया, चीन तथा अफ्रीका आदि देशों को रूई[काटन] कालीमिर्च, नशीले पदार्थ, फल कच्चा रेशम, चावल, अदरक, हल्दी आदि भेजे जाते थे ।[1] चावल और चीनी विशेष रूप से बंगाल से इन देशों को भेजे जाते थे । 1756 में लगभग पचास हजार मन चीनी बंगाल से इन देशों को निर्यात हुआ था ।[2]

तम्बाकू जैसे नशीले पदार्थ से औरंगजेब के समय में 50 हजार प्रति दिन के हिसाब से कर प्राप्त किया जाता था ।[3] ऐसी स्थिति में निःसंदेह बाहर माल भेजकर अधिक लाभ प्राप्त किया जाता होगा ।

क्रय-विक्रय में दलालों का उल्लेख मिलता है [4] । दलाल उसे कहा जाता है जो क्रेता और विक्रेता दोनों से कुछ लाभ प्राप्त करके दोनों को समान उचित मूल्य पर दिलवाता है। दलाल को मध्यस्थ भी कहा जाता था ।[5]

1- कालीकिंकर दत्तः सर्वे ऑफ इंडियाज सोशल लाइफ एण्ड एकोनॉमिक कंडीशन इन द ऐटटीन्थ सेन्चुरी पृ0 77

2- वही

3- मनूची: स्टोरिया द मोगोर, भाग 2 पृ0 175

4- देवश्लेसुधा ,पृ0 125, कालीकिंकरदत्त— सोशल लाइफ एण्ड एकोनॉमिक कंडीशन इन द ऐटटीन्थ सेन्चुरी पृ0 113

5- कालीकिंकरदत्तः वही ।

भारत का विदेशी व्यापार भी उस समय प्रायः उन्हीं वस्तुओं से अधिक संबद्ध था जो उच्च वर्ग अधिक इस्तेमाल करते थे जैसेः मुख्यतः सोना चाँदी ताँबा अच्छे किस्म के ऊनी कपड़े यूरोप और फ्रांस से विशेषकर मँगाये जाते थे ।[1] खुरासाना से घोड़े आयात किये जाते थे ।[2]

व्यापार में जहाज का प्रयोग होता था । तथा

" मुगल जहाजों में यूरोप के जहाजों की अपेक्षा अधिक सामान लादा जा सकता है । --- इनमें कम्पास या क्वाड्रेण्ट का उपयोग नहीं होता, परन्तु यह भारत वर्ष से ईरान, बसरा, मोचा, मुजम्बिक, मोम्बासा, सुमात्रा, मेडागास्कर और अन्य स्थानों पर पहुँचते हैं । वे केवल ध्रुव तारे या सूर्यास्त या सूर्योदय को देखकर चलते हैं ।[3]

यद्यपि आगे चलकर विदेशी जहाजों के द्वारा व्यापार होने लगा परन्तु मुगल बादशाह नौ-सेना के प्रति लापरवाह नहीं थे । " सूरत की पहली लड़ाई के बाद भी इस शक्ति के प्रति मुगल बादशाह की रुचि समाप्त नहीं हुई और सन् 1759 से 1829 तक प्रति वर्ष मुगल बादशाह द्वारा नौसेना पर उसका एक अफसर नियुक्त किया जाता करता था, जिसका प्रधान स्थान सूरत था, जिससे वह मुगलों के व्यापारिक जहाजों की रक्षा कर सके ।[4]

1- कैम्ब्रिज हिस्ट्री ऑफ इंडिया, जिल्द 4, पृ0 316

2- वही

3- मुगल सैन्यावली: पृ0 81, डी पन्त, द कॉमर्शियल पॉलिसी ऑफ द मुगल्स " प0 270

4- वही ।

व्यापार-वाणिज्य उन्नत दशा में होते हुए भी निरंतर राजनीतिक कलह और युद्ध-विग्रह के कारण प्रदेश को आर्थिक क्षति तो हो ही रही थी, इसके अतिरिक्त मालगुजारी वसूल करने की तत्कालीन प्रचलित पद्धति ने भी कोढ़ में खाज का काम किया क्योंकि मालगुजारी या तो जमींदारों के या अप्रत्यक्ष रूप से उनके मुखियों, मुनीमों, गुमाश्तों, पट्टेदारों, कारिंदो आदि के माध्यम द्वारा वसूल की जाती थी। इन लोगों ने उस अराजकतापूर्ण परिस्थिति से लाभ उठाने की दृष्टि से राजकीय आय के मूल उद्गम किसान- वर्ग पर नाना भाँति के अत्याचार किए। प्रधान केन्द्रीय सत्ता के निर्बल हो जाने से जमींदारी, गुमाश्तों आदि मालगुजारी उगाहने का काम लाभकारी न रह गया था। उस परिस्थिति में प्रत्येक व्यक्ति स्वयं जमीन का मालिक बन बैठने की चिन्ता करने लगा। परिणाम यह हुआ कि बहुत से किसान अपनी जमीन खो बैठे जिससे कृषि तथा वाणिज्य-व्यवसाय को बहुत धक्का पहुँचा।[1]

इसके साथ ही अट्ठारहवीं शती में बंगाल से भारत का धन इंग्लैण्ड द्रुत गति से जाने लगा। नादिरशाह तथा अहमदशाह के आक्रमण, ईस्ट इंडिया कम्पनी के द्वारा प्लासी के युद्ध के पश्चात् से कर का दुरुपयोग, अंग्रेजों की व्यापारिक नीतियों एवं भारतीय व्यापारियों पर अत्याचारों, देश के राजनैतिक परिवर्तनों, 1747 ई0 में ईरान में गृह-युद्ध तुर्की साम्राज्य के अन्त इत्यादि तथा

1- डा0 लक्ष्मी सागर वार्ष्णेय: आधुनिक हिन्दी साहित्य की भूमिका, पृ0 37

बगदाद में विद्रोहों के कारण भारत के वाह्य व्यापार को क्षति पहुँची थी ।[1]

किन्तु इसका तात्पर्य व्यापार समाप्त होना नहीं था यद्यपि विभिन्न उद्योगों वाले शिल्पकार एवं श्रमिकों को इस संक्रामक काल में विभिन्न राजनैतिक प्रहारों को सहना पड़ा किन्तु फिर भी इस शताब्दी में सर्वाधिक पेशेवरों तथा पेशों को नाम प्राप्त होते हैं । बड़े उद्योगों के अलावा – अलावा गुलफरोशी, चूड़ी साजी, मीनाकारी आदि उद्योग लोकप्रिय थे ।[2]

इस प्रकार अन्ततः यह कहा जा सकता है कि अट्ठारहवीं शताब्दी में जहाँ एक ओर वाह्य व्यापार एवं वाणिज्य को कुठाराघात लगा था वहीं विभिन्न हस्तशिल्प तथा अन्य कलाएं अपने चरम विकास पर थीं, जो विभिन्न राजनैतिक परिवर्तनों के मध्य पनप रही थी, अतः विभिन्न विद्रोहों एवं अव्यवस्था के मध्य इससे अधिक आर्थिक विकास मध्यकालीन युग में संभव नहीं था ।[3]

1– जगदीश नारायण सरकार: स्टडीज इन इकनॉमिक लाइफ इन मुगल इंडिया, पृ0368–72, मजूमदार राय चौधरी एण्ड दत्ता, एन एडवांस हिस्ट्री ऑफ इंडिया ।

2– विशद विवरण डॉ0 मुहम्मद उमर: हिन्दू तहजीब पर मुसलमानों का असर तथा मुहम्मद यासीन, ए सोशल हिस्ट्री ऑफ इस्लामिक इंडिया ।

3– वी0ओ0 एस रघुवंशी: इंडिया इन द एट्टीन्थ सेन्चुरी पृ0 322–36, विशद विवरण, द कैम्ब्रिज इकोनॉमिक हिस्ट्री ऑफ इंडिया, तपन राय चौधरी, द मिड एट्टीन्थ सेन्चुरी बैक ग्राउन्ड ।

नौवाँ अध्याय

अट्ठारहवीं शती के प्रमुख कवि व उनके काव्य

अठारहवीं शती के प्रमुख कवि व उनके काव्य

आचार्य सोमनाथ :

कविवर सोमनाथ भरतपुर वैर के प्रशासक श्री प्रताप सिंह के आश्रित परम पंडित कवि थे ।[1] जाटराज परिवार में सर्वत्र इनका आदर और सम्मान था । सोमनाथ काकविता काल सं0 1756 से 1817 तक माना जा सकता है क्योंकि स्वयं उन्होंने अपने ग्रंथो में अपनी रचनाओं का काल दिया है जिससे उनका काव्यकाल उक्त ठहरता है ।[2]

सोमनाथ जी श्री छिरौरा {मथुरा के निकट एक गाँव} वंश के माथुर चौबे थे । जिस क्षेत्र में सोमनाथ की कर्मभूमि थी वह ब्रज का प्रभाव क्षेत्र रहा है और सर्वदैव उपासना की परम्परा वहाँ पर चलती रही है । जिस राजदरबार में सोमनाथ जी थे उस भरतपुर का इतिहास बहुत प्राचीन न होते हुए भी अत्यंत महत्वपूर्ण रहा है । यहाँ के लोग दृढ़ निश्चयी , वीर और साहसी होते हैं । वर्तमान भरतपुर राज्य की स्थापना बदन सिंह द्वारा सन् 1718 में हुई और डीग नामक स्थान पर इसकी राजधानी बनायी गयी । इनके दो लड़के थे, सूरजमल जाट और दूसरा प्रतापसिंह । सूरजमल जाट को डीग का शासन और प्रताप सिंह को वैर का शासन बदन सिंह जी ने सौंपा था । बदनसिंह की मृत्यु के बाद सुजान सिंह गद्दी पर बैठे जिन्हें सूरजमल के नाम से भी लोग जानते

1- सोमनाथ ग्रंथावली खण्ड 1, संपादक सुधाकर पाण्डेय, पृ0 49, भूमिका उद्धृत} डॉ0 शकुन्तला अरोरा, रीतिकालीन श्रृंगार-कवियों की नैतिक दृष्टि पृ0 9

2- वही, पृ0 49- 50 ।

हैं । सूरजमल ने 1732 ई0 में भरतपुर पर अपना आधिपत्य कायम किया । प्रतापसिंह सूरजमल के छोटे भाई थे । वे साहित्यकारों, विद्वानों, कलाकारों आदि को आश्रय देने वाले उदार मना राजा थे और उन्होंनेसोमनाथ जी को अपने दरबार का प्रमुख कवि बनाया।[1]

कवि सोमनाथ के ग्रंथों के अध्ययन से पूर्व, उस देश काल के संक्षिप्त ज्ञान भी आवश्यक प्रतीत होता है जिसके बीच सोमनाथ जी रहे । श्री सोमनाथ का कार्यक्षेत्र वह प्रदेश रहा है जहाँ वैष्णव संस्कृति के मध्यकालीन काव्य की अजस्र धारा बहती रही । वैर क्षेत्र सहज ही गोवर्धन सेमिला रहने के कारण और मथुरा तथा आगरा के पास का नगर होने के कारण एक ओर जहाँ मध्यकालीन धार्मिक वैष्णवी संस्कृति का केन्द्र रहा है, वहीं मुगल सभ्यता और संस्कृति की छाया भी उस पर पड़ती रही है और मुगल वैभव से उनकी प्रतिस्पर्धा भी थी । मुगलों के कमजोर होने पर जाट प्रभुत्व में आये और इन्होंने भरतपुर के इतिहास में अपना गौरवशाली स्थान बना लिया । यद्यपि भरतपुर राजस्थान का अंग रहा है तो भी वह सदा से आगरा और मथुरा के निकट तथा उसके प्रभाव के कारण इसको ब्रज प्रदेश का सहज अंग माना जाना अधिक उचित होगा ।[2]

इन तथ्यों की दृष्टि से जब हम उसके सांस्कृतिक पक्ष की ओर जाते हैं तो एक मध्यकालीन उस संस्कृति के दर्शन होते हैं जो मुगलों के दरबार में जन्मी, पनपी, बढ़ी । सामान्य जीवन वहाँ के राजाओं का, राजघरानों का,

---

1- वही, पृ0 49-50

2- सोमनाथ ग्रंथावली खण्ड 1, पृ0 52

कवियों और पंडितों का वही था जो मुगल दरबार में था । जहाँ तक भाषा का संबंध है, ब्रजभाषा इस क्षेत्र में सर्वत्र काव्य की तथा साहित्य की भाषा रही है। अधिकांशतः यह माना गया कि मध्यकाल में केवल श्रृंगारिक काव्य और भक्ति संबंधी साहित्य को ही प्रश्रय प्राप्त होता था किन्तु वास्तुस्थिति यह है कि समाज में जितने विषय अंगीकृत थे, सभी के ऊपर साहित्य की रचना होती थी और स्वतंत्र अनुवाद का कार्य भी होता था । भरतपुर के कवियों ने कवियों ने अनेक क्षेत्रों यथा ज्योतिष, वास्तुकला, चिकित्सा विज्ञान आदि पर भी रचनाएँ थी । राजा के मत का प्रभाव जनता पर भी पड़ता था और कवि भी उससे असंतुष्ट नहीं रहता था । यद्यपि शैव और वैर वैष्णव और ब्रज प्रभाव क्षेत्र में था तो भी यहाँ समस्त हिन्दू देवी देवता समान रूप से पूजित एवं प्रतिष्ठित होते थे और उन पौराणिक कथाओं की चर्चा भी होती थी जिन कथाओं का हिन्दू धर्म में विशेष महत्व है ।[1]

इस प्रदेश की एक विशाल साहित्यक परम्परा भी रही है ।[2] उस समय देश में की साहित्यक प्रवृत्तियाँ चल रहीं थी, वेथीं -रीति, भक्ति, नैतिक और वीर काव्य की । मूल धारा रीति साहित्य की थी और कवि सोमनाथ ऐसी ही परम्परा के समय शास्त्र कवि थे । [3]

1- सोमनाथ ग्रंथावली खण्ड 1, पृ0 52-53 [भूमिका से उद्धृत]

2- वही, पृ0 53

3- वही, पृ0 53

कवि सोमनाथ द्वारा रचित प्रमुख ग्रंथों का विवरण इस प्रकार है । रसपीयूषनिधि, श्रृंगारविलास, माधव विनोद, महोदय की प्रयाली या शशिनाथविनोद, ध्रुवविनोद, सुजानविलास, प्रेमपच्चीसी, संग्राम दर्पण, ब्रजेन्द्रविनोद रासपंचाध्यायी, रामचरित-रत्नाकर[1] 4 एवं सुक्तितरंगिणी ।[2]

रसपीयूषनिधि का वर्णन कवि ने 22 तरंगों मे किया है , प्रथम तरंग में राजकुल का वर्णन है । दूसरे तरंग में कवि सोमनाथ कवि की प्रशंसा करते हैं, अपने कुल का वर्णन करते हैं, तीसरे तरंग में कवि का कथन है पिंगल की रीति समझने केलिए छंद ज्ञान आवश्यक है इसलिए सर्वप्रथम पिंगल के संबंध में ज्ञानपूर्वक कवि ने लिखा है ।

चौथे तरंग में छंद पर विचार किया गया है, उनका लक्षण उदाहरण और भेद बताया गया है।

पाँचवा तरंग वर्णवृत्त वर्णन का है । छठें तरंग में काव्य का लक्षण प्रयोजन, काव्य के भेद वर्णित किए गए हैं । सप्तम तरंग ध्वनि भेद, रस लक्षण एवं रसस्वामी से संबंधित है । आठवें अध्याय में श्रृंगार रस का वर्णन किया गया है उसके दो प्रकार, संयोग और वियोग बताए गए हैं । नायिका भेद का कथन स्वकीया लक्षण उदाहरण तथा कुल वृद्ध आदि का वर्णन किया है । कवि ने स्वकीया नारी का भेद ज्येष्ठा और कनिष्ठा रूप में भी विवाह के आधार पर किया है ।

1- सोमनाथ ग्रंथावली, खण्ड 1, पृ0 51-52 [भूमिका सेउद्धृत]

2- डॉ0 शकुन्तला अरोरा, रीतिकालीन श्रृंगार कवियों की नैतिक दृष्टि, पृ0 9

नौवीं तरंग परकीया वर्णन से संबंधित है और सामान्या को भी उसी के भीतर संक्षेप में समाहित कर लिया गया है।

रसपीयूषनिधि की दसवीं तरंग में मानवती और गर्विता नारी का चित्रण किया है। ग्यारहवी तरंग में सोमनाथ मुग्धादि स्वाधीन पतिकादि नायिकाका वर्णन करते हैं।

बारहवीं तरंग का नाम है, उत्तमादिनायिका सखी कर्म दूतीकर्म वर्णन नामक तरंग। इसमें उत्तमा, मध्यमा और अधमा तीन प्रकार की नायिकाएँ बताई गई हैं।

तेरहवीं तरंग में नायिका, सखा, दर्शन, दृष्टानुराग और चेष्टा वर्णन को चित्रित किया गया है।

चतुर्दश तरंग में संयोग श्रृंगार का वर्णन और प्रकार को चित्रित किया गया है।

पन्द्रहवें अध्याय में विप्रलंभ श्रृंगार का लक्षण और दूसरी दस दशा काकथन किया गया है।

सोलहवीं तरंग में रसध्वनि वर्णन है। सर्वप्रथम हास्य रस का लक्षण और उसका उदाहरण दिया गया है।

सत्रहवीं तरंग में भाव ध्वनि का लक्षण दिया गया है। इसके लक्षण देते हुए यह बताया गया है कि जब कवित में संचारी भाव व्यंग्य हो जाता है तो उसे भाव ध्वनि कहते हैं।

अट्ठारहवीं तरंग में रसाभास सोमनाथ जी ने उसे माना है जहाँ कवि रस में अनुपयुक्त रस का वर्णन होता है ।

उन्नीसवीं तरंग में मध्यम काव्य गुणीभूत का वर्णन किया गया है । इसका लक्षण दिया गया है और उसको गद्य में भी समझाने का यत्न किया गया है ।

बीसवीं तरंग में काव्यदोष का वर्णन किया गया है । इक्कीसवीं तरंग में कविता का गुण वर्णित है और शब्दालंकारतथा चित्रालंकार का भी वर्णन किया गया है ।

अन्तिम तरंग 338 छंदों की है जिसमें अर्थालंकार, संसृष्टि और शाब्दालंकार का वर्णन किया गया है ।[1]

ग्रंथ के अन्त में ग्रंथ की रचना का समय दिया गया है और एक सवैया में नंद कीगाय चराने वाले मोहन से प्रार्थना की गयी है कि हमारी लज्जा तुम्हारे हाथ मेंहै । अन्त में रघुनंद आनंदकंद को हृदय में कवि ने ध्याया है क्योंकि ये सुख को सरसाने वाले हैं ।[2]

इस प्रकार रसपीयूषनिधि नामक ग्रंथ से अन्य कवियों की भाँति नारी के रूप वस्त्राभरण का आदि को जानने में तो सहायता मिली ही कवि ने

1- विस्तृत विवरण के लिए सोमनाथ ग्रंथावली खण्ड । रसपीयूषनिधि,

2- सोमनाथ ग्रंथावली: रसपीयूषनिधि, पृ0 224 छं0 336; पृ0 224 छं0 337; पृ0 224 छं0 338

कृष्ण के प्रति जिस अनुराग का चित्रण किया उससे वैष्णव धर्म में उपर भी कुछ प्रकाश पड़ता है ।

तत्कालीन समाज में रचे जाने वाले रीतिकाव्य की एक परिपाटी रही है कि रसराज श्रृंगार के विषय प्रायः प्रत्येक कवि ने काव्य की रचना की है सोमनाथ जी ने श्रृंगार विलास नाम का ग्रंथ प्रस्तुत किया है। ग्रंथ का आरम्भ कवि ने यह बताया कि कवियों ने उल्लासपूर्वक रस के बहुत से ग्रंथ बनाये है उनकी छाया बाँधकर मै इस श्रृंगार विलास ग्रंथ की रचना कर रहा हूँ । प्रथम उल्लास में कवि की मौलिकता इतनी ही मात्र है । बाकी रसपीयूषनिधि के सप्तम तरंग से उसने भाव ग्रहण किये हैं । `कहीं -कहीं छंदभी ज्यों के त्यों ले लिए हैं । कहीं- कहीं नए छंद भी रचे हैं । कहीं-कहीं कुछ नया नाम भी दिया है । फिर भी श्रृंगार विलास रसपीयूषनिधि का श्रृंगार रास से संबद्ध संक्षिप्त परिवर्तित, संपादित रूप मात्र है । इसका अलग मूल व्यक्तित्व नहीं है । संभव है कि किसी केलिए यह लिखा गया हो या परम्परा के निर्वाह के लिए मूल ग्रंथ से इस ग्रंथ को अलग निकाल दिया गया है ।[1]

कवि सोमनाथ कुछ दिन तक नवाब आजमखाँ (शाह आजम) के दरबार मेंभी रहे और वहाँ पर नवाबोल्लास नामक ग्रंथ की इन्होंने रचना की ।[2]

नवाब गाजीउद्दीन इमादुल मुल्क जो जाट दरबार में शरणार्थी था (वह समय - समय पर दरबार के उत्सवों में सम्मिलित होता है, यह ग्रंथ उससे संबंधित है ।[3]

1- सोमनाथ ग्रंथावली, खण्ड 1, पृ0 67 पृ079 (भूमिका से उद्धृत)

2- वही, पृ0 5।

कवि के इसलिए चार उत्सवों का वर्णन मात्र किया है ईद बकरईद , दशहरा और दीपावली ।[1]

अत्यन्त संक्षिप्त किन्तु महत्वपूर्ण वस्तु नवाबोल्लास में मिलती है एक ओर जहाँ तात्कालीन समाज में मनाये जाने वाले हिन्दू- मुस्लिम त्यौहारों का पता चलता है वही दूसरी ओर इस मान्यता का खंडनहोता है कि हिन्दू काव्य में हिन्दू संस्कृति की ही अभिव्यक्ति हुयी है जो लोग ऐसी मान्यता रखते है, उनके लिए ऐसे कवि की रचनाएँ एक चुनौती हैं । वास्तव में हिन्दू मुस्लिम दोनो की भाषा हिन्दी रहीहै और मुगल दरबार से लेकर जनसामान्य तक हिन्दी भले हीराजभाषा न रही हो लोक भाषा रही है। ईद, बकरईद के साथ दशहरा और दीपावली का वर्णन इसका उदाहरण है ।

इस प्रकार नवाबोल्लास अपने आपमें बहुत महत्वपूर्ण न होते हुए और परम्परागत होते हुए भी अपनी महिमा इसलिए स्थापित करताहै कि मुसलमानों के दरबार में भी हिन्दू कवि रहते थे और मुसलमान बादशाह भी उसी प्रकार दीपावली और दशहरा मनाते थे जैसे बकरईद और ईद । क्योंकि किसी के भी राज्य में प्रजा केवल हिन्दू या मुसलमान नहीं थी । राजा सबका ध्यान रखता था ।

दीर्घनगर वर्णन में कवि ने बाट राजाओं की राजधानी का वर्णन किया है। यह सुन्दर ग्राम अत्यन्त ही ललाम है, जहाँ सुन्दर गढ़ है और जिनकी

1- सोमनाथ ग्रंथावली : खण्ड 1, नवाबोल्लास पृ0 831 छं0 1; पृ0 831 छं0 2; पृ0 832 छं0 3; पृ0 832छं0 4

बुर्जें उसी प्रकार शोभायमान हैं जैसे विवेक । उन बुर्जियों पर सहस्रों पताकाएँ कलधौत रंग की विराज रही हैं जो युद्ध के जीतने का प्रतीक हैं । गढ़ में पूर्ण प्रकाश है और उसके राजा का निवास है । उसमें उत्तुंग बंगले और उन पर सुन्दर कलश विराजते हैं और वहाँ पर स्वर्णजटित राज सिंहासन है और प्रत्येक द्वार पर तोरण और वितान बना हुआ है । ऐसी सुन्दर -सुन्दर झालरें लगीं हैं उस पर जैसे सूर्य की किरणों की आभा झलकती है । लगता है यह ब्रजराज का निवास स्थान है । लोहे से युक्त बड़े-बड़े दरवाजे शत्रु के लिए काल के समान हैं क्योंकि कीलयुक्त हैं । गढ़ के चारों तरफ सरिता के समान गढ्ढ हैं, उसके आगे द्वार है और फिर चौमुहानी फिर बाजार है अच्छी-अच्छी अनगिनत दुकानें हैं और लोगों के गृह दरवाजे पर श्रीयुत समाज जुटाता है ब्राह्मण , क्षत्रिय, वणिक, कायस्थ सभी जाति के लोग अपने गुण और धर्म के अनुसार वहाँ रहते हैं । वहाँ पर चार आश्रमों की व्यवस्था है। अपना धर्म धारण करके बिना भय के विनय सम्पन्न लोग विचरते रहते हैं -

दीरघ सुग्राम, अति ही ललाम ।
जहँ गढ़ बिलंद, झलकै अमंद ।।
बुर्जनि अनेक, मंडित, विवेक ।
सहसनि बिसाल, जुत अंश जाल ।।
तिनपै पताक, संरसंक धाक ।
कलधौत रंग, बिसवार जंग ।।

क्रमशः

गढ़ में प्रकास, नृप के अवास ।
राजनि सुधारि, रच्यै विचारि ।।
बगला उतंग कलसनि सुढंग ।
छवि को छटान बैठन विधान ।।
तिनके मझार, गद्दी उदार ।
कंचन लसाइ जिनमै सुभाई ।।
अरु चहूँ ओर आभा अछोर ।
प्रति द्वार द्वार । तोरन बिहार ।
आगे बितान । अति जोतिवान ।।
झालरि अनूप । रवि किरन रूप ।
इमि काम काम । छबरात धाम ।।
अरु गढ़ दुवार । सोहहिं प्रकार ।
बहु कपाट । जुत लोह ठाट ।।
कीला कराल । रिपु को जुकाल ।
तिन्मै अनंत । ते जगमगंत ।।
अरु गढ़ परिछय । सरिता सरिछय ।
आगे सुढ़ार । चौसय बजार ।
अनगिन दुकान । राजति सुठान ।।
अरु मूह दराज । जुत श्री समाज ।।
बहुविध बसंत । भिक्षु धर्म संत ।

छत्री सरौंह । पुनि गहैं मैंड़ ।।
अरु बनिक जाति । निस बीस राति ।
जुत धर्मख्याल । उर मैं दयाल ।।
अरु धर्मसील । कायस्थ डील ।
बहु जाति और । लहि बसी ठौर ।।
आश्रम जु चारि । निजधर्म धारि ।
बिहरै अमोत । अति ही विनोत ।

इस एक से बीस छंद के बीच हमें महत्त्वपूर्ण जानकारी तत्कालीन समाज चित्रण के विषय में मिलती हैं । एक ओर तो जाति वर्ण का पता चलताहै दूसरी ओर उच्चवर्गीय आवास कैसे होते थे इसका विस्तृत वर्णन मिलता है । आश्रम व्यवस्था पर भी थोड़ा प्रकाश पड़ा है।[1]

इसके अलावा बाग तालाब, सरोवर आदि का वर्णन भी इस काव्य में हुआ है । अन्य छंद में कवि ने अपने का आश्रयदाता के मनोरंजन के विषय में शिकार खेलने का वर्णन किया है ।[2] इन सबके अलावा कवि ने यह भी लिखा कि किस प्रकार शासक अन्य शत्रुओं को हरा देताहै और उनके पेसकस(कर) वसूल करता है ।[3]

1- सोमनाथ ग्रंथावली: खण्ड 1, दीर्घनगर वर्णन, पृ0820 -821 छं0 22-30
2- वही, कवित्त पृ0 823 छं0 2
3- वही, पृ0 825 छं0 12

तात्पर्य यह कि इस काव्य ग्रंथ मे समाज की व्यवस्था पर अधिकाधिक सामग्री हमें उपलब्ध होती है ।

यद्यपि यह रचना बहुत विस्तृत नहीं है किन्तु जिसके आश्रय में कवि था केवल उसका ही नहीं वरन् उसके स्थान को भी वर्णन प्रस्तुत करता है । इसका अभिप्राय है कि कवि ोर उस स्थान से भी स्वभाविक प्रेम है बनावटी नहीं । धरतीमाता के प्रति इस देश की परम्परा का धर्म रहा है और आज के युग में राष्ट्रप्रेम के रूप में परिवर्तित और अभिवृद्ध हुआ है । इस लिए इस वर्णन का महत्व अपने गुण के कारण है, इसमें अपनी धरती के प्रति प्रेम का सहज भाव है ।

सोमनाथ केवल आचार्य कवि नही थे, अपितु ज्योतिष विद्या के भी विद्वान् थे । कवि ने संग्रामदर्पण नामक ग्रंथ में ज्योतिषशास्त्र को सहज ढंग से ज्ञान दिया है। ।[1]

सुजान विलास की रचना कविवर सोमनाथ ने संवत् 1807 वि० में की इसमें मध्यमान में प्रचलित सिंहासन बत्तीसी की कथा है ।[2]

माधवविनोद नाटक संस्कृत के प्रख्यात नाटककार भवभूति के प्रसिद्ध नाटक मालती माधव का पद्यबद्ध अनुवाद है ।[3] नाटक के माध्यम से विभिन्न

1- विस्तृत विवरण हेतु, सोमनाथ ग्रंथावली खण्ड 1, संग्रामदर्पण

2- सोमनाथ ग्रंथावली, खण्ड 1, पृ० 81 भूमिका से उद्धृत

3- वही, पृ० 85

प्रकारके वेशभूषा आदि का पता चलता है । प्रेमपच्चीसी एक प्रकार का स्वच्छंद प्रेमकाव्य है। आरंम्भ में एक दोहे में प्रेमदेव नंदलाल को वदना है अन्त में दोहे में फलश्रुति के साथ-साथ रचना का निमित्त भी बता दिया है । कवि कहते है :

पच्चीसी यह प्रेम की सुनि सुख होवै मित्त ।

सोमनाथ कवि ने रच्यौ नंदकिसोर निमित्त ।[1]

कवि प्रेमी का सारा उपालंभ भगवान् कृष्ण से ही है । अतः रचना कृष्ण काव्य के अन्तर्गत आती है ।

महोदव जी व्याहलो या शशिनाथ विनोद नामक प्रबंध काव्य में भगवती उमा और देवाधिदेव महोदव जी के विवाह का रोचक वर्णन है। यह विशुद्ध भक्तिकाव्य है । विवाह में वैदिक विधियों के साथ लौकिक कृत्यों का भी मनोंरजक और लोकग्राही चित्रण हुआ है । विवाह के समय भोजन के जितने व्यंजनों का वर्णन कवि सोमनाथ ने किया है कुछ गिने चुने ही कवियों ने किया है -

बनी अंदरसो से र बेह्ड़ी बरफी अरु पेरा।

मोदक मगद मलूक और मठ्ठे घाई सेरा ।।

फेनी गूंझा गवक सुरसुरे सेव सुहारे ।

और जलेबी पुंज ,कंद सो पगे छुहारे ।।

1- सोमनाथ ग्रंथावली, खण्ड 1, पृ0 88

निकुली छोटो छाँटि मंजु मुतिलड्डु बनाए ।

सरस अंमृती सुरमा सुंदर बेस सजाए ।।

सुन्दर पैठे पाग और खाजे अति खासे ।

स्याचोदाने और सकरपारे परकासे ।।

उरद मूँग की पि ठी पोसि के लडुवा कीने ।

बहुत घीव में भूजि चिरोंजा सहित नवीने ।।

औ र चंद से गोल दही में बरा भिजोये ।

लौनें मिरच अरू लौंग पोसि तोनि मधिनु सँजोये ।।

और साज अनेक और बल मी ठे खट्टे ।

षट्रस व्यंजन सकल भाँति के बने इक ट्ठे ।

पूरन पाँच महाकवि विधि बनवाए रखाए ।

मी ठे पूरन और चिरपिरे और बनाए ।।[1]

इस प्रकार इस ग्रंथ से भी समाज चित्रण केलिए अच्छी सामग्री मिली । समाज में प्रचलित वैवाहिक संस्कार तथा खानपान का विस्तृत वर्णन इस पुस्तक से प्राप्त हुआ

इस प्रकार कवि सो सोमनाथ ने सारी काव्यविधाओं को साधिकार अपनाया और सफलता के साथ उन्हें निभाया भी है । ऐसी चतुर्मुखी दृष्टि और नवोन्मेषिणी प्रतिभा के धनी रीतिकार आचार्य कवियों में शायद ही कोई मिले ।

1- सोमनाथ ग्रंथावली महादेवजी को ब्याहुलो या शशिनाथ विनोद, पृ0 524 छं0 1-5

<u>देव कवि :</u>

देव उस अट्ठारहवी शताब्दी के कवि है जिसमें सब कुछ बिखर रहा था, साम्राज्य टूट रहा था, सामन्त उभर रहे थे, भक्ति बाह्याचार में अधिक चली जा रही थी, मनुष्य को कहीं चैन नहीं था, सम्बन्धों में अविश्वास आने लगा था, ऐसे जमाने में भक्ति युग के बाद मानवीय मूल्यों को नयी परीक्षा का अवसर जिन्हें मिला, उन्होंने इन्हें कवि होकर परखा, अपने कर्म में पूरी निष्ठा रखी, सजगता बरती, मनुष्य को जोड़ने वाले व्यापार की सूक्ष्म अर्थवत्ता की पहचान कराई और आस्तिक भाव को पूरी तरह संभाल कर रखा ।[1]

कवि देव संस्कृत प्राकृत की मुक्तक परम्परा के एक ओर उत्तराधिकारी थे, दूसरी ओर लोकजीवन में अभिव्याप्त श्रीकृष्ण की लीलाओं की अभिव्यक्तियों से अभिभूत थे और किसी न किसी रूप में अलौकिक प्यार के भी साझीदार थे ।[2]

श्रृंगार-कवियों में उच्चकोटि की गणना में आने वाले कवि देव का जन्म हिन्दी साहित्य के इतिहासकारों ने संवत् 1730 और रचनाकाल संवत् 1746 से 1790 के लगभग तक माना है ।[3] अन्तः साक्ष्य के आधार पर देव का जीवनकाल संवत् 1730 एवं 1824-25 के मध्य रहा। देव जाति के धौसरिया

1- देवः देव की दीपशिखाः विद्यानिवास मिश्र, पृ0 7 भूमिका से उद्धृत

2- वही, पृ0 8

3- डा0 नगेन्द्रः देव और उनकी कविता, द्वितीय संस्करण, 1957 पृ079

ब्राह्मण थे ।[1] देव का जन्म इटावा शहर में हुआ ।[2]

देव के 18, 19 ग्रंथ ही उपलब्ध हैं जिसमे मुख्य ग्रंथ भाव विलास, भवानी विलास, सुजानविनोद रसविलास, काव्यरसायन तथा सुखसगर तरंग आदि मुख्य हैं ।[3]

इनके अलावा जो ग्रन्थ प्राप्त हैं उनमें देवचरित्र, वैराग्यशतक, देवमायाप्रपंच, अष्टयाम, प्रेमचन्द्रिका आदि हैं ।[4] देव का एक अन्य ग्रन्थ "शब्दरसायन" है जिसे सबसे प्रौढ़ रीतिग्रंथ मानागया है[5]

"शब्द रसायन " में काव्य-स्वरूप का विश्लेषण कवि ने इस प्रकार किया है -

शब्द सुमति मुख ते कढ़ै, लै पद बचननि अर्थ ।

छन्द , भाव, भूषण सरस, सो कहि काव्य समर्थ ।[6]

इस छन्द में काव्य के पूर्णतम स्वरूप की अभिव्यक्ति की है और इसे ही समर्थ काव्य

1- डॉ0 शकुन्तला अरोरा, : रीतिकालीन श्रृंगार-कवियों की नैतिक दृष्टि , पृ08
2- देव: देव की दीपशिखा:विद्यानिवास मिश्र पृ0 7
3- डॉ0 नगेन्द्र: देव और उनकी कविता, पृ0 79
4- डॉ0 पुष्परानी जायसवाल, देवग्रंथावली
5- डॉ0 नगेन्द्र: देव और उनकी कविता, पृ0 56
6- देव: शब्द रसायन पृ0 2 छं0 10

की संज्ञा दी है । काव्य के मूल उपादानों में भाव, भूषण (अलंकार) सरस (रस) छन्द आदि की गणना की जाती है । इसमें सन्देह नहीं कि देव ने इसमें अपने भाव एवं कला दोनों पक्षों का समर्थन बहुत दृढ़तापूर्वक किया है ।

कवि देव ने शृंगार की तुलना में अन्य रसों का विश्लेषण अधिक निष्ठा के साथ नहीं किया । फिर भी कुछ रसों के अवान्तर भेदों और उनके स्वरूप के विवेचन में इनकी सूक्ष्म एवं प्रौढ़ मेधा का परिचय अवश्य मिलता है ।[1]

भाव विलास में देव ने अलंकार प्रकरण को छोड़कर समस्त वर्णन शृंगार के ही परिवेश में किया है । शृंगार को प्रथमतः दो भागों में विभाजित किया है संयोग और वियोग :

रस सिंगार के भेद द्वै, हैं वियोग संजोग ।[2]

भवानी विलास में आचार्य देव ने नायक नायिका भेद प्रारम्भ -प्रारम्भ के पूर्व राधा कृष्ण को शुद्ध सच्चिदानन्द और शृंगार की मूर्ति रूप से अभिहित किया है :

श्यामा श्याम किशोर जुग, पद बन्दौं जग बन्द ।
मूरति रति सिंगार की, शुद्ध सच्चिदानन्द ।।[3]

1- डॉ० किशोरी लाल, रीतिकवियों की मौलिक देन, पृ० 131
2- देवः भवानी विलास, पृ० 12
3- देवः भवानी विलास, पृ० ।

इस प्रकार आचार्य देव मूलतः लौकिक श्रृंगार के ही गायक थे और उस युग में इनकी तुलना में श्रृंगार के ऐसे जबरदस्त गायक बहुत कम ही मिल पाते हैं। इनके विस्तृत श्रृंगार विवेचन को रीतिकाल के अन्य कवियों की तुलना में अप्रतिम माना है।[1]

देव का नायक नायिका भेद विवेचन अपेक्षाकृत अधिक विस्तृत और मौलिक है। यों नायिका भेद से संबंधित देव ने कई ग्रन्थों की रचना की है, किन्तु उनमें मुख्य ग्रन्थ भाव विलास, भवानी विलास, रसविलास, सुख-सागरतरंग, सुजानविनोद आदि हैं जिसमें रसविलास की अधिक श्लाघा की गयी है।[2]

भवानी विलास के तृतीय विलास के अन्तर्गत अंग भेद के आधार पर स्वकीया नायिका का विस्तार पूर्वक वर्णन किया गया है।[3] देव ने भाव विलास में नायिका भेद के संदर्भ में 384 भेदों का संकेत किया है।[4]

जाति विलास तथा सुखसागर तरंग में भी कवि ने नायिका के भेद का निरूपण किया है। किन्तु ये नायिका भेद जाति के आधार पर व्यवसाय के आधार पर किया जिसमें नगर वासिनी स्त्रियों में नागरि दूती द्वारपालिका, चोहरिन, छीपनि, पटइनि, सुनारिनि, गंधिनी, तेलिनि, तमोलिनि, हलवाइनि, बनीनी, कुम्हारिनि, दरजिनि, कंजरिनि, जुलाहिनि,

---

1- डॉ० नगेन्द्रः रीत-काव्य की भूमिका तथा देव और उनकी कविता, पृ० 90

2- मिश्रबन्धु, हिन्दी नवरत्न, पृ० 282 पंचम संस्करण

3- भवानी विलास, तृतीय विलास, पृ० 214

4- देवः भाव विलास, पृ० छं० 97

मोचिनि , बढ़इनि, लुहारिनि, चूहरिनि, गणिका, ब्रह्मणी, छत्रानी, बजानी वैश्यानी, काइथिनि, किरारिन, मरभूजनि, नाइनि, मालिनि, धोबिनि, आदि का चित्रण किया है ।[1] जाति विलास का यह चित्रण कवि देव ने एक तटस्थ धो कलाकार की भाँति किया किन्तु कामुक दृष्टि से नही ।[2]

ऐश्वर्य के बीच रहते हुए कवि देव ने गाँव के रीतिरिवाज गाँव की वेशभूषा गाँव के उल्लास गाँव के वातावरण और गाँव के सहज प्यार का भी चित्रण देव नेकिया । [3] कवि देव की यह बड़ी उपलब्धि है ।

ग्रामीण नायिका-भेद के बारे में कवि में कविदेव उतने ही सजग दिखाई पड़ते हैं जितने कि अन्य बातों में । ग्रामीण नायिका भेद का जो अनुपम चित्र कवि देव ने प्रस्तुत किया वह अतुलनीय है। पहले कवि देव ने इस बात पर प्रकाश डाला कि गाँव क्याहै तदुपरान्त यह बताया कि कौन सी स्त्री गाँव में रहने के कारण ग्रामीण की संज्ञा से विभूषित हुयी ।

बन में जो लघु पुर बसैं तासो कहिये गाँव ।
तहाँ बसै ग्रामीन तिय गँवारी ताको नाँव ।।
अहिरनि अरु काछनि कही कलारि और कहारि ।
और कुलेरिन पाँच विधि बरनहु नारि गँवारि ।।[4]

1- देव ग्रंथावली: सुखसागर तरंग, डा0 पुष्पारानी जायसवाल,पृ0 91 से 97 तक
2- देव देव की दीपशिखा, भूमिका से उद्धृत ।
3- देव: देव की दीपशिखा, भूमिका से उद्धृत ।
4- देव ग्रंथावली: लक्ष्मीधर मालवीय, पृ0 187

कहीं- कहीं जाटिनी और कुम्हिनि को भी ग्रामीण नायिका के अन्तर्गत रखा गया ।[1]

कवि ने बनवासिनी[2] स्त्रियों के अन्तर्गत ऋषिपत्नी व्याध-वधू भीलनी ,को रखातथा सैन्यौवासिनी[3] के अन्तर्गत कुलटी, वेश्या, तुर्केरिन को रखा और मार्ग वासिनी[4] के अन्तर्गत बन्जारिनि, योगिनी, नटी रंजरिनि को रखा ।

देव ने स्वकीया परकीया आदि नारियों के विभिन्न भेद बताये है । इस प्रकार सुखसागरतरंग को नायिका भेद का एक विश्व कोश समझना चाहिए । वास्तव में देव के सुन्दर छन्दों का उन्हीं के द्वारा चयन होने के कारण इस ग्रंथ का महत्व और ग्रन्थों की अपेक्षा अधिक है। चूँकि यह ग्रंथ अष्टयाम जाति विलास रसविलास और भाव विलास आदि ग्रंथों के उत्कृष्ट छन्दों को संकलित करके प्रस्तुत कियाहै अतः देव मर्मज्ञ महोदयों ने इस ग्रन्थ की प्रौढ़ता और उत्कृष्टता की अत्यधिक श्लाघा की है । [5]

1- देव ग्रंथावली: भाग 1, डॉ० पुष्पारानी जायसवाल ,पृ० 97 छं० 292 पृ० 97 छं० 293

2- देव ग्रंथावली: भाग 1, डॉ० पुष्पारानी जायसवाल पृ० 98 छं० 298 पृ० 98 छं० 299, पृ०99 छं० 300

3- वही, पृ० 99 छं० 301, पृ० 99 छं० 302, पृ० 99 छं० 303 ।

4- वही, पृ० 99 छं० 304, पृ० 100 छं० 305, पृ० 100 छं० 306, पृ० 100 छं० 307

5- डॉ० नगेन्द्र: रीति-काव्य की भूमिका तथा देवऔर उनकी कविता, पृ० 38 मिश्रबन्धु, हिन्दी नवरत्न, पृ०-291

कवि देव ने नायिका भेद, वर्गीकरण के सन्दर्भ में कुछ नवीन ढंग से इसकी संगतियाँ बैठाने का प्रबल प्रयास किया है । भवानी विलास में इन संगतियों के दो रूप हैः प्रथम के अन्तर्गत पूर्वानुराग , प्रथम संयोग और सुख भोग आताहै, जिसके अन्तर्गत क्रमशः मुग्धा, मध्या और प्रौढ़ा के विभिन्न में दो को अन्तर्भुत किया गया है और द्वितीय के अन्तर्गत मुग्धा और प्रौढ़ा के क्रमशः काम की दस दशाएँ दस अवस्थाएँ एवं दस हावों का वर्णन किया गया है :

मुग्ध तिया की दस दसा, कहो पूर्व अनुराग ।

दसाऽवस्थ मध्यानि को बरनत सुनहु सभाग ।।[1]

इस प्रकार कवि देव नेजो विभिन्न प्रकार की नायिका भेद का जो चित्र प्रस्तुत कियाहै उससे हमें तत्कालीन समाज में स्त्रियों की जाति, उनके द्वारा अपनाये गये व्यवसाय, तथा उनकी स्थिति उनके आपसी संबंधो आदि पर विशेष रूप से प्रकाश पड़ताहै जिसके फलस्वरूप समाज में स्त्रियों की दशा जानने में हमें पर्याप्त सहायता मिली ।

इसी प्रकार वैराग्य शतक में कवि ने समस्त दार्शनिक विचार माया-मोह अज्ञानता ब्रह्म और आत्मा के बारे में लिखा है साथ ही धर्म के वास्तविक रूप के बारे में भी बतातेहै । कवि ने बतायाकि माया-मोह के प्रपंच मे फंसा हुआ व्यक्ति काम, क्रोध,कपट सबका शिकार हो जाता है अतः संसार में विरोध केबीजबोता रहता है । सदैव वह काम की ही चिंता में रहताहै वह जगह-जगह

1- देवः भवानी विलास पृ0 70

परमेश्वर को तलाश में [तीर्थयात्रा] घूमता रहता है किन्तु अज्ञानता के कारण वह यह नहीं समझ पाता कि चौदहों भुवन, सातों दीप और नवों खण्ड में निवास करने वाले प्रभु तो स्वयं उसमें विराजमान हैं ।[1]

किन्तु जब वह ईश्वर के स्वरूप को समझ लेता है तब मनुष्य को इस सत्य के अलावा और कुछ नहीं दिखता :

तुही पंचतत्व, तुही सत्व रज तम थावर औ जंगम, भयो भव में ।
तेरोई विलास लौटि तोही में समान्यो कछू जान्यो न परत पहिचानो जब जब मैं
देख्यो नहीं जात, तुही देखियत जहाँ तहाँ दूसरो न देख्यो देव तुही देख्यो अब।[2]

इसीलिए कवि ने यह बताया कि बाह्याडम्बर से कुछ नहीं मिलने वाला बल्कि इन सारे दिखावे को छोड़कर अज्ञानता [माया-मोह] का आवरण हटा कर देखो तो सम्पूर्ण चेतन आनंदमय स्वरूप का रूप स्वयं तुम्हें अपनी आत्मा में मिलेगा :

कथा में न कंथा में न तीरथ के पंथा में न पोथी में न पाथ में न साथ की
बसति में ।
जटा में न मुंडन, न तिलक त्रिपुंडन, न नदी कूप कुंडन अन्हानदान रीति में ।
पीठ मठ मंडल न कुंडल कमंडल में, माला दंड में न देव देहरे प्रतीत में ।
आपही अपार, पारावार, प्रभु पूरि रह्यो पाइयो प्रगट परमेसुर प्रतीति में ।।[3]

1- वैराग्य शतक, पृ0 37 छं0 25, तत्वदर्शन पच्चीसी, पृ0 38 छं0 4, तत्वदर्शन पच्चीसी पृ0 39 छं0 10, पृ0 38 छं0 5
2- वैराग्यशतक, तत्वदर्शन पच्चीसी पृ0 39 छं0 9
3- वैराग्य शतक, पृ0 40 छं0 18, देव की दीपशिखा, पृ0 65 छं0 100

अज्ञान की स्थिति समाप्त हो जाने पर साधक और साध्य के बीच अभेद हो जाता है । कवि ने अद्वैतवाद के साथ द्वैताद्वैत सिद्धान्त की स्पष्ट झलक दी है :

> स्याम सरूप घटा ज्यौं अनूपम , नील पटा तन राधे के झूमैं ।
> राधे के अंग के रंग रग्यौ पट बीजुरी ज्यों घन से तन भूमैं ।।
> है प्रतिमूरति दोऊ दुहूँ की बिधौ प्रतिबिंब वही घट दूमैं ।
> एक होदेव दुदेह दुबेहरे "देव " दुधा इक देह दुहूँ मैं ।। [1]

वर्षा ऋतु के मेदुर मेघों में राधा-माधव के दर्शन करने वाले महाकवि देव कहते है कि आकाश में उमड़ते- घुमड़ते काले कजरारे मेघों में कृष्ण के श्यामल शरीर और महारानी राधा के नील पट के स्पष्ट दर्शन हो रहे है । कृष्ण का नील कलेवर और राधा की नीली साड़ी इनमेघ-धराओं में दिखाई पड़ रहे हैं - ये काले बादल मानो इन्हीं दोनो के प्रतिरूप हो । इनमें रहकर जो बिजली चमकती है वह राधा के गौरवर्ण तथा कृष्ण के पीताम्बर प्रतिबिम्ब है । यो दमकती हुयी दामिनी में कवि चम्पक-हेमवर्णी राधा के रंग और कृष्ण के पीले रेशमी फहराते हुए दुपट्टे के दर्शन करता है। काले मेघों और राधा माधव की अंगच्छवियों मेंएकरूपता बताते हुए वह उनमे एक दूसरे का प्रतिरूप देखकरआनन्दित होता है । राधा में कृष्ण और कृष्ण में राधा के दर्शन तो होते होहै, यहाँ काले मेघो में चंचला भी राधा माधव की सी प्रतिमूर्ति बन गई है। एक ही में दो शरीर और दो शरीर में एक ही छवि प्रतिबिम्बित है ।

1- देव की दीपशिखा,पृ0 67 छं0 103

कवि की आध्यात्मिक दृष्टि का इससे बढ़कर और क्या उदाहरण हो सकता है ।

कवि देव द्वारा रचित अन्य ग्रन्थों से हमें तत्कालीन समाज की वेशभूषा प्रसाधन तथा खान पान, त्योहार पर्वोत्सव आदि के बारे में जानने में सहायता मिली । चूंकि कवि ने कृष्ण को नायक और राधिका को नायिका का आधार माना है फलतः मनोरंजन के साधनों में विशेषकर साथ खेलने वाले खेल चोर- मिहीचनी आदि का अधिक चित्रण किया । होली के अवसर पर राधा कृष्ण एक दूसरे पर रंग गुलाल डालते हैं । कहने का तात्पर्य यह है कि कवि ने लगभग-लगभग समाज के सभी पक्षों पर दृष्टि डाली है जिसके परिणामस्वरूप हमें समाज चित्रण के विभिन्न पहलुओं पर पर्याप्त सामग्री भी देव की कृतियों से मिली ।

कवि ने सबसे अच्छा चित्र तत्कालीन समय की गिरती हुयी राजनैतिक अवस्था का प्रस्तुत किया है :

साहिब अंध, मुसाहिब मूक, सभाबहिरो, रंगरीझकोमाच्यो ।
भूल्यो तहाँ, भटक्यो घट औघट ,बूड़िबे को काहू कर्म न बाच्यो ।
भेष न सूझ्यो, कह्यो समझ्यो न बतायो सुन्यो न कहा रुचि राच्यो
देव तहाँ निबरे नट की बिगरी मति को सगरी निसि नाच्यो ।।[1]

प्रस्तुत छन्द में कवि ने पतित राजनैतिक अवस्था का जो चित्र प्रस्तुत किया है

1- वैराग्यशतक: वर्तमान पच्चीसी ,पृ0 33 छं0 25

उससे समाज के स्वरूप की स्पष्ट झलक मिल जाती है ।

यद्यपि देव कवि कीजितेन ग्रन्थ है उन्हें स्वतंत्र ग्रन्थ नहीं कहा जा सकता क्योंकि सभीएक दूसरे पर अवलम्बित हैंफिर भीमहाकवि देव रीतिकाल के मान्य आचार्यों में माने जाते हैं ।[1]

भिखारीदास :

भिखारीदास जाति के कायस्थ एवं प्रतापगढ़ निवासी थे ।[2] ये संवत् 1791 से 1807 तक प्रतापगढ़ के अधिपति श्री पृथ्वी सिंह के भाई हिन्दूपति सिंह के आश्रम में रहे ।[3] आचार्य दास अट्ठारहवी शताब्दी के उत्कृष्ट आचार्यों के अन्तर्गत आते हैं । काव्य प्रयोजन के सम्बन्ध में निस्संदेह आचार्य दास का दृष्टिकोण पर्याप्त मौलिक है। आचार्य दास केअनुसारकाव्य के तीन हेतु हैं - शक्ति, सुकवियों द्वारा सीखी, हुई काव्य रीति एवं लोकानुभव इन्हीं तथ्यों को आचार्य दास ने काव्य-रथ के रूपक द्वारा स्पष्ट किया है ।[4] दास के अनुसार जैसे रथ धुरन्धर [बैल] सूत [रथवाहक] और चक्र [पहिया] इन तीनों में से किसी एक के अभाव में नहीं चल सकता , ठीक उसी प्रकार शक्ति काव्य रीति एवं लोकानुभव केबिना काव्य-रचना संभव नहीं ।

1- डॉ० नगेन्द्र देवऔर उनकी कविता ,पृ० 79
2-डॉ० शकुन्तला अरोरा: रीतिकालीन शृंगार कवियों की नैतिक दृष्टि पृ०9
3- वही
4- भिखारीदास:काव्यनिर्णय, पृ० 1 छं० 12

आचार्य भिखारीदास ने अपने आदर्श रूप में एक प्रकार से सूर, तुलसी, केशवदास, बीरबल प्रभृति कवियों के नाम गिनाये हैं :

एक लहैं तप पुंजन के फल ज्यों तुलसी अरु सूर गोसाईं ।
एक लहैं बहु सम्पति केशव भूषन ज्यों बरबीर बड़ाई ।।
एकन्ह को जस ही सों प्रयोजन है रसखानि रहीम के नाईं।
दास कवित्तन की चरचा बुधवन्तन को सुख दै सब ठाईं ।।[1]

काव्य की सजग कलात्मक साधना के लिए काव्य के समस्त स्पृहणीय तत्वों को सीखना अति अनिवार्य था । बिना सम्यक् जानकारी के काव्य-क्षेत्र में कूदना उस समय के कवियों केलिए सम्भव न था । अतः आचार्य भिखारीदास ने काव्यांग निरूपण के पूर्व हिन्दीकाव्य की भाषा के सम्बन्ध में पर्याप्त विवेचन किया है । आचार्य दास हिन्दीकाव्य परम्परा के प्रकृत के आचार्य माने जाते हैं ।[2] कविता की भाषा के सम्बन्ध में नहीं की । आचार्य दास ने काव्य की भाषा के लिए ब्रजभाषा को स्वीकार किया और कहा कि इसमें संस्कृत और फारसी के शब्दों का भी समावेश किया जा सकता है, यदि उन भाषाओं के शब्द हिन्दी में खप सकते हों । यह प्रयास भाषा की समृद्धि में पूर्ण सहायक हो सकता है ।[3] निस्सन्देह हिन्दी के लिए आचार्य भिखारीदास के भाषा विवेचन की यह नूतन उपलब्धि है ।

1- काव्य निर्णय, पृ० 4
2- डॉ० किशोरी लाल, रीति कवियों की मौलिक देन, पृ० 69
3- डॉ० भगीरथ मिश्र, हिन्दी काव्य शास्त्र का इतिहास, पृ० 136

भिखारीदास द्वारा प्रणीत काव्यशास्त्रीय ग्रन्थों में काव्य निर्णय, "श्रृंगारनिर्णय, रससारांश, तथा छंदोर्णव पिंगल आदि महत्वपूर्ण हैं ।[1]

काव्यनिर्णय नामक ग्रन्थ में काव्य प्रयोजन, अलंकारमूल वर्णन, रसांग वर्णन, ध्वनि वर्णन, गुणीभूत व्यंग्य वर्णन, गुणदोष आदिअन्य सभी अंगों का विवेचन किया गयाहै ।[2]

आचार्य दास के श्रृंगार एवं नायक-नायिका भेद निरूपक ग्रन्थ में श्रृंगार निर्णय का विशेष उल्लेख किया जाता है क्योंकि श्रृंगारनिर्णय नामक ग्रन्थ में भिखारीदास ने श्रृंगार और नायक नायिका भेद का बड़ा ही सर्वांग पूर्ण एवं वैज्ञानिक विवेचन प्रस्तुत किया है और यह क्रमबद्ध वैज्ञानिक विवेचन आचार्य देव की तुलना में अधिक महत्व का माना जाता है ।

आचार्य दास नेभी देवकवि की भाँति सामान्यतया श्रृंगार को दो भागों मेंबाँटा है [1] संयोग श्रृंगार [2] वियोग श्रृंगार । इसके निरूपण में परिपाटी- पालन की ही प्रवृत्ति पाई जाती है, किसी मौलिक, धारणा का परिचय नहीं मिलता । किन्तु आचार्य भिखारीदास ने वियोग श्रृंगार को चार भागों में बाँटा । वियोग श्रृंगार के चारों भेद के अन्तर्गत दस दशाओं की स्थिति मानी है ।[3] दस दशाओं का यह वर्गीकरण आचार्य भिखारीदास का अपना है। इन्हें उन्होंने युग के आचार्यों के कथित मार्ग से कुछ हटकर अपने ढंग

1- डॉ० भगीरथ मिश्र, हिन्दी काव्य शास्त्र का इतिहास, पृ० 147; भिखारी दास ग्रंथावली, [प्रथम खण्ड] सं० विश्वनाथ प्रसाद मिश्र, पृ० 5-6; डॉ० शकुन्तला अरोरा रीतिकालीन श्रृंगार कवियों की नैतिक दृष्टि।पृ० 9
2- डॉ० भगीरथ मिश्र, हिन्दी काव्य शास्त्र,काइतिहास पृ० 147
3- भिखारीदास ग्रंथावली: प्रथम खण्ड , पृ० 155

से प्रस्तुत किया है । भिखारीदास ने काफी गम्भीरता से नायिका भेद की असंगतियों को सुलझाया है ।[1]

आचार्य भिखारीदास ने नायिका भेद के अन्तर्गत एक अन्य नवीन उद्‌भावना की भी चर्चा की जाती है । वह नवीन उद्‌भावना यह है कि इन्होंने सभी रखैलियों को स्वाधीन पतिका [आदर्श पत्नी] के अन्तर्गत रखकर बड़ी बुद्धिमत्ता का परिचय दिया है ।[2] यद्यपि आचार्य दास को यह संकेत आचार्य देव से ही मिला था, किन्तु इसे ग्राह्य बनाने का समस्त श्रेय आचार्य दास को ही है ।

आचार्य दास का एक मात्र नवरस निरूपक ग्रन्थ रस सारांश है। इसग्रन्थ की रचना सं0 1791 में हुयी थी ।[3]

इस सारांश में नवरसों का विवेचन अत्यन्त संक्षिप्त शैली में किया गया है । "सारांश" शब्द भी इसके संक्षिप्तीकरण की ओर स्पष्ट संकेत कर रहा है । इस ग्रन्थ में प्रायः दोहों की अधिकता है। यह ग्रन्थ अन्य कवियों की तुलना में मौलिक माना गया है ।[4]

सभी आचार्य अथवा सभी कवि अपने से पूर्व हुयी रचनाओं को अथवा पूर्व रचित ग्रन्थों को आधार बनाते हैं । आचार्य भिखारीदास ने इस ग्रन्थ

1- डा0 नगेन्द्रः रीति-काव्य की भूमिका पृ0 163
2- डा0 नगेन्द्रः रीति-काव्य की भूमिका, पृ0 163
3- भिखारीदास ग्रंथावलीः प्रथम भाग, सं0 विश्वनाथ प्रसाद मिश्र,पृ085
4- मिश्रबन्धुः दूसरा भाग, द्वितीय संस्करण, पृ0 635

के विवेच्य विषयों के आधार ग्रन्थ काव्य प्रकाश,[1] दशरूपक[2], रसमंजरी[3], रसगंगाधर[4] तथा श्रृंगार तिलक[5] आदि हैं । किन्तु इन आधार ग्रन्थों को सर्वत्र महत्त्व नहीं दिया गया है, क्योंकि विवेचन आचार्य दास ने अपनेढंग से किया है ।

रस सारांश में श्रृंगारेतर रसों में केवल वीर रस के आलम्बन भेद से सत्यवीर, दयावीर, रणवीर और दानवीर जैसे चार भेदों की उद्भावना की है ।[6]

श्रृंगार निरूपण में आचार्य भिखारीदास ने पर्याप्त पाण्डित्य प्रदर्शित किया है । रस सारांश में विवेचित तथ्यों के आधार पर इसका सहज उद्घाटन किया जा सकता है । आचार्य भिखारीदास ने प्रथमतः परम्परानुसार श्रृंगार को मुख्यतः दो भागों [संयोग, वियोग श्रृंगार] में तो विभाजित ही किया था पुनः इनके दो- दो भेद कर डाले है :

[1] सम श्रृंगार [2] मिश्रित श्रृंगार ।

1- काव्य प्रकाश आचार्य मम्मट, [टीकाकार हरिमंगल मिश्र] :

2- दशरूपक: धनंजय [टीकाकार भोलाशंकर व्यास],

3- रस मंजरी भानु [टीकाकार जगन्नाथ पाठक]

4- रसगंगाधर: पण्डितराज जगन्नाथ

5- श्रृंगारतिलक: कालिदास

6- भिखारीदास ग्रंथावली: प्रथम खण्ड, संपादक आचार्य पण्डित विश्वनाथ प्रसाद मिश्र, पृ066

सम श्रृंगार से दास का अभिप्राय है – जहाँ नायक अथवा नायिका का संयोगात्मक अथवा वियोगात्मक वर्णन किया जाय ।[1] मिश्रित श्रृंगार से अभिप्राय है– जहा संयोग में वियोग और वियोग में संयोग का वर्णन किया जाय ।[2]

आचार्य दास ने मिश्रित (संयोग में वियोग) के उदाहरण इस प्रकार दिये हैं –

संयोग में वियोग –

सौतुख सपने देख सुनि, प्रियबिछुरनको बात ।
सुख होमैं दुख को उदय, दम्पत्ति हू ह्वै जात।।[3]

वियोग में संयोग : पत्री सगुन संदेसा लखि, पिय वस्तुनि को पाइ ।
अनुरागिनो वियोग में हर्षोदय है जाइ ।।[4]

आचार्य दास की यह धारणा मौलिक होने के साथ-साथ एतद्विषयक धारणा से कहीं अधिक व्यापक है।[5]

आचार्य भिखारीदास ने श्रृंगार की सीमा यहीं नहीं समाप्त की, अपितु उसके परिविस्तार को उत्तरोत्तर संवर्धित करने की पूर्ण सक्रियता दिखायी है। इस दृष्टि से इन्होंने संयोग श्रृंगार के दो मुख्य भेदों का उल्लेख

1– डॉ० सत्यदेव चौधरी: हिन्दी रीति परम्परा के प्रमुख आचार्य, पृ० 345
2– भिखारीदास ग्रंथावली: प्रथम खण्ड, पृ० 61 पृ० 345
3– भिखारीदास ग्रंथावली: छं० 420
4– भिखारीदास ग्रंथावली: छं० 423
5– डॉ० सत्यदेव चौधरी, हिन्दी रीति परम्परा के प्रमुख आचार्य, पृ० 346

किया है -

(1) संयोग श्रृंगार (2) सामान्य श्रृंगार

जहाँ दम्पति मिलकर विहार करते हैं, वहाँ संयोग श्रृंगार होता है और जहाँ हाव, हेला आदि अनुभावों के माध्यम से नायक-नायिका के सौन्दर्य वैविध्य का वर्णन होताहै, वहाँ सामान्य श्रृंगार होता है ।[1]

श्रृंगार को अन्य नैतिकता के आधार पर दो मुख्य भागों में विभाजित किया गया है -

(1) नायक जन्य श्रृंगार (2) नायिका जन्य श्रृंगार ।[2]

श्रृंगार निर्णय की भाँति रस सारांश में निरूपित नायक-नायिका भेद का आधार संस्कृत में लिखित भानुकृत रस मंजरी है ।[3] फिर भी आचार्य दास ने रसमंजरी में उल्लिखित सभी भेदों को ज्यों का त्यों नहीं ग्रहण किया, अपितु उनका वर्गीकरण उन्होंने अपने ढंग से किया है। इस संदर्भ में कुछ लोगों का कथन है कि भिखारीदास के रस सारांश में कथित नायक-नायिका भेद रस मंजरी से भिन्न होते हुए भी पूर्ववर्ती हिन्दी परम्परा से सर्वथा भिन्न नहीं है ।[4]

1- मिलि बिहरैं दंपति जहाँ सो संजोग सिंगार ।
भिन्न भिन्न छबिबरनिबे सो सामान्य बिचार ।।
- भिखारीदास ग्रंथावली प्रथम भाग, पृ0 42 छं0 284

2- भिखारीदास ग्रंथावली: प्रथम खण्ड, पृ0 64

3- डॉ0 किशोरी लाल: रीतिकवियों की मौलिक देन, पृ0 138

4- डॉ0 सच्चिदानन्द चौधरी: हिन्दी काव्य शास्त्र में रस सिद्धान्त पृ0 310

किन्तु प्रश्न यह उठता है कि क्या दास ने वर्गीकरण की वही प्रक्रिया अपनायी जो पूर्ववर्ती हिन्दी नायक नायिका भेद के आचार्यों में मिलती है। इस दृष्टि से देखने पर पता चलता है कि समस्त रीति परम्परा में आचार्य भिखारीदास ही ऐसे हैं आचार्य हैं, जिन्होंने नायक-नायिका भेद के क्रमबद्ध विवेचन में अपना पूर्ण पाण्डित्य प्रदर्शित किया है सर्वप्रथम आचार्य भिखारीदास की नवीनता का दर्शन हमें उनकी परकीया नायिका के प्रकृति भेदों में होता है।

आचार्य भिखारीदास ने दी सर्वप्रथम परकीया निरूपण में वर्गीकरण विषयक नूतन चेष्टा की। आचार्य दास ने सर्वप्रथम परकीया के महत्व को स्वीकार किया और श्रीमानों के भवन में रहने वाली अन्य धाराओं को भी स्वकीया की कोटि में रखने का सफल प्रयास किया।[1] आचार्य दास के इस परकीया प्रेम की प्रचुरता का उल्लेख करते हुए किसी ने लिखा है :

" हिन्दीकाव्य में इन्हें परकीया प्रेम की प्रचुरता दिखाई पड़ी जो रस की दृष्टि से रसाभास के अन्तर्गत आता है। बहुत से स्थलों पर तो राधा-कृष्ण का नाम आने से देव काव्य का आरोप हो जाता है और दोष का कुछ परिहार हो जाता है। पर सर्वत्र ऐसा नहीं होता। इससे दास जी ने स्वकीया का लक्षण कुछ अधिक व्यापक करना चाहा।[2]

1- शृंगार निर्णय: संपादक रामकृष्ण वर्मा, पृ0 22

2- हिन्दी साहित्य का इतिहास: आचार्य पं0 रामचन्द्र शुक्ल, पृ0 278

इस प्रकार आचार्य दास ने परकीया की इयत्ता को अन्य आचार्यों की तुलना में अधिक गहराई के साथ ग्रहण किया वास्तव में स्वकीया के अन्तर्गत परकीया का समावेश भिखारीदास की मौलिक स्थापना की ।[1]

अस्तु , दास की नायिका भेद के क्षेत्र में जो मौलिकता मिलती है, उसका निष्कर्ष यों है -

§क§ वर्गीकरण के माध्यम से विवेचित नायिका भेद बहुत व्यवस्थित है।

§ख§ दास जी की मान्यताओं में उत्तरोत्तर परिष्करण होता रहा इस कारण तद्‌विषयक तर्क एवं धारणाएँ अधिक पुष्ट एवं आधार है ।

§ग§ रखेलियों को भीस्वकीया के अन्तर्गत रखकर उस क्षेत्र में निश्चय ही उन्होंने एक नवीन धारण का परिचय दिया ।

§घ§ इनका जैसा वर्गीकरण न तो जल्दी संस्कृत मे न हिन्दी में देखने कोमिलता है ।

देव कवि की ही भाँति आचार्य भिखारीदास ने जो नायक नायिका भेद का चित्र दिया है उससे हमें नारियों की स्थिति के बारे में तो पता चलता ही है साथ ही संयोग और वियोग श्रृंगार के रूप में स्त्रियों के अलंकरण,खान पान वेशभूषा, मनोरंजन ,प्रसाधन आदि सभी पहलुओं पर प्रकाश पड़ता है ।

1- भिखारीदास ग्रंथावली: प्रथम भाग ,पृ0 63, डॉ0 किशोरीलाल, रीति कवियों की मौलिक देन, पृ0 140

संयोग के समय स्त्रियाँ और पुरूष दोनों ही अच्छे वस्त्र और आभूषण आदि से अलंकृत रहते थे अतः यह जानने में सहायता मिली कि कौन कौन से वस्त्र तथा आभूषण आदि प्रचलित थे। जबकि वियोग में स्त्रियाँ आभूषणों आदि का परित्याग कर देती थी तथा चंदन आदि लेप का प्रसाधन के रूप में प्रयोग करती थी जो उनके शरीर को शीतलता प्रदान करें।

संयोग होने पर नायक नायिका होली, आँख मिहीचनी जैसे खेल एक साथ खेलती थीं। इस प्रकार मनोरजंक के साधनें पर प्रकाश पड़ता है।

स्वकीया परकीया, गणिका आदि के भेद के आधार पर तत्कालीन समाज में नारियों के कितने रूप और क्या स्थान था यह पता चलता है।

कहने का तात्पर्य यह है कि भिखारी दास जी की काव्य -ग्रंथों से तत्कालीन समाज चित्रण करने में पर्याप्त सहयोग मिला।

<u>महाकवि भूषण :</u> भूषण महाराज कान्यकुब्ज ब्राह्मण कश्यप गोत्री त्रिपाठी [तिवारी] थे इनके पिता का नाम रत्नाकर था और ये त्रिविक्रमपुर [वर्तमान तिकवांपुर] में रहते थे। यहाँ कवि भूषण ने अपना वंश परिचय इन शब्दों में दिया है :

> द्विज कनौज कुल कश्यपी, रतनाकर सुत धीर।
> बसत त्रिविक्रमपुर नगर तरनि तनूजा तीर ।।[1]

1- भूषण ग्रंथावली शिवराजभूषण, छं0 26, महाकवि भूषण, भगीरथ प्रसाद दीक्षित पृ0 16 [भूमिका से], भूषण ग्रंथावली प0 विश्वनाथ बिहारी मिश्र, पृ0 5 [भूमिका से उद्धृत]

भूषण-चार भाई थे चिंतामणि भूषण, मतिराम नीलकंठ उपनाम जटाशंकर ।[1]

~~भूषण चार भाई थे~~ महाकवि भूषण की जन्म तिथि क्या थी इस पर विद्वानों में मतभेद है कुछ लोगों ने भूषण ग्रंथावली की भूमिका में भूषण की जन्म तिथि 1614 ई0 मानी है ।[2] किन्तु इस सम्बन्ध में उन्होंने जो प्रमाण दिया है इस पर स्वयं उन्होंने सन्देह प्रकट कियाहै। उन्होंने लिखा है :

" अब हमको भूषण का जन्म काल संवत् 1692 के आस-पास मालूम होता है ।[3] अन्य लोगों ने महाकवि भूषण का जन्म काल 1670 संवत् अर्थात् 1614 ई0 माना है। [4] कोई भूषण महाकवि की जन्म तिथि संवत् 1700 लिखते हैं अतः इन विभिन्न तिथियों को देखते हुए निश्चित रूप से कुछ नहीं कहा जा सकता । कुछ लोगों ने महाकवि भूषण के भाई मतिराम के आधार पर भूषण महाकवि की जन्म तिथि निकालने का प्रयास किया है। मतिराम उनके बड़े भाई थे और मतिराम की जन्म तिथि 1603 ई0 यदि ठीक है [5] तो भूषण महाकवि का जन्म उसके बाद हुआ होगा और वह 1692 संवत् या 1700 संवत् के आस पास हो सकता है ।

1- भूषण ग्रंथावली: संपादक तथा टीकाकार पं० श्याम बिहारी मिश्र; पृ० 5
2- भूषण ग्रंथावली : मिश्रबन्धु, ~~[तासरा संस्करण]~~ पृ० 6
3- हिन्दी नवरत्न मिश्रबन्धु ,पृ0 300
4- हिन्दी साहित्य काइतिहास, आचार्य रामचन्द्र शुक्ल [नौवां संस्करण] पृ0 254
5- मतिराम ग्रंथावली : [परिचय और भूमिका वाला भाग ।] पं0 कृष्ण बिहारी मिश्र, पृ0 25।

भूषण का वास्तविक नाम क्या था ? इस संबंध में विद्वानों में अनुमान से काम लिया । कुछ लोग भूषण का असली नाम मतिराम मानते हैं । इसके लिए उन्होंने जो प्रमाण दिया है, वह यह है -" कहते है सितारा गढ़ नरेश शाहू महाराज के राजकवि "मतिराम" राजा के पास अल्मोड़ा आए थे । उन्होंने राजा की प्रशंसा में यह एक कवित बनाकर सुनाया था । राजा ने दस हजार रुपये और एकहाथी इनाम में दिया ।[1] वह छन्द इस प्रकार है ।

पुरन पुरुष के परम दृग दोउ जानि,
कहत पुरान वेद बानि जोरि रट्ठि गई।
दिन पति ये निसाप्रति ज्यों,
दुहुन की कीरति दिसानि माँझि मढ़ि गई ।
रवि के करन भये महादानि यह,
जानि जिय आनि चिन्ता माँझि चढ़ि गई ।
तोहि राज बैठत कुमाऊँ की उदोतचन्द
चन्द्रमा को करक करेजहु ते कढ़ि गई ।[2]

आगे लिखा है कि -" चूँकि साहू महाराज के दरबारी कवि केवल भूषण ही थे अन्य कोई नहीं, अतः मतिराम हमारे चरित नायक भूषण का ही वास्तविक नाम था ।[3]

1- महाकवि भूषण, पं0 भगीरथ प्रसाद दीक्षित, पृ0 14 पृ0 15
2- वही,
3- वही, पृ0 15

किन्तु प्रश्न यह है कि भूषण नाम यदि वास्तविक नाम नहीं था तो भूषण कवि के नाम से इनकी प्रसिद्धि कैसे हुयी । इसके बारे में कहा गया कि भूषण कवि चित्रकूटाधिपति हृदयराम के पुत्र रुद्रराम सोलंकी के आश्रय में कुछ दिन रहे । इनकी कवित्व शक्ति से प्रसन्न हो रुद्रराम ने इन्हें सन् 1666 लगभग "कवि भूषण" की उपाधि दी और तभी से भूषण कहलाने लगे । चित्रकूट नरेश द्वारा दी गयी उपाधि की बात को स्वयं कवि ने स्पष्ट कहा है :

कुल सुलंक चित्रकूटपति, साहस सील समुद्र ।
कवि भूषण पदवी दई, हृदैराम सुत-रुद्र ।[1]

कवि भूषण के बारे में एक रोचक बात यह प्रचलित है कि कवि भूषण जो पहले बिल्कुल अपढ़ और निकम्मे थे एवं चिंतामणि कमासुत और कुटुम्ब के आधार थे । भूषण सदा घर बैठे बैठे बगलें बजाया करते थे और बड़े भाई की कमाई से पेट भरा करते थे । एक दिन भोजन करते हुए भूषण ने अपनी भावज से नमक माँगा । उसने क्रोध से कहा-" हाँ, बहुत सा नमक तुमने कमाकर रख दिया है न जो उठा लाऊँ । यह बात इन्हें असह्य हो गई और उन्होंने मुंह का ग्रास उगलकर कहा-"अच्छा अब जब नमक कमाकर लावेंगे, तभी यहाँ भोजन करेंगे । " ऐसाकहकर भूषण जी घरसे खाली हाथ यों निकल पड़े और कहते हैं इन्होंने अपनी जिह्वा काटकर श्रीजगदंबाजी पर चढ़ा दी और वे एकदम भारी कविवर हो गये ।[2] यद्यपि इस बात में अतिशयोक्ति हो सकती है किन्तु फिर भी थोड़ी बहुत

1- भूषण: आचार्य विश्वनाथ मिश्र, , शिवराजभूषण छं0 28

2- भूषण ग्रंथावली डॉ0 श्याम बिहारी, पृ0 6-7

सच्चाई तो अवश्य ही होगी । भूषण के आश्रयदाता के बारे में भूषण सबसे पहले संवत् 1721 या 1723 के आस पास चित्रकूट नरेश के पास पहुँचे । कहते हैं कि सोलंकियों का राज्य 1728 संवत् में महाराज छत्रसाल ने छीन लिया । अतः भूषण 1728 के पूर्व ही चित्रकूटाधिपति के पास गए होंगे । औरंगजेब से मिलने के लिए शिवाजी जयसिंह के साथ सन्धि के पश्चात् दिल्ली आये थे । यह भेंट 1666 ई0 अर्थात् 1723 संवत् में हुई । इसके अनन्तर शिवाजी औरंगजेब के जाल से मुक्त होकर दक्षिण लौट आए । इससे शिवाजी उत्तर भारत में प्रख्यात हो गये । संभवतः भूषण इस ख्याति को सुनकर संवत् 1624 में रायगढ़ आए । यहाँ लगभग छः वर्ष तक वे छत्रपति शिवाजी के आश्रय में रहे । उन्होंने अपना प्रसिद्ध ग्रंथ शिवराज भूषण यही पर संवत् 1730 में पूर्ण किया ।[1] शिवराज भूषण के निर्माण काल तक किन-किन दरबारों में भूषण जा चुके थे इसका उल्लेख स्वयं कवि ने एक छन्द में कर दिया है :

मोरंग जाहु कि जाहु कुमाऊँ,
सिरी नगरे को कवित्त बनाये ।
बान्धव जाहु कि जाहु अमेरि कि,
जोधपुरे कि चितौरहि धाये ।।
जाहु कुतुब्ब कि एदिल पै कि,
दिल्लीसहु पै किन जाहु बुलाये ।

1- भूषण और उनका साहित्यः राजमल बोरा, पृ0 65

भूषन गाय फिरी महि मैं,

बनिहै चित चाहि सिवाहि रिझाये ।।[1]

इससे स्पष्ट है कि भूषण कवि मोरंग , कुमाऊँ, श्रीनगर, रीवाँ ,अमेर, जोधपुर चित्तौण, कुतुबशाह और आदिल शाह के वंशजों के दरबारों में जा चुके थे तथा दिल्ली के बादशाह से इन्हें बुलाने का निमंत्रण भी मिल चुका था । इसके अतिरिक्त प्रारंभ में चित्रकूटपति हृदयराम सुरकी द्वारा हमारे चरितनायक मनिराम को "कवि भूषण " की उपाधि प्राप्त हो चुकी थी अतः उक्त दरबारों में उनका आना जान निर्विवाद है ।

कवि भूषण के आश्रयदाताओं की सूची बहुत लम्बी है , जिनके नाम इस प्रकार हैं :

चित्रकूटपति हृदयराम सुरकी वि० संवत् 1750 - 59 तक

कुमाऊँ नरेश उद्योतचंद वि० सं० 1731-55 तक

श्रीनगर [गढ़वाल] नरेश फतहशाह 1741 -73 तक

रीवाँधिपति अवधूतसिंह वि० सं० 1757- 1812 तक

जयपुर नरेश सवाई जयसिंह 1756 - 1812 तक

सितारानरेश छत्रपति साहू 1765 - 1805 तक

बूंदी नरेश रावराजा बुद्धसिंह 1764 - 98 तक

दिल्ली नरेश जहाँदार शाह 1769 तक

मैहू नरेश अनिरुद्ध 1770 के लगभग

असोथर नरेश भगवन्तराय खीची 1770- 97 तक

बाजीराव पेशवा वि० सं० 1777- 97 तक

1- शिवराजभूषण, पृ० 250

चिमनाजी चिन्तामणि 1780 के आसपास

चित्रकूट पति बलन्तराय 1780 के लगभग

पन्ना नरेश छत्रसाल । 1720- 91 तक

एक स्वाभाविक प्रश्न यह है कि कवि भूषण इतने लोगों में आश्रय में क्यों रहे । बात यह कि हमारे चरित नायक महाकवि भूषण ने (राजनीतिक तथा साहित्यिक) दोनों मार्गों का अवलंबन ले रखा था एक ओर तो वे काव्य रचना द्वारा राज दरबारों, सैनिकों, सरदारों और जनता में उत्तेजना उत्साह और नवजीवन का संचारकर नवोद्भाविनी भरने का प्रयत्न करते थे । दूसरी ओर वे सजीव ओजस्विनी मौलिक वाणी द्वारा राजनीतिक प्रणाली से उत्तेजना भरकर समाज के नेताओं को आलोड़ित करने में लगे थे । इस प्रकार से मौखिक और लिखित दोनों प्रकार से जागृति की जा रही थी । इसका स्वाभाविक प्रभाव पड़ा कि हिन्दुओं में वैराग्य, अनुत्साह, निर्जीवता, अकर्मण्यता एवं मन्दता का जो प्रबल संचार हो रहा था वह दूर हो गया । वे अनुभव करने लगे कि हम भी पुराने गौरव को प्राप्त कर सकते हैं ।

भूषण ने इस महान कार्य के लिए बाबर, हुमायुँ, अकबर, जहाँगीर, और शाहजहाँ इन पाँचों मुगलबादशाह का सहारा लिया था जिनकी चर्चा अपनी रचनाओं में उन्होंने बार बार की है तथा औरंगजेब की भर्त्सना करते हुए "बब्बर अकबर के बिरद बिसौरे है, जैसी पंक्ति स्थान-स्थान पर भूषण की रचनाओं में मिलती है।

1- महाकवि भूषण, भगीरथ प्रसाद दीक्षित, भूषण और राज्याश्रय, पृ0 42 ।

परिणामतः औरंगजेब विरोधी मुसलमान भी हिन्दुओं के सहयोग की इच्छा करके अपने राज्यों को वापिस पाने की अभिलाषा से इनके साथ हो गये । इससे स्वभाविक दोनों में राष्ट्र निर्माण की भावना बढ़ने लगी । इस प्रकार सारे देश में उत्साह की एक लहर दौड़ा देना भूषण की रचना का प्रमुख कार्य बन गया ।[1]

इस महान कार्य को करने के लिए और जन-जन में उत्साह की लहर दौड़ाने केलिए जगह-जगह जाना आवश्यक था संभवतः इसीलिए भूषण महाकवि को इतने आश्रयदाताओं का आश्रय लेना पड़ा ।

इस प्रकार भूषण ने भारत के जन-जन को शिवाजी का प्रतिरूप बना देना चाहा था जिसमें बहुत कुछ अंश में वह सफलीभूत भी हुए । इस आदर्श की स्थापना करने में भूषण को कितनी सफलता मिली इस उनके शब्दों से आंका जा सकता है । कविभूषण कहते है :

> नृप समाज में आपको होम बड़ाई आज ।
>
> ताहि तभे सिवराज के करत कवित कविराज ।।[2]

तथा -

> को कविराज सभाजित होत,
>
> सभा सरजा के बिनागुन गाये ।[3]

1- महाकवि भूषण, भगीरथ प्रसाद दीक्षित [भूमिका मे आश्रयदाताये] पृ0 19-20

2- शिवराजभूषण, पृ0 278

3- वही, छं0 153

इन कथनों से तत्कालीन स्थिति का कुछ दिग्दर्शन हो जाता है साथ ही यह भी अनुमानित हो जाता है कि भूषण ने कितना महत्वपूर्ण कार्य डाला था। इस भावना को देश में भरने का कार्य 2150 वर्ष से क्षीण पड़ा हुआ था उसको सजग करके नवजीवन का विस्तार कर देना ही इस रचना की विशेषता है।[1]

कवि भूषण की रचनाओं के विषय में भी मतभेद है। कोई भूषण की चार रचनाओं शिवराजभूषण, भूषण हजारा, भूषण उल्लास और दूषण उल्लास का उल्लेख करता है।[2] कुछ ने इन चार रचनाओं के अलावा अन्य दो रचनाओं शिवावावनी तथा छत्रसाल दशक का भी लिया है।[3] किन्तु ऊपर के चार ग्रंथों के बारे में यह कहा गया कि किसी स्थान पर विशेष प्रामाणिक रीति से न सुने जाने के कारण ये ग्रन्थ मान्य नहीं हैं।[4] फलतः इनकी जो रचनाएं उपलब्ध हैं वह निम्न प्रकार से हैं :

<u>शिवराजभूषण</u> : शिवराजभूषण भूषण महाकवि का एक मात्र प्रामाणिक और श्रेष्ठ रचना मानी गयी है जिसका रचना काल कवि भूषण ने अपने

1- महाकवि भूषण, भगीरथ प्रसाद दीक्षित, पृ0 20

2- शिवसिंह सरोज, संपादक डॉ0 किशोरी लाल गुप्त, पृ0 761।
(ठाकुर शिवसिंहसेंगर ने 1878 ई0 में हिन्दी कवियों का वृत्त संग्रह शिव सिंह ने)

3- भूषण ग्रंथावली : मिश्रबन्धु, सातवाँ संस्करण पृ0 3,

4- वही,

ग्रंथ में इस प्रकार दिया है :

> संमत सत्रह सौ तीस पर सुचि बदि तेरसिभानु ।
>
> भूषन सिवभूषन कियौ, पढ़ौ सकल सुजान ।।[1]

इस दोहे पर इस ग्रंथ का रचनाकाल 1730 संवत् माना गया है ।[2]

शिवराजभूषण के आरम्भ में गणेश जी की स्तुति है, तत्पश्चात भवानी की । इसके बाद शिवाजी के पूर्वजों का अति संक्षिप्त परिचय प्रबन्धात्मक ढंग से परिचय दिया गया है । कवि ने अपना संक्षिप्त परिचय भी दिया है। बाद में ग्रन्थ लिखने का उद्देश्य इन शब्दों में किया है :

> सिव चरित लखि यौं भयौ, कविभूषन के चित।
> भाँति-भाँति भूषननि सौं, कवि भूषन करौं कित ।[3]
> सुकबिन सौं सुनि-सुनि कछुक, समुझि कबिन कौ पन्थ ।
> भूषन भूषनमय करन, शिवभूषन शुभ ग्रन्थ ।[4]

भूषण ने इस एक ग्रन्थ को रचना शिवाजी के चरित को भूषित करने के लिए की है । सुकवियों के पंथ को अपनाकर भूषण अपने ग्रन्थ को भूषणमय बनाता थे । ग्रन्थ के नाम को सार्थकता के संबंध में किसी विद्वान ने कहा है -

(1) शिवाजी के यश वर्णन जिसमें किया गया है अर्थात् जिसके योग से उसे भूषण प्राप्त हुआ है। यह एक अर्थ है । (2) सिवा इसके भूषण का अर्थ अलंकार होता है। इससे अलंकारशास्त्र पर यह ग्रन्थ लिखा गया है। ऐसा अर्थ भी इसमें

1- भूषण आचार्य, विश्वनाथ प्रसाद मिश्र, पृ0 71, भूषण और उनका
2- वही, पृ0 81, साहित्य, रामरूप बोरा, पृ0 70
3- भूषण आचार्य विश्वनाथ प्रसाद मिश्र, छं0 348
4- वही, पृ0 29

निहित है [3] भूषण कवि ने इस ग्रंथ की रचना की यह तीसरा अर्थ भी इससे व्यक्त होता है ।[1]

शिवराजभूषण इस ग्रन्थ की रचना का उद्देश्य लोक धर्म की रक्षा करने वाले नायक का गुणगान कर लोक धर्म की रक्षा, का आग्रह करना तथा राष्ट्रीय भावना को अभिव्यक्ति देना है ।[2]

शिवाबावनी : शिवाबावनी के बारे में कहा गया कि यह कोई स्वतंत्र ग्रंथ नहीं, बल्कि भूषण के 52छन्दों का संग्रह मात्र है ।[3] संभवतः 52 छन्द होने के कारण ही इसे बावनी कहा गया । शिवाबावनी के बारे में कहा गया कि संवत् 1946 से पूर्व इसका अस्तित्व नहीं था ।[4]

शिवाबावनी में प्रधान रूप से शिवाजी के यश और गौरव का गान है। अपवाद रूप में कुछ छन्दों को छोड़कर सभी छन्द शिवाजी से सम्बन्धित हैं । प्रत्येक छन्द एक स्वतंत्र खण्ड चित्र प्रस्तुत करता है। मुगलों के अत्याचार का वर्णन शिवाजी की प्रतिक्रिया, समयानुकूल देश की रक्षा करने में शिवाजी का आगे बढ़ना, शिवाजी द्वारा शत्रुओं का आतंकित रहना, इस्लाम के अत्यचार से हिन्दू

1- सरदेसाई, शिवाजी सौवेनिर हरतेच्युरी सिलेब्रा न , बाम्बे, पृ03।
2- राजमल बोरा, भूषण और उनका साहित्य, पृ0 72
3- भूषण ग्रंथावली, मिश्रबन्धु [सातवाँ संस्करण] पृ0 38
4- भूषण आचार्य विश्वनाथ प्रसाद मिश्र, पृ0 84 ।

धर्म की रक्षा करने में शिवाजी का नेतृत्व आदि के खण्ड चित्र बड़ी ही ओजस्वी शैली में शिवाबावनी में मिलते हैं । शिवाबावनी की प्रसिद्ध पंक्ति है," शिवाजी न होते तो सुनति होती सबकी ।[1]

छत्रसाल दशक - शिवाबावनी की तरह छत्रसाल दशक भी पीछे से किया मुक्त संग्रह मात्र है जिसे भूषण की सर्वथा प्रामाणिक रचना नहीं माना गया क्योंकि इसके छंद संदिग्ध है, जो इस बात को अप्रमाणित करते हैं कि यह प्रामाणिक रचना है ।[2]

छत्रसाल दशक में दो दोहे और बाद में दस कवित्त संग्रहीत हैं, जिनमे प्रथम दोनो दोहों में बुन्दी के दोनों छत्रसाल और शत्रुसाल का उल्लेख हुआ है । बाद के दस कवित्तों में प्रथम दो कवित्तो में बूँदी नरेश छत्रसाल हाड़ा का वर्णन है और बाद में आठ कवित्तों में छत्रसाल बुन्देला की वीरता का वर्णन बड़ी ही ओजस्वी भाषा में किया गया है । [3]

स्फुट काव्य : स्फुट काव्य को स्वतंत्र रचना के रूप में नहीं स्वीकार किया इसमें शिवराजभूषण शिवाबावनी और छत्रसाल दशक के छंद भी सम्मिलित हैं ।[4]

1- विस्तृत विवरण, भूषण कृत: शिवाबावनी।

2- 7राजमल बोरा, भूषण और उनका साहित्य,पृ0 82

3- विस्तृत विवरण, भूषण कृत, छत्रसालदशक,

4- राजमल बोरा: भूषण और उनका साहित्य,पृ0 82-83

श्रृंगार रस सम्बन्धी स्फुट काव्य : कवि ने कुछ छन्द नायिका भेद का वर्णन करने की दृष्टि से लिखे हैं। जिसके अन्त में स्पष्ट कर दिया कि इसे मुग्धा और इसे उत्तमा नायिका कहते हैं।[1]

कवि भूषण की ये रचना उनके काव्य की मूल प्रवृत्ति से हटकर हैं। सहज ही इस बात पर विश्वास नहीं होता कि वीर रस की कविता लिखने वाला कवि श्रृंगार के वर्णन वह भी घोर रति का वर्णन कैसे कर सकता है। संभवतः तत्कालीन साहित्यिक प्रवृत्ति से प्रभावित होकर भूषण ने ऐसे पद्य लिखे हों।

भूषण महाकवि की मृत्यु के बारे में कहा कि घटनाओं के आधार पर 1707 ई0 और अधिकतम 1730 तक भूषण का रहना स्वीकार किया गया।[2]

कवि भूषण की कृतियों से हमें तत्कालीन समाज की राजनैतिक व्यवस्था का यथार्थ चित्र मिलता है कवि ने किले आदि के जो वर्णन किये हैं उससे भवन निर्माण कला पर प्रकाश पड़ता है। इसी प्रकार शिवाजी के शत्रु पक्ष से जो विभिन्न जाति के लोग युद्ध के लिए आये हैं उनसे जाति-व्यवस्था पर प्रकाश पड़ता है जैसे-

> फौजें सेख सैयद और पठानन की
>
> मिलि इखलास काहू मौर न सम्हारे हैं।[3]

1- भूषण आचार्य विश्वनाथ प्रसाद मिश्र, पृ084।

2- रामचन्द्र बोरा: भूषण और उनका साहित्य पृ090

3- भूषण ग्रंथावली: शिवाबावनी, मिश्रबन्धु,छं0 25

इसी प्रकार राज दरबार में मनाये जाने वाले जशन के बारे में कवि ने जो लिखा उससे उस समय का वैभव विलासिता तथा उत्सव आदि पर प्रकाश पड़ता है :

जशन के रोज यों जलूस गहि बैठो जोड़व
इन्द्र आवै सोऊ लागै औरंग को परजा ।[1]

इसी प्रकार श्रृंगार संबंधी स्फुट काव्य में कवि ने जो नायिका भेद चित्र उपस्थित किया है उससे विभिन्न प्रकार की स्त्रियों की श्रेणी और स्थिति पर प्रकाश पड़ता है । इसी तरह से कवि ने शिकार पर जाते साहजी आदि का जो चित्र खींचा है उससे मनोरंजन के साधन का पता चलता है जैसा कि मनोरंजन के साधन वाले अध्याय में दिया है । इसी प्रकार एक छन्द है इसमें तत्कालीन समाज में उच्चवर्गीय स्त्रियों का खान पान आभूषण और निवास स्थान सबका एक साथ चित्र मिलता है इसके साथ ही ये समस्त सुख छिन जाने पर निम्नवर्गीय स्त्रियों की भाँति उनकी दयनीय दशा का मनोहारी चित्रण कवि ने किया है :

" ऊँचे घोर मन्दर के अन्दर रहनवारी,
ऊँचे घोर मन्दर के अन्दर रहाती है ।
कन्दमूल भोग करैं कन्द मूल भोग करैं,
तीनि बेर खाती सो तीन बेर खाती हैं ।।
भूखन सिथिल अंग भूखन सिथिल अंग,
बिजन डुलातीं ते बिजन डुलाती हैं ।

1- भूषण आचार्य विश्वनाथ प्रसाद मिश्र, छं० 179

भूषन भनत सिवराज बीर तेरे त्रास ,

नगर जड़ाती ते वै नगन जड़ाती हैं ।[1]

प्रस्तुत छंद में उपरोक्त सभी बातों के अलावा उच्चवर्गीय तथा निम्नवर्गीय स्त्रियों का स्थिति का पता चलता है । इस प्रकार भूषण महाकवि की कृतियों ने समाज-चित्रण के लिए हमें विशेष सामग्री दी ।

तोष : तोष को अधिकांश लोगों ने कवि ही माना है किन्तु कुछ ने कवि के साथ-साथ तोष को आचार्य की कोटि में भी रखा है तथा उन्होंने उनके काव्यांगों के विवेचन विषयक महत्व की भूरिश: श्लाघा की है ।[2] तोष कवि के नाम के संबंध में हिन्दी के विद्वानों में पर्याप्त मत भेद है। कोई इनको तोषनिधि कहते है [3] जबकि अन्य विद्वानों ने तोष और तोषनिधि नामक दो कवियों के अस्तित्व को पृथक् कवि माना है ।[4] तोष और तोषनिधि को प्राप्त रचनाओं से इन दोनों कवियों के भिन्नत्व का प्रमाण स्वत: मिल जाता है । तोष कवि का एक मात्र ग्रन्थ, सुधानिधि, है ।[5] सुधानिधि श्रृंगार

1- भूषण ग्रंथावली: शिवाबावनी कवित्त मिश्रबन्धु (सातवां संस्करण)

2- मिश्रबन्धु, मिश्रबन्धुविनोद, द्वितीय भाग, द्वितीय संस्करण पृ० 413 ।

3- आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, हिन्दी साहित्य का इतिहास,पृ० 282 ।

4- साहित्य समालोचक त्रैमासिक, भाग 1, अंक 3 प० 220

5- डॉ० किशोरी लाल, रीति कवियों की मौलिक देन,पृ० 125

एवं नायिका भेद निरूपण से सम्बन्धित एक उत्कृष्ट रीति ग्रन्थ है ।[1]

तोष ने रस विवेचन के सम्बन्ध में प्रथमतः चार प्रकार के शृंगार का उल्लेख करने के अनन्तर नवरस का वर्णन किया है ।[2] यद्यपि यह कहा तोष ने रस विवेचन में संस्कृत के नाट्यशास्त्र [भरतमुनि] रसमंजरी [भानुभट्ट] शृंगार प्रकाश [भोज] रसार्णव सुधाकर [शिंगभूपाल], साहित्य दर्पण [विश्वनाथ] रसगंगाधर [जगन्नाथ] आदि ग्रन्थों से पूर्ण सहायता ली है, फिर भी यह नहीं कहा जा सकता कि सुधानिधि के सभी लक्ष्य एवं लक्षण संस्कृत के उक्त ग्रंथों से लिये गये हैं ।[3] रस विवेचन के अन्तर्गत कविवर तोष ने कुछ नूतन दृष्टि का भी उपयोग किया है । शृंगारेतर रसों के अरूपण में उन्होंने वात्सल्य और भक्तिरस को करुण[4] और शान्त रस[5] में सन्निविष्ट करने का सफल प्रयत्न किया है ।

कविवर तोष ने "सुधानिधि" ग्रंथ में अन्य रसों की तुलना में शृंगार का विशद एवं सूक्ष्म विवेचन प्रस्तुत किया है जिसे भागों में बाँटा है संयोग, वियोग सामान्य तथा मिश्रित । संयोग , वियोग का विवेचन तो रसशास्त्रीय ग्रन्थों में प्रायः किया गया है, किन्तु सामान्य और मिश्रित शृंगार का निरूपण सर्वथा मौलिक है। सामान्य और मिश्रित से कविवर तोष

1- डॉ० किशोरीलाल, रीति कवियों की मौलिक देन पृ०125
2- तोषः सुधानिधि ,पृ० 151 छं० 445
3- डॉ० किशोरी लाल, रीतिकवियों की मौलिक देन,पृ० 125
4- तोष सुधानिधि पृ० 179 छं० 538
5- तोष सुधानिधि पृ० 179

का तात्पर्य इस प्रकार है। सामान्य श्रृंगार के अन्तर्गत नायिका की प्रेम क्रीड़ा और उसकी चेष्टाओं का समावेश किया जाता है[1] तथा मिश्रित श्रृंगार में संयोग में वियोग का मिश्रण और वियोग में संयोग को मिश्रण, का समावेश है। तोष की यह कल्पना साधारहै, क्योंकि संयोग में वियोग और वियोग में संयोग की स्थितियाँ प्रायः अनुभव की जाती हैं। यद्यपि रीति युग के अन्य कवियों ने इस प्र कार के मिलन स्थिति की कल्पना की है किन्तु उनकी संख्या बहुत अल्प है। मिलन की भिन्न स्थितियों और स्थान का मिलन तोष ने इस प्रकार किया है -धाई के घर का मिलन सूने सदन का मिलन, जल बिहार का मिलन, भय का मिलन, माइके का मिलन, वर्षा का मिलन आदि।[2]

कविवर तोष ने सुधानिधि "नामक ग्रंथ में नायक नायिका भेद का निरूपण विस्तार पूर्वक किया है। पहले तो कवि ने परकीया और सामान्य का विवेचन किया है किन्तु आगे चलकर एक-एक के कई भेद है जैसे परकीया स्त्री के भेद देखिए,

परकीया की प्रकृति पुनि, सुकवि सविध बखानि।
तिनको तेरह भेद हैं, उदाहरण में जानि।।[3]

तोष कवि ने दूतियों की यथी चर्चा की है जिसमें हलवाइन, पुरिहारिन, पहुइनि कोइरिन आदि नवीन दूतियों की चर्चा की है। इस प्रकार कवि तोष के एक मात्र ग्रन्थ "सुधानिधि" से तत्कालीन समाज में स्त्रियों का स्थान वैसा कि

1- तोष सुधानिधि पृ0 118
2- वही, पृ0 114,115
3- तोष सुधानिधि में नायिका परकीया नायिका भेद के अन्तर्गत।

नायिका भेद और दूतियों के नाम से पता चलता है साथ ही दूतियों के माध्यम से स्त्रियों की विभिन्न जाति का तथा उनके कार्य का पता चलता है।

कवि का नूतन विश्लेषण मिलन की भिन्न स्थितियाँ और मिलन से अप्रत्यक्ष रूप से तत्कालीन समाज में प्रचलित वेशभूषा पर प्रकाश पड़ता है। प्रारम्भ से ही भारतीयों की यह विशेषता रही कि लोग मौसम तथा समय के अनुसार वस्त्र धारण करते हैं। जैसे- वर्षा ऋतु में नायिका के लाल चुनरी ओढ़ रखी है किन्तु वर्षा की बूँदों से वह नष्ट हो जायेगी फलतः वह नायक से प्रार्थना करती है कि मेरी सुरंग चुनरी वर्षा में भीग जायेगी अतः आप आकर उसे बचा लें :

> लाला। मेरी सुरंग चुनरी भीजै। लेहु बचाय आय पिय
> मोको, बूंद परै रँगछीजै।[1]

इसी प्रकार संयोग वियोग की अवस्था का जो चित्रण कवि ने किया उससे समयानुसार वस्त्राभूषण प्रसाधन आदि के विषय में प्रकाश पड़ता है इस प्रकार तोष कवि के ग्रन्थ सुधानिधि से तत्कालीन समाज के समाज चित्रण में विशेषकर वस्त्रादि, पर्वादि के संदर्भ में सहायता मिली।

बोधा : बोधा का कविताकाल प्रायः संवत् 1830 से 1860 तक स्वीकार किया जाता है। रीतिकाल की स्वच्छन्द काव्यधारा में बोधा कवि

1- तोष ब्रजभाषा साहित्य का ऋतु सौंदर्य सं० प्रभुदयाल मीतल, पृ०89 छं० 25

का विशेष महत्व है । बोधा के हिन्दी ग्रंथों के विवरण में बोधा द्वारा रचित बागवर्णन , बारहमासी, फूलमाला, पक्षीमंजरी, पद्ममंजरी, नायक नायिका कथन आदि ग्रंथों का उल्लेख मिलता है किन्तु इनकी उपलब्ध और प्रकाशित ग्रंथ दो ही हैं - विरह वारीश एवं इश्कनामा है ।[1]

बोधा पन्नानरेश, खेतसिंह के दरबारी कवि थे । यह पन्ना दरबार की एक वेश्या सुभान के प्रति आसक्त थे जिससे प्रेरित होकर यह काव्य रचना किया करते थे । इनका काव्य अत्यन्त मर्मस्पर्शी है जिसमें प्रेमपीर की प्रधानता है ।[2]

बोधा चूंकि दरबारी कवि थे अतः दरबार में होने के नाते तत्कालीन समाज का चित्रण अनायास ही इनके ग्रंथों में मिल जाता है भले ही बोधा ने प्रेमकाव्य लिखा है ।

घनानंद : घनानंद कवि जाति के कायस्थ थे और दिल्ली के सम्राट मुहम्मदशाह रंगीले के मुन्शी थे ।[3] घनानंद का जीवन-वृत्त बहुत कुछ जनश्रुतियों पर आश्रित है जिसमें एक बात यह भी कही गयी कि ये दरबार की "सुजान" नामक वेश्या पर बुरी तरह आसक्त थे किन्तु किसी कारण वश इन्हें सम्राट ने दरबार से निकाल दिया ये वृंदावन चले आये तथा वैष्णव धर्म के निम्बार्क सम्प्रदाय में दीक्षित हो गये ।[4]

1- बोधा ग्रंथावली; संपादक विश्वनाथ प्रसाद मिश्र

2- डा० शकुन्तला अरोरा, रीतिकालीन श्रृंगार कवियों की नैतिक दृष्टि पृ० 21

3- डा० ग्रियर्सन, दि माडर्न वर्नाक्युलर लिटरेचर आफ हिन्दुस्तान,पृ० 92, 347

4- आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, हिन्दी साहित्य का इतिहास, पृ० 401

संभवतः इसी सुजान के कारण कवि ने सुजानहित नामक ग्रंथ की रचना की । वैसे तो घनानंद की 41 ग्रंथों का पता चला है जो घनानंद ग्रंथावली" में संग्रहीत है ।[1]

घनानंद के निधन के बारे में कहा जाता है कि ये नादिरशाह के आक्रमण में मारे गये । किन्तु ऐतिहासिक दृष्टि से उचित नहीं लगता क्योंकि नादिरशाह का आक्रमण दिल्ली पर हुआ था मथुरा में नहीं और इससे ज्यादा प्रमाण यह है कि नादिरशाह के आक्रमण का कैसा भयानक दृश्य और परिणाम था उसका वर्णन कवि लिखते है ।[2] स्पष्ट है कि नादिरशाह के आक्रमण में कवि की मृत्यु नहीं हुयी । हो सकता है अहमदशाह अब्दाली के आक्रमण में कवि की मृत्यु हुयी हो क्योंकि अब्दाली आक्रमण मथुरा पर पहला आक्रमण सन् 1757 और दूसरा 1761 में हुआ था ।

घनानंद जी की रचनाओं से जहाँ समाज चित्रण के विभिन्न पहलुओं पर प्रकाश पड़ वहीं समय-समय पर विदेशी आक्रमणों आदि के वर्णन से तत्कालीन राजनैतिक दशा को जानने में भी सहायता मिली ।

1- घनानंद डॉ0 गंगाप्रसाद सारस्वत, पृ0 19

2- दिल्ली भई बिल्ली कटैला कुत्ता देखि डरी
मुग्धी ज्यु अहमदशाह पहिले अब कह टोकिये ।
बाबर हुमायूँ को घरायो अब अंत
ताको यह कैसो सोम बरखा करम कैलिख।
—घनानंद ग्रंथावली, पृ0 61 भूमिका से उद्धृत

आलम: आलमः का रचना काल संवत् 1640 से संवत् 1680 निश्चित है ।[1] आलम के ग्रन्थों में आलम के कवित्त, कवित्त, संग्रह छप्पय, सुदामा चरित, श्याम-स्नेही , माधवानलकामंदला नामक ग्रंथों का उल्लेख है जिसमें से प्रथम पाँच ग्रंथो को मूल रूप से एक ही माना गया ।[2]

आलम कवि के विषय में कहा जाता है कि वे सनाढ्य ब्राह्म्मण थे तथा औरंगजेब के पुत्र मुहम्मदशाह के दरबार में थे ।[3]

कुमारमणि : कुमार मणि का एकमात्र काव्य "रसिक रसाल" है इस ग्रन्थ का आधार आचार्य मम्मट कृत काव्य प्रकाश है ।[4] काव्य प्रयोजन के संबंध में कुमारमणि को धारणा उनके धारणा उनके शब्दो में इस प्रकार है :

अर्थ धर्म जस्ह कामना, लहियुत, मिटत विषाद ।
सहृदय पावत कवित में, ब्रह्म्मानन्द सवाद ।।[5]

इस दृष्टि से कवि की काव्य विषयक धारणा उनका यह दृष्टिकोण उनको स्वतंत्र चेतना और विवेक का परिणाम कहा जा सकता है । कवि ने उन्हीं तथ्यों का आकलनकिया जो तत्कालीन युग और समाज के सर्वथा अनुकल थे ।

1- आचार्य विश्वनाथ प्रसाद मिश्र, हिन्दी साहित्य का अतीत, भाग2 पृ0621
2- वही, पृ0 690 ।
3- डॉ0 शकुन्तला अरोरा, रीतिकालीन श्रृंगार कवियो की नैतिक दृष्टि पृ0 20
4- डॉ0 भगीरथ मिश्र, हिन्दी काव्य शास्त्र का इतिहास, पृ0 5
5- कुमारमणिः रसिक रसाल, पृ0 2

<u>मतिराम</u> : मतिराम का जन्म संवत् 1674 में हुआ ।[1] मतिराम द्वारा रचित प्रसिद्ध ग्रंथ फूलमंजरी, जहांगीर की आज्ञा से लिखी गयी इसमें 60 दोहे हैं जिसमें 59 में फूलों का वर्णन है, प्रत्येक दोहे में फूल का वर्णन है अन्तिम दोहे में कवि ने ग्रन्थ के लिखने का कारण स्पष्ट किया जिसके जहांगीर की आज्ञा है ।[2] एक अन्य ग्रंथ "ललितललाम" का प्रणयन कवि ने अपने आश्रयदाता बूंदी नरेश भाऊसिंह के आश्रय में लिखा । इस ग्रंथ में बूंदी नगर तथा भाऊसिंह की प्रशंसा में रचा गया ।[3] इसके अलावा अन्य प्रसिद्ध ग्रंथो में मतिराम सतसई, अलंकार पंचाशिका तथा रसराज हैं रसराज जैसा इसके नाम से स्पष्ट है इसमें श्रृंगार रस को ही एकमात्र श्रेष्ठ रस माना है। परम्परानुसार इसमें भी नायिका नायक भेद का निरूपण किया गया है तथा भारतीय जीवन से लिये गये इनके मर्मस्पर्शी चित्रों की भूरिशः श्लाघा की गयी है ।[4]

इस प्रकार इन सभी कवियों ने भारतीय जीवन के जिन विभिन्न तत्त्वों का चित्र खींचा है उससे हमें तत्कालीन समाज चित्रण करने के पर्याप्त सामग्री मिली ।

1- डॉ० शकुन्तला अरोरा, रीतिकालीन श्रृंगार कवियों की नैतिक दृष्टि पृ० 5
2- मतिराम: फूलमंजरी
3- मतिराम ग्रंथावली: पृ० 16 भूमिका से उद्धृत
4- आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, हिन्दी साहित्य का इतिहास, पृ० 253 ।

पुस्तक-सूची

पुस्तक - सूची

हिन्दी साहित्य के प्राथमिक स्रोत

1. आलमकेलि - रचयिता आलम और शेख सं० भगवानदीन, संवत् 1979, काशी।
2. श्यामसनेही - आलम, डा० भवानी शंकर याज्ञिक, लखनऊ
3. आलमकेलि - नागरी प्रचारिणी सभा, काशी, 1912. पं० लाला भगवानदीन
4. आलम ग्रंथावली - विद्यानिवास मिश्र, वाणी प्रकाशन, दिल्ली- 2
   (i) माधवानलकामकन्दला
   (ii) अक्षरमालिका
   सुदामाचरित - नागरी प्रचारिणी सभा पुस्तकालय काशी
5. माधवानल कामकंदला - श्रोमणि गुरुद्वारा प्रबन्धक कमेटी, अमृतसर
   (i) शृंगार संग्रह - सम्पादक सरदार कवि
   बोधा ग्रंथावली - संपादक विश्वनाथ प्रसाद मिश्र, नागरी प्रचारिणी सभा, वाराणसी, प्रथम संस्करण, संवत् 2031
   (i) विरह- वारीश
   (ii) इश्कनामा
7. विरही-सुभान दंपति-विलास - डा० रमाशंकर त्रिपाठी
8. विरह- वारीश - नवल किशोर प्रेस, लखनऊ, 18९५ ई०
9. भिखारीदास ग्रंथावली, - प्रथम खण्ड - संपादक विश्वनाथ प्रसाद मिश्र, नागरी प्रचारिणी सभा, काशी संवत् 2013
   (i) रससारांश
   (ii) शृंगार निर्णय
10. छंदार्णव शृंगार निर्णय - भारत जीवन प्रेस, काशी

11. भिखारीदास ग्रंथावली, द्वितीय खण्ड — विश्वनाथ प्रसाद मिश्र, नागरी प्रचारिणी सभा, काशी संवत् 2030

(i) काव्यनिर्णय

12. काव्यनिर्णय — सं0 जवाहर चतुर्वेदी, संवत् 2019, ज्ञानवापी, वाराणसी ।

13 छन्दोर्णव पिंगल — भिखारीदास कृत, नवल किशोर प्रेस, लखनऊ, 1902 ई।

14. भूषण ग्रंथावली — सं0 टी0 श्याम बिहारी, शुकदेव बिहारी, नागरी, प्रचारिणी सभा, काशी, 2015 वि0

15. भूषण ग्रंथावली — सं0 रामनरेश त्रिपाठी, प्र0 सं0 प्रयाग हिन्दी मंदिर 1987

16. भूषण ग्रंथावली — विश्वनाथ प्रसाद प्र0 सं0, काशी साहित्य सेवक कार्यालय, 1933

17. शिवराजभूषण — टीकाकार, रूपनारायण पाण्डेय कविरत्न, सन् 1931, नवल किशोर प्रेस, लखनऊ ।

18. शिवाबावनी — भगवानदास टिप्पणी सहित, हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग, 1973

19. भूषण संग्रह — सं0 उदय नारायण तिवारी, हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग 1996

२०. भूषण भारती स्फुट काव्य — सं0 दयाल सिंह, प्रयाग इंडियन प्रेस, 1951 ई0 भूषण कृत

२1. देव ग्रंथावली भाग । — डॉ0 पुष्पारानी जायसवाल, हिन्दुस्तानी एकेडमी,

(i) देव चरित्र

(ii) सुखसागर तरंग

(iii) देवमाया प्रपंच नाटक

(IV) अष्टयाम

(V) प्रेम चन्द्रिका

२२. देव ग्रंथावली:प्रथम खण्ड — लक्ष्मीधर मालवीय, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली प्रथम संस्करण, 1967

(i) भाव विलास

(ii) रस विलास

(iii) सुमिल विनोद — डॉ० सुरेन्द्र माथुर, भारतजीवन प्रेस, 1893

२३. भवानी विलास — डॉ० सुरेन्द्र माथुर

२४. शब्द रसायन — सं० जानकीनाथ सिंह, "मनोज" संवत् 2014 हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग

२५. रसविलास — सं० तिलेश्वर नाथ शास्त्री, 1961

२६. सुखसागर तरंग — सं० बालादत्त मिश्र, संवत्, 1954, लखनऊ

२७. अष्टयाम — सं० रामकृष्ण वर्मा, सन् 1965, सेन्ट्रल बुक डिपो, इलाहाबाद।

२८. देवसुधा — संग्रहकार एवं टीकाकार: मिश्रबन्धु, संवत् 2005, गंगा-पुस्तक-माला, लखनऊ

२९. भाव विलास — सं० लक्ष्मी निधि चतुर्वेदी, तरुण भारत ग्रंथावली कार्यालय, दारागंज, प्रयाग, सं० 1991

३०. देव की दीपशिखा — विश्वनाथ प्रसाद मिश्र, वाणी प्रकाशन नई दिल्ली, प्र०सं०

घनानंद

31. घनानंद ग्रंथावली – सं0 विश्वनाथ प्रसाद मिश्र, संवत् 2009, वाणी वितान, ब्रह्मनाल, बनारस ।

32. प्रेमपत्रिका

33. घनानंद कवित्त– – विश्वनाथ प्रसाद मिश्र, वाराणसी, 1990

कुमारमणि

34. रसिक रसाल – प्रो0 कंठमणि शास्त्री, विशारद विद्या विभाग, कांकरौली, सं0 1776

मतिराम

35. मतिराम ग्रंथावली – कृष्णापति त्रिपाठी, नागरी प्रचारिणी सभा, वाराणसी

36. मतिराम ग्रंथावली – सं0 कृष्ण बिहारी मिश्र, संवत् 2018 वि0, गंगा–पुस्तक माला · कार्यालय, लखनऊ

(i) मतिराम सतसई
(ii) रसराज
(iii) फूलमंजरी
(IV) ललितललाम

37. रसराज – सं0 मन्ना लाल द्विज

38. मतिराम मकरन्द – मतिराम कृत, अनुवादक, हरदयालु सिंह, इण्डियन प्रेस, प्रयाग

39. मतिराम रत्नावली – शंकरनाथ शुक्ल, भारतवासी, प्रेस, प्रयाग

40. मतिराम मनोहर प्रकाश – राम मनोहर प्रकाशन, अजमेर

41. श्रृंगार सुधाकर – मन्ना लाल द्विज

42. रसराज – वेंकटेश्वर स्टीम प्रेस, बम्बई, 1966 [वाराणसी चौखम्बा], [लखनऊ]

44. मतिराम सतसई — कृष्ण बिहारी मिश्र, गंगा पुस्तक माला कार्यालय, लखनऊ, सं. 1981 वि.

सोमनाथ

45. सोमनाथ ग्रंथावली प्रथम खण्ड— सं0 सुधाकर पाण्डेय, नागरी प्रचारिणी सभा, वाराणसी, संवत् 2029

(i) रसपीयूषनिधि

(ii) रासपंचाध्यायी

(iii) श्रृंगारविलास(पूर्वार्ध)

(IV) माधव विनोद

(V) महादेव को ब्याहुलो या शशिनाथ विनोद

(VI) ध्रुव विनोद

(VII) श्रृंगार विलास(उत्तरार्द्ध)

(VIII) सुजान विलास

(IX) दीर्घनगर वर्णन

(X) नवाबोल्लास

(XI) संग्रामदर्पण

(XII) प्रेमपंचासी

46. रास पंचाध्यायी — सोमनाथ कृत, भारतवासी, प्रेस, प्रयाग

47. सोमनाथ ग्रंथावली, द्वि ख. — सं0 सुधाकर पाण्डेय, नागरी प्रचारिणी सभा, वाराणसी, संवत् 2030

(i) राम चरित्र रत्नाकर(सुन्दर कांड)

(ii) रामकलाधर (बाल कांड)

48. युक्ति तरंगिणी — सोमनाथ कृत, डॉ० सत्यदेव चौधरी

हिन्दी साहित्य के सहायक स्रोत

49. घनानंद — डॉ० गंगादत्त सारस्वत, साहित्य निकेतन, कानपुर 1974

50. घनानंद और स्वच्छंद-काव्य धारा — मनोहर लाल गौड़, नागरी प्रचारिणी सभा, वाराणसी, सं० 2029

51. रसखान और घनानंद — अमीर सिंह, नागरी प्रचारिणी सभा, काशी, 2008 वि.

52. महाकवि मतिराम — डॉ० त्रिभुवन सिंह हिन्दी प्रचारक संस्थान, वाराणसी द्वितीय सं०, 1970

53. मतिराम कवि और आचार्य — डॉ० महेन्द्र कुमार, प्र० सं० 1960 ई० भारतीय साहित्य मन्दिर, (एस. चांद एण्ड सन्स से सम्बद्ध) फव्वारा, दिल्ली।

54. रीतिकाव्य — डा० जगदीश गुप्त, वसुमती 38, जीरो रोड, इलाहाबाद 1968 ई०

55. रीतियुगीन काव्य की सांस्कृतिक पृष्ठभूमि — डॉ० वेंकटरमणराव, जवाहर पुस्तकालय, मथुरा, 1972 प्र०सं० ।

56. हिन्दी रीति परम्परा के प्रमुख आचार्य — सत्यदेव चौधरी साहित्य भवन, (प्रा०) लिमिटेड, इलाहाबाद ।

57. कृष्ण साहित्य एवं ऐतिहासिक अनुशीलन — डॉ० भगवान दास तिवारी, साहित्य भवन लि०, 1972

58. महाकवि कृष्ण — मनोरम प्रसाद दीक्षित, प्रयाग साहित्य भवन, 1953

59. भूषण और उनका साहित्य राजमल बोरा, साहित्य रत्नालय, 37/50, गिल्लिस बाजार, कानपुर ।

60. हिन्दी-रीति साहित्य डा० भगीरथ मिश्र, सन् 1963, राज कमल प्रकाशन, दिल्ली, पटना ।

61. आधुनिक हिन्दी साहित्य की भूमिका डॉ० लक्ष्मीसागर वार्ष्णेय, हिन्दी परिषद् इलाहाबाद युनिवर्सिटी, 1952 ई०

62. रीतिकालीन साहित्य: परिवेश और मूल्य डॉ० इन्द्र बहादुर सिंह, अरविन्द प्रकाशन, बम्बई

63. हिन्दी-रीति कविता और समकालीन उर्दू काव्य डॉ० मोहन अवस्थी, सरस्वती प्रेस, इलाहाबाद, 1978

64. आलम और उनका काव्य डॉ० भारत भूषण चौधरी, सूर्य प्रकाशन, नई सड़क, दिल्ली, 110006 प्र० सं० 1976

65. मतिराम कवि और आचार्य डॉ० महेन्द्र कुमार, प्र० सं० 1960 ई० भारतीय साहित्य मंदिर ।

66. भारत में प्रचलित नाम के नालिनदास गुप्ता, रिव्यू से प्रकाशित कलकत्ता ।

67. रीतिकालीन हिन्दी, साहित्य में उल्लिखित वस्त्राभरणों का अध्ययन । ललनराय, पब्लिकेशन ब्यूरो, पंजाब, युनिवर्सिटी, चंडीगढ़, 1974

68. रीतिकवियों की मौलिक देन डॉ० किशोरी लाल, साहित्य भवन, इलाहाबाद सं० 1971

69. ब्रजभाषा का वस्तु सौन्दर्य सं० प्रभुदयाल मीतल, मथुरा

71. रीति कवियों की प्रेम व्यंजना   बच्चन सिंह, वाराणसी, ना० प्र० स०, 2015 वि०

72. प्राचीन भारत के प्रसाधन   अत्रिदेव विद्यालंकार, काशी भार० ज्ञान० पीठ, 1958

73. प्राचीन भारत के कलात्मक विनोद   डॉ० हजारी प्रसाद द्विवेदी, हि० ग्र० र० कार्या० 1952 ई०

74. हिन्दी काव्य सिद्धान्त
हिन्दी साहित्य का अतीत-   सं० विश्वनाथ प्रसाद मिश्र, संवत् 2013 वि० वाणी वितान प्रकाशन, ब्रह्मनाल, वाराणसी ।

75. कवि तोष और उनका सुधानिधि   सं० डा० सुरेन्द्र माथुर, संवत् 2022 वि० नागरी प्रचारिणी सभा, वाराणसी ।

76. मिश्रबन्धुविनोद   सं० गणेश बिहारी मिश्र, श्यामबिहारी मिश्र, शुकदेव मिश्र, संवत, 1885, गंगा पुस्तक माला कार्यालय, लखनऊ ।

77. रीतिकाव्य संग्रह   डॉ० जगदीश गुप्त, सन् 1970 साहित्य-सदन इलाहाबाद ।

78. रीतिकाव्य की भूमिका   डॉ० नगेन्द्र सन् 1969, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली ।

79. रीति श्रृंगार   डॉ० नगेन्द्र सन् 1954

80 देव और उनकी कविता   गौतम बुक डिपो, दिल्ली, 1949 ई०

81. हिन्दी साहित्य का-इतिहास   आ० रामचन्द्र शुक्ल, संवत्, 2015 वि० नागरी प्रचारिणी सभा, काशी

82. हिन्दी नवरत्न   सं० मिश्रबन्धु, संवत् 2012 वि० गंगा पुस्तक माला,

83. हिन्दू संस्कार — डॉ0 राजबली पाण्डेय, सन् 1957, चौखम्बा विद्या भवन, वाराणसी ।

84. वैदिक विज्ञान और भारतीय संस्कृति — गिरिधर शर्मा, चतुर्वेदी, बिहार राष्ट्र भाषा परिषद, पटना, 1960 ई0

85. रीतिकालीन श्रृंगार कवियों की नैतिक दृष्टि । — डॉ0 शकुन्तला अरोरा, दिल्ली, प्र0 सं0 1978

86. हिन्दी शब्द सागर — आचार्य रामचन्द्र वर्मा

87. हिन्दी वीर काव्य [1600-1800] — डॉ0 टीकम सिंह तोमर, प्र0सं0 1954 ई0 हिन्दुस्तानी एकेडमी, इलाहाबाद

88. उत्तरी भारत की संत परम्परा — आचार्य परशुराम चतुर्वेदी, इलाहाबाद भारतीय भवन सं०२०२१

89. संस्कृति के चार अध्याय — रामधारी सिंह दिनकर, तृतीय संस्करण 1962ई0 उदयाचल प्रकाशन आर्य कुमार रोड, पटना- 4

90. सूरसागर सटीक — सं0 डॉ0 हरदेव बाहरी, डॉ0 राजेन्द्र कुमार, लोक भारती प्रकाशन 15ए महात्मा गांधी मार्ग, इलाहाबाद, 1978 ई0

91. साईं दीन दरवेश — अनवर आगेवान, अहमदाबाद, सं० २००८

92. मध्यकालीन भारतीय सभ्यता एवं संस्कृति — उमाशंकर मेहता, विनोद पुस्तक मंदिर, हास्पिटल रोड, आगरा, प्रथम संस्करण, 1963

93. रीतिमुक्त काव्य — कृष्ण चन्द्र वर्मा, पुस्तक मन्दिर विवेकानन्द मार्ग इलाहाबाद, १९६५

94. खड़ी बोली हिन्दी साहित्य का इतिहास — ब्रजरत्नदास, काशी, सं० १९९५

अन्य सहायक स्रोत

1- आइन-ए- अकबरी, आफ अबुल फजल थ्री वायल्यूम्स, कलकत्ता, 1872-1873, इंग्लिश ट्रांसलेशन्स: वायल्यूम I, ब्लाक मैनन, कलकत्ता, 1873, ब्लाकमैनस ट्रांसलेशन आफ वायल्यूम I एडी, डी.सी. फिलोट, कलकत्ता 1927, वायल्यूम्स II एण्ड III एच. एस. जैरेट, कलकत्ता 1891-1994 जैरेट्स ट्रांसलेशन आफ वायल्यूम्स II एण्ड III, रिवाइस्ट एण्ड, एडी सर जदुनाथ सरकार कलकत्ता 1948 [आल बिब इंडिया] (बिब इंडिया)

2- अकबरनामा आफ अबुल फजल, थ्री, वायल्यूम्स कलकत्ता 1877, इंग्लिश ट्रांसलेशन बाई एच, बेवरिज, थ्री, वायल्यूम्स कलकत्ता, 1907-1912

3- आहम-ए- आलमगीरी -एन्सीडोट्स आफ औरंगजेब, ट्रांसलेटेड बाई जे. एन. सरकार. कलकत्ता 1912

4- आलमगीरीनामा आफ मुहम्मद काजिम: एडी. कादिम हुसैन एण्ड अब्दुल हाई, कलकत्ता, 1868

5- औरंगजेब अनु0 मुंशि, वेंकटेश्वर प्रेस, बम्बई

6- बाबरनामा आर तुजुक-ए- बाबरी बाई बाबर रिटेन इन तुर्की एण्ड ट्रांसलेटेड इन टू इंग्लिश इन थ्री वायल्यूम्स बाई ए. एस. बेवरिज, लूजेक एण्ड कम्पनी, लंदन 1921

7- बादशाहनामा आफ अब्दुल हमीद लाहौरी, एडी. कबीरुद्दीन अहमद एण्ड अब्दुर रहीम, टू वायल्यूम्स कालेज कलकत्ता 1867-1868

8- बहारिस्तान-ए गैबी आफ मिर्जा नाथन, इंग्लिश ट्रांसलेशन्स, डॉ0 एम0 आई0 बोराह, I एडी, टू वायल्यूम्स, गौहाटी, 1936

9. हुमायूँनामा और हुमायूँन-नामा बाई गुलबदन बेग, ट्रांसलेटेड इन टू, इंग्लिश, बाई ए० एस० ब्रेवरिज, लंदन । 902

10. तुजुक-ए- जहाँगीरी बाई जहाँगीर, ट्रांसलेटेड इन टू इंग्लिश बाई ए० रोगर्स एण्ड एच ब्रेवरिज, इन टू वाल्यूम्स

11. इकबाल नामा-ए- जहाँगीरी आफ मुतमद खान्, एडी अब्दुल हई एण्ड, अहमद अली, कलकत्ता, 1865 (बिब इन्डिका)

12. खुलासात्-उत-तवारीख, सुजानराय भंडारी, सं० जाफर हुसैन, जी० एण्ड एस० संत दिल्ली । 928

13. मुन्तखाब-उत- तवारीख, अब्दुल कादिर बदायूनी, भाग।, बिब्लायिक

मुन्तखब-उल- लुबाब आफ खाफी खान्, एडी, कबीरुद्दीन अहमद, टू वायल्यूम्स, कलकत्ता 1869-1874 इलियट एण्ड डाउसन कलकत्ता । 974

14. मआसीर-ए- आलमगीरी आफ साकी मुस्तैद खान्, इंग्लिश ट्रांसलेशन बाई सर जदुनाथ सरकार, कलकत्ता, । 947 (बिब इन्डिका)

15. मिरात-ए- अहमदी , एडी० सैयद नवाब अली, बरौदा, । 927-28

16. मिरात-ए सिकन्दरी आफ सिकन्दर गुजराती, इंग्लिश ट्रांसलेशन बाई फेजुल्ला लतफुल्ला फरीदी, एजुकेशन सोसाइटी प्रेस, धरमपुर,, देयर इज अदर ट्रांसलेशन बाई इलियट एण्ड डाउसन ।

17. मआसीर-ए- आलमगीरी बाई मुहम्मद मुस्तैद खान साकी [पर्शियन टैक्स्ट बिब इंडिका] ट्रांसलेटेड इन टू उर्दू बाई मुहम्मद फिदा अली तालब, उस्मानिया [हैदराबाद] यूनिवर्सिटी ।

मिरात -उल- आलम आफ मुहम्मद

18. गुल्शन-ए- दिलकुशा आफ भीमसेन एडी. बाई. जादुनाथ सरकार बम्बई, 1972

फुतूहात-ए- आलमगीरी- बिलोमोरिया, निजाम प्रेस

सियार-उल- मुन्ताखरीन ऑफ सैयद गुलाम हुसैन खान सेकेन्ड एडी. थ्री वाल्यूम्स नवल किशोर प्रेस, लखनऊ, 1897, रेमन्डस इंग्लिश ट्रांसलेशन ‖ सेकेन्ड एडी. पब्लिश्ड बाई आर केम्बरे, कलकत्ता

19. तारीख-ए- रशीदी बाई मिर्जा मुहम्मद हैदर दुगलत ट्रांसलेटेड इन टू इंग्लिश बाइ इ डेनिसन, रोस, लंदन 1895

20. बर्नियर फ्रांसकोइस ‖ 1658‖ ट्रैवेल्स इन द मुगल इम्पायर ‖1656-68‖ ट्रांसलेटेड बाई आर्चीबाल्ड कान्स्टेबिल ‖1851‖ आक्सफोर्ड

21. बार्टोलोमियो, के पाओलिनो द सान ‖ 1776-89‖ ए व्यायज टू द ईस्ट इंडीज कन्टेनिंग एंव अकाउन्ट ऑफ द मैनर्स, कस्टम एक्सेट्रा आफ द नेटिव्स, नोट्स एण्ड इल्लस्ट्रेशन्स बाई जान रेनिकोल्ड फार्स्टर ट्रांसलेटेड फ्राम जर्मन बाई विलियम जान्सटन

22. केरी ‖ 1695‖ इंडियन ट्रैवेल्स आफ थेवनाट एण्ड केरी ‖1695‖ एडी., बाई एस एन सेन, पब्लिश्ड बाई नेशनल आर्केव्स आफ इंडिया, 1949

23. डेलावेली, पिट्रो ‖1623-24‖, द ट्रैवेल्स आफ अ नोबिल रोमन इन टू ईस्ट इंडीज एण्ड अरेबियन डेजर्ट, लंदन, 1664 आल्सो द ट्रैवेल्स आफ पीट्रो डेलावेली इन इंडिया इन टू वाल्यूम्स बाई एडवर्ड ग्रे हेक्लेट सोसाइटी,

२४. फ्रायर, जान एण्ड सर थामस रो ‖ 1672-81‖ , ट्रैवेल्स ऑफ इंडिया इन द सेविन्टीन्थ सेन्चुरी, लंदन, ट्रूबनर एण्ड कम्पनी, 1873

२५. फास्टर, विलियम, अर्ली, ट्रैवेल्स इन इंडिया, आक्सफोर्ड, 1921

२६. ग्रोस, एफ. एस. ‖1754-58‖ , ए व्यायज टु द ईस्ट इंडीज विद जनरल रिफ्लेक्शन ऑन द ट्रेड आफ इंडिया लंदन, टु वाल्यूम्स ।

२७. हेमिल्टन, अलेक्जेण्डर ‖ 1688-1723‖ ए न्यू एकाउण्ट ऑफ दि ईस्ट इंडीज फ्राम ‖1688-1723" टु वाल्यूम्स लंदन, 1724

२८. लिन्सटन , वैन जान हैगेन, ‖1583-88 ‖ , द व्यायज टु दि ईस्ट इंडीज वाल्यूम, ट्रांसलेटेड टु इंग्लिश बाई आर्थर लैंदन, वाल्यूम टु बाई पी0 ए0 टाइली, लंदन, 1885

२९. मनूची निकोलाई वेनिन्टेन ‖1653-1708 ‖, स्टोरिया द मोगोर आर मुगल इंडिया‖ 1653-1708‖ ट्रांसलेटेड इन टु इंग्लिश बाई विलियम इरविन वाल्यूम वन टु फोर ‖1907-08‖ एटलांटिक पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स, अंसारी रोड, दरियागंज, नई दिल्ली, 110002, रिप्रिन्टेड, 1989

३०. मैण्डस्लो एल्बर्ट ‖1638-39‖ द व्यायज एण्ड ट्रैवेल्स आफ दि एम्बेसेड सेन्ट बाई फ्रेडरिक ड्यूक आफ हाल्सटेम आफ दि ग्रेट ड्यूक आफ मास्को, एक्सोकुटा कन्टेनिंग ए पर्टीकुलर डिस्क्रिप्शन आफ हिन्दुस्तान, द मुगल्स , द ओरियंटल इसलैंड्स एण्ड चाइना‖ इन फुल भी‖ बाई आदम ओलियरेस , लैवेन्ड एडीशन लंदन 1669 ।

31. मांसेरेट , एस. जे. [1580-83] , द कैमेन्ट्री ट्रांसलेटेड फ्राम लैटिन बाई जे0 एस. हायलैण्ड, एनोट्रेटेड बाई एस. एन. बनर्जी, 1922, आक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस ।

32. नियोहाफ जॉन [1665] व्याजेज, एण्ड ट्रैवेल्स इन टू ब्राजील एण्ड ईस्ट इंडीज प्रिन्टेड बाई हेनरी लिन्टाड एण्ड जान आसबर्न ।

33. ओविंगटन ,जे [1689] , ए व्यास्ज टू सूरत इन द ईयर [1689] ,लंदन 1696

34. पेलसर्ट फ्रांसिस्को, जहांगीर,स इंडिया, ट्रांसलेटेड बाई डब्ल्यू एच, मोरलैंड एण्ड पी. गेल, कैम्ब्रिज , 1925 ।

35. पीटर मुंडी [1628-34] ट्रैवल्स इन यूरोप एण्ड एशिया वायल्यूम टू, ट्रैवेल्स इन एशिया [1628-34] सेकेण्ड सीरीज ,1914

36. रो सर थामस [1615-19] , द एम्बेसी टू द कोर्ट आफ द ग्रेट मुगल [1615-19] , एडी बाई विलियम फास्टर ,लंदन, 1899, ए लेटर एडीशन इन आफ 1936 ।

37. स्टेवोरेनियस, जान स्प्लिन्टर [1768-71] , व्याज्स टू द ईस्ट इंडीज, ट्रांसलेटेड इन टू इंग्लिश बाई सैमुअल हुग विलकोकी ,इन थ्री वाल्यूम्स, लंदन ।

38. थिवनाट, एम. [1667], ट्रैवेल्स इन टू द लीवेन्ट इन थ्री पार्ट्स, ट्रांसलेटेड इन टू इंग्लिश, 1686 बाई थ्री रिमेट्स टू इंडिया ।

39. ट्रैवेर्नियर जे0 बी0 ट्रैवेल्स इन इंडिया, इन टू वायल्यूम्स सेकेन्ड एडीशन, न्यू दिल्ली ।

40. विलियम हाकिन्स [1608-13] अर्ली ट्रैवेल्स इन इंडिया बाई फास्टर, लंदन ।

41. अंसारी- सोशल लाइफ आफ दि मुगल एम्परर्स [1526-1707] न्यू दिल्ली, 1974

42. अशरफ के0 एम0 - लाइफ एण्ड कंडीशन आफ द पीपुल्स आफ हिन्दुस्तान, कलकत्ता, 1935 ।

43. अल्तेकर, ए0 एस, द पोजीशन आफ वीमेन इन हिन्दू सिविलाइजेशन, बनारस, 1938 ।

44. एलिस हैवलोक स्टडीज इन साइकालोजी आफ सेक्स ।
अलबेरूनी - हिज इंडिया एन अकाउण्ट ऑफ द रिलिजन फिलासफी, एस्ट्रोनॉमी, आफ, इंडिया, ए.डी. 1030 एडीटेड एण्ड ट्रांसलेटेड इन टू इंग्लिश बाई सचाऊ, लंदन, 1888वाल्यूम्स । एण्ड 2 ।

45. अली युसुफ अब्दुल्ला - मेकिंग आफ इंडिया ।

46. मिसेज कुलकर्णी बड़ौदा- कास्ट्यूम्स एण्ड टेक्सटाइल्स आफ इंडिया, बम्बई, 1940

47. प्रसाद बेनी - हिस्ट्री आफ जहाँगीर, लंदन, 1930, हिस्ट्री आफ जहाँगीर थर्ड, एडीशन, इलाहाबाद 1940 ।

48. भट्टाचार्य जोगेन्द्रनाथ हिन्दू कस्टम सेक्ट्स, थक्कर, स्पिंक एण्ड कम्पनी, कलकत्ता, 1846 ।

49. ब्राउनपर्सी – दि इंडियन आर्कीटेक्चर, तारपोरवाला बम्बई,
इंडियन पेन्टिंग्स अंडर द मुगल क्लैरेडन प्रेस, आक्सफोर्ड 1954 ई0

50. कुलभूषण जमोला – इंडियन ज्वैलरी, ओरनामेन्ट्स एण्ड डेकोरेटिव डिजाइन्स,
तारपोरवाला, सन्स एण्ड कम्पनी, प्रा0 स0 बम्बई ।

51. दासगुप्ता टी0 सी0 आस्पेक्ट्स ऑफ बंगाली सोसाइटी, कलकत्ता,
युनिवर्सिटी, 1935 ।

52. दत्त कालीकिंकर – सर्वे आर्व इंडिया"ज सोशल लाइफ एण्ड एकोनामिक कंडीशन
इन द ऐट्टीन्थ, सेन्चुरी, [1707 –1813] मुंशीराम मनोहर
लाल पब्लिशर्स, प्रा0 लि0 सेकेन्ड एडी. 1978

53. डुबाएस जे0 ए0 ए – हिन्दू मैनर्स, कस्टम्स एण्ड सेरेमनीज, आक्सफोर्ड, थर्ड
एडीसन ।

54. इलियट, सर एच. एम. – डाउसन, जान द हिस्ट्री आफ इंडिया ऐज, टाल्ड
बाई, इट्स, हिस्टोरियन्स ऐट वायल्यूम्स लंदन
1867–1877

55. इलियट एण्ड डाउसन – भाग7, किताब महल, 15थॉर्नहिलरोड, इलाहाबाद ।
ई0जी0 ब्राउन – द लिट्रेरी हिस्ट्री ऑफ पर्शिया, जिल्द 3, कैम्ब्रिज, 1951

56. घुर्ये– जी0 एस– इंडियन कास्ट्यूम्स, बम्बई, 1951 ।

57. घुर्ये जी0 एस0 – कास्ट क्लास एण्ड आक्युपेशन, पाप्युलर बुक डिपो, बम्बई, 1961 ।

58. गैरेट एण्ड एडवर्ड – मुगल रूल इन इंडिया, एशियन पाब्लिकेशन सर्विस, नई दिल्ली, इंडिया 1979 ।

59. ग्रियसन जी0ए0 – बिहार पीजेन्ट लाईफ, कलकत्ता, 1885

60. ग्रियसन जी0ए0– दि मार्डन वर्नाक्युलर लिटरेचर आफ हिन्दुस्तान , ए एस. बी, कलकत्ता, 1889

61. हैज , थामस पैट्रिक , ए डिक्शनरी आफ इस्लाम, लंदन, 1885

62. हबीबुल्लाह ए. बी. एम. – द फाउन्डेशन ऑफ मुस्लिम रूल इन इंडिया, लौहेर , 1945 ।

63. हबीब इरफान – द सिस्टम आफ मुगल इंडिया, बाम्बे, 1936

64. हुसैन युसुफ – ग्लिम्पसेस आफ मिडीवल इंडियन कल्चर, लंदन, 1959

65. इरविन – लेटर मुगल्स, एडी. सर जदुनाथ सरकार टू वाल्यूम्स, कलकत्ता, 1922, सेकेन्ड, एडी. दिल्ली, 1971

66. जे0 मिल – हिस्ट्री आफ ब्रिटिश इंडिया, वाल्डविन, वारडक, लंदन, 1926 ।

67. जाफर शरीफ – कानून-ए- इस्लाम और इस्लाम इन इंडिया कम्पोस्ट अंडर द सुपरविजन आफ जी. एफ. हर्कलाट्स, रिवाइज्ड बाई विलियम क्रुक, आक्सफोर्ड 1921 आल्सो कानून-ए-इस्लाम बाई जाफर शरीफ, लंदन, 1832, ट्रांसलेशन बाई. जी. एफ. हरक्लाट्स ।

68 कपूर एलिजाबेथ – दि हरेम एण्ड दि परदा, टी० फिशर कनपनि लि. कलकत्ता, प्रथमावृत्ति, 1915 ।

69. कुमार स्वामी के०ए० – राजपूत पेन्टिंग भाग, 5
मुगल पेन्टिंग, भाग 6

70. मीर हसन अली मिसेज– आब्जरवेशन्स ऑन द मुसलमान्स, ऑफ इंडिया एडी, डब्ल्यू कुक, आक्सफोर्ड, 1917

71. मैकालिफो , मैक्स आर्थर– द सिख रिलिजन, आक्सफोर्ड, 1909, सिक्स वायल्यूम्स

72. मलिक, जहीरूद्दीन – द रिजाइन ऑफ मुहम्मद शाह, एशिया पब्लिशिंग हाउस, 1977

73. मूलर, एफ. मैक्स – सैक्रेड बुक्स, आफ दि ईस्ट भाग 25, दि लॉज ऑफ मनु (मनु स्मृति का अंग्रेजी अनुवाद) क्लैरेन्डनप्रेस, आक्सफोर्ड, 1886

74. निजामी, के० ए० – स्टडीज इन मिडवील इंडियन, हिस्ट्री एण्ड कल्चर, इलाहाबाद 1956

75. निकोल्सन आर० ए० – आइडिया ऑफ पर्सनाल्टी इन सूफिज्म

76. निजामी के० ए० – सम आस्पेक्ट्स ऑफ रेलिज एण्ड पालिटिक्स इन इण्डिया ड्यूरिंग दि थर्टीन्थ सेन्चुरी, एशिया, पब्लिशिंग हाउस, बम्बई, 1961 ।

77. ओन ए० जी – द फाल आफ द मुगल इम्पायर लंदन 1912

78. ओझा पी० एन०– ग्लिम्पसेस आफ सोशल लाइफ इन मुगल इंडिया क्लासिकल पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली ।

79. पावेल प्राइस – ए हिस्ट्री आफ इंडिया प्लेट 14 जे0 बी0 ए एस बी, एम0 एस0 ।

80. प्रसाद जयशंकर – ग्यारहवी सदी का भारत, बिहार, हिन्दी, ग्रंथ अकादमी द्वितीय संस्करण 1980

81. रघुवंशी ,वी0पी0 एस– इंडियन सोसाइटी इन द ऐट्टीन्थ सेन्चुरी एशिया, पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली {1969} ।

82. सं. रॉस ई. डेन्सिन – तारीखे फख्रुद्दीन मुबारकशाह, आर. ए. एस. एन अल्फाबेटिकल लिस्ट ऑफ द फीस्ट्स एण्ड होलीडेज ऑफ दि हिन्दूज एण्ड मोहमडेन्स, कलकत्ता 1914 ।

83. री. जे. डी. – दि मोहमडेन्स {1001–1761} लाँगमैन्स,ग्रीन एण्ड क0 कलकत्ता 1894 ।

84. रायचौधरी ए.सी. सोशल कल्चरल एण्ड एकोनॉमिक कंडीशन आफ इंडिया रसीद, ए0 , सोसाइटी एण्ड कल्चर इन मिडीवल इंडिया, कलकत्ता, 1969 ।

85. सरकार जगदीश नारायण – स्टडीज इन एकोनॉमिक लाइफ इन मुगल इंडिया

86. सरकार, जे0 एन0 –हिस्ट्री आफ औरंगजेब ,5 वायल्यूम्स, कलकत्ता, 1912–25

87. स्लीमैन मेजर – रैम्बिल्स ऐंड रिक्लेशन्स लंदन

88. सरकार, जे0 एन0 , स्टडीज इन मुगल इंडिया, कलकत्ता, 1919

89. शर्मा जी0 एन0 – सोशल लाइफ इन मेडिवल राजस्थान

90. शर्मा– गोपीनाथ – राजस्थान का इतिहास शिवलाल अग्रवाल एण्ड कम्पनी आगरा – 3, 1979 ।

91. सावेर शिवाजी – सं0 तुकाराम सरदेसाई, हरतैंच्युरी लिमिटेड, बाम्बे, 1927 ई0

92. सिंह मोहन – हिस्ट्री आफ दि पंजाबी लिटरेचर, लाहौर

93. सहगल – एस0 पी0 – लाइफ आफ दि मुगल प्रिन्सेज ।

94. सुभान जॉन ए0 – सूफीज्म इट्स सेन्ट्स, एण्ड श्राईन्स ।

95. शाह और कामदार – ए हिस्ट्री आफ द मुगल रूल इन इंडिया।

96. शास्त्री एम0ए0 – आउटलाईन्स ऑफ इस्लामिक कल्चर, दि बंगलौर प्रेस,
बंगलौर 1938 ।

97. सेन क्षितिमोहन - मिडीवल मिस्टिसिज्म आफ इंडिया, लंदन
यासीन मुहम्मद – ए सोशल हिस्ट्री आफ इस्लामिक इंडिया{1605–1748}
लखनऊ, 1958

98. पंत, डी0 – कामर्शियल पालिसी आफ द मुगल्स तारापोरवाला, बाम्बे
1930 ।

99. तिवारी, रामपूजन, सूफी मत साधना और साहित्य, ज्ञानमण्डल, लि0,
बनारस प्र0 सं0 वि0 सं0 2013 ।

100. थामस, पी0 – फेस्टिवल्स एण्ड हालीडेज आफ इंडिया, डी0बी0 तारापोरवाला
सन्स एण्ड कम्पनी प्राइवेट लिमिटेड, बम्बई ।

101. ताराचन्द्र – इनफ्लुएन्स ऑफ इस्लाम आन इंडियन कल्चर इलाहाबाद
1936 ।

102. टॉड, कर्नल जेम्स – द अनाल्स एण्ड एण्टिक्वीटीज ऑफ राजस्थान, एडी0,
बाई इक्रू क्रुक्स थ्री वाल्यूम्स, 1920

103. उमर मुहम्मद – हिन्दुस्तानी तहजीब पर मुसलमानों का असर, 1954, दिल्ली

104. यासीन मुहम्मद - ए सोशल हिस्ट्री आफ इस्लामिक इंडिया
लखनऊ, 1958 C1605-1748

संस्कृत ग्रंथ

1. आपस्तम्ब धर्म सूत्र - हरिदत्त टीका सहित, चौखम्बा, संस्कृत सीरीज, वाराणसी ।

2. अथर्ववेद - टीकाकारः श्रीराम शर्मा, सन् 1969 संस्कृति संस्थान, मथुरा ।

3. अभिलषार्थ चिन्तामणि - सोमेश्वर देव, निर्णय सागर प्रेस ।

4. अर्थशास्त्रम् कौटलीय - टी0 पाण्डेय रामतेज शास्त्री, सं0 2019, पण्डित पुस्तकालय, काशी ।

5. बौधायन धर्मसूत्र- सं0 चिन्नस्वामी शास्त्री, सन् 1972 ई0 चौखम्बा संस्कृत सीरीज आफिस, वाराणसी ।

6. बृहद्ब्रह्म पुराण - हरिप्रसाद शास्त्री, सम्पादक, कलकत्ता, 1888 ।

7. बृहदारण्यकोपनिषद्- सं0 शिरोमणि उत्सार, टी0वीरराघवाचार्य, टी.टी.पी. प्रेस, तिरुपति, 1954 ।

8. कामसूत्रम - टीकाकार गंगाविष्णु श्रीकृष्ण, शक संवत् 1856 । कल्याण प्रेस, बम्बई ।
[वात्स्यायन, टीका देवदत्त शास्त्री] ।

9. कृत्यकल्पतरु - लक्ष्मीधर, बड़ौदा, 1941-53 ।

10. छान्दोग्योपनिषद- शंकरभाष्य, सं0, 1994, गीताप्रेस, गोरखपुर ।

11. गौतम धर्म सूत्र- हरदत्त टीका सहित, आनन्दाश्रम संस्कृत, सीरीज, 1910 ।

12. महाभारत[शांति पर्व]- अनु0 रामनारायण दत्त, गीता प्रेस, गोरखपुर ।

13. मनुस्मृति - सं0 गोपाल शास्त्री, सन् 1970, चौखम्बा संस्कृत सीरीज आफिस, वाराणसी ।

14. मृच्छकटिकम् - महाकवि शूद्रक, डॉ0 रमाशंकर त्रिपाठी, सन् 1969, मोती लाल -बनारसीदास, वाराणसी ।

15. मेघदूत - मेघदूत, कालिदास, नागार्जुन, वाणी प्रकाशन दिल्ली, 1972

16. नाम लिङ्गानुशासक- अमरसिंह, सं0 हरदत्त शर्मा

17. रघुवंश - कालिदास, -सञ्जीवन सुधा टीका समेत । मध्यप्रदेश

18. ऋग्वेदस सायण भाष्य सहित, संपादक, एफ0मैक्समूलर, 1890-92, 5 भाग, वैदिक संशोधन, मण्डल, पूना, 1933-51 ।

19. ऋतुसंहार - कालिदास, निर्णय सागर, प्रेस, बम्बई, 1922

20. रसमंजरी - भानु, टीका जगन्नाथ, पाठक

21. रामचरित मानस- [गुटका] गीता प्रेस, गोरखपुर ।

22. विष्णुपुराण - बम्बई, 1889, विल्सन, 5 भाग, 1864-70, गीता प्रेस, गोरखपुर, सं0 2009 ।

23. वाल्मीकिरामायण हिन्दी अनुवाद, चन्द्रिका प्रसाद अवस्थी, नवलकिशोर प्रेस लखनऊ 1934

24. याज्ञवल्क स्मृति- व्या.ख्याकार डा0 उमेश चन्द्र पाण्डेय सन् 1967, चौखम्बा प्रकाशन, वाराणसी ।

पत्रिका

1- हिन्दी पत्रिका : साहित्य समालोचक, त्रैमासिक पत्रिका, पंजाब यूनिवर्सिटी चण्डीगढ़ [डॉ0 बुद्ध प्रकाश का लेख] ।

2- शोध पत्रिका साहित्य संस्थान, उदयपुर, 1963 ई0

3- ओरियंटल कालेज मैगजीन, लाहौर, 1937

4. लेख - चौधरी तपनराय, द मिड ऐट्टीन्थ सेन्चुरी, बैकग्राउन्ड, द कैम्ब्रिज एकोनॉमिक हिस्ट्री आफ इंडिया, भाग2, 1982 ।

जरनल

1- इंडियन ऐन्टीक्वैरी, बम्बई,

2- इस्लामिक कल्चर, क्वाटरली, जनवरी 1980

3- जनरल आफ बैक्टेरियर इन्स्टीट्यूट,

4- जनरल आफ रायल एशियाटिक सोसाइटी, बम्बई ।

5- जनरल ऑफ एशियाटिक सोसाइटी आफ बंगाल, ।

डिक्शनरी

1- आप्टे - संस्कृत इंग्लिश डिक्शनरी, मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली, 1970

2- इन साइक्लोपीडिया ब्रिटानिया, भाग 10, 12, लंदन, ओक्सफोर्ड

3- इन साइक्लोपीडिया अमेरिकाना भाग 26, 1951, न्युयार्क

शोध-ग्रंथ

1- वर्मा एम0के0, लाइफ एण्ड टाइम्स आफ ग्वालियर, इलाहाबाद ।

2- हरवारी मीरा, सोशल एण्ड एकोनॉमिक कंडीशन आफ नार्दन इंडिया ड्यूरिंग द लेटर हाफ आफ द सेवन्टीन्थ सेन्चुरी, डी0 फिल0 ।